मौलाना मुहम्मद अली 'लाहौरी'

हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद

की

जीवन्त विचारधारा

हिन्दी अनुवाद

डॉ.खुर्शीद आलम तारीन

अहमदिय्या अंजुमन इशाअते इस्लाम लाहौर

यू . एस . ए .

www.aaiil.org

मौलाना मुहम्मद अली 'लाहौरी'

हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद
की
जीवन्त विचारधारा

अर्थात्

زندہ نبی کی زندہ تعلیم

The Living Thoughts of The Prophet Muhammad

का हिन्दी रूपांतर

www.aaiil.org

लेखक की अन्य ख्यातिप्राप्त कृतियाँ

कुर्आन शरीफ़ की अंग्रेज़ी टीका

♦ "मौलाना मुहम्मद अली साहिब ने कुर्आन शरीफ़ का अंग्रजी में अनुवाद करके इस्लाम की जो महत्त्वपूर्ण सेवा की है उस की महत्ता को स्वीकार न करना मानो सूरज की रोशनी से इन्कार करना है। इस अनुवाद द्वारा न सिर्फ हज़ारों गैरमुस्लिमों ने इस्लाम के शीतल आँचल में शरण ली बल्कि हज़ारों मुसलमान भी इस्लाम के और अधिक निकट आगए। जहाँ तक मेरा अपना संबंध है मैं सहर्ष स्वीकार करता हूँ कि यह अनुवाद गिनती की उन चन्द किताबों में से है जो चौदाह पंद्राह साल पहले ,जब मैं नास्तिकता और अधर्म रूपी अँधाकरों की गहराइयों में भटक रहा था ,मेरे लिए मार्गदीप बन कर आई और मुझे इस्लाम का मार्ग दिखाया।"

(मौलाना अब्दुल माजिद दर्याबादी[रअ] ,कुर्आन शरीफ़ के मशहूर टीकाकार)

♦ "यह कुर्आन शरीफ़ का अंग्रेज़ी भाषा में प्रमाणिकतम अनुवाद है ,इस में ज्ञानप्रज्ञान से भरे हुए फुटनोट दर्ज हैं।"

(मौलाना मुहम्मद अली "जौहर" आफ़ ख़िलाफत मूवमेंट)

कुर्आन शरीफ़ की विश्वकोशीय उर्दू तफ़सीर (टीका)

♦ "(मौलाना मुहम्मद अली साहिब[रअ] का) यह अनुवाद साम्प्रदायिक मान्यताओं की अभिव्यक्ति से लगभग रिक्त है ,मौलाना साहिब ने बड़ी सावधानी से अनुवादक की भूमिका निभाई है .... उन्हों ने यह अनुवाद बड़ी श्रद्धा और आम जनमत को दृष्टि में रखते हुए किया है।"

(डा. सालिहा अब्दुल्हकीम शरफ उद्दीन की कृति *'कुर्आन हकीम के उर्दू तराजिम'*)

♦ "यह इतनी उच्च कोटि की तफ़सीर है कि शायद उर्दू भाषा का साहित्य रूपी ख़ज़ाना ऐसे कांतिमान रत्न दुर्लभता से भी न निकाल सके।" (मौलाना ज़फर अली ख़ाँ[रअ] ,संपादक अखबार *'ज़मींनदार'* लाहौर)

हदीस सार (**Manual of Hadith**)

♦ ".....इस तरह इस के विभिन्न अध्यायों में वे सारी हदीसें (और आयतें) आ गई हैं जिन की एक मुसलमान को अपने दैनिक जीवन में आवश्यकता पड़ सकती है ...... यह इतना बड़ा महाकार्य है जो एक *'अहमदी'* के हाथों सम्पन्न हुआ ,इस श्रेष्ठ कृति की नुकताचीनी या छिद्रान्वेषण कोरी मूर्खता है।" (मौलाना अब्दुल माजिद दर्याबादी[रअ])

अहमदिय्या सम्प्रदाय के संस्थापक
हज़रत मिर्ज़ा गुलाम अहमद साहिब[रज] की घोषणा

"वह व्यक्ति *लानती* है जो हज़रत पैग़म्बरश्री (मुहम्मद)[सल्ल] के सिवा, उन के बाद , किसी और को *नबी* विश्वास करता है ,और उन की *ख़तमे नबूवत* को तौड़ता है।"

(अख़बार *'अल–हकम'* ,क़ादियान ,10जून 1905 ई. ,पृ. 2)

प्रथम अंग्रेज़ी संस्करण : 1948 ई.
प्रथम उर्दू संस्करण : 1948 ई.
प्रथम हिन्दी संस्करण : 2001 ई.

© *कॉपीराइट सर्वाधिकार* 2001

अहमदिय्या अंजुमन इशाते इस्लाम लाहौर
यू . एस . ए .
Ahmadiyya Anjuman Isha'at Islam Lahore U.S.A. INC.
1315 Kingsgate Road
Columbus, Ohio
43221 U.S.A.

अहमदिय्या अंजुमन इशाअते इस्लाम — इस अन्तर्राष्ट्रीय इस्लामी प्रचार केन्द्र की स्थापना 1914 ई. में लाहौर में हुई। इस महा प्रचार केन्द्र के नींवदाता हज़रत मिर्ज़ा गुलाम अहमद साहिब[अस] के वरिष्ठ शिष्य थे। इस प्रचार केन्द्र का एकमात्र उद्देश्य इस्लाम की वह उदार, सहिष्णु और शांतिप्रिय छवि पुनः दुनिया के सामने रखना है ,जिस का सहज चित्रण कुर्आन शरीफ़ और हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल] के परमशुभ चरित्र में विद्यमान है। इस संस्था ने अब तक संसार की अनेक प्रमुख भाषाओं में इस्लाम पर अति विपुल साहित्य प्रकाशित किया है ,जो सर्वत्र अपार श्लाघा और ख्याति प्राप्त कर चुका है।

हज़रत मौलाना मुहम्मद अली "लाहौरी"र.अ.

सन् 1874 ई. में पंजाब (भारत) में पैदा हुए। आपका शैक्षिक रिकार्ड बड़ा उत्कृष्ट है। 1899 ई. में आप ने एम. ए. और लॉ की डिगरियाँ प्राप्त कीं। तत्पश्चात् वाकालत का अर्थकर व्यवसाय अपनाने ही वाले थे कि उन्हें उनके आध्यात्मिक गुरु ,हज़रत मिर्ज़ा गुलाम अहमद साहिब (चौदवीं सदी हिजरी के ***मुजदिद*** यानि इस्लामी युगसूधारक और ***प्रतिज्ञात मसीहा***) ने आदेश दिया कि वे अपना जीवन इस्लाम की सेवा में समर्पित कर दें। आदेश पाते ही आप ने अपनी सारी सांसारिक योजनाएं त्याग दीं ,और गुरु के चरणकमलों में कादियान आ बैठे। यहाँ उन्हों ने अपने गुरु से इस्लाम धर्म की सत्यता संबंधी वो वो अनमोल मोती बटोरे ,जो संपूर्ण आधुनिक जगत् को इस्लाम की मंगलमय शिक्षाओं की ओर आकर्षित करने वाले थे। बहुत जल्दी वे ***सदर अंजुमने अहमदिय्या क़ादियान*** के सेक्रेटरी बना दिये गए। 1901 ई. में हज़रत मिर्ज़ा साहिबअ.स.ने उन्हें **"Review of Religions"** का संपादक नियुक्त किया ,यह पत्रिका अंग्रेज़ी भाषा में इस्लाम की अग्रणी पत्रिकाओं में प्रमुखतम है। इस में प्रकाशित लेखों ने थोड़े की समय में संसार वासियों के सामने पुनः इस्लाम का सुन्दर ,आकर्षक और पुरातन स्वरूप रख दिया। फलतः अनेक न्यायशील गैर–मुस्लिम विद्वानों और विचारकों ने इस्लाम संबंधी अपनी परंपरागत राय बदल ली ,इन में रूस के दार्शनिक टॉलस्टाय **(Tololstoy)** का नाम उल्लेखनीय है। 1914 ई. में हज़रत मिर्ज़ा साहिब के उत्तराधिकारी (ख़लीफ़ा) हज़रत मौलाना नूरुद्दीनर.अ.का देहांत होते ही अहमदिय्या सम्प्रदाय में सैद्धांतिक मुद्दों को लेकर मतभेद उत्पन्न हो गया। एक घुट ने अपने स्वार्थी प्रयोजनों के निमित हज़रत मिर्ज़ा साहिब को ***मुजदिद्द*** (समुद्धारक) से ***नबी*** बना दिया ,और उन पर विश्वास न लाने वाले को काफ़िर और इस्लाम के दायरे से बाहर करार दिया। इस गैर–इस्लामी हरकत पर हज़रत मौलाना मुहम्मद अली और उनके साथी कादियान छोड़ कर लाहौर चले आए ,और विश्वविख्यात इस्लामी प्रचार केन्द्र ***"अहमदिय्या अंजुमन इशाअते इस्लाम लाहौर"*** की स्थापना की। उस दिन से लेकर अपने देहांत **(1951)** तक हज़रत मौलाना मुहम्मद अली ही इस प्रचार केन्द्र के अध्यक्ष और संचालक रहे। आपके नेतृत्व में अंजुमन की शाखाएं दुनिया की चारों दिशाओं में फैल गईं। आपका रचा उर्दू और अंग्रेज़ी इस्लामी साहित्य लोकप्रीयता की चरम सीमा को प्राप्त हो चुका है। आपकी कुर्आन शरीफ़ की उर्दू और अंग्रेज़ी टीकाओं को सार्वभौम स्वीकृति प्राप्त हुई है। आपने इस्लाम के हर पहलु पर कलम उठाया है। आप का रचा साहित्य पढ़ मुसलमान पक्के मुसलमान और गैर–मुस्लिम इस्लाम के अति निकट आ गए। बाज़ ने इस्लाम भी कबूल कर लिया। इंगलैंड के नवमुस्लिम अंग्रेज़ विद्वान व कुर्आन के अनुवादक **Marmaduke Pickthall** ने हज़रत मौलाना मुहम्मद अली को ***वर्तमान युग का अद्वितीय इस्लाम–सेवी*** करार दिया है।

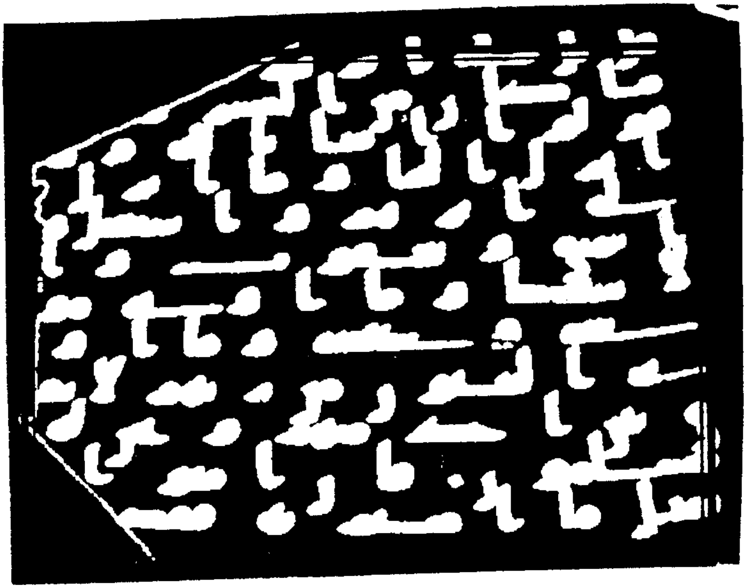

قُلْ بَلْ مِلَّةَ إِبْرَٰهِـۧمَ حَنِيفًا ۖ وَمَا
كَانَ مِنَ ٱلْمُشْرِكِينَ ﴿١٣٥﴾ قُولُوٓا۟ ءَامَنَّا بِٱللَّهِ وَمَآ أُنزِلَ إِلَيْنَا وَمَآ أُنزِلَ إِلَىٰٓ
إِبْرَٰهِـۧمَ وَإِسْمَـٰعِيلَ وَإِسْحَـٰقَ وَيَعْقُوبَ وَٱلْأَسْبَاطِ وَمَآ أُوتِىَ مُوسَىٰ
وَعِيسَىٰ وَمَآ أُوتِىَ ٱلنَّبِيُّونَ مِن رَّبِّهِمْ لَا نُفَرِّقُ بَيْنَ أَحَدٍ مِّنْهُمْ وَنَحْنُ
لَهُۥ مُسْلِمُونَ ﴿١٣٦﴾ فَإِنْ ءَامَنُوا۟ بِمِثْلِ مَآ ءَامَنتُم بِهِۦ فَقَدِ ٱهْتَدَوا۟ ۖ

कुर्आन शरीफ़ की पाचीनतम प्रति (जो हज़रत उसमान[रज] की शहादत (656 ई.) से पूर्व लिखी गई) के एक पृष्ठ (सूरह अल्–बकर 2 : 135–137) का छाया चित्र। नीचे इसी पृष्ठ को अधुनिक लिपि में लिखा गया है।

بِسْمِ ٱللَّٰهِ ٱلرَّحْمَٰنِ ٱلرَّحِيمِ

प्राक्कथन

सन् 1945 ई. की गर्मियों में वोकिंग (Woking) मस्जिद लंदन के इमाम मौलाना अबदुल मजीद साहिब ने मुझे लिखा कि इंग्लैंड की एक सुप्रसिद्ध प्रकाशन संस्था ***कॉसल एंड को*** (Cassle & Co) विश्व के महापुरुषों की जीवनियों पर आधारित एक शृंखला प्रकाशित कर रही है। उन्हों ने इस शृंखला का नाम **"LIVING THOUGHTS"** अर्थात् ***"जीवंत विचारधारा"*** रखा है। यह संस्था हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.] की जीवनी किसी मुसलमान लेखक से लिखवाना चाहती है। लेकिन शर्त यह है कि जीवनी का व्यास पचास साठ हज़ार शब्दों से ज़्यादा न हो। और यह कि मौलाना ने इस संस्था को मेरा नाम दे दिया है। अतएव मैं ने डिलहोज़ी में ही इस पुस्तक को लिखना शुरू कर दिया। पांडुलिपि दसम्बर 1945 ई. के अन्त तक मुकम्मल हो गई ,और 1946 ई. के प्रारंभ में इसे प्रकाशन हेतु संस्था को भेज भी दिया गया। मुद्रण कार्य 1947 ई. के आरंभ में ही सम्पन्न हो गया ,किन्तु विश्वयुद्ध के कारण जिल्दबन्दी का काम एक साल तक रुका रहा। प्रकाशक की ताज़ा तरीन सूचनानुसार यह पुस्तक 25 मार्च 1948 ई. को इंग्लैंड से प्रकाशित हो रही है।

इस बीच जो पत्रव्यवहार मौलाना अब्दुल मजीद के साथ होता रहा उस से ज्ञात हुआ कि पुस्तक की पाण्डुलिपि को देख कर प्रकाशन संस्था ने इस पुस्तक को इतना पसन्द किया कि वह इसका अनुवाद यूरोप की बाज़ भाषाओं में ,जैसे फ्रंच ,जर्मन ,स्पेनिश ,कराना चाहते हैं। बल्कि संस्था ने यह इच्छा भी प्रकट की है कि उसे इसका उर्दू अनुवाद भारत से प्रकाशित करने की अनुमति दी जाये। इस पर मैं ने 1946 ई. की गर्मियों में ,डिल्होज़ी में ,इस का उर्दू अनुवाद शुरू कर दिया। 1947 ई. के आरंभ में यह छपकर तैयार हो चुका था कि लाहौर में दंगों और फ़सादों की आग भड़क उठी। जिस से इस के प्रकाशन में विलंब पड़ गया। और 15 अगस्त

1947 ई. के बाद जो परिस्थितियां उत्पन्न हुईं उनके कारण कुछ प्रतियां प्रेस में ही रह गईं ,जहाँ वह पुस्तक छप रही थी ,और प्रेस बन्द हो गया। अब मार्च के शुरू में आकर यह कार्य पूर्ण हो पाया है। यह शुभ संयोग ही है कि इस पुस्तक के अंग्रेज़ी और उर्दू दोनों संस्करण अब संभवत: एक ही दिन यानि 25 मार्च 1948 ई. को प्रकाशित हो रहे हैं।

मैं ने हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.] की एक सविस्तार जीवनी भी लिखी है ,जिसका उर्दू नाम *"सीरत खैरुल्–बशर"* है। इस के प्रकाशन पर पंजाब यूनिवर्सिटी ने पाँच सौ रुपे का पुरस्कार भी दिया था। इस जीवनी के अंग्रेज़ी संस्करण का नाम **"Muhammad The Prophet"** है। इस का अरबी अनुवाद अभी पिछले ही वर्ष अरब देशों में प्रकाशित हो चुका है। इस से पर्व इसके जर्मन ,तुर्की ,बंगला ,हिन्दी और तमिल अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। मैं ने इस जीवनी का एक संक्षिप्त संस्करण भी प्रकाशित किया जिस का अनुवाद दस बारह भाषाओं में प्रकाशित हो चुका है। लेकिन वर्तमान पुस्तक बिल्कुल अछूते अन्दाज़ में लिखी गई है। आकार में लघु होते हुए भी इस में न सिर्फ हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.] की पवित्र जीवनी आ जाती है ,बल्कि इस में संपूर्ण कुर्आन शरीफ की शिक्षाओं का तत्त्वसार भी आ गया है। इस प्रकार यह पुस्तक कुर्आन शरीफ़ और हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.]की पवित्र जीवनी का एक अद्‌भुत एवं सुखद समावेश है। इस में मानव जीवन संबंधी सभी पहलुओं पर कुर्आन शरीफ़ से प्रकाश डाला गया है। जो भी व्यक्ति इस की विषय सूची पर सरसरी दृष्टी डाले गा उसे मालूम होगा कि इस पुस्तक में वर्तमान युग की उन तमाम समस्याओं का समाधान है ,जिन को हमारा नवजवान वर्ग अपने अल्पज्ञान या अज्ञान के कारण न समझ कर ठोकरें खा रहा है। यह किताब एक संपूर्ण मार्गदर्शन है , क्योंकि इस में जहां एक ओर वर्तमान युग की मानवीय समस्याओं का कुर्आन शरीफ द्वारा समाधान है ,तो दूसरी ओर हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.]के पवित्र जीवन से उस पर व्यवहारिक प्रकाश डाला गया है। इस तरह जीवन्त नबी की यह जीवन्त शिक्षा *"नूरुन् अला नूर"* , प्रकाश पर प्रकाश है। इस में एक ओर वह प्रकाश है जो ब्रह्मांड के एक मात्र रचयिता ने अपनी *वह्य* द्वारा उतारा , और दूसरी ओर वह प्रकाश है जो पुरुषोत्तम हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.]ने अपने

स्वस्थ एवं आदर्श चरित्र द्वारा प्रस्तुत किया। इस का उर्दू नाम मैं ने "***जीवन्त विचारधारा*** " के बजाए "***जिन्दा तालीम*** (=शिक्षा)" रखा है वह इस लिये कि नबी जो कुछ कहता है वह उसके व्यक्तिगत विचार नहीं होते ,बल्कि वह अल्लाह की *वह्य* द्वारा प्राप्त दिव्य शिक्षा होती है।

इस पवित्र जीवनी को लिखते वक्त एक दिक्कत जो मैं ने महसूस की ,वह यह कि एक ओर पुरुषोत्तम मुहम्मद[सल्ल.] के पावन व्यक्तित्व और अल्लाह की वाणी के सौन्दर्य की अपार एवं सर्वमुखी व्यापकता है ,तो दूसरी ओर लिखक की सीमित दृष्टि तथा अपर्याप्त वर्णनशक्ति है। जब मुसलमानों के उत्तमोत्तम मनमस्तिष्क इन बाधाओं को दूर करने की कोशिश में लग जाएं गे ,जिन बाधाओं के कारण इन दो प्रकाश–स्रोतों की रोशनी दुनिया तक पहुंचने से रुकी हुई है ,तो यह अँधकारमय धरती प्रभु के प्रकाश से चमक उठे गी ,और वे सब इन्सान जिन के सीनों में दिल हैं वे कुर्आन शरीफ़ और हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.] के मंगलमय प्रकाश से प्रज्वलित हो उठें गे।

भवदीय

मुहम्मद अली

अमीर–ए–जमाअते अहमदिय्या लाहौर

18 मार्च 1948 ई.

हिन्दी अनुवादक की ओर से ––

प्रस्तुत पुस्तक के महत्त्व एवं गरिमा का उल्लेख लेखक द्वारा लिखित प्राक्कथन में आ चुका है। प्रकाशनोपरांत जो अन्तर्राष्ट्रीय श्लाघा और ख्याति इस महाप्रयोज्य पुस्तक ने उपार्जित की है उसकी एक मामूली झलक हम पाठकगण के समुख लाना चाहें गे :

■"माननीय लेखक महोदय ने इस पुस्तक में हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद^{सल्ल.} के पावन मिशन ,उनकी प्रमुख उपलब्धियों को अति सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है। विषय को अत्यन्त प्रमाणिक तथ्यों के आधार पर प्रस्तुत किया गया है। पुस्तक में केवल उन्ही घटनाओं और तथ्यों को पेश किया गया है जिन की प्रमाणिकता एकदम निर्विवाद और असंदिग्ध है। वर्णनशैली अत्यन्त सुन्दर ,सरल और सुबोध ,परमाणिक तथ्यों पर आधारित होने के साथ साथ वैज्ञानिक दृष्टिकोण लिये हुए है –– यही अद्भुत विशेषताएं इस लघु पुस्तक की श्रेष्ठता की साक्षी हैं। किसी भी अवसर पर ऐसा नहीं लगता कि लेखक महोदय ने अपने विचारों या धारणाओं को पाठक पर ज़बरदस्ती थोंपने की कोशिश की हो।"

(*सिवल एण्ड मिलिटरी गेज़ैट लाहौर* ,
"Civil & Millitary Gazzette ,Lahore")

■" इस पुस्तक में अरबी नबी(सल्ल.) के प्रकाशमय विचारों को अत्यन्त सुन्दर एवं रोचक शैली में प्रस्तुत किया गया है। यह पुस्तक कुर्आन शरीफ़ की आत्मा का भी पर्याप्त निरूपण करती है।"

(*द आर्यन पॉथ* , "The Arian Path")

■"इस लघु पुस्तक का सब से बड़ा कमाल यह है कि इस में हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद(सल्ल.) के पवित्र जीवन के सामाजिक ,आर्थिक

कर दिया गया है।"

(*टाइम्ज़ ऑफ़ सेलोन* "Times of Cylone")

इस पुस्तक की उपयोगिता का अनुमान इस बात से भी लग सकता है ,कि मिस्र देश के शिक्षा–विभाग ने स्वयं इस का अरबी में अनुवाद कराया और फिर इसको पाठ्यपुस्तकों में शामिल किया।

हज़रत मौलाना मुहम्मद अली[रज] ने अपने उर्दू अनुवाद का नाम *"हज़रत मुहम्मद[सल्ल] की जीवन्त विचारधारा"* के स्थान पर *"ज़िन्दा नबी की ज़िन्दा तालीम (शिक्षा)"* रखा था ,और कारण यह बताया था :

"इसका नाम मैं ने ज़िन्दा *अफ़कार* (विचारधारा) के बजाए ज़िन्दा *तालीम* रखा है ,कारण नबी जो कुछ कहता है वे उसके अपने विचार नहीं होते बल्कि वह अल्लाह की प्रदान की हुई दिव्य–शिक्षा होती है।"

अतएव हमारा हमारे पाठकगण से सविनय निवेदन है कि वे हमारे हिन्दी नाम *"हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल] की जीवन्त विचारधारा"* को इसी भाव और अर्थ में लें।

हिन्दी अनुवाद करते समय हम ने मूल अंग्रेज़ी कृति तथा इसके उर्दू रूपांतर ,दोनों को सामने रखा है। कुर्आनी आयतें का अनुवाद स्वर्गीय हज़रत मौलाना मुहम्मद अली "लाहौरी" की विश्वविख्यात *उर्दू तफ़सीर* (टीका) بیان القرآن *"बयान अल्–कुर्आन"* के हिन्दी अनुवाद से लिया गया है। यह सटीक अनुवाद अभी प्रकाशनाधीन है। हमें पूर्ण आशा है कि पाठकगण हमारे इस प्रयास को ज़रूर पसन्द करें गे। मानवीय प्रयासों में संशोधन की गुंजाइश सदा ही शेष रहती है। अतः हमारा हमारे माननीय पाठकगण से विनम्र निवेदिन है कि वे अपने विचार हमें अवश्य लिख भेजें। सुधार योग्य भूल नज़र आये तो ज़रूर बताएं ताकि अगले संस्करण में उसे सुधार दिया जाये। कुर्आन शरीफ के हिन्दी अनुवाद के विषय में भी अपनी मूल्यवान राय लिखना न भूलें। धन्यवाद !

भवदीय

खुर्शीद आलम तारीन

तारीन मंज़िल , बटमालू श्रीनगर , कश्मीर।

विषय सूची

क्रम सं.	विषय	पृष्ठ

1. अध्याय — 1

संक्षिप्त जीवनी (पृ.1 – पृ.47)

–वंश परिचय तथा अरब देश की दशा ——— 1
– दिनचर्या और चरित्र ——————— 3
–सांसारिक मोहमाया के प्रति विरक्ति———— 6
–गरीबों और पीड़ितों की सहायता ———— 7
–अरब की गरी हुई दशा के प्रति शोक व चिन्ता———— 9
–पैग़म्बर के रूप में नियुक्ति———— 10
–शत्रु द्वारा अत्याचार और उत्पीड़न———— 11
–हबश देश की ओर *"हिजरत"*———— 12
–हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की सुदृढ़ता———— 14
–हाशम कबीले का बॉकाट और परिवेष्टन——— 15
–ताइफ़ में धर्म–प्रचार ———— 16
–मदीना में इस्लाम का प्रसार ———— 17
–हिजरत———— 18
–तेरह वर्ष का काम———— 19
–मदीना का प्रारंभिक काल———— 20
–कुरैश की सैनिक योजनाएं और आप की शिक्षा———— 21
–युद्ध की अनुमति———— 23
–कुरैश की ओर से युद्ध की शुरूआत और बदर युद्ध—— 26
–उहद का युद्ध———— 28

–अहज़ाब या ख़ंदक का युद्ध———— 30
–हुदैबिया की संधि———— 33
–बादशाहों और सम्राटों के नाम पत्र———— 35
–मक्का विजय———— 36
–अन्य कौमों एवं राष्ट्रों से युद्ध———— 38
–यहूदियों का विश्वासघात———— 40
–तबूक का युद्ध———— 41
–संधि भंग करने वाली जातियों का अन्त———— 42
–शिष्टमंडलों का आगमन और अरब
देश में इस्लाम का प्रसार———— 45
–हुज्जतुल्–विदाअ यानि विदाई हज्ज———— 46
–बीमारी और देहांत———— 47

2. अध्याय —— 2

जनसुधार में अपूर्व सफलता (पृ.49 – पृ.59)

–आप ने अरब देश को किस हालत में
पाया और किस हालत में छोड़ा———— 49
– अपूर्व सफलता पर यूरोप की गवाही ———— 53
–सर्वमुखी सुधार———— 56
–मानव समाज में एकता और सौहार्द की नींव—— 58

3. अध्याय —— 3

बहुविवाह पर आपत्ति (पृ.60 – पृ.70)

–अभिज्ञात महापुरुष और बहुविवाह———— 60
– पवित्र जीवन के चार भाग ———— 61
–अविवाहित जीवन———— 61
–एकविवाही जीवन———— 62
–बहुविवाह———— 64
–सुख–चैन का अभाव———— 66

– हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की रातें
किस प्रकार गुज़रती थीं ?—— 67
– हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]का सादा जीवन—— 68
–हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के पवित्र
जीवन का चौथा भाग—— 70

4. अध्याय — 4

आदर्श चरित्र (पृ.71 – पृ.82)

–हज़रत आइशा[रज.] की गवाही—— 71
–सरलता , सादगी और निष्कपटता—— 71
–रौटी , कपड़ा और मकान—— 73
–पवित्रता और सफाई—— 74
–सत्यता और वचनपानल—— 75
–दु:ख और कष्ट झेलना—— 76
– दृढ़ संकल्प और अडिगता—— 76
–विनम्रता और पुरुषार्थ—— 77
–लज्जा और अपेक्षावृत्ति—— 78
–न्याय—— 78
–क्षमाभाव—— 79
–करुणा और दयादृष्टि—— 80

5. अध्याय — 5

अल्लाह के अस्तित्व पर विश्वास (पृ.83 – प.127)

–बुनियादी शिक्षा—— 83
–परमात्मा पर विश्वास—— 84
–सुधार का काम भी अल्लाह पर
विश्वास से शुरू हुआ—— 94
–परमात्मा की सत्ता पर
मानव–प्रकृतिकी गवाही—— 98
–ईमान का प्रार्थना द्वारा व्यवहार में परिवर्तन—— 100

– अल्लाह प्रार्थना सुनता है—————— 102
–परमात्मा पर भरोसा रखने की शिक्षा—————— 103
–प्रभु की शरण माँगते रहने की शिक्षा—————— 104
–अल्लाह इन्सान का मित्र है—————— 105
–अल्लाह की दयालुता अपरंपार है—————— 106
–परमात्मा का प्रेमभाव—————— 108
–कर्मों का परिणाम और मनुष्य
का उत्तरदायित्व—————— 111
–मनुष्य का हर कर्म और हर कथन
रिकार्ड कर लिया जाता है—————— 112
–अच्छे और बुरे कर्मों का तोला जाना—————— 114
–कर्मों का परिणाम—————— 115
–मानव जाति का रूहानी अनुभव—————— 116
–पैग़म्बरों की बात न मानने का परिणाम—————— 121
–ईमान (विश्वास) का अमल
(व्यवहार) में परिवर्तन —————— 125
–*पाप–जननी* — शराब—————— 126

6. अध्याय — 6

मानवजाति की एकता (पृ.128 – पृ.140)

–अरब समाज में भेदभाव—————— 128
–संपूर्ण मानवजाति की एकता
की सुखद घोषणा—————— 129
–जातिवाद , वर्णवाद और भाषावाद—————— 130
–परमात्मा के विश्वव्यापी भौतिक
और आध्यात्मिक नियम—————— 133
–कर्मफल का नियम भी एक है—————— 135
–मानवसमाज की एकता के सिद्धांत को
अमलाना अति दुष्कर कार्य था—————— 136
–व्यवहारिकता की प्रथम नींव—————— 137

7. अध्याय — 7

इन्सान का उच्च स्थान (पृ.141 – पृ.157)

—मनुष्य का परमात्मा के सिवाय किसी और के आगे झुकना मानवता का अपमान है———— 141
—ब्रह्मांड की सभी वस्तुएं मनुष्य की सेवा के लिये रचल गई हैं———————— 143
—मनुश्य और ज्ञान उपार्जन—————————— 145
—सृष्टि—वर्गों पर चिन्तन—मनन————————— 146
—हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] ने इन्सान को दास से स्वामी बना दिया—————— 148
—इन्सान स्वभावत: पवित्र है—————————— 149
—बहुदेववादियों के नाबालग बच्चे स्वर्ग में———— 150
—इन्सान में परमात्मा की आत्मा का फूंका जाना———————— 151
—मानवीय जीवन का उच्चतम उद्देश्य———— 152
—भौतिक जीवन का आध्यात्मिक जीवन से संबंध————————— 154
— मनुष्य की उन्नति और विकास का क्षेत्र असीम है——————— 156
—आग रूहानी रोगों का इलाज है————————— 157

8. अध्याय — 8

नमाज़ और प्रार्थना (पृ.158 – पृ.171)

—हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.] के तीन प्रथम कार्य——————— 158
—उपासना को मनुष्य के दैनिक व्यापार में शामिल करना————— 160
—उपासना को शक्ति—स्रोत बनाना——————— 161
— उपासना हृदय को पवित्र और ईश्वरीय सद्गुणों के रंग में रंग देती है———— 162

– परमात्मा से मार्गदर्शन और
सहायता की याचना———————— 165
–नमाज़ इन्सान का रूहानी भोजन है———— 165
– उपासना को समानता और एकता
का प्रबल साधन बनाना———— 166
–हर समय और हर दशा में प्रार्थना
की शिक्षा———— 168

9. अध्याय — 9
जनसेवा (पृ.172 – पृ.189)
–प्रभु की उपासना द्वारा जनसेवा की
भावना का उदय———— 172
–हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] आरंभकाल से
ही असहाय और अत्याचारग्रस्त
लोगों के पक्षधर थे———— 175
–दुनिया के नैतिक पतन पर चिन्ता———— 175
– हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.]ने कमज़ोरों
ओर अत्याचारग्रस्त वर्गों को
उनके अधिकार दिलाये———— 176
–अन्य लोगों के प्रति सौहार्द और सेवाभाव—— 177
–बेज़ुबान जीवजन्तुओं पर दया———— 178
–उद्धारता और दानशीलता ———— 179
–परमात्मा के प्रेम को जनसेवा की
नींव ठहराया———— 179
–दान–पुण्य से धन बढ़ता है———— 182
–दानकर्म निस्स्वार्थ हो———— 182
–उत्तम वस्तु ही दान की जाए———— 184
–दानशीता का आधार विवेक है———— 184
–दान प्रत्यक्ष भी हो और गुप्त भी———— 185
–दान मुस्लिम और गैरमुस्लिम —
दोनों के लिये है———— 185

–दान का पात्र कौन ? —— 186
–धन में औरों का हक़—— 187
–दान शब्द के अर्थ में व्यापकता—— 188

10. अध्याय — 10
चरित्र निर्माण (पृ.190 – पृ.218)
–नैतिक सुधार को संपूर्ण सुधार कार्यक्रम में प्रधानता—— 190
–हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की अपूर्व सत्यवादिता—— 191
–सच बोलने की शिक्षा—— 192
–हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की सुदृढ़ता—— 196
–सच्चाई के बाद सुदृढ़ता की शिक्षा—— 197
–साहस और निर्भयता—— 201
–विनम्रता और विनयशीलता की शिक्षा—— 204
–निस्स्वार्थता—— 206
–वचनबद्धता—— 208
–हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]और आपके सहाबा की वचनबद्धता—— 209
–संयम और यौन–सदाचार—— 210
–सत्यनिष्ठा और निष्कपटता—— 213
–कृतज्ञता और शुक्रगुज़ारी—— 214
–छिद्रान्वेषण , उपहास तथा तिरस्कार की मनाही—— 215
–सहाबा[रज]की उच्च नैतिकता—— 216

11. अध्याय — 11
धन और संपत्ति (पृ.219 – पृ.244)
–संपूर्ण शिक्षा—— 219
–धन और संपत्ति प्रभु का वरदान है—— 220
–धन कमाने के साधन—— 223

–धन कमाते समय प्रभुस्मरण———— 225
–प्रकृति में असमानता का नियम———— 227
–मानवीय विषमताएं और विभेद———— 228
–धन–संपत्ति मानवीय प्रतिष्ठा या
मानसम्मान का आधार नहीं———— 229
–धन जमा करने के दुष्परिणाम———— 233
–धन के लोभ से नैतिक पतन———— 234
–धन के प्रेम को सीमित रखने के नियम———— 236
–ज़कात———— 237
–हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.]का उद्देश्य
पूंजीपतियों का विनाश नहीं था———— 238
–विरासत का इस्लामी नियम ———— 239
–ऋणी और ऋणदाता———— 240
–ब्याज की मनाही———— 241
–धर्मार्थ एवं खैराती कामों के लिये वसीयत———— 242

12. अध्याय —— 12
काम और मेहनत (पृ.245 – पृ.253)
– प्रत्येक व्यक्ति काम करे———— 245
–फल कर्म के अनुरूप मिलता है———— 246
–कोई काम , कोई पेशा तुच्छ नहीं———— 247
–नौकर और मालिक———— 249
– सरकारी मुलाज़िम———— 250
–व्यापार———— 251
–कृषि———— 252

13. अध्याय —— 13
घरेलू जीवन (पृ.254 – पृ.275)
–औरत की स्थिति में क्रांति———— 254
–स्त्री और पुरुष जीवन–साथी हैं———— 255

–औरत और मर्द के अस्तित्व में समानता——— 259
–विवाह का महत्त्व और उसके नैतिक लाभ—— 262
–विवाह द्वारा इन्सान का आध्यात्मिक विकास—— 264
–विवाह की सार्वजनिक घोषणा—————— 264
–दम्पति के अधिकार और ज़िम्मेदारियाँ———— 265
–पत्नी के साथ अच्छा व्यवहार——————— 267
–तलाक—————————————— 268
–बहुपत्नीत्व————————————— 275

14. अध्याय — 14

हकूमत या प्रशासन (पृ.276 – पृ.296)

–हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल.] के
सन्देश की व्यापकता—————— 276
–संपूर्ण एवं आदर्श नमूना—————————— 278
–शासक में आध्यात्मिकता का संचार————— 279
–शासक वर्ग सब से पहले परमात्मा
के सामने उत्तदायी है————— 282
–मानवीय अधिकारों में समानता——————— 284
–हाकिम या पदाधिकारी की आज्ञा
का पालन——————— 285
–आवश्यकता पड़ने पर नए कानून
बनाना——————— 286
–प्रजा तंत्र का तीसरा नियम————————— 288
–अमीर या शासक की पदच्युति——————— 289
–अमीर या शासक के अधिकारों
में संशोधन——————— 290
–प्रशासन संबंधी सिद्धांत—————————— 290
–इस्लामी राज्य और युद्ध—————————— 292
–युद्ध में अनावश्यक रक्तपात
और तबही से मनाही——————— 294

हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद[सल्ल] के दो एतिहासिक पत्रों के छायाचित्र जो उन्होंने बहरैन के राजपाल मुन्ज़िर सावी (ऊपर) और मिस्र के सम्राट मक़वक़िस (नीचे)को भेजे। हज़रत पैग़म्बरश्री की मोहर के अक्षर साफ़ पढ़े जा सकते हैं।

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيمِ

अल्लाह के (मंगलमय) नाम से , जो अपार दयालु ,सतत कृपालु है।

अध्याय 1

संक्षिप्त जीवनी

वंश परिचय तथा अरब देश की दशा

हज़रत पैग़म्बरश्री का शुभ नाम محمد ***मुहम्मद*** और दूसरा नाम احمد। ***अहमद***सल्ल.[1] था। आपका मंगलमय जन्म 20 अप्रैल 571 ई. (इस्लामी चन्द्र कैलन्डरानुसार 12 ***रबीउल्-अव्वल***) को हुआ। आपके पिताश्री का नाम अब्दुल्लाह और माताश्री का नाम आमिनह था। आप मक्का के कुरैश नामक वंश के सर्वश्रेष्ठ कुल बनी हाशिम की संतति थे। कुरैश समूचे अरब का प्रमुखतम वंश था। कारण , मक्का स्थित ***'ख़ाना कअबा'*** के संरक्षक कुरैश ही थे। ***कअबा*** अरब देश का प्राचीनतम आध्यात्मिक केन्द्र था , जिसकी तीर्थयात्रा के लिए लोग हर वर्ष अरब देश की चारों दिशों से एकत्र होते थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के जन्म के समय अरब देश विकट मूर्तिपूजा में ग्रस्त था। और तो और स्वयं ***कअबा*** भी

---

1. صَلَّى اللّٰهُ عَلَيْهِ وَسَلَّمَ ***"सल्लल्लाहु अलैहि व सल्लम"*** *(=उन पर अल्लाह की अपार कृपा तथा शांति वर्षित हो)* का संक्षिप्त रूप ,जहाँ भी हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद का नाम आ जाये पूरा वाक्य पढ़ना चाहिये। (अनुवादक)

देवप्रतिमाओं से भरा हुआ था। प्रत्येक अरब कबीले की अपनी अपनी कुलदेव मूर्ति इसके अतिरिक्त थी। इस व्यापक मूर्तिपूजा के बावजूद अरब लोग अत्यन्त " **भौतिकवादी** " थे , जैसा कि **बॉसवर्थ स्मिथ** (**Bosworth Smith**) ने लिखा है। यही लेखक लिखता है ,

"अरबों का वह इस्लाम-पूर्व काव्य , जो हम तक पहुंच पाया है उसके भावों और विचारों को यदि देखा जाए तो उस में खान-पान , सांसारिक सुखों और भोगविलास के अलावा और कोई उच्च भाव नज़र नहीं आता।"

मृत्यु के बाद वाले जीवन पर उनका कोई विश्वास न था , न अपने कर्मों के प्रति उत्तरदायी होने का ही उन्हें कोई एहसास था। हां ! जिन्नों और भूतप्रेतों में उन का विश्वास था। तथाकथित दुष्टात्माओं को रोगों का कारण समझते थे। अरब में सर्वत्र अज्ञान और अंधकार का राज्य था। समाज का उच्च वर्ग भी अज्ञान और जहालत में उसी तरह ग्रस्त था जिस तरह समाज का निम्न वर्ग। अरब समाज के कुलीनतम एवं श्रेष्ठतम लोग भी अपने अशिक्षित होने को अपनी प्रतिष्ठा जताते थे। नैतिकता और शिष्टाचार के लिए कोई मर्यादा , कोई कायदा कानून मुकर्रर न था। हर तरफ बुराई ही बुराई नज़र आती थी। व्यभिचार अथवा नाजाइज़ यौन संबंधों पर किसी प्रकार का कोई प्रतिबंध न था। अश्लील और कुत्सित कविताओं को खुली सभाओं में पढ़ा जाता था। व्यभिचार की न तो कानून में ही कोई सज़ा थी , और न उसे नैतिक रूप से ही बुरा समझा जाता था। वेश्यावृत्ति तथा वेश्यागमन में कोई दोष न समझा जाता था। बड़े बड़े कुलीन लोग भी वेश्यालयों की कमाई खाते थे।

"अरब औरत की दशा अत्यन्त दयनीय एवं अपमानजनक थी , भारतीय मनु महाराज द्वारा विहित नियमों से भी अधिक अपमानजनक।"

(बॉसवर्थ स्मिथ)

औरत को चल-संपति के समान समझा जाता था। दाय में भागीदार बनना तो दूर स्वयं उसी को दाय में सम्मलित जाना जाता था। मृतक के वारिस को यह हक था कि वह जिस तरह चाहे उसे रखे ,चाहे तो किसी और से ब्याह दे या स्वयं ही उस से विवाह करले , भले ही वह उसके बाप की ब्याहता पत्नी ही क्यों न हो।

अखिल अरब में न तो कोइ सुव्यवस्थित प्रशासन था , और न कोई स्थानीय कायदा-कानून। *" जिस की लाठी उसकी भैंस "* — सर्वत्र यही नीति प्रचलित थी। सभी अरब एक ही जाति के लोग थे , एक ही भाषा बोलते थे। तिस पर भी वे संसार का एक ऐसा विगठित समाज थे जिस में एकता और सौहार्द नाम मात्र को भी न था। कबीला कबीले के खिलाफ़ और खानदान खानदान के खिलाफ़ मामूली से मामूली बहाने पर युद्ध की घोषणा कर देता था। ताकतवर लोग कमज़ोर के अधिकारों को पाँव तले रौंदते थे। निर्बल के लिए न्याय का कोई द्वार खुला न था , जहां वह अपनी फरयाद ले जा सकता या अत्यचारी का अत्याचार रुकवा सकता। विधवा और अनाथ पर तरस खाने वाला कोई न था। दासों और गुलामों के प्रति अत्यन्त क्रूर एवं अमानवीय व्यवहार किया जाता था।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की दिनचर्या और चरित्र

यही था वह कीचड़ रूपी अरब समाज जिस में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल का उदय एक निर्मल और स्वच्छ कमल के समान हुआ। जन्म लेने से पहले ही आप अनाथ हो चुके थे। जब आप की आयु छः वर्ष को पहुंची तो माताश्री का भी देहांत हो गया। यों तो आप कुरैश के श्रेष्ठतम कुल के कुलदीपक थे किन्तु शिक्षा के मामले में आपकी हालत बिल्कुल अन्य अरबों के समान थी , अर्थात् आपको भी लिखना पढ़ना किसी ने न सिखाया। लिखने पढ़ने यानि अक्षर-ज्ञान से आप अन्तिम उम्र तक अपरिचित रहे। साधारण बच्चों के विपरीत आपका समय व्यर्थ खेल-कूद या तमाशा देखने में नष्ट न होता था। आपको एकांत अधिक प्रिय था , किन्तु अपने चचाश्री अबु तालिब के कामों में उनका हाथ बटाते थे। आप ने कुछ समय के लिए बकरियां भी चराईं। अरब के कुलीन और इज्ज़तदार घराने भी बकरियां चराने को दोषरहित समझते थे। जवानी में आप का रुचिकर्म व्यापार था। किन्तु एक अद्भुत विशेषता थी जिस ने आपको आपके समकालीन लोगों से एकदम प्रभिन्न कर रखा था , वह थी आपकी सर्वोच्च नैतिकता और स्वच्छ चरित्र। इस बात की साक्षी केवल सामान्य इतिहास में ही उपलब्ध नहीं , बिल्कि स्वयं कुर्आन शरीफ़ में भी है , जिस में आपके पवित्र जीवन का प्रमाणिकतम इतिहास सुरक्षित है। इस तथ्य को कुर्आन शरीफ़

यों प्रतिपादित करता है :

وَإِنَّكَ لَعَلَىٰ خُلُقٍ عَظِيمٍ

व इन्नक लआला खुलुक़िन अज़ीम् (68 : 4) ,

अर्थात् *" और (हे मुहम्मद !) तू निश्चय ही अत्युच्च शिष्टाचार का स्वामी है।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.अपने जीवन का अधिक भाग एकांत में ही गुज़ारते थे। लेकिन आपके मित्रों की भी एक अलग मण्डली थी , यह मण्डली अपने सदस्यों के पावन चरित्र तथा सदाचार के लिए देश भर में सुप्रसिद्ध थी। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का यौवन काल भी नेकी ,जनसेवा, दीन–दुखियों की सहायता , निःस्वार्थता , सत्यप्रियता और ईमानदारी का एक आदर्श एवं उत्तमोत्तम नमूना है। कुर्आन शरीफ़ और इतिहास — दोनों इस बात के साक्षी हैं कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने कभी झूठ नहीं बोला। आपके परम शत्रु हर्स़ , अबू जहल और अबू सुफ़ियान बल्कि अरब के सभी क़बीलों ने यह इक़रार किया कि आप साक्षात् सत्यवादी हैं। दुश्मन का दुश्मनी के ज़माने में ऐसा इक़रार यही सिद्ध करता है कि आप की सत्यवादिता एक ऐसी निर्विवाद तथा सर्वमान्य वास्तविकता थी कि जिस से इन्कार नहीं हो सकता था। इस से भी बढ़कर यह कि स्वयं कुर्आन शरीफ़ में यह दावा किया गया है कि कोई भी व्यक्ति आप के जीवन के प्रारंभिक चालीस वर्षों पर ,जो साधारण मनुष्य के पाश्विक आवेशों का ज़माना होता है ,कदापि उँगली नहीं उठा सकता :

فَقَدْ لَبِثْتُ فِيكُمْ عُمُرًا مِّن قَبْلِهِۦٓ أَفَلَا تَعْقِلُونَ

फ़क़द् लबिस्तु फ़ीकुम् अुमुरम्–मिन क़ब्लिही अफ़ला तअक़िलून

अर्थात् *" देखो ! इस से पहले मैं तुम्हारे बीच एक (लम्बी) उम्र बिता चुका हूँ , तो क्या तुम बुद्धि से काम नहीं लेते ?"* (10 : 16)

इस संबंध में इतिहास की गवाही भी अति स्पष्ट और प्रबल है , क्योंकि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के पवित्र और निर्मल आचरण , सत्यवादिता और ईमानदारी के कारण ही लोग उन्हें الأمين ***"अल्–अमीन"*** पुकारते थे , यानि सब लोग आपको ***सर्वगुण संपन्न*** मानते थे। चुनांचि एक बार , जब आपकी आयु 35 के आस पास थी , ***कअबा*** के नवनिर्माण के उपरांत حجر اسود ***हजर–ए–अस्वद*** (काले पत्थर) के मामले को लेकर मक्का के

क़बीलों में झगड़ा उठ खड़ा हुआ ,हर कबीला यही कहता था कि यह पवित्र पत्थर उसी के हाथों रखा जाएगा। अन्ततः यही तय हुआ कि जो व्यक्ति प्रातःकाल सब से पहले ***कअबा*** में प्रवेश करेगा उसी का फैसला अन्तिम माना जाएगा। ***कअबा*** में सब से पहले प्रवेश करने वाले आप ही थे ,आप को देख कर सब लोग सहर्ष चिल्ला उठे — " वह देखो ***अल्-अमीन*** आगया ,***अल्-अमीन*** आगया !" **सर विलियम मियूर** (Sir William Muir) जिस ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की जीवनी एक कटुआलोचक के रूप में लिखी है , वह भी स्वीकार करता है कि जवानी में आप का चरित्र एकदम निर्मल और दोषरहित था :

> **"वे सब लोग जिन की गवाही को हम प्रमाणिक मान सकते हैं इस बात पर सहमत हैं कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के यौवनकालीन चरित्र में लज्जा, विनम्रता , शिष्टाचार और मानमर्यादा का वह अपूर्व प्रदर्शन है जिसका तत्कालीन मक्कावासियों में सर्वथा अभाव था।"**

यही इतिहासकार आगे चलकर लिखता है :

> **"कुदरत ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को एक पवित्र हृदय , कोमल अभिरुचि एकांत प्रियता और विचारशील मनोवृत्ति प्रदान की थीं। अतः वे स्वभावतः प्रायः अपने ही विचारों में व्यस्त रहते थे। अवकाश के उन क्षणों में , जिन को अनुच्च और घटिया लोग मनोविनोद और भोगविलास में गंवा देते हैं , आप चिन्तन-मनन किया करते थे। इस एकांतप्रेमी तथा लज्जाशील नवयुवक के पवित्र आचरण और मर्यादायुक्त कर्मों ने नगरवासियों के दिल में घर कर लिया था , और सब ने एकस्वर होकर *'अल्-अमीन'* की सम्मानजनक उपाधि दे रखी थी।"**

उस नगर में रहते हुए भी — जहां चप्पे चप्पे पर शराब के अड्डे थे और जहां आए दिन मदिरापान की प्रतियोगिताएं आयोजित होती थीं — आप के होठ इस पाप-जननी के स्वाद से अपरिचित ही रहे। जहां पग पग जुएबाज़ी की गोष्ठियां जमती थीं — आप का ध्यान कभी इस हानिकारक मनोरंजन की ओर आकर्षित नहीं हुआ। तलवार-बाज़ी और युद्धकला तो मानो अरब वासियों की घुट्टी में थी , वे दिन रात इसी कार्य में लगे रहते थे। किन्तु हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने कभी तलवार हाथ में न ली। इस वास्तविकता को **मियूर** ने भी स्वीकारा है , वह लिखता है :

> **"यद्यपि आप की आयु बीस को पहुंच चुकी थी परन्तु आप के मन में**

युद्ध के प्रति तनिक भी लगाव उत्पन्न न हुआ था।"

आपके चारों ओर युद्ध लड़े जाते परन्तु आप ने कभी किसी युद्ध में भाग न लिया। सिवाय उस युद्ध के जो कुरैश और हवाज़न के बीच हुआ। यह युद्ध अरब इतिहास में ***हरबुल्-फ़िजार*** [1] के नाम से जाना जाता है। और इस में भी आप ने केवल इतना ही काम किया कि जो तीर दुश्मन की ओर से आते थे उन्हें उठा उठा कर अपने चचाओं को देते थे।

सांसारिक मोहमाया के प्रति विरक्ति

आप उन दिनों व्यापार में व्यस्त रहते। किन्तु यह पेशा भी आप ने धनवान् बन जाने के उद्देश्य से नहीं अपनाया था। धन का मोह आप के दिल में बचपन से लेकर अन्तिम राजपाट के ज़माने तक कभी नहीं जागा। बल्कि जब धन–दौलत आप के कदमों पर निछावर होती थी उस वक्त भी आप ने सांसारिक धन को एक तुच्छतम वस्तु से अधिक न समझा। व्यापार का पेशा आप ने अपने चचाश्री अबू तालिब की आर्थिक सहायता के लिए इख़्तियार किया। अबू तालिब का परिवार काफी बड़ा था और उनकी माली हालत अच्छी न थी। इस संबंध में मियूर लिखता है :

"हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] के मन में धन का लोभ कभी उत्पन्न न हुआ। जीवन के किसी भी चरण में आप ने धनसंचय हेतु दौड़धूप न की। यदि आपको अपने हाल पर छोड़ दिया जाता तो संभवतः आप अपने वर्तमान जीवन के आंतरिक सुख–संतोष को व्यापार–यात्राओं और अन्य ज़िम्मेदारियों पर तरजीह देते। स्वेच्छा से ऐसी यात्राओं पर जाने का विचार भी आपके मन में न आया होता। परन्तु जब आपके सामने यह प्रस्ताव रखा गया तो आपकी उदार आत्मा ने तत्काल यह निर्णय लिया कि अपने चचा के आर्थिक संकट को कम करने केलिए जो कुछ मुमकिन हो करना चाहिए। फलतः आप ने इस प्रस्ताव को सहर्ष स्वीकार किया।"

यद्यपि स्वभावतः व्यापार के प्रति आप की रुचि न थी फिर भी अपनी

---

1. حَرَبُ الْفِجَار ***हरबुल्-फ़िजार*** , حَرَب ***हरब*** युद्ध को कहते हैं , और فِجَار ***फ़िजार*** या فَجُور ***फ़जूर*** पाप और बुराई को। अरब परंपरानुसार साल के चार महीनों में युद्ध वर्जित था। ये ***हुर्मत*** वाले महीने कहलाते थे क्योंकि इन में युद्ध ***हराम*** यानि निषिद्ध था। इस युद्ध को ***हरबुल्-फ़िजार*** इस लिए कहा गया कि यह ***हुर्मत*** वाले महीनों में लड़ा गया।

मेहनत ,लगन और ईमानदारी के कारण आप एक सफल व्यापारी सिद्ध हुए। आपके इन सद्‌गुणों की ख्याति संपूर्ण मक्का नगर में फैल गई , जिस को सुन मक्का की एक प्रसिद्ध मालदार विधवा ख़दीजा ने आपको सन्देश भेजा कि आप उनके माल से व्यापार करें। इस व्यापार से खदीजा को बड़ा लाभ हुआ। और साथ ही वह आप के सरल स्वभाव और स्वच्छ चरित्र पर इतनी मोहित हुई कि उस ने आप को विवाह का प्रस्ताव भेज दिया , हांलांकि वह उम्र में आप से पूरे पन्द्रा साल बड़ी थी। उस वक़्त हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] की आयु पच्चीस वर्ष थी , और जीवन का यह भाग आप ने अत्यन्त निःस्वार्थता एवं संयम से व्यतीत किया था। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] ने हज़रत ख़दीजह[रज़.1] का प्रस्ताव कबूल कर लिया और विवाहित जीवन जीने लगे। इस विवाह से आप के यहां चार बेटे और चार बेटियां पैदा हुईं। बेटे छोटी उम्र में ही गुज़र गए। बेटियों में सब से छोटी हज़रत फ़ातिमह[रज़.] थीं। इन्ही की सन्तान आगे चली जो سيّد ***"सैयद"*** कहलाते हैं।

गरीबों और पीड़ाग्रस्तों की सहायता

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के जीवन के इस दौर की परम विशेषता आपके पावन चरित्र का वह अद्‌भुत सुप्रभाव है ,जो भीतर ही भीतर अन्य लोगों को प्रभावित कर रहा था। अतएव आपके उस ज़माना के जितने मित्र हैं वे सब के सब उच्च कोटि के आचारवान हैं। उदाहरणतया हज़रत अबू बक्र हकीम इबन हज़ाम , ज़माद इबन सअल्बह इत्यादि। आप ने मित्रों के प्रति मित्रधर्म जीवन के अन्तिम छोर तक निभाया। उन दिनों भी आप गरीबों और असहायों की सहायता में ,विधवाओं के संरक्षण में और गुलामों के प्रति सम्वेदना में कार्यरत रहते थे। जैसा कि हम बता चुके हैं अरब में कोई राज्यसत्ता न थी ,न उन में कोई नैतिक सुधारक प्रकट हुआ था। फलतः वहां अमलन बल और शक्ति का ही शासन था। बलवान निर्बलों पर जिस तरह चहते अत्याचार करते। अरब लोग एक शूवीर कौम थे , दिन रात युद्ध

1. رضی الله عنها *"रज़ियल्लाहु अनहा"* (= अल्लाह उस स्त्री विशेष से राज़ी हो !) का संक्षिप्त रूप , यदि यही बात किसी पुरुष विशेष केलिए कहनी हो तो عنها *"अनहा"* के स्थान पर عنهُ *"अनहु"* कहना होगा। यह आदरसूचक वाक्य प्रायः हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] के साथी अनुयायिओं (अ. *"सहाबा"*) के लिये बोला जाता है। (अनुवादक)

में व्यस्त रहते। इस से उनके अन्दर कठोरता के अवगुण बढ़ते चले गए। अन्याय ,निर्दयता और अत्याचार उन का स्वभाव होगया। किन्तु इस घोर अंधकार में आप का व्यक्तित्व एक प्रकाश पिण्ड के समान चमकता नज़र आता है। आप की जवानी के ज़माना में मक्का के कुछ लोगों ने ***"हिल्फुल् फुज़ूल"*** के अन्तर्गत एक प्रण लिया कि वे समाज के दलित और अत्याचारग्रस्त वर्ग की सहायता करें गे ,आप भी इस जनसेवी गुट्ट में शामिल हो गए। आप के दिल में शुरू दिन से ही गरीबों , असहायों , अनाथों और विधवाओं के लिए एक करुणा रूपी सागर मचल रहा था। इन्ही ख़ूबियों के कारण सारा समाज आप को मानसम्मान देता था। ***नबूवत*** यानि पैग़म्बरी के दावा के बाद जब कुरैश सरदार आप के चाचा अबू तालिब के पास यह कहने आये कि तुम हज़रत मुहम्मदसल्ल. का साथ छोड़ दो ताकि हम इस से स्वयं निपट लें ,तो उस वक्त अबू तालिब ने यही जवाब दिया : ***"भला हम उस सरदार को कैसे छोड़ सकते हैं जो अनाथों का आश्रय और विधवाओं का संरक्षक है।"*** आपकी धर्मपत्नी हज़रत ख़दीजहरज़ ने भी — जब आप पहली *वह्य* (Revelation) की प्राप्ति पर घबराए हुए थे कि जगसुधार का महा कार्य मुझ से कैसे पूरा हो पाये गा — निम्न शब्दों में आप को आश्वासन दिया :

" अल्लाह आप को कभी अपमानित नहीं करेगा क्योंकि आप रिश्तेदारियां निभाते हैं , कमज़ोर का बोझ उठाते हैं , और जिन के पास कुछ नहीं उन्हें कमा कर देते हैं , और मेहमाननवाज़ी करते हैं और संकटकाल में सत्य का साथ देते हैं।"

(***बुख़ारी*** 1 : 3)

गुलामों के प्रति आप की सहानुभूति का यह हाल था कि जब भी आप के पास कोई गुलाम आया आप ने उसे तत्काल आज़ाद कर दिया। इन्ही में का एक गुलाम ज़ैद था। जिसे आप ने न केवल आज़ाद ही किया बल्कि पिता के समान उसे स्नेहपूर्वक पाला पोसा। यहांतक कि जब ज़ैद का असली पिता उसे लेने केलिये आया तो आप ने फरमाया : ***" ज़ैद आज़ाद है , यदि वह आप के साथ जाना चाहे तो जा सकता है।"*** परन्तु ज़ैद ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को अपने पिता पर तरजीह दी और

जाने से साफ इन्कार कर दिया।

अरब की गिरी हुई दशा के प्रति शोक व चिन्ता

किन्तु वह महा चिन्ता जो आप के दिल को भीतर ही भीतर खाए जा रही थी वह कतिपय गरीबों , असहायों , अनाथों और विधवाओं तक सीमित न थी। आप अपने चारों ओर मानवसमाज की जो गिरावट देख रहे थे उसी की चिन्ता आपको सर्वाधिक व्याकुल कर रही थी। अरब देश उस समय एक घोर अंधकार में ग्रस्त था। इसी लिए इतिहास में उसे ***"अंधकार युग" या जाहिलियत का ज़माना*** कहा जाता है। अरबों का अल्लाह पर विश्वास बस नाम मात्र केलिए था। वे देवप्रतिमाओं की पूजा–अरचना में तल्लीन थे। उनकी धारणा थी कि अल्लाह ने संपूर्ण विश्व का कार्यभार इन्ही देवप्रतिमाओं क हवाले कर रखा है। वायु , चन्द्रमा, सूर्य, वृक्ष यहां तक कि रेत के ढेर भी पूजे जाते थे। लोग उनके लिए मनोतियां मानते और भेंट चढ़ाते थे। इस घृणित मूर्तिपूजा के बावजूद उनका धर्म उच्च एवं सात्विक भावों से एकदम रिक्त था। वह केवल सांसारिक सुखभोगों तक ही सीमित था। मरणोपरांत जीवन पर या अच्छे बुरे कर्मों के लेखेजोखे पर उनका कोई विश्वास न था। जिस दृष्टि से देखो अरब देश में मानवता का पतन ही पतन नज़र आता था ,चारों ओर अँधेरा ही अँधेरा था। इस पर दुर्भाग्य यह कि वहां सुधार का एक भी प्रयास सफल न हो पाया था। यही वह चिन्ता थी जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के सुकोमल हृदय को खाये जा रही थी। ज्यों ज्यों आप की आयु बढ़ती गई त्यों त्यों यह चिन्ता तीव्र से तीव्रतम होती गई। इसी चिन्ता से व्याकुल हो कर आप अकेले पर्वतों पर जाते और घंटों इस विषय में चिन्तन मनन करते कि ये लोग इस अधमावस्था से कैसे ऊपर आयें गे। आप गुफाओं में भी जा बैठते और अपनी जाति की इस गिरावट पर आंसू बहाते। मानो आप उस चमत्कारी दिव्य उपाय की तलाश कर रहे थे जिस के अन्तर्गत लोग पतन और अपमान के पंकिल गर्त से बाहर निकल आते हैं।

पैग़म्बर के रूप में नियुक्ति

इसी चिन्ता में — जिस का उल्लेख ऊपर किया गया — आप की आयु चालीस साल हो गई। अब एकांत और तनहाई आप को अधिक प्रिय लगने लगी। आप घर से भोजन ले जाते और किई किई दिन ***हिरा*** नामक गुफा में प्रभु स्मरण करते रहते। इसी गुफा में एक रात एक फरिश्ता (Angel) आप के सामने आया और आप को अल्लाह का यह सन्देश सुनाया कि अल्लाह ने आप को समस्त मानवसमाज के उत्थान के लिए तथा दुनिया में ज्ञान–प्रज्ञान , नेकी और सदाचार के प्रचार व प्रसार के लिए नियुक्त किया है। यह सन्देश सुन कर आप कांप उठे कि इतना बड़ा महा कार्य आप अकेले किस तरह पूर्ण कर पायें गे। इसी चिन्ता को लिए आप घर वापस लौट आए —आप अभी तक कांप रहे थे। आप ने अपनी धर्मपत्नी से कहा : ***"मुझे तुरन्त कपड़ा ओढ़ा दो।"*** थोड़ा संतोष हुआ तो हज़रत ख़दीजहरज़ि को सारी घटना सुना दी। नेक दिल एवं मर्मज्ञ पत्नी ने — जो आप के सद्गुणों से भलीभांति वाकिफ़ थी —तस्सली दी ,कि हे स्वामी ! आप तो गरीबों , असहायों के हमदर्द , संकट में लोगों के काम आने वाले , महमाननवाज़ , रिश्तेदारों के साथ अच्छा व्यवहार करने वाले हैं। ऐसे चरित्रवान सदाचारी पुरुष को प्रभु कभी असफल नहीं होने दें गे। आप के पैग़म्बर होने पर सब से पहले विश्वास लाने वाली यही महिला थीं। तदुपरांत धीरे धीरे वे लोग इस्लाम में प्रविष्ट होने लगे जो आप के घनिष्ट मित्र थे। मियूर लिखता है :

> **"यह तथ्य हज़रत मुहम्मदसल्ल. की सच्चाई , निष्कपटता और सत्यसंकल्प को प्रबल तौर परिपुष्ट करता है कि वे लोग जिन्हों सब से पहले इस्लाम कबूल किया न केवल सत्यप्रायण और चरित्रवान थे बल्कि आप के गहरे मित्र और अपने ही घर के सदस्य थे। ये लोग आप के भीतरी जीवन से भली भांति परिचित थे। अतः इन के लिए यह जान लेना तनिक भी मुश्किल न था कि आया आप के कथन और कर्म में कोई अन्तर या विषमता तो नहीं। क्योंकि पाखंडी लोगों की कथनी और करनी हमेशा परस्परविरोधी होती है। वो बाहर जनसाधारण के सामने जो कहते हैं उन बातों को घर की चार दीवारी के भतीर व्यवहार में नहीं लाते।"**

शत्रु द्वारा अत्याचार और उत्पीड़ना

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.द्वारा लाया हुआ दिव्य सन्देश सिर्फ अरब वासियों के लिए ही न था बल्कि यह सर्वसंसार के लिए था। अतः यदि एक ओर अरब के श्रेष्ठ और कुलीन लोग इस्लाम में प्रविष्ट होते थे तो दूसरी ओर हबशी गुलाम भी इस्लाम ग्रहण कर प्रतिष्ठा एवं मानमर्यादा में इन कुलीन लोगों के समकक्ष हो जाते थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का बुनियादी मिशन यही था कि प्रभु का अन्तिम सन्देश दुनिया के सभी धर्मानुयायिओं तक पहुंचाया जाए। किन्तु प्रारंभ में इस सन्देश को उन्ही लोगों तक पहुंचाया जा सकता था जो आप के आस पास रहते थे। शुरू शुरू में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.और आपके परम मित्र हज़रत अबू बक्ररज़.इस दिव्य सन्देश को उन लोगों तक पहुंचाते जिन के साथ आपका मेलजोल था। और एक एक दो दो कर लोग इस्लाम में प्रविष्ट होते गए। एक बार आप ने ***सफ़ा*** नामक पहाड़ी पर चढ़ कर मक्का के सभी कबीलों को नाम लेकर पुकारा , और जब वे एकत्र हो गए तो आप ने उन सब से प्रश्न किया :

" यदि मैं तुम्हें यह कहूँ कि इस पहाड़ के पीछे एक विशाल सेना है जो तुम पर आक्रमण करने वाली है, तो क्या तुम मेरी बात को सच मानो गे या नहीं ?"

सब ने एकस्वर हो कर कहा :

" हम आप को हमेशा से *अमीन* ***और सत्यवादी जानते हैं , हम ने आप के मुख कमल से आज तक कोई झूठ नहीं सुना।"***

तब आप ने फ़रमाया कि मैं तुम्हें तुम्हारे पापकर्मों के दुष्परिणाम से सचेत करता हूँ। जिस पर अबू लहब (आप का एक चाचा) बहुत बिगड़ा और आप को बुरा भला कहा।

अब आप के विरुद्ध विरोध की गति और ज़यादा तेज़ हो गयी। पहले तो केवल उपहास होता या मजनून (बावला) कहते , अब बाकायदा सताया जाने लगा। लेकिन इस्लाम बराबर बढ़ता रहा। यहांतक कि मुसलमानों की संख्या चालीस तक पहुंच गई। मक्का अरब देश का धार्मिक केन्द्र था लोग वहां चारों ओर से हर वर्ष ***हज*** के लिए जमा होते थे। इस लिए आप का सन्देश अरब देश की अन्तिम सीमाओं तक पहुंच गया। इस

दशा को देख कुरैश की शत्रुता–अग्नि और ज़यादा भड़क उठी। उनको चिन्ता होने लगी कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की बातें दिन पर दिन असर करती जा रही हैं, इस लिए वे नवमुस्लिमों को कठोर यातनाएं देने लग गए। यातनाओं की शुरूआत पहले गुलामों से की गई और फिर कुलीन लोगों को भी इस चपेट में लेलिया। बिलालरज. एक हबशी गुलाम थे , उन का मालिक उनको बड़ा सताता ,दोपहर की असह्य तपन में गर्म पत्थरों पर नंगा लिटा देता। किन्तु उस हालत में भी जब वे पीड़ा के मारे बेहोश होने लगते उनकी ज़ुबान से यही निकलता — ***" अहद ! " " अहद ! "***[1]। हज़रत अबू बक्ररज. ने बिलाल तथा कई और ऐसे ही उत्पीड़ित गुलामों को कीमत दे कर आज़ाद कर दिया। बाज़ निर्दोष व्यक्तियों को अत्यन्त कठोर यातनाओं द्वारा जान से मार दिया गया। हर कबीला अपने आदमियों को स्वयं यातना देता। इस प्रकार फरयाद के लिए कोई स्थान शेष न रहता।

हबश देश की ओर *हिजरत* [2]

नबूवत के पांचवें वर्ष में मुसलमानों की संख्या पच्चास तक जा पहुंची। विरोधियों के अमानवीय अत्याचार से ये लोग तंग आ चुके थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने उन्हें हबश देश की ओर ***हिजरत*** कर जाने का मशवरा दिया। उस समय वहां एक ईसाई राजा नजाशी राज करता था। सब से पहले गयारह व्यक्तियों के एक समूह ने धर्म की रक्षा हेतु ***हिजरत*** की , इन में हज़रत उस्मानरज जैसा कुलीन व्यक्ति और उनकी पत्नी रुक़य्यारज — जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की सुपुत्री थीं — भी शामिल थीं। कुरैश ने इनका पीछा किया लेकिन ये लोग नौकाओं द्वारा निकल चुके थे। अन्ततः कुरैश ने अपना एक शिष्टमण्डल नजाशी के पास भेजा कि ये हमारे अपराधी हैं इन्हें वहां शरण न दी जाए। मुसलमानों की ओर से हज़रत जअफ़र इबन अबी तालिबरज. जवाब के लिए खड़े हुए और कहा :

---

1. "أحد" ***"अहद"*** का अर्थ *"एक"* है , अर्थात् *अल्लाह एक है*।

2. هجرت ***"हिज्रत"*** , *स्वदेशत्याग , धर्म रक्षा हेतु घरबार छोड़ छाड़ कर किसी और देश में जा बसना।* (अनुवादक)

" हे राजन ! हम एक जाहिल और अज्ञानी क़ौम थे। प्रतिमाओं को पूजते, मुरदार खाते, अश्लील कार्य करते, स्वजनों के प्रति अपना कर्तव्य न निभाते थे। हम में का बलवान निर्बल को खा जाता था। अल्लाह ने हमारे उदार के लिए एक रसूल (=पैग़म्बर) भेजा। जिनकी कुलीनता, सत्यशीलता, ईमानदारी और सदाचार से हम भलीभांति अवगत हैं। उन्हों ने हम को बताया कि परमात्मा को एक मानो और उसी की उपासना करो, पत्थरों और मूर्तियों की पूजा छोड़ दो। और आदेश दिया कि सच्च बोलो, अमानत लौटा दो, रश्तेदारों से प्रेम रखो, पड़ौसियों से अच्छा व्यवहार करो। और इस बात से मना किया कि कोई झूठ बोले या अश्लील कार्य करे या अनाथ का माल खाए या औरतों पर झूठे आरोप लगाए। सो हम उन पर ईमान लाये और उनका अनुसरण किया और उनकी बातों को माना। इस पर हमारी कौम ने हम पर अत्याचार शुरू कर दिया और हम को उत्पीड़ित किया, ताकि हम अपना धर्म छोड़ दें और पुनः मूर्तिपूजक बन जाएं। जब इनका अत्याचार चरम सीमा को पहुंच गया, तो हम आप के राज्य की ओर पलायन कर आए। हमें आशा है कि आप के राज्य में हमारे साथ ज़ुलम न होगा।"

हज़रत जअफ़ररज़. ने क़ुर्आन शरीफ़ का एक भाग भी राजा को सुनाया। इन बातों का राजा पर ऐसा असर हुआ कि उस ने इन मुसलमान शरणार्थियों को क़ुरैशी शिष्टमण्डल के हवाले करने से इन्कार कर दिया। अगले दिन उन्हों ने एक और कुचाल सौची, और राजा से कहा : ***"हे राजन ! ये मुसलमान लोग आपके हज़रत ईसा को भी नहीं मानते।"*** जिस पर हज़रत जअफ़ररज़.ने राजा को ***सूरः मरयम*** [1] की कुछ आयतें पढ़ कर सुनाईं। जिन में हज़रत ईसाअ.स.[2] के बारे में स्पष्ट

1. क़ुर्आन शरीफ़ का 19वां अध्याय। سُوْرَت ***"सूरत"*** क़ुर्आन शरीफ के *अध्याय* को और آيت ***"आयत"*** उसके *वाक्य* को कहते हैं। (अनुवादक)

2. عَلَيْهِ السَّلَام ***"अलैहिस्सलाम"*** अर्थात् *" उस पर अल्लाह की शांति वर्षित हो !"* यह आदरसूचक वाक्य प्रायः पैग़म्बरों के लिये प्रयुक्त होता है। (अनुवादक)

कहा गया है कि वे अल्लाह के एक महान पैग़म्बर थे किन्तु वे ईश्वर न थे। राजा नजाशी ने एक तिनका उठाया और कहा : *" हज़रत ईसा का जो स्थान क़ुर्आन शरीफ़ में वर्णित है निस्संदेह वे उस से इस तिनके बराबर भी बढ़कर नहीं।"* अतएव क़ुरैश का शिष्टमण्डल असफल लौट गया। अगले वर्ष और बुहत से मुसलमान मर्द और औरतें हबश पलायन कर आए। बच्चों को छोड़ उनकी संख्या 101 हो गई।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की सुदृढ़ता

इस बीच मक्का में इस्लाम तेज़ी से फैलने लगा , बड़े बड़े अरब सूरमा मुसलमान हो गए — जैसे हज़रत हमज़हरज़ जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के चाचा थे , और हज़रत उमररज़.जो बड़े प्रभुत्वशाली और प्रधान सलाहकार माने जाते थे। क़ुरैश पहले एक प्रतिनिधि मण्डल के रूप में अबू तालिब के पास गए कि वो अपने भतीजे का साथ छौड दे , ताकि वे जिस तरह चाहें हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. से निपट लें। अबू तालिब ने कहा कि मैं ऐसे व्यक्ति को कदापि नहीं छोड़ सकता जो अनाथों का नाथ और विधवाओं का संरक्षक है। उस समय वे लोग चले तो गए पर अबू तालिब पर बराबर दबाव डालते रहे। फल यह कि अबू तालिब भी कुछ ढीले पड़ गए। उन्हों ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को बुलवाया और कहा : *"देखो बेटा ! मैं अपनी जाति का ज़्यादा विरोध नहीं कर सकता।"* इस वाक्य से आप ने यह समझा कि शायद अबू तालिब भी आप को छोड़ रहे हैं। कहा : *"चाचाश्री ! यदि ये लोग सूरज को मेरे दाहिने हाथ में और चांद को मेरे बायें हाथ में रख दें और कहें कि मैं यह काम छोड़ दूँ तो मैं कदापि यह काम न छोडूँ गा , यहांतक कि अल्लाह इसे अभिभावी कर दे या मैं काम करता करता मर जाऊँ ।"* यह कह कर आप चले गए। अबू तालिब आपके इस दृढ़ विश्वास और अडिग संकल्प से इतने प्रभावित हुए कि तत्काल आप को वापस बुलाया और कहा : *" भतीजे ! जाओ और जो मन में आये करो मैं किसी दशा में तुम्हारा साथ न छोडूँ गा।"* उधर स्वयं क़ुरैश ने आप को प्रलोभित करना चाहा। उन का एक प्रतिनिधि मण्डल आप के पास आया और कहा : *" हे मुहम्मद (सल्ल) ! यदि आप बादशाहत चाहते हैं तो हम आप को अपना*

बादशाह बनाने के लिए तैयार हैं , धन–दौलत चाहते हैं तो जितना धन चाहें हम एकत्र कर दें गे , सौन्दर्य की इच्छा हो तो हम सुन्दर से सुन्द नारी आप की सेवा में अर्पण कर सकते हैं।" हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने उत्तर दिया : *'' भाइयो ! मुझे इन चीज़ों में से किसी की इच्छा नहीं , मैं तुम को अल्लाह का सन्देश पहुंचाता हूँ अगर तुम उसे कबूल कर लो तो तुम्हारा लोकपरलोक सुधर जाएगा , अगर न मानो तो अल्लाह मेरे और तुम्हारे बीच स्वयं फैसला करे गा।"*

हाशिम क़बीले का बॉकाट और परिवेष्टन

नबूवत का सातवां साल था , कुरैश के विरोध के बावजूद इस्लाम फैलता जा रहा था। अबू लहब को छोड़ हाशिम कबीले के अन्य सभी सदस्य अबू तालिब के नेतृत्व में इस बात पर सहमत थे कि अगर कुरैश के दूसरे कबीलों के साथ युद्ध की नौबत आई तो वे हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का साथ न छाड़ें गे। अतएव अन्य सभी कबीलों ने मिलकर यह समझौता किया कि वे हाशिम कबीला के साथ पूर्ण बॉकाट करें गे शादी ब्याह, लेन देन अर्थात् किसी भी प्रकार का संबंध न रखें गे। इस समझौते की लिखत प्रति ***कअबा शरीफ*** में लटका दी गई। विवश हो कर हाशिम कबीला शहर से परे ***अबी तालिब*** नामक घाटी में परिवेष्टित हो गया , और बाकी कबीलों से इसके समस्त संबंध समाप्त हो गए। केवल ***हज्ज*** के दिनों में कुछ खरीद–फ़रोख्त हो सकती थी। इधर धर्म प्रचार का कार्य भी बस ***हज्ज*** के दिनों तक ही सीमित हो कर रह गया। और ***हज्ज*** के दिनों में जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.लोगों को इस्लाम की ओर बुलाते तो अबू लहब आपके पीछे पीछे हो लेता और लोगों से कहता कि इस की बातों पर विश्वास मत करो क्योंकि यह सिर फिरा है। मुसलमानों और हाशिम कबीले के लिए यह दौर बड़ा ही कठिन था। कभी कभी बच्चे भूख के मारे बिलबिला उठते लेकिन पत्थर दिल कुरैश को इन पर कोई दया न आती। अन्ततः कुरैश के कुछ कोमल हृदय वाले इस अमानवीय व्यवहार को अधिक सहन न कर सके , उन्हों ने इस के खिलाफ आवाज़ उठाई। उधर लोगों की नज़र समझौते की उस लिखित प्रति पर पड़ी जो ***कअबा***

में लटकाई गई थी ,देखा उसे दीमक खा गई है। तीन साल के बाद हाशिम कबीले को आज़ादी मिली तो इस के साथ ही हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.भी आज़ाद हो गए।

ताइफ़ में धर्म–प्रचार

इस आज़ादी के साथ ही आप को परस्पर दो आघात पहुंचे। पहले आप के चचाश्री अबू तालिब ,जिन्हों ने अब तक आप का साथ दिया था परलोक सिधार गए। और इस के बाद आप की जीवन संगिनी हज़रत ख़दीजहरज़ का स्वर्गवास हो गया। मक्का वासियों के दिल इतने कठोर हो चुके थे कि वे आप की बात तक सुनने को तैयार न थे। लेकिन हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने हिम्मत बिल्कुल न हारी। आप ने एक नए संकल्प और उत्साह के साथ ***ताइफ़***[1] की ओर प्रस्थान किया। हज़रत ज़ैदरज़ आप के साथ थे। आप ताइफ़ में दस दिन ठहरे किन्तु किसी ने आप की बात पर कान न धरा। उलटा आप को वहां से चले जाने को कहा गया। और जब आप निकले तो रास्ते के दोनों तरफ लोग दूर तक फैल गए और आप को पत्थर मारने लगे। आप की टांगें लहू–लुहान हो गयीं। जब आप विवश हो कर बैठते तो उसी समय एक व्यक्ति आता ,जो आप को उठा देता कि यहां से चले जाओ ,और दूसरे लोग फिर से पत्थर बरसाना शुरू कर देते।

थक हार कर आप ने एक बाग़ में शरण ली ,किन्तु आप अब भी निराश न थे। इसी पीड़ाग्रस्त अवस्था में आप ने परमात्मा से यह विनम्र प्रार्थना की :

"हे प्रभुवर ! मैं अपनी निर्बलता और असहायता की फरयाद लेकर तेरे द्वार पर आया हूँ। हे समस्त दयावानों के दयावान् ! तू ही मेरा पालनहार स्रष्टा है, तू ही दीनबन्धु है। तू मुझे किस के हवाले करेगा — उस अजनबी दुश्मन के जो मेरे साथ कठोर व्यवहार करता है या किसी निकटवर्ती मित्र के जिसको तू ने मेरा

---

1. *ताइफ़* अरब के प्रमुख नगरों में से एक है। यह मक्का की पूरबी दिशा में थोडे ही फासले पर स्थित है। यह पहाड़ की तराई में एक शीतल और हराभरा रमणीय स्थल है। यहां काफी संख्या में जलस्रोत मिलते हैं। यह जगह अपने फलों के लिए भी मशहूर है। अमीर और खाते पीते लोग अकसर गर्मियां बिताने यहां चले आते हैं।

मामला सौंपा है। यदि तू मुझ से नाराज़ नहीं तो मुझे किसी बात की चिन्ता नहीं। हां ! तेरा संरक्षण मेरे लिए काफी है। मैं तेरे चहरे के तेजस्वी प्रकाश की शरण मांगता हूँ । वही प्रकाश जिस से आकाश रोशन हैं और जिस के सम्मुख सब अंधेरे विनष्ट हो जाते हैं। और जिस से लोक–परलोक की सभी उलझनें सुलझ जाती हैं। मेरी केवल इतनी मनोकामना है कि मैं तेरे प्रकोप से बचूँ और यह कि तू मुझ से नराज़ न हो। तेरे आगे विनति करनी है यहां तक कि तू राज़ी हो जाए। तेरे सिवा न किसी में कोई बल है न सामर्थ्य ।"

इस से ज्ञात होता है कि आपको अल्लाह की परम सत्ता पर , और उसके वादों की सत्यता अर्थात् अपनी अन्तिम सफलता पर कितना पक्का विश्वास था। आप देखते थे कि इस वक्त आप जिस तरफ मुँह करते हैं दुश्मन ही दुश्मन दृष्टिगोचर होते हैं। लेकिन आप को पूरा यक़ीन था कि इसी अरब देश से वो लोग भी निकल आएं गे जो आपके समर्थक और सहायक हों गे। सर्वत्र दु:ख ही दु:ख , अत्याचार ही अत्याचार है , प्रत्यक्षत: असफलता ही असफलता नज़र आती है — किन्तु मन पूर्णरूपेण सन्तुष्ट है कि अल्लाह की प्रसन्नता प्राप्त है।

मदीना में इस्लाम का प्रसार

ताइफ़ से वापस आने के पश्चात् ***हज्ज*** के दिन आए तो आप ने इस समारोह में पहुंच कर पुन: प्रत्येक कबीले को इस्लाम का सन्देश सुनाने की चेष्टा की। बुहत से लोग कठोरता से पेश आते थे ,पर आप ने हिम्मत न हारी। कोई कहता आप की बातें तो अच्छी हैं लेकिन हम बाप दादा का धर्म नहीं छोड़ सकते। कोई उपहास के तौर पूछता : ***" अगर हम आप के साथ हो जाएं तो क्या सत्ता में आजाने के बाद आप हमें पदाधिकारी बनाएं गे ?"*** आप फ़रमाते : ***" मेरा हकूमत लेने या देने से कोई संबंध नहीं , संपूर्ण राज्य अल्लाह के हाथ में है वही जिसे चाहता है राज्य सौंप देता है।"*** एक जगह मदीना के कुछ आदमी बैठे थे , आप ने उन से बातें कीं। उन्हों ने आपकी बातें सविस्तार सुनने ही इच्छा प्रकट की। ये छ: आदमी थे और सब ने तत्काल इस्लाम क़बूल कर लिया।

इनकी वजह से इस्लाम मदीना में भी चर्चा का विषय बन गया। अगले वर्ष मदीना से बारह आदमी आए , और अक़बा के ऐतिहासिक स्थल पर بَيْعَت ***बैअत*** (=दीक्षा ,शपथ) ग्रहण की। इस्लामी इतिहास में इसे अक़बा की प्रथम ***बैअत*** कहा जाता है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने इनके साथ अपना एक धर्म–प्रचारक मसअबरज़.भी भेज दिया। अब इस्लाम मदीना में बड़ी तेज़ी से फैलने लगा। अतएव इस से अगले वर्ष इन में के 73 पुरुष और दो महिलाएं ***हज्ज*** के लिए आयीं। और इसी अक़बा के स्थल पर आप ने अपने चाचाश्री अब्बास की उपस्थिति में ,जो अभी मुसलमान न हुए थे ,इन सब लोगों से इस बात पर शपथ ***(बैअत)*** ली कि यदि आप मदीना चले आएं तो ये लोग दुश्मनों से आपकी उसी तरह रक्षा करें गे जिस तरह अपने बीवी–बच्चों की रक्षा करते हैं। यह नबूवत के 13वें वर्ष का आखरी महीना था , और इसको अक़बा की दूसरी ***बैअत*** कहा जाता है।

हिजरत

मदीना वालों की ओर से शपथबद्ध आश्वासन मिलते ही हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने साथियों को हुकम दिया कि वे छोटी छोटी टुकड़ियों में मदीना जा पहुंचें। अतएव दो महीनों के भीतर लगभग डेढ सौ मुसलमान मदीना पहुंच गए। और आप सिर्फ दो साथियों यानि हज़रत अबू बक्ररज़. और हज़रत अलीरज़.के साथ दुश्मनों के बीच रह गए। अल्लाह पर कितना दृढ़ विश्वास था कि अपने साथियों को बचाने केलिए स्वयं को अकेला दुश्मनो के बीच छोड़ देते हैं। दुश्मन ने भी देख लिया कि इस्लाम मदीना में जड़ पकड़ गया है ,अतः उस ने आखरी वार करने के लिए ***दारुन्नद्वा*** में एक सर्वविचार गोष्ठी का आयोजन किया। और आखरी फैसला अबू जहल के परामर्श पर यह हुआ कि सब कबीलों में से एक एक जवान चुना जाए , और ये सब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के घर को घेर लें , और जों ही आप बाहर निकलें तो सब एक साथ आप पर टूट पड़ें। इस तरह हत्या की ज़िम्मेदारी किसी एक कबीला पर न आये गी। जब इस प्रकार कुरैश ने अपने अपराधों का सिल्सिला चरम सीमा तक पहुंचा दिया तो आपको भी ईश्वर ने आदेश दिया कि अब इन के बीच से निकल जाओ। आप ने इस बात की सूचना अपने दोनों साथियों को दी। हज़रत अबू बक्ररज़.ने सफर

की तैयारी की। हज़रत अलीरज़॰ को आप ने अपने बिस्तर पर सुला दिया और रात के अंधेरे में हिन्सक शत्रु के मध्य से निकल कर सीधा हज़रत अबू बक्ररज़॰ के घर पहुंचे। उनको साथ लिया और रात की खामोशी में शहर से बाहर निकल कर ***सौर*** नामक गुफा में शरणागत हो गए। जो लोग हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के घर को घेरे हुए थे उन्हें सुबह तक ख़बर न हुई। जब सुबह हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के बिस्तर से हज़रत अलीरज़ को उठते देखा ,तो मक्का वालों को अपनी अन्तिम योजना की विफलता का एहसास हुआ। उनके क्रोध और कोप की कोई सीमा न रही। उन्हों ने मक्का का चप्पा चप्पा छान मारा। सौर गुफा के मुख तक भी जा पहुंचे। उस वक्त हज़रत अबू बक्ररज़॰ को चिन्ता हुई। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने शांतचित हो कर कहा : *" चिन्ता न करो , अल्लाह हमारे साथ है।"* हिन्सक शत्रु क्रोधाग्नि में प्रज्वलित सिर पर खड़ा है , इधर अल्लाह पर इतना भरोसा कि वह हमारे साथ है और हमें बचाए गा। यह रहस्य इन्सान की बुद्धि से परे है। क्योंकि इन्सान के भीतर से ऐसी आवाज़ नहीं उठ सकती। दुश्मन यहां भी असफल रहा। तीन दिन के बाद हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल और हज़रत अबूबक्ररज़॰गुफा से निकल मदीना की ओर चल पड़े। और मक्का में 13 साल काम करने के बाद 12 ***रबी अल्-अव्वल*** को मदीना पहुंचे। इस ***हिजरत*** को इस्लामी इतिहास में बड़ा महत्त्व प्राप्त है ,इस्लामी संवत् का शुभारंभ इसी तिथि से होता है।

तेरह वर्ष का काम

मक्की दौर के इन तेरह वर्षों में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया , विरोधी इतिहासकार भी उसकी प्रशंसा किए बना नहीं रह सकते।

सर विल्यम मियूर लिखता है :

> **"इस अल्पकाल में ही मक्का इस विचित्र आंदोलन के कारण दो धड़ों में बंट गया। इन घुटों ने जातिगत और वंशगत परंपराओं को भुला कर खूब एक दूसरे का विरोध किया। मुसलमानों ने सारे कष्ट बड़े धैर्य से गम्भीरतापूवक सहन किये। एक सौ मर्द और औरतों ने घरबार छोड़ देना स्वीकार किया , और हबश देश में प्रवास इख़्तियार किया। जब**

तक कि यह तूफ़ान थम जाए। किन्तु ईमान से मुंह न मोड़ा। अब इस से भी ज़्यादा संख्या में मुसलमान हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल सहित अपने प्रियतम शहर को त्याग कर मदीना जा रहे थे। यह वही शहर था जहां वह पवित्र उपासना गृह (यानि कअबा शरीफ़) स्थित था जो उनकी मान्यतानुसार संसार के समस्त तीर्थ स्थानों में श्रेष्ठतम था।

उधर मदीना में इसी अद्‌भुत मनोवृत्ति ने दो तीन वर्ष के भीतर एक ऐसी बिरादरी को जन्म दिया जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल और उन के अनुयायी मुसलमानों की रक्षा अपने ख़ून से करने को तैयार थी। यों तो मदीना के वासी एक समय से यहूदी धर्म की सत्यता की चर्चा सुनते आ रहे थे। लेकिन वो गहरी नींद से उसी वक्त जागे जब अरबी पैग़म्बरसल्ल की जीवनप्रद पुकार उन के कानों में गूंजी , और जिस से उन में सहसा एक नए एवं उत्साहपूर्वक जीवन का उदय हो गया।"

मदीना का प्रारंभिक काल

मदीना पहुंचकर आप चौदह दिन क़ुबा में ठहरे। क़ुबा मदीना नगर के बाहरी भाग में एक आबादी थी। आप ने यहां एक मस्जिद बनाई। तदोपरांत आप मदीना आये और यहां भी सब से पहले मस्जिद का ही प्रबंध किया। यह मस्जिद ***"मस्जिदे नब्वी"*** के नाम से जानी जाती है। कच्ची दीवारें , खजूर के स्तम्भ , खजूर की शाखाओं और पत्तों की छत, कच्चा फ़र्श — यही इसका स्वरूप था। एक छोर पर छत्ता हुआ चबूतरा था ,जहां वो लोग रहते थे जो धर्म–शिक्षा प्राप्त करने के लिए हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके पास ठहरे हुए थे ,और जिन के पास अपना कोई ठोर–ठिकाना न था। इन लोगों को इस्लामी परिभाषा में ***अस्‌हाब–ए–सुफ़ा*** कहते हैं। दोनों मस्जिदों के निर्माण में आप ने स्वयं अपने अन्य सम्मानित ***सहाबह*** *(=सहवर्ती अनुयायी वर्ग)* के संग मज़दूरों की तरह काम किया। दूसरा काम आप ने यह किया कि एक एक ***मुहाजिर***[1] को एक एक ***अन्सारी***[2] का भाई बना दिया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की शिक्षा द्वारा इन

1. مہاجر ***मुहाजिर*** , ہجرت ***हिजरत*** यानि धर्म हेतु स्वदेश त्याग करने वाला। यहां वो लोग मुराद हैं जो मक्का से भाग कर मदीना आये।

2. انصاری ***अन्सारी*** (बहुवचन انصار ***अन्सार***),यह शब्द نصرت ***नुस्‌रत*** यानि सहायता से है , अर्थात् मदीना के वो मुसलमान जन्हों ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की सहायता की।

लोगों में निःस्वार्थता और त्याग की ऐसी भावना पैदा हो गई थी कि जिस को जिस का भाई बनाया गया ,उसने अपना आधा मकान और ज़रूरत का सारा सामान अपने मुंह बोले भाई को दे दिया। यहां तक कि अपनी खेतियों का आधा भी देना चाहा ,क्योंकि ***अनसार*** का अधिकांश खेती बाड़ी करता था। लेकिन ***मुहाजिर*** चूंकि व्यापारी थे इस लिए उन्हों ने व्यापार को तरजीह दी , और थोड़े ही समय में मालदार हो गए। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने तीसरा महत्त्वपूर्ण काम यह किया कि मदीना की बहुविध जातियों में एकता और संगठन की नींव रख दी। मदीना में इस्लाम से पूर्व दो बड़ी कौमें थीं अवस और ख़ज़रज, जो अकसर आपस में लड़ती रहती थीं। किन्तु अब इनका कुछ भाग मुसलमान हो गया था, शेष अपने पैतृक धर्म पर कायम थे। लेकिन राष्ट्रीय दृष्टि से दोनों एक थे। इन के अलावा तीन कौमें[1] यहूदियों की थीं। इन का अपना एक अलग संगठन था। आप ने इन के साथ एक राष्ट्रीय समझौता किया , जिस की मुख्य शर्तें ये थीं :

1. दोनों पक्ष अपने अपने धर्म का अनुसरण करें गे , एक पक्ष दूसरे पक्ष के धार्मिक मामलों में हस्तक्षेप नहीं करे गा।

2. यदि एक पक्ष पर आक्रमण हुआ तो दूसरा पक्ष उस का साथ दे गा बशर्तेकि आक्रमण अन्यायपूर्ण हो।

3. मदीना पर हमला होने की सूरत में दोनों पक्ष एकजुट हो कर रक्षा करें गे।

4. शत्रु के साथ शांति–संधि दोनों पक्षों के परामर्श से ही होगी।

5. आपसी झगड़ों का अन्तिम निर्णय हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. करें गे।

बाद की घटनाओं से ज्ञात होगा कि तीनों यहूदी कौमों ने अवसर पाते ही मुसलमानों से विश्वासघात किया और उनके शत्रुओं से जा मिले।

कुरैश की सैनिक योजनाएं और आप की शिक्षा

यहूदियों के साथ किये गये समझौते की शर्तों से साफ ज्ञात होता है कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को मदीना पर कुरैश के आक्रमण की पूरी

1. *बनी क़ैनीक़ाअ ,बनी नज़ीर* और *बनी क़ुरैज़*।

आशंका थी। जब मुसलमान मक्का से ***हिजरत*** कर हबश गए थे ,तो उस वक्त कुरैश को मुसलमानों से किसी किसम का कोई ख़तरा न था। लेकिन फिर भी वो एक प्रतिनिधि–मण्डल के रूप में हबश के राजा के पास पहुंचे कि मुसलमानों को वहां शरण न दी जाए। कुरैश ने यह कदम केवल इस लिए उठाया कि कहीं मुसलमानों का कोई संघटन या जत्था न बन जाए। इस लिए भी कि कहीं मुसलमान उनके अत्याचारी चंगुल से मुक्त न हो जाएं। अब जबकि मुसलमान मदीना जा पहुंचे और उन का एक जत्था भी बन गया , और मदीना उसी जनमार्ग पर स्थित था जहां से मक्का के व्यापारी दल शाम देश को जाते थे। वह शत्रु जिसे इस्लाम की तरक़्क़ी एक आंख न भाती थी , किस तरह खामोश बैठ सकता था ? अल्लाह ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को ***वह्य*** द्वारा यह सूचना पहले ही दे रखी थी कि इस्लाम को विनाश से बचाने केलिए अब आपको शत्रु से युद्ध लड़ना ही पड़े गा। आप को मक्का में ही बताया गया कि इस्लाम को समूल विनष्ट करने के लिए शत्रु तलवार से काम लेने वाला है , और मुसलमानों के छोटे से घुट को बचाने के लिए सिवाय युद्ध के और कोई उपाय शेष न रह जाये गा।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को स्वभावत: युद्ध से नफ़रत थी। ऐसे देश में जन्म लेने के बावजूद, जहां लोग दिन रात युद्ध में आस्कत रहते थे , आप ने 55 साल की आयु तक तलवार हाथ में न उठाई। वह धर्म जिसकी ओर आप लोगों को बुलाते थे , वह भी अपने समस्त भावों की दृष्टि से संपूर्ण शांति का प्रतीक था। और इसकी शिक्षा की सारी बुनियाद ही अमन और शांति पर रखी गई थी। इस्लाम का सारा ज़ोर केवल इस बात पर था कि परमात्मा के आग झुको और प्राणी मात्र की सेवा मे कार्यरत रहो। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को स्पष्ट शब्दों में बता दिया गया था कि आप का काम केवल इस धर्म को लोगों के आगे प्रस्तुत करना है, उन तक पहुंचाना है, ज़ोर ज़बरदस्ती से किसी को इस में प्रविष्ट करना नहीं :

وَقُلِ ٱلْحَقُّ مِن رَّبِّكُمْ ۖ فَمَن شَآءَ فَلْيُؤْمِن وَمَن شَآءَ فَلْيَكْفُرْ

व कुलिल्हक्कु मिर्रब्बिकुम् फ़मन् शाअ फ़ल्युअ्मिंव् वे मन् शाअ फ़ल्यक्फ़ुर् *(18 : 29)*

अर्थात् ,*" और कह : सत्य तुम्हारे पालहार–स्रष्टा की ओर से है , अत: जो कोई चाहे मान ले और जो कोई चाहे इन्कार कर दे।"*

إِنَّا هَدَيْنَـٰهُ ٱلسَّبِيلَ إِمَّا شَاكِرًا وَإِمَّا كَفُورًا ﴿٣﴾

इन्न हदैनाहु–स्सबील इम्मा शाकिरवं–व इम्मा कफ़ूरा

(76 : 3)

अर्थात् , *" हम ने उसे (=इन्सान को) मार्ग दिखा दिया है , अब वह चाहे कृतज्ञ बने या अकृतज्ञ।"*

और इस से भी ज़्यादा स्पष्ट शब्दों में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को बता दिया गया था कि :

لَآ إِكْرَاهَ فِى ٱلدِّينِ

ला इक्राह फ़िद्दीन *(2 : 256) ,*

अर्थात् ," *धर्म के मामले में कोई ज़ोर–ज़बरदस्ती नहीं।"*

युद्ध की अनुमति

लेकिन दुश्मन ने आपको युद्ध लड़ने के लिए विवश कर दिया। उस ने ऐसे हालात पैदा कर दिये कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के लिए अनिवार्य हो गया कि वे अपने निर्बल और अत्याचारग्रस्त अनुयायी–समूह को बचाने के लिए युद्ध लड़ें। अभी आप मक्का में ही थे कि प्रभु ने साफ शब्दों में आप को पर्वसूचित कर दिया था :

أُذِنَ لِلَّذِينَ يُقَـٰتَلُونَ بِأَنَّهُمْ ظُلِمُوا۟ ۚ وَإِنَّ ٱللَّهَ عَلَىٰ نَصْرِهِمْ لَقَدِيرٌ ﴿٣٩﴾

उज़िन लिल्–लज़ीन युक़ातिलून बिअन्नहुम् ज़ुलिमू व इन्नल्–लाह अला नस्–रिहिम् लक़दीरुन *(22 : 39) ,*

अर्थात् ,*"उन लोगों को (युद्ध लड़ने की) अनुमति दी जाती है जिन के विरुद्ध युद्ध किया जाता है , क्योंकि वे उत्पीडित हैं और निःसंदेह अल्लाह उनकी सहायता करने में पूर्णतया समर्थ है।"*

आखिर उन लोगों का , जिन को दुश्मन तलवार से खत्म करने का फैसला कर चुका था , अपराध क्या था ? :

ٱلَّذِينَ أُخْرِجُوا۟ مِن دِيَـٰرِهِم بِغَيْرِ حَقٍّ إِلَّآ أَن يَقُولُوا۟ رَبُّنَا ٱللَّهُ

अल्लज़ीन उख़्–रिजू मिन् दियारिहिम् बिग़ैरि हक़्क़िन इल्ला अंय्यक़ूलू रब्बुनल्–लाहु *(22 : 40)*

अर्थात् ," *वे लोग अपने घरों से नाहक़ निकाले गए , (उनका अपराध इस के सिवा और कुछ न था) कि वे कहते थे : हमारा पालनहार–स्रष्टा अल्लाह है।"*

तात्पर्य यह कि अल्लाह की उपासना करना , अल्लाह को अपना पालनहार–स्रष्टा पुकारना , अल्लाह के आगे झुकना — यह सब मक्का नगरी में अपराध बन गया था। जिस की सज़ा यह थी कि ऐसे लोगों का तलवार से वध कर दिया जाए , और इनकी मस्जिदों को ढा दिया जाए। कुर्आन का कथन है :

وَلَوْلَا دَفْعُ ٱللَّهِ ٱلنَّاسَ بَعْضَهُم بِبَعْضٍ لَّهُدِّمَتْ صَوَٰمِعُ وَبِيَعٌ وَصَلَوَٰتٌ وَمَسَٰجِدُ يُذْكَرُ فِيهَا ٱسْمُ ٱللَّهِ كَثِيرًا

व लव ला दफ़्‌उल्–लाहिन्–नास बअज़हुम् बिबअज़िन् लहुद्–दिमत् स़वामिउ व बियउवं व स़लवातुवं व मसाजिदु युज़्करु फ़ीहस्–मुल्–लाहि कसीरा *(22 : 40),*

अर्थात् *" और यदि अल्लाह लोगों को एक दूसरे के द्वारा न हटाता रहे, तो निश्चय ही मठ , और गिर्जे , और (अन्य) उपासना–गृह और मस्जिदें जिन में अल्लाह का बहुत नाम लिया जाता है ,ढा दी जातीं।"*

ये तीनों बातें , ठिक इसी क्रम से , कुर्आन शरीफ़ के एक ही स्थल पर वर्णित हैं। इसके बाद जब आप मदीना पहुंचे तो युद्ध की संभावना साफ नज़र आने लगी। क्योंकि अब शत्रु ने अपनी योजनों को कार्यान्वित करने की ठान ली थी। फिर भी आपको इस बात पर प्रतिबद्ध किया गया कि युद्ध की शुरूआत आप की ओर से न हो , और युद्ध के वक्त भी आपकी ओर से शत्रु पर कोई अनुचित ज़्यादती न हो :

وَقَٰتِلُوا۟ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ ٱلَّذِينَ يُقَٰتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوٓا۟ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ لَا يُحِبُّ ٱلْمُعْتَدِينَ ﴿١٩٠﴾

व क़ातिलू फ़ी सबीलिल्–लाहिल्–लज़ीन युक़ातिलूनकुम व ला तअतदू इन्नल्–लाह ला युहिब्बुल्–मुअतदीन *(2 : 190) ,*

अर्थात् ," *और अल्लाह के मार्ग में उन लोगों से युद्ध लड़ो जो तुम्हारे साथ युद्ध करते हैं , और इस सीमा से आगे न बढ़ो , क्योंकि अल्लाह उन लोगों से प्रेम नहीं करता जो हद से आगे बढ़ जाते हैं।"*

इन सुस्पष्ट आदेशों के रहते मुसलमान इस बात की कल्पना भी न कर

सकते थे कि किसी को तलवार के बल पर इस्लाम में प्रविष्ट करें। यहां तो दुश्मन ने तलवार इस लिये उठाई थी कि मुसलमानों को ज़बरदस्ती इस्लाम से विमुख कर दे :

وَلَا يَزَالُونَ يُقَـٰتِلُونَكُمْ حَتَّىٰ يَرُدُّوكُمْ عَن دِينِكُمْ إِنِ ٱسْتَطَـٰعُوا۟

व ला यज़ालून युक़ातिलूनकुम हत्ता यरुद्दूकुम् अन दीनिकुम् इनिस्तताअू *(2 : 217) ,*

अर्थात् ,*" और ये लोग तुम से सदैव युद्ध करते रहें गे , यहांतक कि तुम्हें तुम्हारे धर्म से विमुख कर दें — यदि वे ऐसा कर पायें।"*

इस संदर्भ में इस्लाम ने यह अपूर्व धर्म–सिद्धांत प्रस्तुत किया , कि धर्म का मामला बन्दे और ईश्वर के बीच है ,अतः किसी मनुष्य को यह अधिकार प्राप्त नहीं कि वह दूसरे मनुष्य को ज़बरदस्ती किसी धर्म में प्रविष्ट करे या उस से विमुख कर दे :

وَقَـٰتِلُوهُمْ حَتَّىٰ لَا تَكُونَ فِتْنَةٌ وَيَكُونَ ٱلدِّينُ لِلَّهِ ۖ فَإِنِ ٱنتَهَوْا۟ فَلَا

عُدْوَٰنَ إِلَّا عَلَى ٱلظَّـٰلِمِينَ ﴿١٩٣﴾

व क़ातिलूहुम हत्ता ला तकून फ़ित्नतुवं–व यकूनद्–दीनु लिल्–लाहि फ़इनिंतहव फ़ला अुद्वान इल्ला अलज़्–ज़ालिमीन अर्थात् ,*" और उन से युद्ध लड़ते रहो यहांतक कि (धर्म हेतु) अत्याचार शेष न रहे , और धर्म केवल अल्लाह के लिए हो , फिर यदि वे अत्याचार से रुक जाएं तो सज़ा केवल अत्याचारियों के अतिरिक्त अन्य किसी के लिए नहीं।" (2 : 193)*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰को जहां यह आदेश था कि यदि दुश्मन मुसलमानों पर अत्याचार रोक दे तो युद्ध तत्काल समाप्त कर दिया जाए , वहीं दूसरी ओर यह आदेश भी था कि अगर दुश्मन सुलाह की याचना करे तो युद्ध बन्द कर दिया जाए , यद्यपि दुश्मन यह कार्य महज़ संकट टालने या समय प्राप्त करने के लिये कर रहा हो , ताकि अवसर पाते ही अधिक शक्ति से पुनः आक्रमण कर दे :

۞ وَإِن جَنَحُوا۟ لِلسَّلْمِ فَٱجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى ٱللَّهِ ۚ إِنَّهُۥ

هُوَ ٱلسَّمِيعُ ٱلْعَلِيمُ ﴿٦١﴾ وَإِن يُرِيدُوٓا۟ أَن يَخْدَعُوكَ فَإِنَّ حَسْبَكَ ٱللَّهُ ۚ

व इन् जनहू लिस्-सल्मि फ़ज्नह् लहा व तवक्कल् अलल्-लाहि इन्नहू हुवस्-समीअुल्-अलीमु व इंय्युरीदू अंय्यख्दअूक फ़इन्न हस्बकल्-लाहु (8 : 61,62) ,

अर्थात् ," *और यदि वे शांति की ओर झुकें तो तू भी शांति की ओर झुक जा , और अल्लाह पर भरोसा रख। निस्संदेह वह सुनने वाला जानने वाला है। और यदि वे तुम को धोखा देना चाहें , तो अल्लाह तुम्हारे लिए काफ़ी है।"*

ये थीं वे परिस्थितियां , और ये थीं वे शर्तें जिन के अधीन आप को युद्ध लड़ने की अनुमति मिली थी। उस वक्त तक आप ने एक आदमी को भी युद्ध के लिए तैयार न किया था। आप के पास सेना नाम मात्र को भी न थी। और न कोई युद्ध-सामग्री ही थी। बस अनुयायिओं का एक छोटा सा समूह था जिनको केवल इतना ही सिखलाया गया था कि परमात्मा के समक्ष नतमस्तक कैसे हुआ जाता है , उस से सहायता कैसे माँगी जाती है। और इनको भी आप युद्ध के लिए मजबूर न कर सकते थे क्योंकि आपको स्पष्ट आदेश था :

فَقَـٰتِلْ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ لَا تُكَلَّفُ إِلَّا نَفْسَكَ ۚ وَحَرِّضِ ٱلْمُؤْمِنِينَ ۖ عَسَى ٱللَّهُ أَن يَكُفَّ بَأْسَ ٱلَّذِينَ كَفَرُوا۟ ۚ وَٱللَّهُ أَشَدُّ بَأْسًا وَأَشَدُّ تَنكِيلًا ﴿٨٤﴾

फ़क़ातिल् फ़ी सबीलिल्-लाहि ला तुकल्लफ़ु इल्ला नफ़्सक व हर्रिज़िल्-मुअमिनीन असल्-लाहु अंय्-यकुफ़्फ़ बासल्-लज़ीन कफ़रू वल्-लाहु अशद्दु बासंव्-व अशद्दु तंकीला *(4 : 84)*

अर्थात् ," *सो तू अल्लाह के मार्ग में युद्ध कर — तू अपने सिवा और किसी का ज़िम्मेदार नहीं , हाँ ईमान वालों को प्रेरित कर। हो सकता है कि अल्लाह काफ़िरों का युद्ध रोक दे। और अल्लाह शक्ति में सब से बढ़कर शक्तिशाली और दण्ड देने में भी कठोरतम है।"*

क़ुरैश की ओर से युद्ध की शुरूआत और बदर का युद्ध

क़ुरैश का एक रोचक धन्धा लूटमार भी था। अतएव उनके छोटे छोटे दल लूटमार के अभियानों पर निकलते और मदीना की सीमाओं तक जा

पहुंचते। ऐसी दशा में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ के लिए अनिवार्य हो गया था कि वे अपनी सुरक्षा के सभी उपाय करें। आपकी ओर से भी छोटे छोट दल भेजे जाते तकि दुश्मन की गति–विधियों की टोह लें। इन दलों का एक काम यह भी था कि वे मदीना की समीपवर्ती जातियों के पास जा कर उन्हें अपना पक्षधर बना लें ,या उन्हें इस बात पर राज़ी कर लें कि वे पूर्णतया निष्पक्ष रहें। एक ऐसा ही दल , जिसे स्पष्ट आदेश था कि वह केवल कुरैश की गति–विधियों की खबर लाये गा। इसकी मुठभेड कुरैश के एक दल से हो गई , और ग़लती से कुरैश का एक व्यक्ति इबन हज़्रमी मारा गया। कतल की ऐसी घटनाओं का फैसला अरब लोग ***"दैत"***[1] के नियमानुसार करते थे। लेकिन कुरैशी सरदार तो चाहते ही थे कि किसी बहाने मक्का वालों की भावनाएं मुसलमानों के विरुद्ध उत्तेजित हो जाएं , इबन हज़्रमी के कतल ने उन के हाथ एक बाकायदा बहाना दे दिया। अपनी बात की पुष्टि और मुसलमान दल की नीयत को संदिग्ध साबित करने के लिए उन्हों ने इस घटना के साथ कुरैश के उस व्यापार–दल को भी शामिल कर लिया जो ठीक उसी समय शाम देश से वापस लौट रहा था।

कुरैश को भलीभांति मालूम था कि मुसलमानों की सैन्य–शक्ति ना के बराबर है। इस लिए एक हज़ार आदमी इकट्ठा कर तत्काल आक्रमण हेतु मदीना की ओर कूच कर दिया। यह हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ की ***हिजरत*** का दूसरा साल था। और महीना ***रमज़ान*** का था। यानि मुसलमानों के रोज़े (=उपवास) का महीना। कुरैशी सेना के कूच की खबर मदीना पहुंची तो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ने भी यथाशीघ्र इस के मुकाबले की तैयारी केलिये हुक्म दिया। लेकिन सिर्फ 313 आदमी एकत्र हो पाये, जिन में बूढ़े और छोटी आयु के नवयुवक भी शामिल थे। यहूदियों ने यह जानते हुए भी कि आक्रमण मदीना पर हो रहा है साथ न दिया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ इस छोटे से दल को लेकर , जिस के पास न हत्थयार थे न घोड़े , मदीना से शत्रु के मुकाबला केलिए चल पड़े। मदीना से कूच करने का मात्र उद्देश्य

1. دِیَت ***'दैत'*** का नियम उस वक्त लागू होता जब किसी से किसी का भूलवश खून हो जाता। इस नियमानुसार مقتول ***मक़तूल*** (वधित) के निकटतम संबंधियों को यह हक था कि वे قاتل ***क़ातिल*** (वधक) से परंपरानुसार ***"दैत"*** यानि *'खून का हर्जाना'* वसूल करें।

यही था कि शत्रु नगर के निकट पहुंचने न पाये जिस से नगर वासियों में घबराहट पैदा हो जाती। और भीतरीय दुश्मनों को बाहरी दुश्मन से मिल जाने का मौका भी मिल जाता। दोनों सेनाऐं बदर के स्थान पर आमने सामने हो गईं। यह स्थान मदीना से तीन दिन की दूरी पर और मक्का से दस दिन की दूरी पर स्थित था। एक ओर एक हज़ार शस्त्रधारी एवं युद्धकाला में निपुण सैनिक थे , जिन के जीवन युद्ध लड़ने में ही व्यतीत हुए थे। दूसरी ओर 313 ऐसे व्यक्ति थे जिनके पास युद्ध लड़ने का सामान भी न था , और इनका अधिकांश इस से पूर्व कभी किसी युद्ध में नहीं निकला था। और फिर इस तथाकथित सेनादल में बूढ़े और चौदह–चौदह पंद्राह–पंद्राह साल के लड़के भी थे। दुश्मन ने पहले पहुंच कर मैदान के अच्छे हिस्सा पर कबज़ा कर लिया था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने इन सब प्रतिकूल परिस्थितियों को दखा और सारी रात एक छोटी सी कुटिया में प्रभु के आगे विनति करते रहे। आप की ज़ुबान पर ये शब्द थे :

'हे परमात्मा ! यदि आज यह छोटा सा जनसमूह विनष्ट हो गया, तो धरती पर तीरी इबादत करने वाला और तेरे सन्देश को दुनिया तक पहुंचाने वाला कोई शेष न रहेगा। हे परमात्मा ! तू स्वयं स्थित और संसार को स्थिरता प्रदान करने वाला है , मैं तुझ से तेरी दयालुता की सविन्य याचना करता हूँ ।''

प्रातः होते ही युद्ध आरंभ हुआ। और एक ऐसी अद्‌भुत घटना घटी कि जिसकी कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। कुरैश के सब बड़े बड़े सरदार , जिन के सीनों में इस्लाम के विरुद्ध क्रोधाग्नि धधक रही थी , युद्ध में मारे गए। अपने सरदारों का वध होते देख कुरैश सेना हड़बड़ा गई और मैदान छोड़ कर भाग गई। कुरैश के सत्तर आदमी मारे गए और सत्तर ही बन्दी बनाए गए। मुसलमानों के केवल चौदह आदमी शहीद हुए।

उहद का युद्ध

बदर की यह पराजय कुरैश के माथे पर एक कलंक थी। वह इस हार का बदला लेने केलिये अगले साल फिर तीन हज़ार सैनिक लेकर मदीना पर हमला करने आ पहुंचे। यह ***हिजरत*** का तीसरा साल और ***शवाल*** का महीना था। मुसलमानों की ओर से कुल मिला कर सात सौ

आदमी एकत्र हो पाये। और मुकाबले के लिए ऐसे समय बाहर निकले जब दुश्मन मदीना के बिल्कुल निकट पहुंच चुका था। मदीना से तीन मील दूर उहद नामक एक पहाड़ था। मुस्लिम सेना ने इसी पहाड़ की तराई में मोरचा संभाल लिया। शत्रु ने बड़ा ज़ोरदार धावा बोला ,लेकिन मुसलमानों ने बडे साहस और सुदृढ़ता का परिचय दिया। दुश्मन के सात ध्वजवाहक एक के बाद एक मारे गए। इस से कुरैश की विशाल सेना में पुनः उद्विग्नता फैल गई , उन के पाँव उखड़ गए और वे भाग निकले। मुसलमानों ने उनका पीछा किया। परन्तु ठीक उसी समय ख़ालिद ने , जो दुश्मन के दो सौ सवारों का उपसेनापति था , देखा कि पीछा करते वक्त मुसलमानों ने एक ऐसी घाटी खाली छोड़ दी है जहां से मुसलमानों पर पीछे से हमला हो सकता है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने पचास तीरांदाज़ों को इस घाटी पर नियुक्त किया था ,उन्हें स्पष्ट आदेश थे कि वे विजय हो या पराजय किसी भी सूरत में यह स्थल नहीं छोड़ें गे। किन्तु इन से भी चूक हो गई दुश्मन को मैदाने जंग से भागता देख वे भी पीछा करने वालों के साथ शामिल हो गए। खालिद ने इस मोरचा को खाली देख कर पीछा करती हुई मुस्लिम सेना पर पीछे से हमला कर दिया। यह देख कर कुरैश की भागती हुई सेना भी ठहर गई। और अब मुसलमान दोनों ओर से घिर गए। पीछे खालिद के सवार और सामने दुश्मन की विशाल सेना। परिस्थिति इतनी गंभीर हो गई कि संभव था कि सारी मुस्लिम सेना का सफाया हो जाता। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने यह देखा तो अपनी जान की परवा किये बिना स्वयं को ख़तरे में डाल दिया , आप ने ऊँची आवाज़ में मुसलमानों को पुकारा :

''अल्लाह के बन्दो ! मेरी ओर चले आओ , मैं अल्लाह का रसूल हूँ।''

आवाज़ सुनते ही दुश्मन के हमले का सारा ज़ोर उस स्थान कि ओर केन्द्रित हो गया जहां हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. थे। सारी फ़ौज उस स्थल की ओर टूट पड़ी ,और आप पर तीरों की वर्षा होने लगी। लेकिन मुसलमान भी संभल गए और दुश्मन से लड़ते हुए ,उसके अन्दर से निकल कर तत्काल हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के इर्द गिर्द जमा हो गए। और आप को एक ऐसे स्थल की ओर निकाल लाए ,जहां मुसलमान ऊँची जगह पर आगए और शत्रु नीचे रह गया। अब मुसलमानों के पीछे पहाड़ी थी। दुश्मन अपनी

विशाल सेना के बावजूद उनकी ओर न बढ़ सका। लेकिन इस दौड़ धूप में मुसलमानों का काफी नुकसान हो चुका था। मुस्अब इबन अुमैर[रज़.] जिन की शकल हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.]से मिलती थी शहीद हो गए। और यह खबर फैल गई कि मुहम्मद (सल्ल) कतल हो गए। इस पर भी मुसलमानों ने हिम्मत न हारी, और एक मुसलमान ने बुलन्द आवाज़ से कहा :

" (भाइयो !) यदि मुहम्मद[सल्ल]कतल हो गए तो क्या हुआ मुहम्मद[सल्ल.] का रब तो कतल नहीं हुआ। उस सत्यता के लिए युद्ध लड़ो जिस के लिए हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] युद्ध लड़ते थे ।"

दुश्मन के ज़ोदार आक्रमण की वजह से हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] को काफी ज़खम लग चुके थे। लेकिन मुसलमान आप के इर्द गिर्द दीवार की तरह खड़े हो गए। शत्रु ने यह जान कर कि अब मुसलमानों को और हानि पहुंचाना संभव नहीं , उलटा मुसलमानों की ओर से दुबारा हमला हो जाने की सम्भावना महसूस कर दुश्मन मैदान छोड़ कर मक्का वापस चला गया। किसी ने हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] से निवेदन किया कि आप शत्रु को शाप दें। इस पर हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.]ने ,जो साक्षात दया के सागर थे हाथ उठाकर प्रभु से यह विनति की :

" हे अल्लाह ! मेरी क़ौम के अपराध क्षमा कर क्योंकि ये बेखबर और अज्ञानी हैं ।"

अहज़ाब या खंदक का युद्ध

उहद के युद्ध में दुश्मन मुसलमानों को हानि पहुंचाने में सफल तो होगया ,किन्तु उस का मुख्य उद्देश्य पूरा न हुआ। उस का प्रयोजन यही था कि किसी तरह मुसलमानों को समूल विनष्ट कर दिया जाए। उहद से वापसी के कुछ समय बाद उस ने फिर मदीना पर आक्रमण की तैयारियां शुरू कर दीं , और इस बार तैयारी अति व्यापक पैमने पर थी। यहूदियों को ,जो अब तक संधि का उल्लंघन कर मुसलमानों का साथ देने से इन्कार कर रहे थे , दुश्मन अपने साथ मिलाने में कामयाब हो गया। और अन्दर ही अन्दर यह षड़यंत्र रचा गया कि जब मक्का वाले बाहर से मदीना पर हमला करें गे तो यहूदी अन्दर से उठ खड़े होंगे। उधर अरब के ***बदवी*** यानि खानाबोश कबीले ,जो अब तक निष्पक्ष रहे थे ,खुल्लम

खुल्ला कुरैश के साथ जा मिले। इस तरह *हिजरत* के पांचवें साल दस हज़ार सैनिकों की एक मिली जुली फौज मदीना पर चढ़ आई। मुसलमान अपनी अल्पसंख्या के कारण इस काबिल न थे कि इस विशाल सेना का खुले मैदान में मुकाबला कर सकें। इस लिए परस्पर विचार विमर्श से यह तय पाया कि मदीना की जिन दिशाओं से शत्रु हमला कर सकता है उधर एक गहरी खाई (=*खंदक*) खोद दी जाए। इस खाई के खोदने में स्वयं हज़रत पैगम्बरश्रीसल्ल. ने ,तथा आप के वरिष्ठ ***सहाबा*** (=सहवर्ती अनुयायिओं) ने मज़दूरों की तरह काम किया। इस असाधारण परिश्रम से शरीर धूल से अट जाते , और थकान से अंग अंग पीड़ित हो उठता। पर चूंकि मुसलमान आध्यात्मिक नेमातों का स्वाद चख चुके थे , इस लिये ये सारे शारीरिक कष्ट उन्हें तुच्छ लगे , अतः वे इन दुःखों को खुशी खुशी सह गए। टोकरियां ढोते जाते और ज़ुबान से यह गीत गाते जाते थे :

" हे अल्लाह ! यदि तेरी दयादृष्टि न होती तो हम मार्ग न पाते , न हम दानपुण्य करते , न तेरे नामस्मरण का आनन्द भोगते , तू हम पर संतुष्टि उतार और युद्ध में हमारे कदमों को सुदृढ़ कर दे , ये लोग हम पर चढ़ आये हैं और बलपूर्वक हम को सुपथ से विचलित कर देना चाहते हैं,परन्तु हम इस बात को न मानें गे , कदापि न मानें गे।"

आखिर दुश्मन का विराट लश्कर मदीना पहुंच गया , और खाई को बीच में पा कर बाहर ही ढेरे डाल दिये। मुसलमानों के लिए यह सख़्त घबराहट की घड़ी थी। कुर्आन शरीफ ने इस विकट परिस्थिति का यों चित्रण किया है :

إِذْ جَآءُوكُم مِّن فَوْقِكُمْ وَمِنْ أَسْفَلَ مِنكُمْ وَإِذْ زَاغَتِ ٱلْأَبْصَـٰرُ وَبَلَغَتِ ٱلْقُلُوبُ ٱلْحَنَاجِرَ وَتَظُنُّونَ بِٱللَّهِ ٱلظُّنُونَا۠ ﴿١٠﴾ هُنَالِكَ ٱبْتُلِىَ ٱلْمُؤْمِنُونَ وَزُلْزِلُوا۟ زِلْزَالًا شَدِيدًا ﴿١١﴾

इज़् जाऊकुम् मिन् फ़ोक़िकुम् व मिन् अस्फ़ल मिंकुम् व इज़् ज़ाग़तिल्-अब्सारु व बलग़तिल्-कुलूबुल्ह नजिर व तज़ुन्नून बिल्लाहिज़्-ज़ुनूना हुना लिकब्तुलियल्-मुअमिनून व ज़ुल्-ज़िलू

ज़िल्ज़ालन् शदीदा *(33 : 10,11) ,*

अर्थात् , *" और जब वे तुम्हारे ऊपर से और तुम्हारे नीचे से तुम पर चढ़ आये और जब आँखों के आगे अँधेरा छा गया और दिल (मारे भय के) गले तक आ पहुंचे , और तुम अल्लाह के बारे में विभिन्न विचार विचारने लगे। वहां ईमान वालों की कठोर परीक्षा थी और उन्हें बुरी तरह झंझोड़ा गया।"*

किन्तु इस भयंकर एवं दहला देने वाली परिस्थिति में भी मुसलमानों के भीतर ईमान की ज़बरदस्त शक्ति मौजूद थी :

وَلَمَّا رَءَا ٱلْمُؤْمِنُونَ ٱلْأَحْزَابَ قَالُوا۟ هَٰذَا مَا وَعَدَنَا ٱللَّهُ وَرَسُولُهُۥ وَصَدَقَ
ٱللَّهُ وَرَسُولُهُۥ ۚ وَمَا زَادَهُمْ إِلَّآ إِيمَٰنًا وَتَسْلِيمًا

व लम्मा राअल्-मुअ्मिनूनल्-अह्ज़ाब क़ालु हाज़ा मा वअदनल्-लाहु व रसूलहू व सदक़ल्-लाहु व रसूलहू व मा ज़ादाहुम् इल्ला ईमानवं-व तस्लीमा *(33 : 22) ,*

अर्थात् , " जब ईमान वालों ने कबीलों के परिसंघ को देखा, वे बोले : यह तो वही है जिस का वचन अल्लाह और उसके रसूल ने दिया था और अल्लाह और उसके रसूल ने सत्य कहा था , और इस बात ने उन्हें केवल ईमान और आज्ञाकारिता में और बढ़ाया।"

मदीना का यह घेराव एक महीना तक खिच गया। खंदक के उस पार से तीरों और पत्थरों की वर्षा होती रही। लेकिन दुश्मन मुसलमानों के प्रतिरक्षण को न तोड़ सका। दुश्मन दस्ते आगे बढ़ कर आक्रमण करते तो उनका मुंह तौड़ जवाब दे दिया जाता। अतः उन दस्तों के लिए वापसी के सिवा और कोई चारा न रह जाता। घेराव के लम्बा खिच जाने की वजह से तथा मुसलमानों के मुंह तौड़ जवाब के कारण दुश्मन सेना का मनोबल टूट गया। उधर उनकी रसद भी समाप्त होने लगी। अन्ततः कुदरत की शक्तियां भी बहादुर मुसलमानों की सहायता को पहुंचीं। एक रात तूफानी झक्कड़ चले , जिन का रुख़ आक्रमणकारी सेना के शिविरों की ओर था। जिस से उनके सारे तम्बू उखड़ गए। शत्रु के सहयोगी दलों में भी

खलबली मच गई। और रातों रात जिस को जिधर रस्ता मिला भाग निकला। सुबह हुई तो शत्रु की सेना का कोई निशान मदीना के इर्द गिर्द शेष न रहा।

हुदैबिया की संधि

इस आखिरी शक्तिशाली आक्रमण की असफलता ने कुरैश की कमर ही तौड़ डाली। और उन्हें विश्वास हो गया कि वे अपने शारीरिक कौशल और सैन्य शक्ति से मुसलमानों को विनष्ट नहीं कर सकते। इस घटना के एक साल बाद हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. अपने चौदह सौ ***सहाबा*** के संग ***उमरह*** के उद्देश्य से ***कअबा शरीफ़*** की तीर्थयात्रा को निकले। कुर्बानी के जानवर आप के साथ थे। जो इस बात का खुला प्रतीक था कि आप केवल ***कअबा शरीफ*** की तीर्थयात्र के लिए ही निकले थे। आप के साथ युद्ध का कोई सामान न था। हां ! तलवारें साथ थीं। जो अरब देश में सफर का अनिवार्य अंग थीं। अरब परंपरानुसार ***हज्ज*** अथवा ***उमरह*** से किसी को रोका न जा सकता था ,चाहे वह कितना ही बड़ा दुश्मन क्यों न हो। ***हज्ज*** के लिए सब को एक जैसी आज़ादी थी। किन्तु जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. मक्का से नौ मील दूर एक स्थल हुदैबिया पर पहुंचे तो कुरैश ने आगे बढ़ने से रोक दिया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने अपने दूत मक्का भेजे कि हम सिर्फ ***हज्ज*** के उद्देश्य से आए हैं। परन्तु कुरैश ने उन्हें कैद कर लिया। निहथे और निरस्त्र मुसलमानों के लिए यह बड़ी नाज़ुक और चिन्ताजनक घड़ी थी। उधर हज़रत उस्मानरज़., जो दूत बनकर गए थे , की हत्या की खबर भी फैल गई थी। यह हाल देख कर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने इन चौदह सौ मुसलमानों से بَيْعَت ***बैअत*** (प्रतिज्ञा) ली कि वे आप का साथ किसी भी दशा में नहीं छोड़ें गे , चाहे प्राणों पर बन आये। यह ऐतिहासिक घटना इस्लामी इतिहास में بَيْعَت رِضْوَان ***"बैअते रिज़वान"*** के नाम से प्रसिद्ध है। कुरैश ने मुसलमानों का दृढ़संकल्प देखा तो वे चेते और सुलाह पर राज़ी हो गए। एक संधिपत्र लिखा गया जिस की अवधि दस वर्ष मुकर्रर हुई। यही संधि इस्लामी इतिहास में ***सुलहे हुदैबिया*** या हुदैबिया की संधि के नाम से मशहूर है। इस संधि की शर्तें ये थीं :

1. मुसलमान इस साल हज्ज किये बिना ही वापस लौट जाएं गे।

2. मुसलमान हज्ज के लिए अगले वर्ष आएं गे ,लेकिन तीन दिन से अधिक मक्का में न ठहरेंगे।

3. जो मुसलमान मक्का में हैं उन्हें अपने साथ नहीं ले जा सकते। यदि कोई मुसलमान मदीना छोड़कर मक्का आना चाहता हो उसे न रोकें।

4. यदि मक्का वालों में से कोई व्यक्ति इस्लाम क़बूल कर मदीना जाए तो मुसलमानों के लिए अनिवार्य होगा कि उसे वापस कुरैश के हवाले कर दें लेकिन अगर कोई व्यक्ति मुसलमानों में से निकल कर मक्का आ जाए तो कुरैश उसे वापस न करें गे।

5. अरब के विभिन्न कबील मुसलमानों या कुरैश में से जिस पक्ष के साथ रहना चाहें , आपस में संधि कर सकते हैं।

संधि अभी लिपिबद्ध होने ही वाली थी कि कुरैश के दूत ने संधिपत्र के आरंभ में ***बिस्मिल्लाह*** लिखने से इनकार कर दिया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने इसे भी स्वीकार कर लिया। दूसरा झगड़ा संधिपत्र में محمد رسول الله ***मुहम्मद रसूलुल्लाह*** लिखने पर हुआ। कुरैश के दूत ने कहा कि यदि हम आप को अल्लाह का ***रसूल*** मानते होते तो फिर यह सारा हंगामा ही क्यों होता। अतः ***मुहम्मद रसूलुल्लाह*** के स्थान पर अब्दुल्लाह का पुत्र मुहम्मद लिखा जाए। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने इसे भी स्वीकार कर लिया। मुसलामनों को कुरैश का यह रवैया ,और संधि की ये शर्तें बड़ी अप्रिय लगीं। हजरत उमररज़. ने इस कर्म को मुसलमानों की कायरता कहा , और अपने रोष और अपनी अप्रसन्नता को हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के सामने प्रकट भी किया। किन्तु आप ने उन्हें आश्वासन दिया कि इस संधि में ही मुसलमानों का हित निहित है।

इस संधि से साफ ज्ञात होता है कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. कितने शांति–प्रिय थे। देश की शांति के लिये वे हर कीमत अदा करने केलिए तैयार थे। यद्यपि शत्रु अब तक आपको पराजित करने में असफल रहा था लेकिन आप ने शांति केलिए ऐसी शर्तों को कबूल किया जिन से मुसलमानों का पक्ष कमज़ोर एवं वशीकृत नज़र आता था। इस्लाम की असल शक्ति

उसका आध्यात्मिक बल था। मुसलमानों में से एक भी व्यक्ति इस्लाम से विमुख होकर वापस मक्का नहीं गया। यह ऐतिहासिक तथ्य उस दुष्प्रचार का खण्डन करने के लिये काफी है जो यह कहता है कि इस्लाम का प्रसार तलवार द्वारा हुआ था। इसके विपरीत मक्का की सर्वथा प्रतिकूल परिस्थितियों में भी बीसियों लोग मुसलमान हो गए। और जब मदीना में उन्हें शरण न मिली तो उन्हों ने ओस नामक स्थान में निवास कर लिया। यह इलाक़ा एक स्वतंत्र क्षेत्र था जो न तो हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] के अधीन था और न कुरैश के। देशीय अमन और शांति के फलस्वरूप लोगों का आपसी मेलजोल बढ़ता चला गया। दिन पर दिन लोग इस्लाम की ख़ूबियों से परिचित होते गए , फल यह कि बड़ी संख्या में लोग इसके अन्दर प्रविष्ट होते चले गए।

बादशाहों और सम्राटों के नाम पत्र

हुदैबिया से वापस आते ही हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] ने अपने सभी पड़ोसी देशों और जातियों को इस्लाम की ओर आमंत्रित किया। आप ने अपने सभी पड़ोसी राज्यों के शासकों के नाम पत्र भेजे।[1] ये पत्र रोम के ईसाई सम्राट कैसर , ईरान के बादशह कसरा , हबश के ईसाई नरेश नजाशी , मिस्र के नरेश मक़्वक़स और बाज़ अन्य सरदारों के नाम थे। ये पत्र आप ने अपने विशेष दूतों द्वारा भिजवाए थे। इन सभी पत्रों की विषयवस्तु एक जैसी थी। जो पत्र रोम के सम्राट कैसर के नाम लिखा गया उसके शब्द ये थे :

"अल्लाह के नाम से जो अपार दयालु सतत कृपालु है।
यह पत्र अल्लाह के बन्दे और रसूल मुहम्मद[सल्ल.] की ओर से हिरक़िल के नाम है , जो रोमियों का सरदार है। उस पर शांति जो संमार्ग पर चलता है। तत्पश्चात् , मैं तुझे इस्लाम का निमंत्रण देता हूँ। इस्लाम में प्रविष्ट हो जा ताकि तू शांति को प्राप्त हो जाये। अल्लाह तुझे दोहरा प्रतिफल देगा। पर यदि तू विमुख हो जाए तो तीरी प्रजा का पापदोष भी तुझ पर होगा। हे दिव्य-ग्रन्थ के अनुयायिओ ! उस बात की ओर आ जाओ जो हमारे और तुम्हारे बीच सामान्य है -- यह कि हम अल्लाह के सिवा और किसी की उपासना नहीं

---

1. लगभग ये सभी ऐतिहासिक पत्र खोजे जा चुके हैं। मूल पत्रों के छाया चित्र आसानी से उपलब्ध हैं। (अनुवादक)

करें गे। और न उसके साथ किसी को शरीक (साझेदार) ठहराएं गे। और न हम में से कोई अल्लाह को छोड़ किसी और को रब बनाए। परन्तु अगर वे विमुख हो जाएं तो कहो : गवाह रहो हम अल्लाह के आज्ञाकारी हैं।''[1]

(बुख़ारी 1 :1)

जिन शासकों को ये पत्र भेजे गए उन में से हबश के नरेश नजाशी ने इस्लाम कबूल किया। मिस्र के सम्राट ने जवाब में उपहार भेजे। कैसर पर भी बहुत असर हुआ यहांतक कि उस ने खुले तौर पर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.की सत्यता का इक़रार किया। किन्तु अपने कट्टरपन्थी सरदारों के कारण रुका रहा। ईरान के अभिमानी बादशाह कसरा ने आपके पत्र को फाड़ डाला , और यमन के राजपाल के नाम आदेश भेजा कि वह हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को गिरिफतार कर ले। जब राजपाल के सिपाही मदीना पहुंचे तो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने उन को यह परोक्ष संबंधी सूचना दी कि तुम्हारा बादशाह कसरा आज रात मारा जा चुका है। इस आश्चर्यजनक सूचना के बाद जब वे लोग यमन वापस पहुंचे तो देखा कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.की सूचना अक्षरशः सत्य है। कसरा को सचमुच उसी रात अपने ही पुत्र ने कतल कर दिया था। इस घटना का यमन के राजपाल पर बड़ा असर हुआ और उस ने इस्लाम ग्रहण कर लिया। और कालांतर में यमन ने ईरानी शासन का जुआ उतार फैंका।

मक्का विजय

हुदैबिया में जो अस्थायी संधिपत्र लिखा गया था , उस पर अब दो वर्ष बीत चुके थे। इस्लाम के बढ़ते हुए प्रवाह को देख कुरैश ने वचनभंग करने की सोची। उन्हों ने अपने सहयोगी कबीले बनू बक्र द्वारा मुसलमानों के सहयोगी कबीले बनू ख़ुज़ाआ का वध कर दिया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने कुरैश को कहलवा भेजा कि या तो वो ***"ख़ून बहा''*** (*=हरजाना*) अदा करें या फिर बनू बक्र का समर्थन छोड़ दें , अन्यथा हुदैबिया–संधि को टूटा हुआ समझा जाये गा। उन्हों ने पहली दोनों बातें न मानीं। इस प्रकार हुदैबिया की अस्थायी संधि टूट गई। ***हिजरत*** के आठवें साल में हज़रत

1. इस ऐतिहासिक पत्र की मूल दस्तावेज़ का छाया चित्र इस पुस्तक में अन्यत्र देखा जा सकता है। (अनुवादक)

पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने दस हज़ार मुसलमानों की सेना के साथ मक्का पर चढ़ाई की। मुसलमानों की इतनी विशाल सेना देख कर कुरैश के छक्के छूट गए। मक्का का प्रमुख कुरैश सरदार अबू सुफ़यान मक्का शहर से कुछ फासले पर स्थित मर्रुज़्ज़हरान पहुंचा , और हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की सेवा में क्षमा की याचना लेकर उपस्थित हुआ। और इस्लाम कबूल किया। यह वही सरदार था जो अब तक इस्लाम के विरुद्ध कुरैशी योजनाएं बनाता आया था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने मुस्लिम सेना को आदेश दिया कि वो किसी प्रकार का रक्तपात न करें। और घोषणा करा दी कि जो व्यक्ति अपने घर का दरवाज़ा बन्द कर ले या अबू सुफियान के घर में शरण लेले या ***कअबा शरीफ़*** में दाखिल हो जाए —— इन सब के लिये शांति होगी। यहां यह बात विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि इस सर्वक्षमा के लिए इस्लाम क़बूल करना शर्त न था। सिर्फ अबू जहल के बेटे अिकरिमा ने कुछ मकाबला किया। उस ने मुसलमानों की उस टुकड़ी पर धावा बोल दिया जिस की कमान ख़ालिद (जो अब मुसलमान हो चुके थे) के हाथ में थी। इस अनचाही मुठभेड़ में कुरैश के दरजन भर आदमी मारे गए। इस एक घटना को छोड़ रक्त की एक बूंद भी न बहाई गई।

रमज़ान सन् 8 ***हिजरी*** में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.विजेता के रूप में उसी शहर में दाखिल हुए जहां आप के कतल का अन्तिम फ़ैसला हुआ था, जहां से कई सौ मुसलमान अपना घरबार , सगेसंबंधी , कारोबार अर्थात् अपना सर्वस्व त्याग कर विभिन्न देशों की ओर भाग गए थे , जहां आप को तथा आपके साथियों को कठोरतम यातनाएं दी गई थीं , और कुछ को बेदर्दी से क़तल किया गया था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने मक्का वासियों को — उन मक्का वासियों को जो आपको तथा मुसलमानों को विनष्ट करने के लिये तीन बार आक्रमण कर नाकाम हो चुके थे , इकट्ठा किया और पूछा :

"तुम मुझ से किस तरह के व्यवहार की आशा रखते हो ?"

ज़ाहिर है कि जो दुर्व्यवहार वे मुसलमानों बल्कि स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के साथ कर चुके थे उसके उपलक्ष्य में वे इस बात के अधिकारी थे कि जान से मार दिये जाते या गुलाम बना लिये जाते। वे लोग आप के दयालु स्वभाव और सुविशाल हृदय से भलीभांति परिचित थे , सब ने एकस्वर हो

कर निवेदन किया :

''आप स्वयं दयालु उस पर हमारे दयालु भाई की सन्तान हैं।''

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने उत्तर दिया :

قَالَ لَا تَثْرِيبَ عَلَيْكُمُ الْيَوْمَ

ला तस्रीबु अलैकुमुल्–यौम .

अर्थात् ,'' *जाओ ! आज तुम पर कोई दोष नहीं।''*

ये वही शब्द हैं जो हज़रत यूसुफअ.स. ने अपने अपराधी भाइयों को क्षमादान प्रदान करते हुए कहे थे (देखो कुर्आन 12 : 92)। मक्का वासियों के अत्याचारों और उत्पीड़नाओं का बदला लेना तो एक ओर रहा , हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने उन्हें दोषी ठहराना भी पसन्द न किया बल्कि सब को माफ कर दिया। उन से यह इक़रार भी नहीं लिया कि वे आगे शरारत नहीं करें गे। मक्का से पलायन करने वाले मुसलमानों की जो संपति कुरैश के कबज़े में थी उसे भी वापस नहीं मांगा। ये लोग अभी विमुस्लिम ही थे , इन्हों ने इस्लाम स्वीकार नहीं किया था। दस हज़ार का लश्कर देख केवल शारीरिक दृष्टि से भयभीत हो उठे थे। किन्तु नैतिकता के इस अद्भुत प्रदर्शन ने उनके दिलों को पराजित कर दिया और वे धीरे–धीरे आप से आप इस्लाम में प्रविष्ट होते चले गए। स्वयं **मियूर** ने भी इस ऐतिहासिक तथ्य को स्वीकारा है , वह लिखता है :

> **'यद्यपि (मक्का) शहर ने ख़ुशी से आप का अधिकार कबुल कर लिया। लेकिन सारे नगर वासियों ने अबतक नया धर्म कबूल नहीं किया था। न ही आप का पैग़म्बर होना स्वीकारा था। शायद आप उसी नीति को मक्का में भी लागू करना चाहते थे जस पर आप मदीना में कार्यबद्ध थे। यानि इस्लाम कबूल करने के मामले में लोगों को आज़ाद छोड़ दिया जाए, ताकि कालांतर में लोग यह कार्य क्रमशः बिना किसी ज़ोर ज़बरदस्ती के स्वेच्छापूर्वक स्वयं पूरा करें।''**

अन्य कौमों एवं राष्ट्रों से यद्ध

कुरैश ने न सिर्फ स्वयं ही बार बार मदीना पर हमला किया, बल्कि अरब की अन्य कौमों को भी मुसलमानों के विरुद्ध आक्रमण के लिए उकसाते रहे। इस लिए हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. और आप के साथियों को

मदीना में दिन रात हथियारबन्द रहना पड़ता था , क्योंकि कभी एक ओर से तो कभी दूसरी ओर से हमले का समाचार आता। कुछ जातियाँ और कबीले एक परिसंध के रूप में आक्रमण करते। बहुत से ऐसे थे जो डाके डालते थे। बहुत से ऐसे थे जो धोखा देकर मुसलमानों का वध करते थे। जैसा कि ***बओर मऊना*** की घटना , जहाँ हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल. ने सन् 4 ***हिजरी*** में सत्तर धर्मप्रचारक शिक्षा हेतु भेजे और वे सब कतल कर दिये गए। या फिर ***रजीह*** की घटना जहाँ इसी क्रूरता से दस धर्मप्रचारकों का वध कर दिया गया। मुसलमानों को दुश्मनों के इन हमलों से सुरक्षित रखने के लिये ज़रूरी था कि मुसलमानों की ओर से भी पर्याप्त और ठोस उपाय किये जाते। प्रायः जहाँ से दुश्मनों के एकत्र होने की सूचना मिलती आप वहाँ पर्याप्त सेना दल भेज देते। जहां सेना दलों की ज़रूरत न होती वहां आदमियों के छोटे छोटे दस्ते भेज कर शांति स्थापित कर दी जाती। बनी मस्तलक कबीले के कुरैश से गहरे संबंध थे , उन्हों ने सन् 5 ***हिजरी*** में हमले की तैयारी की तो हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल. ने उन पर चढ़ाई की और उनको परास्त किया। इस युद्ध में छः सौ आदमी कैदी बनाए गए लेकिन आप ने सब को निस्तार–धन या मुक्ति–मूल्य लिये बिना ही आज़ाद कर दिया। हवाज़न जाति ,जो मक्का के पूरब की ओर रहती थी , के दो क़बीलों के निन्दनीय विश्वासघात किया जिस का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। सन् 8 ***हिजरी*** में मक्का विजय के बाद पता चला कि यह जाति अपनी सैनिक गतिविधियां तेज़ कर रही है। अतः हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल. ने मक्का से वापस लौटने से पहले इन को दण्ड देने केलिए इन पर चढ़ाई की। आरंभ में मुसलमान सैनिक इन लोगों के युद्धकोशल और तीर–अन्दाज़ी के सामने टक न सके और भाग निकले। लेकिन हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल. को आगे बढ़ता देख वापस पलटे और **हुनैन** के स्थान पर दुश्मन को पराजित किया , छः हज़ार आदमी बन्दी बने। किन्तु इन को भी बिना मुक्ति–मूल्य लिये आज़ाद कर दिया गया। हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल. प्रायः इसी उद्धार नीति का प्रदर्शन करते थे , कैदियों को मुक्ति–मूल्य लिये बिना ही आज़ाद कर दिया जाता। इन युद्ध अभियानों का मात्र उद्देश्य यही था कि अरब देश में शांति स्थापित हो जाए , और मुसलमानों के खिलाफ शरारतों का यह सिलसिला रुक जाए। और जहां आप देखते कि यह मकसद पूरा हो

गया , तो उन लोगों के साथ ऐसा सौहार्दपूर्ण एवं उपकारयुक्त व्यवहार करते कि उन की गर्दनें आप से आप झुक जातीं। यही बातें थीं जिन के कारण अरब लोगों के दिलों पर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की सत्यता अंकित हो गई , और यह सुप्रभाव दिन पर दिन गहरा होता चला गया।

यहूदियों का विश्वासघात

मदीना के यहूदियों ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के साथ समझौता किया कि वे मुसलमानों के साथ मिलकर शत्रु का मुकाबला करें गे। लेकिन कुरैश की सांठ–गांठ के अधीन उन्हों ने विश्वासघात किया। बनी नसीर नामक यहूदी जाति ने कुरैश की साज़िश से हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के कतल की योजना बनाई। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने इन को कहा कि वे पहले शांतिसमझौते का नवीनीकरण कर लें , लेकिन उन्हों ने साफ इन्कार कर दिया। इस लिये उन्हें मदीना से निष्कासित कर दिया गया।

दूसरा यहूदी कबीला ***बनी करीज़ा*** था इन्हों ने भी शांतिसंधि का परित्याग किया। और खन्दक युद्ध में विश्वासघात कर दुश्मन से जा मिले। जब दुश्मन अपना घेराव समाप्त कर वापस लौट गया तो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने इनका घेराव किया। इन्हों ने अपने पुराने सहयोगी कबीलों में से एक व्यक्ति को पंच मुकर्रर किया।[1] पंच ने अपना फैसला यहूदी धर्मविधानानुसार सुनाया कि इस जाति के वे सब सदस्य , जिन्हों ने विश्वासघात करके मुसलामनों के विरुद्ध युद्ध किया था , कतल कर दिये जाएं।[2]

---

1. मदीना में अवस और ख़ज़रज दो कौमें थीं। अवस कबीला बनी करीज़ा का मित्र था यानि अवस और ख़ज़रज के बीच युद्ध होने की सूरत में बनी करीज़ा अवस कबीले का साथ देते थे , और बनी नसीर ख़ज़रज कबीले का। बनी करीज़ा ने अवस कबीले के प्रधान सदस्य सअद इबन मआज़ को अपना पंच मुकर्रर किया था।
2. सअद इबन मआज़ का यह फैसला बाइबिल की पुस्तक "व्यवस्थाविवरण" (20 : 10–14) के अनुसार था जहां साफ लिखा है :
" जब तू किसी नगर से युद्ध करने को उसके निकट जाए, तब पहले उसे सन्धि करने का समाचार दे। और यदि वह संधि करना अंगीकर करे और तेरे लिये अपने फाटक खोल दे ,तब जितने उस में हों वे सब तेरे अधीन होकर तेरे लिये बेगार

(जारी है)

सन् 7 ***हिजरी*** में ***ख़ैबर*** [3] के यहूदियों ने फिर एक बड़ी शरारत की योजना बनाई और ग़तफ़ान के कबीले को साथ मिला कर मदीना पर आक्रमण करना चाहा। अतएव हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को इन पर चढ़ाई करना पड़ी और ख़ैबर पर विजय प्राप्त हुई।

तबूक का युद्ध

अरब देश में बसने वाले ईसाइयों की संख्या बहुत ही कम थी। किन्तु उत्तर में कैसर का मज़बूत ईसाई राज्य था , जिस ने उत्तर की गैर–ईसाई जातियों को अपने अधीन कर रखा था। कैसर को इस्लाम की प्रगति अप्रिय थी। अरब लोग इस शक्तिशाली राज्य के मुकाबला में खड़े होने की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। सन् 7 ***हिजरी*** में बसरा[4] के सरदार ने , जो कैसर के अधीन था , हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के दूत को जो इस्लाम का परिचय–पत्र लेकर गया था कतल कर दिया। यह मानो उसकी ओर से एलाने जंग था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने तीन हज़ार सैनिक भेजे। और सन् 8 ***हिजरी*** के आरंभ में मौता के स्थान पर युद्ध हुआ। ईसाई सम्राट कैसर की सहायता से शत्रु सेना की संख्या एक लाख तक जा पहुंची। मुसलमानों का बहुत नुकसान हुआ। अन्ततः खालिद इस सेना को बड़ी चतुराई और बुद्धिमत्ता सुरक्षित वापस निकाल लाये। सन् 9 ***हिजरी*** में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को पुनः यह सूचना मिली कि उत्तरी सीमा पर दुश्मन की फौजें जमा हो रही हैं , और कैसर ने ईसाई जातियों को हमले केलिए उकसाया है। सूचना पाते ही आप तीस हज़ार सैनिकों को लेकर तबूक नामक स्थल पर जा पहुंचे। किन्तु मुसलमान सेना की गतिविधियों की खबर से ईसाई जातियों का मनोबल पसत हो चुका था ,उधर कैसर

करनेवाले ठहरें। परन्तु यदि वे तुझ से संधि न करें ,परन्तु तुझ से लड़ना चाहें तो तू उस नगर को घेर लेना। और जब तेरा परमेश्वर यहोवा उसे तेरे हाथ में सौंप दे तब उस में के सब पुरुषों को तलवार से मार डालना। परन्तु स्त्रियों और बालबच्चे और पशु आदि जितनी लूट जो तेरा परमेश्वर यहोवा तुझे दे उसे काम में लाना ।"

3. ख़ैबर मदीना से लगभग तीन सौ मील दूर एक यहूदी आबादी थी। इन की अपनी हकूमत और मज़बूत किले थे। मदीना से निष्कासित होने वाली यहूदी जातियां भी यहीं आकर बस गई थीं।
4. बसरा , एक सीमावर्ती रियासत का नाम।

भी उनकी सहायता को नहीं आया। अतः जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने देखा कि सीमा पर युद्ध की कोई तैयारी नहीं है ,तो आप सीमा पार की कुछ ईसाई रियासतों से सन्धि कर बिना युद्ध लड़े वापस मदीना चले आये। यदि आप चाहते तो दुश्मन को असावधन पाकर उसका बहुत सा इलाका ले सकते थे। किन्तु आप का उद्देश्य राज्य विस्तार न था बल्कि मुसलमानों को दुश्मनों के हमलों से बचाना ,अपनी सरहदों को मज़बूत बनाना तथा यह दिखाना था कि मुसलमान बड़ी से बड़ी शक्ति से भयभीत होने वाले नहीं। कैसर और किसरा जैसे महा सम्राट भी यदि ज़्यादती करें तो उन्हें भी दण्ड देने के लिए तैयार हैं। परन्तु अगर वे शांति से रहना चाहें तो मुसलामानों की ओर से कभी पहल न होगी। यह वास्तव में कुर्आन शरीफ़ के उस युद्ध संबंधी आदेश का क्रियात्मक रूप था जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को नबूवत के प्रारंभकाल में ही मिल चुका था :

وَقَـٰتِلُوا۟ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ ٱلَّذِينَ يُقَـٰتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوٓا۟ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ لَا يُحِبُّ ٱلْمُعْتَدِينَ

व क़ातिलू फ़ी सबीलिल्–लाहिल्–लज़ीन युक़ातिलूनकुम व ला तअतदू इन्नल्–लाह ला युहिब्बुल्–मुअतदीन *(2 : 190) ,*

यानि " और अल्लाह के मार्ग में उन लोगों से युद्ध लड़ो जो तुम्हारे साथ युद्ध करते हैं, और इस सीमा से आगे न बढ़ो, क्योंकि अल्लाह उन लोगों से प्रेम नहीं करता जो हद से आगे बढ़ जाते हैं ।"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने प्रथम दिन से लेकर अपने जीवन के अन्तिम दिन तक इस आदेश का यथावत पालन किया।

संधि भंग करने वाली जातियों का अन्त

तबूक से वापसी के बाद अरब देश ऊपरी तौर शांत नज़र आने लगा। लेकिन वे ग़ैरमुस्लिम जातियां जिन्हों ने मुसलमानों से शांति–संधि की थी , उन में की अधिकांश जातियां अपने वचन की तनिक भी परवा न करती थीं। उन की ओर से लुटेरों और डाकुओं की टोलियां आये दिन मुस्लिम राज्य में दाखिल होतीं और आतंक फैलातीं। राज्य में अमन और कानून की व्यवस्था बनाये रखने केलिए ज़रूरी था कि इस समस्या का पर्याप्त समाधान किया जाता। कुर्आन शरीफ में इस दशा का

चित्रण यों मिलता है :

ٱلَّذِينَ عَـٰهَدتَّ مِنۡهُمۡ ثُمَّ يَنقُضُونَ عَهۡدَهُمۡ فِى كُلِّ مَرَّةٍ وَهُمۡ لَا يَتَّقُونَ

अल्लज़ीन आहद्त मिन्हुम सुम्म यन्कुज़ून अह्दहुम फ़ी कुल्लि मर्रतिंव व हुम ला यत्तकून (8 : 56)।

अर्थात् , *"वे लोग जिन के साथ तू सन्धि करता है ,फिर वे हर बार अपनी प्रतिज्ञा भंग कर देते हैं , और वे कर्तव्यपालन की चिन्ता नहीं करते।"*

इस से साफ ज्ञात होता है कि ये लोग प्रतिज्ञा भंग कर देते , आप उन के साथ पुनः सन्धि करते और वे फिर प्रतिज्ञा भंग कर देते। ऐसे ही लोगों का वह इलाज है जिस का उल्लेख सूरा तौबा के आरंभ में है :

بَرَآءَةٌ مِّنَ ٱللَّهِ وَرَسُولِهِۦٓ إِلَى ٱلَّذِينَ عَـٰهَدتُّم مِّنَ ٱلۡمُشۡرِكِينَ

बराअतुम्मिनल्लाहि व रसूलिही इलल्लज़ीन आहद्तुम मिनल्–मुश्रिकीन (9 : 1) ,

अर्थात् ,*"यह विमुखता की घोषणा है ,अल्लाह और उसके रसूल की ओर से ,बहुदेववादियों में से उन लोगों केलिए जिन के साथ तुम ने सन्धि की है।"*

विमुखता की इस घोषणा का संबंध केवल उन बहुदेववदियों से है जो सन्धियों और समझौतों से बार बार विमुख हो जाते थे। क्योंकि आगे उन गैरमुस्लिम लोगों को अपवादित कर दिया गया है जो प्रतिज्ञा नहीं तौड़ते :

إِلَّا ٱلَّذِينَ عَـٰهَدتُّم مِّنَ ٱلۡمُشۡرِكِينَ ثُمَّ لَمۡ يَنقُصُوكُمۡ شَيۡـًٔا وَلَمۡ يُظَـٰهِرُواْ

عَلَيۡكُمۡ أَحَدًا فَأَتِمُّوٓاْ إِلَيۡهِمۡ عَهۡدَهُمۡ إِلَىٰ مُدَّتِهِمۡۚ إِنَّ ٱللَّهَ يُحِبُّ ٱلۡمُتَّقِينَ

इल्लल्लज़ीन आहद्तुम्–मिनल्–मुश्रिकीन सुम्म लम् यन्कुसूकुम शैअंव लम् युज़ाहिरू अलैकुम अहदन फ़अतिम्मू इलैहिम अह्दहुम इला मुद्दतिहिम इन्नलल्लाह युहिब्बुल्–मुत्तक़ीन (9 : 4) ,

अर्थात् ,"सिवाय उन बहुदेवादियों के जिन के साथ तुम ने सन्धि की फिर उन्हों ने तुम्हारे साथ होई कमी नहीं की और तुम्हारे विरुद्ध किसी

को सहायता नहीं दी , सो उनकी सन्धि उसके नियत समय तक पूरी करो। निस्संदेह अल्लाह कर्तव्यनिष्ठों से प्रेम करता है ।"

और फरमाया :

كَيْفَ يَكُونُ لِلْمُشْرِكِينَ عَهْدٌ عِندَ ٱللَّهِ وَعِندَ رَسُولِهِۦٓ إِلَّا ٱلَّذِينَ عَـٰهَدتُّمْ
عِندَ ٱلْمَسْجِدِ ٱلْحَرَامِ ۖ فَمَا ٱسْتَقَـٰمُوا۟ لَكُمْ فَٱسْتَقِيمُوا۟ لَهُمْ ۚ

कैफ़ यकूनु लिल्–मुश्रिकीन अह्दुन अिन्दल्–लाहि व अिंद रसूलिही इल्लल्लज़ीन आहद्तुम अिन्दल्–मस्जिदिल्–हरामि फ़मस्तक़ामू लकुम फ़स्तक़ीमू लहुम (9 : 7) ,

अर्थात् ," ***इन बहुदेववादियों के साथ अल्लाह और उसके रसूल की सन्धि कैसे रह सकती है , सिवाय उनके जिन से तुम ने "मस्जिदे हराम" के निकट संधि की , सो जब तक वे तुम्हारे लिए अपनी प्रतिज्ञा पर सुदृढ़ रहें तुम भी उनके लिये अपनी प्रतिज्ञा पर अटल रहो।"***

सन् 9 ***हिजरी*** में हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने हज़रत अली[रज़.] को हज के अवसर पर मक्का भेजा ताकि वे वहां एकत्रित अरब जातियों को अल्लाह का यह सन्देश पहुंचा दें कि जो भी कौम प्रतिज्ञा भंग करने से बाज़ नहीं आती भविष्य में उनकी मुसलमानों से कोई संधि नहीं होगी। और जो जाति अपने कौल पर कायम है मुसलमान भी उनके साथ अपना वचन निभाने के लिये प्रतिबद्ध हैं। जब हज्ज के दौरान यह एलान किया गया तो उन लोगों का जवाब यह था :

" हे अली ! अपने चचेरे भाई (मुहम्मद) को हमारा यह सन्देश पहुंचा दो कि हम अपनी प्रतिज्ञाओं और संधियों को कब का पीठ पीछे फैंक चुके हैं। अब उनके और हमारे बीच कोई समझौता नहीं सिवाय बरछियों और तलवारों द्वारा एक दूसरे का वध करने के ।"

विमुखता का यही वह एलान था जिस के विषय में दुर्भाग्यवश यह भ्रांति पाई जाती है कि इस घोषणा ने मानो जन्ना की वे सब शर्तें मन्सूख कर दीं जो प्रारंभकाल में प्रस्तुत की गई थीं — ***यानि तुम केवल उन लोगों से ही युद्ध लड़ सकते हो जो तुम्हारे साथ युद्ध करते हैं।***

जब कि असल वास्तविकता यह है कि जन्ग संबंधी यह बुनियादी शर्त कभी भी मन्सूख न हुई। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] अपने **अन्तिम** युद्ध–अभियान में मुसलमानों की विशाल सेना लेकर तबूक तक पहुंचे लेकिन सिर्फ इस लिये युद्ध लड़े बना वापस लौट आए कि दुश्मन की ओर से युद्ध नहीं हुआ —हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के आखिरी दौर की यह ऐतिहासिक घटना इस बात का जीवन्त और प्रबल सबूत है कि युद्ध संबंधी पुरानी शर्तें अन्तिम दिन तक पूर्ववत कायम रहीं। उपरोक्त आयतों को यदि ध्यानपूर्वक देखा जाए तो साफ ज्ञात होगा कि यहां सिर्फ प्रतिज्ञा तौड़ने वाली जातियों अथवा कबीलों के प्रति विमखता का एलान है और बस। जिन जातियों या कबीलों ने अपनी प्रतिज्ञा नहीं तौड़ी उन के विषय में मुसलमानों को स्पष्ट आदेश है कि वे भी उनके साथ अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करें। इस घोषणा का एकमात्र उद्देश्य यही था कि किसी तरह देश में स्थायी शांति कायम हो।

शिष्टमंडलों का आगमन और अरब देश में इस्लाम का प्रसार

जैसे जैसे अरब देश में शांति कायम होती गई वैसे वैसे विभिन्न दिशाओं से इस्लाम के परिचय हेतु शिष्टमंडल आने लगे। इन शिष्टमुडलों का आगमन सन् 9 *हिजरी* के आरंभ में शुरू होगया था। सन् 10 *हिजरी* में प्रतिज्ञाभंजक जातियों के विश्वासघातों का उपचार हो जाने से सारे अरब देश में अमन कायम हो गया। फलतः इन शिष्टमंडलों की संख्या भी बढ़ गई। ये लोग मदीना में आकर इस्लाम का असल व्यवहारिक रूप देखते तो स्वयं भी मुसलमान हो जाते , और वापस लौटने पर अपनी जाति में इस्लाम की मंगलमय शिक्षाओं का प्रचार कर जातिजनों को इस्लाम में दाखिल करते। यमन , हज़र मौत , बहरैन , ईरान और शाम जैसे सुदूर देशों ने भी अपने शिष्टमंडल भेजे। जो जो कौम या राष्ट्र इस्लाम कबूल करता, उसकी शिक्षा–दीक्षा केलिये मदीना से धर्मप्रचारक भी साथ भेजा जाता। परिणाम यह कि अरब देश में शांति स्थापित हो जाने के दो साल के भीतर–भीतर सारा अरब देश मुसलमान हो गया।

हज्जतुल्-विदाअ यानि विदाई हज्ज

जब संपूर्ण अरब देश मुसलमान हो गया तो सन् 10 *हिजरी* के अन्त पर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल हज्ज के लिये निकले। इस्लामी इतिहास में यह हज्ज " ***हज्जतुल्-विदाअ*** " यानि विदाई हज्ज के नाम से जाना जाता है ,क्योंकि यह आप का अन्तिम हज्ज था। इस ऐतिहासिक शुभ अवसर पर हज्ज करने वालों की संख्या एक लाख चौबीस हज़ार थी — सब मुसलमान ही मुसलमान थे। यह एक विचित्र चमत्कारी दृश्य था। वही स्थल जहां कभी आप की बात तक न सुनी जाती थी , आज वहां आप के अनुयायी ही अनुयायी नज़र आते थे। इसी हज्ज के शुभ अवसर पर आप को ***वह्य*** द्वारा यह शुभ सूचना मिली कि अब धर्म अपनी पूर्णावस्था को प्राप्त हो चुका है।[1] और इस प्रकार आप का कार्य भी समाप्त हो गया है। इस ***वह्य*** से यह भी विदित हो गया कि अब आप के स्वर्गारोहण का समय भी सनिकट है। अतएव आप ने इस मौका पर सभी मुसलमानों को बड़ी बहुमूल्य नसीहतें कीं। आप ऊँटनी पर सवार थे , आपके निकटवर्ती लोग आप के वचनामृत को सुन सनु कर बाकी लोगों तक पहुंचाते जाते थे। इस दिव्य प्रवचन के कुछ अंश प्रस्तुत हैं :

" सज्जनो! मेरी बातों को ध्यानपूर्वक सुनो , क्योंकि मैं नहीं जानता कि अगले वर्ष मैं तुम्हें यहाँ मिलूँ गा भी या नहीं ...... अब के बाद तुम्हारी जानें तुम्हारे माल और तुम्हारी मानमर्यादा एक दूसरे कोलिये ऐसे ही सम्मानणीय हैं जैसे यह पावन महीना और ये पावन दिन और यह पुण्य स्थल ......हे लोगो ! तुम सब एक

---

1. اَلْيَوْمَ أَكْمَلْتُ لَكُمْ دِينَكُمْ وَأَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ نِعْمَتِي

अल्यौम अक्मल्तु लकुम् दीनकुम् व अत्मम्तु अलैकुम् निअ्मती

अर्थात् *"आज मैं ने तुम्हारा धर्म तुम्हारे लिये पूर्ण कर दिया और अपनी नेमत(=वरदान) को तुम पर पूरा कर दिया।"(5 : 3)*

धर्म के मुकम्मल हो जाने में यह शुभसूचना निहित थी कि अब इस के बाद संसार में कोई नया धर्म नहीं आये गा। और नेमत के पूरा करदेने में यह शुभसूचना निहित थी कि ***नबूवत*** रूपी नेमत का समयक प्रदर्शन हो चुका , अतः अब इसके बाद किसी और नबी की ज़रूरत शेष नहीं।

(ही मूलपुरुष अर्थात्) आदम की सन्तान हो। किसी अरब को किसी ग़ैर–अरब पर और किसी ग़ैर–अरब को किसी अरब पर कोई प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं ...... सब मुसलमान एक दूसरे के भाई हैं , और तुम सब भाई एकसमान हो। किसी व्यक्ति के लिये जाइज़ नहीं कि वह अपने भाई से कुछ ले सिवाय उसके जो वह स्वयं स्वेच्छा से दे। अतः अपने लोगों पर ज़ुल्म मत करो ... ... तुम्हारी पत्नियों पर तुम्हारे अधिकार हैं और उसी तरह तुम पर तुम्हारी पत्नियों के अधिकार हैं। वे तुम्हारे हाथ में अल्लाह की अमानत हैं, अतः तुम उनके साथ अच्छा व्यवहार करो। रहे तुम्हारे गुलाम , सो जो खुद खाओ वह उनको खिलाओ और जो स्वयं पहनो वह उनको पहनाओ।"

आखिर पर आप ने ऊँचे स्वर में कहा :

"हे अल्लाह ! मैं ने तेरा सन्देश लोगों तक पहुंचा दिया।"

इस पर सारी घाटी इन शब्दों से गूंज उठी :

"हे अल्लाह के रसूल ! निश्चय ही आप ने अल्लाह का पैग़ाम पूर्णतया पहुंचा दिया है।"

बीमारी और देहांत

हज्ज के बाद हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल मदीना लौट आये। कुछ ही समय बाद आप बीमार पड़ गए। पहले पहले आप बीमार हालत में ही नमाज़ पढ़ाते रहे। लेकिन जब एक दिन कमज़ोरी बढ़ गई , और आप कोशिश के बावजूद उठ न पाये ,तो आप ने हज़रत अबू बक्ररज॰ को आदेश दिया कि वे लोगों को नमाज़ पढ़ाएं। अतः हज़रत अबू बक्ररज॰ नमाज़ पढ़ाते रहे। एक दिन तबीयत में कुछ सुधार महसूस हुआ तो हज़रत अब्बासरज॰ और हज़रत अलीरज॰ के कंधों का सहारा लेकर मस्जिद पधारे , और हज़रत अबू बक्ररज॰ के पहलू में बैठकर नमाज़ अदा की। इसके बाद लोगों को कुछ उपदेश भी दिये ,और यह भी फ़रमाया कि मेरे ज़िम्मा अगर किसी का कुछ कर्ज़ हो तो वह मांग ले ,और अगर मेरे कारण किसी को तकलीफ़ पहुंची हो तो वह उस का *क़िसास* (=बदला) मुझ से ले ले। इसके बाद कमज़ोरी बढ़ गई और *सोमवार 12 रबिउल्–अव्वल सन्* 11 *हिजरी* को आप

अपने परमात्मा से जा मिले। स्वर्गवास के समय आप की आयु 63 वर्ष थी। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के मुखकमल से मुखरित होने वाले अन्तिम शब्द ये थे : اَللّهُمَّ فِى الرَّفِيْقِ الاَعْلٰى

अल्लाहुम फ़िर्रफ़ीक़िल्–आला, अर्थात्,

"अल्लाह — सर्वोच्च परमेश्वर — के सान्निध्य में !"

اللهم صل على محمدوعلى ا ل محمد و بارك وسلم

अल्लाहुम्म सल्लि अला मुहम्मदिंव् व अला आलि मुहम्मदिंव् व बारिक् व सल्लिम् ,

अर्थात्

"हे अल्लाह ! हज़रत मुहम्मद[सल्ल] पर तथा हज़रत मुहम्मद[सल्ल] के सच्चे अनुयायिओं पर दयादृष्टि कर और उन पर बरकतें तथा शांति वर्षित कर।"

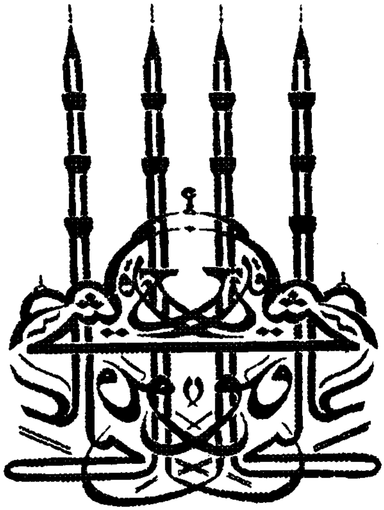

अध्याय 2

जनसुधार में अभूतपूर्व सफलता

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने अरब देश को किस हालत में पाया और किस हालत में छोड़ा ?

पिछले पृष्ठों में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के पवित्र जीवन का एक संक्षिप्ततम वर्णन था। जिसका प्रधान लक्षण हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की चमत्कारी सफलता है। एक चौथाई सदी के भीतर भीतर अरब जैसे विशाल देश में इस तरह की अद्भुत क्रांति उत्पन्न कर देना — यह स्वयं अपने में एक ऐसा महा कार्य है कि जिसकी दूसरी मिसाल सारे मानव–इतिहास में और कहीं दृष्टिगोचर नहीं होती। आदमी चाहे किसी भी धर्म या राष्ट्र का हो, जब भी वह शांत मन से इस अभूतपूर्व उपलब्धि पर विचार करे गा, तो उसे स्वीकारना ही पड़ेगा कि जनसुधार के विश्व–इतिहास में हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल॰ का स्थान एकदम सर्वोच्च और अद्वितीय है। इस तथ्य को विश्वविख्यात विश्वकोश ***एन्साइकलोपीडिया ब्रटेनिका*** (**Encyclopaedia Britannica**) ने यों स्वीकारा है :

" Of all the religious personalities of the world, Muhammad was the most successful." (**Encyclopaedia Britannica**, *11th edition, Art. "Koran"*)

अर्थात् , *'दुनिया के समस्त धार्मिक महापुरुषों में सफलतम महापुरुष हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल॰ ही हैं।"*

हम देख आये हैं कि इस्लाम के उदय से पहले अरब देश का धार्मिक स्तर कितना गिरा हुआ था। अरब लोग मूर्तियों , वृक्षों , पत्थरों ,

रेत के ढेरों अर्थात् हर चीज़ की पूजा करते थे। अपने कर्मों के अच्छे बुरे उत्तरदायित्व का उन्हें तनिक भी ध्यान न था। मरणोपरांत जीवन पर उन्हें बिल्कुल विश्वास न था। वे आध्यात्मिक क्षेत्र से सर्वथा अबोध थे। केवल अपने तुच्छ भौतिक प्रयोजनों —— जीविका की प्राप्ति ,दुखों और बीमारियों से सुरक्षा के लिये ही मूर्तियों की पूजा होती थी। इन्सान यानि सृष्टि का शिखर होते हुए भी वे लोग हर वक्त सृष्टि की निम्नतम वस्तुओं यानि बेजान और जड़पदार्थों से भयभीत रहते। उनके तथाकथित कोप से सुरक्षित रहने के लिये उनकी मानोतियां माँगते ,उनके समक्ष नतमस्तक होते। उनका नैतिक स्तर भी बहुत गिर चुका था। महमाननवाज़ी तथा अन्य एक दो बातों को छोड़ वे मानवता के सभी गुणों से वंचित थे। सदाचार का उनके यहां न तो कोई मेयार था और न महत्त्व। प्रशासन के अभाव के कारण वे सभ्यता की कल्पना भी नहीं कर सकते थे। आपसी युद्धों में दिन रात व्यस्त रहने के कारण समूचा राष्ट्र विनाश के कगार तक पहुंच चुका था। समाज की हालत इस से भी बदतर थी। औरत को संपति माना जाता था , शील और पवित्रता की कोई कीमत न थी। लोग अपने अवैध संबंधों पर गर्व करते , वेश्यालयों की कमाई खाने में कुलीन लोगों को भी संकोच न था। शराबखोरी और जुआबाज़ी का धन्धा चौबीसों घंटे जारी रहता। गरीबों , असहायों , अनाथों और विधवाओं का हाल पूछने वाला कोई न था। इसी मानहीन और पतित देश को सुधारने की पहले यहुदियों ने कोशिश की , फिर ईसाइयों ने —— दो चार दस वर्ष नहीं लगातार कई शताब्दियों तक। परन्तु अरबों को निम्न अवस्था से ऊपर लाना तो दूर , वे स्वयं उन्ही के स्तर पर जा पहुंचे। अरबों के दिलों में ईसाई राज्य का भय भी था। लेकिन राज्य का यह भय भी उनका सुधार न कर सका। यहूदियों और ईसाइयों की इन सुधारात्मक कोशिशों की असफलता के पश्चात् स्वयं अरब देश में ही कुछ ऐसे लोग पैदा हुए जिन को حَنِيْف ***हनीफ़*** कहा जाता है। ये लोग मूर्ति पूजा तथा अन्य सामाजिक बुराइयों के विरोधी थे। लेकिन इनका आंदोलन भी अस्थाई तौर गिनती के चंद आदमियों को ही प्रभावित कर सका।

इन सब प्रयासों की असफलता के बाद एक अकेला आदमी अरब देश को इस पतिततम अवस्था से उभारने केलिये खड़ा होता है। सारा

अरब देश इसका दुश्मन ,स्वयं अपनी कुरैश जाति इसकी कट्टर दुश्मन, यहूदी जिनके पैग़म्बरों की सत्यता को वह स्वीकारता है इसके दुश्मन , ईसाई जिन के ईसा मसीह को वह अल्लाह का सच्चा पैग़म्बर और उसकी माताश्री को पुण्यवती महिला करार देता है वह इसके दुश्मन, ईरान के अग्निपूजक इसके दुश्मन — यहां तक कि ईरान का सम्राट कसरा अपने सिपाहियों को आप की गिरफतारी का हुक्म भी देता है। विरोध और शत्रुता का यह तूफान हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल और आप के अनुयायिओं के छोटे से समूह को समूल विनष्ट कर देने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ता। पहले मामला गालीगलोच और उपहास तक सीमित रहता है ,फिर यह अत्याचार और उत्पीडण का रूप धारण कर लेता है और मुसलमानों को ***हिजरत*** यानि देशत्याग पर मजबूर कर देता है। जब इस से भी जी नहीं भरता तो तलवार से विनिष्ट कर देने की सुव्यवस्थित योजनाएं बनाई जाती हैं। इतना सब रहते हुए भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने समूचे अरब देश में एक अद्भुत ,व्यापक तथा अभूतपूर्व क्रांति उत्पन्न कर दिखाई।

12 लाख वर्ग मील के विशाल इलाके में — जहाँ यातायात के मामूली साधन भी उपलब्ध नहीं , जहाँ ज्ञान का कोई प्रकाश नहीं — ऐसा विराट कायाकल्प केवल 23 साल की अल्पावधि में कर दिखाया ,कि मूर्तिपूजा के बजाए सारे देश के कोने कोने से एकेश्वरवाद की आवाज़ बुलंद होने लगी। इस मंगलमय ध्वनि ने रेगिस्तानों और पहाड़ों में एक विचित्र गूंज पैदा कर सारे देश के वातवरण को शुभंकर कर दिया। अरब देश की प्रत्येक बसती के प्रत्येक डेरे से प्रतिदिन पांच वक्त اَللّٰهُ أَكْبَر ***"अल्लहु अक्बर"*** (*=अल्लाह सब से बड़ा है !*) की मुधर ध्वनि बुलन्द होती। تَوْحِيْد ***तौहीद*** (=एकेश्वरवाद) की यह पवित्र ध्वनि उन्हें बार बार यह सबक याद दिलाती कि अल्लाह ने इन्सान को सृष्टि का शिखर बनाया है , विश्व की अन्य सभी चीज़ें उसके अधीन कर दी हैं , अतः उनके आगे नतमस्तक होना इन्सानियत का साक्षात घोर अपमान है। تَوْحِيْد ***तौहीद*** के इस रहस्य को पाते ही ज्ञान–विज्ञान के क्षेत्र में भी प्रगति शुरू हो गई। अंधकार और जहालत का युग समाप्त हो गया। अंधविश्वासों का स्थान बुद्धि और विवेक ने ले लिया ,हर बात में चिन्तनमनन का चलन होगया। यहांतक कि धर्म को भी चिन्तनमनन के दायरे में ले आये। दुराचार और

अश्लील कर्मों का स्थान सदाचार और पुण्यकर्मों ने लेलिया। शील और सतीत्व को समाज विशेष महत्त्व देने लगा। इन्सान की इ़ज्ज़त अब उसके उच्च चरित्र ,उसके सद्‌गुणों से होने लगी। धनदौलत ,वंश और खांदान के बजाये मेहनत और परिश्रम को सम्मानित किया जाने लगा।

अरब देश जहां पहले असहायों और अनाथों पर जुल्म होता था, उनके अधिकारों की कोई सुरक्षा न थी वहीं अब मानवजाति की सेवा, देशसेवा, अनाथों और गरीबों की सहायता अर्थात् सर्वप्रकार के सेवाकार्य लोकधर्म बन गए। शराबखोरी और जुए का नाम व निशान मिट गया। लोग वक्त की कदर पहचानने लग गए , अतः उनके पास इन तुच्छ और अधम कार्यों के लिये कोई वक्त ही नहीं बचता। जो लोग कभी अपने अज्ञान ,अपने अशिक्षित होने पर अभिमान करते थे वही अब ज्ञानप्राप्ति में जनून की हद तक कार्यरत हो गए ,और इस काम के लिये कठिन राहें तय कर सुदूर ज्ञान–केन्द्रों तक जा पहुंचे। परस्पर लड़ने–बिड़ने ,एक दूसरे का गला काटने के बजाये अब उन में सौहार्द , एकता , भाईचारे और संघटन का ऐसा ज़बरदस्त भाव उत्पन्न हो गया कि बड़े बड़े राज्य–साम्राज्य उनके सामने न सिर्फ़ कांपते उठे , बल्कि सचमुच इस तरह चिरमिरा गऐ कि मानो उनकी नींव रेत पर रखी गई हो।

दुनिया में बड़े बड़े नेक इन्सान , धर्मात्मा , सुधारक और पथप्रदर्शक प्रकट हुए हैं , हर कौम , हर राष्ट्र में हुए हैं। लेकिन मानव–जाग्रति का जो सर्वमुखी एवं जीवनदायक आंदोलन हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.]ने सिर्फ 23 साल की अल्पावधि में चलाया उसकी अपूर्व सफलता संपूर्ण विश्व–इतिहास में अपनी मिसाल आप है। यह वह ऐतिहासिक तथ्य है कि जिस की सत्यता के आगे हर देश और हर राष्ट्र के शीष झुकते रहें गे। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.]ने एक ऐसी सर्वमुखी क्रांति को जन्म दिया जिस ने मानवसमाज के सभी क्षेत्रों को अपने अधिकार में ले लिया। इस अद्‌भुत क्रांति ने समाज के सभी अंगों — वर्ग , जाति , कबीला , राष्ट्र ,देश ,जनता — को एकसमान प्रभावित किया। यह क्रांति सिर्फ बाह्य वैभव अथवा भौतिक प्रतिष्ठा तक ही सीमित न थी , बल्कि यह मनुष्य और समाज के नैतिक तथा आध्यात्मिक उत्थान का भी मुख्य स्रोत थी।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की अपुर्व सफलता पर यूरोप की गवाही

कट्टर से कट्टर इस्लाम–विरोधी ग़ैरमुस्लिम विद्वान भी इन तथ्यों को झुठला नहीं सके। स्थानाभाव के कारण हम यहां यूरोप के कुछ ही इतिहासकारों की साक्षियां प्रस्तुत करते हैं :

"The prospects of Arabia before Muhammad were as unfavourable to religious reform as they were to politcal union or national regeneration. The foundation of Arab faith was a deep-rooted idolatory which, for centuries, had stood proof, with no palpable symptom of decay , against every attempt at evangelization from Egypt and Syria."

(Sir William Muir)

अर्थात् '' *हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. से पहले अरब देश का वातावरण किसी भी धार्मिक सुधार के लिये उतना ही प्रतिकूल था जितना वह किसी राजनैतिक एकता या राष्ट्रीय संघटन केलिये प्रतिकूल था। अरब के धार्मिक विचारों और धारणाओं की नींव गहन मूर्तिपूजा पर थी। जिस के पतन की कोई कल्पना भी नहीं कर सकता था। और जो सदियों से मिस्र और शाम के धार्मिक आक्रमणों का मुकाबला कर रही थी।'' (मियूर)*

"During the youth of Muhammad, the aspect of the Peninsula was strongly conservative ; perhaps never at any previous time was reform more hopeless."

(Ibid)

अर्थात् , *''हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. की जवानी के ज़माना में अरब समाज का स्वभाव अत्यन्त रूढ़िवादी था। कदाचित इस से पहले कभी ऐसा समय नहीं आया जब समाज–सुधार का कार्य इतना असंभव लगा हो।'' (मियूर)*

"Causes are sometime conjured up to account for results produced by an agent apparently inadequate to effect them. Muhammad arose and forthwith the Arabs were aroused to a new and spiritual faith hence the conclusion that Arabia was fermenting for the change, and prepared to adopt it.To us calmly reviewing the past, pre-Islamite history belies the assumption." (Ibid)

अर्थात् , "प्रायः जब एक ऐसे व्यक्ति द्वारा कुछ उपलब्धियां प्राप्त होती हैं जो प्रत्यक्षतः उस की शक्ति से बाहर होती हैं, तो बाज़ लोग इस असाधारण घटना के मूलकारणों के विषय में अटकलें जुटाने लग जाते हैं। हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. प्रकट होते हैं , और देखते ही देखते सारा अरब एक नवीन तथा आध्यात्म–मूलक धर्म के रंग में रंगा जाता है। इस से ये लोग अनुमान लगाते हैं कि शायद अरब देश हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. के शुभागमन के समय इस क्रांतिमय सुधार को स्वीकारने के लिये पहले से उत्सुक बैठा था। परन्तु जब हम अरब के इतिहास पर गम्भीरतापूर्वक नज़र डालते हैं तो इस्लाम से पहले का इतिहास इस कल्पना का सर्वथा खण्डन करता है।" (मियूर)

"From time beyond memory Mecca and the whole Peninsula had been steeped in spiritual torpor. The slight and transient influences of Judaism, Christianity or philosophical enquiry upon the Arab mind had been but as the ruffling here and there of the suface of a quiet lake ; all remained still and motionless below . The people were sunk in supersitition, cruelty and vice .... Their religion was a gross idolatory and their faith , the dark superstitious dread of unseen things ... Thirteen years before the Hijra, Mecca lay lifeless in this debased state. What a change had these thirteen years now produced ... Jewish truth had long sounded in the ears of the men of Medina ; but it was not until they heard the spirit-stirring strains of the Arabian Prophet that they too awoke from their slumber , and sprang suddenly into a new and earnst life."

(Ibid)

*अर्थात् , "अति प्रचीन अर्थात् प्रागैतिहासिक काल से सारा अरब देश एक आध्यात्मिक जड़ता में ग्रस्त था। यहूदी और ईसाई धर्म ने यथासंभव कोशिश की , लेकिन उन का असर बस ऐसा ही अस्थाई था जैसे हवा का झोंका जो पानी की ऊपरी सतह पर लहर तो पैदा कर देता है किन्तु जलतल के नीचे कोई हरकत पैदा नहीं होती। अरब लोग अंधविश्वास , अत्याचार तथा दुराचार के गहरे गर्त में पड़े थे .... घटिया मूर्तिपूजा उनका धर्म था , अनदेखी काल्पनिक वस्तुओं से डरते रहना उनका विश्वास ....***हिजरत** *से 13 साल पहले सारा मक्का एक बेजान शव की तरह अचेत पड़ा था। इन 13 सालों में जो परिवर्तन आया वह आश्चर्यजनक है .... मदीना निवासियों के कान चिरकाल से*

यहूदी सत्यता की चर्चा से परिचित थे, लेकिन निद्रा से वो तभी जागे जब हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल की जीवनदायक वाणी उन के कानों में गूंजी, जिस से अकस्मात उन के भीतर एक नवीन उत्साहयुक्त ज़िन्दगी का संचार हो गया।" (मियूर)

" And yet we may truly say that no history can boast events that strike the imagination in a more lively manner or can be more surprising in themselves, than those we meet with in the life of the first Mussalmans ; whether we consider the Great Chief , or his ministers, the most illustrious of men ; or whether we take an account of the several countries he conquered ; or observe the courage , virtue and sentiments that equally prevailed among his generals and soldiers."

(Life of Muhammad , by Count of Boulainvilliers)

अर्थात्, " हम बिना अत्युक्ति कह सकते हैं कि कोई इतिहास ऐसी आश्चर्यजनक एवं उत्साहजनक घटनाएं प्रस्तुत नहीं कर सकता जिसका परिचय हमें आरंभकालीन मुसलमानों द्वारा मिलता है। चाहे हम इस महा नायक (मुहम्मदसल्ल.) या आप के उन उत्कृष्ट मन्त्रियों या ख़लीफ़ों के पवित्र जीवन पर विचार करें, जो मनुष्यों में सितारों की नाईं चमकते हैं। चाहे हम उन अनेक राष्ट्रों की नैतिक हालत पर दृष्टि डालें जिन को उसने अपने अधिकार में लिया। चाहे हम उस शूरता, धर्मपरायणता और उन पावन मनोभावों को दृष्टिगत रखें जो आप के सेनापतियों और सैनिकों में पाये जाते थे।"

(हज़रत मुहम्मदसल्ल. की जीवनी, लेखक कॉवन्ट बोलीनविल्लियरज़)

"A more disunited people it would be hard to find , till , suddenly ,the miracle took place. A man arose who, by his personality and by his claim to direct Divine guidance, actually brought about the impossible, namely, the union of all these warring factions."

(Ins and Outs of Mespot)

अर्थात्, "दुनिया में अरबों से बढ़कर असंगठित तथा अनुशासनहीन जाति कोई न थी, कि अकस्मात् एक चमत्कार हो गया। उनके मध्य एक इन्सान पैदा हुआ जिस ने अपने पवित्र व्यक्तित्व और नबूवत के दावा से असंभव को संभव कर दिखाया। यानि पीढ़ियों के दुश्मनों को गले मिला दिया।" (इन्नज़ एंड ऑवटस आफ मिस्पाट)

"Never has a people been led more rapidly to civilization, such as it was, than were the Arabs through Islam."

(New Researchs, by Hirschfeld)

अर्थात् ," जिस तेज़ी से अरबों ने इस्लाम द्वारा सभ्यता प्राप्त कर ली, वह शीघ्रता संसार की किसी और जाति को कभी नसीब न हो पाई।"

(निव रसर्चज़ , लेखक हर्सशफीलड)

"Such then, very briefly, was the condition of the Arabs, social and religious, when, to use an expression of Voltaire .... 'the turn of Arabia came' ; when the hour had already struck for the most complete, the most sudden and the most extraordinary revolution that had ever come over any nation upon earth."

(Bosworth Smith)

अर्थात् ," संक्षेप में यह थी अरबों की सांस्कृतिक और धार्मिक दशा। मिस्टर वॉलटैर के शब्दों में .... " अब अरब देश की बारी थी " — एक संपूर्ण, आकस्मिक तथा अद्‌भुत क्रांति का डंका बजा जो इस से पहले भूतल के किसी राष्ट्र पर कभी न आई थी।"

(बॉस वर्थ स्मिथ)

" Of all the religious personalities of the world, Muhammad was the most successful".

(Encyclopaedia Britannica, *11th edition,Art. "Koran"***)**

"दुनिया के समस्त धार्मिक महापुरुषों में सफलतम महापुरुष हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. ही हैं।"

सर्वमुखी सुधार

हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. और अन्य धर्मप्रवर्तकों की उपलब्धियों के बीच एक प्रधान अन्तर और भी है। वह यह कि हर पूर्ववर्ती महा पुरुष द्वारा सम्पन्न होने वाले महा कार्य का संबंध प्रायः ज़िन्दगी के एक आध पहलू तक ही सीमित रहा है। जबकि हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. के उत्कृष्ट कृत्य इन्सानी जीवन के समस्त पहलुओं और दशाओं को परिवृत किये हुए हैं। उदाहरणतया , यदि उत्कृष्टिता और महानता की कसौटी किसी गुमराह राष्ट्र या कौम का सुधार हो , तो इस महानता का हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल. से ज़्यादा अधिकारी और कौन

होगा ? आप ने अरबों जैसी पतित और अधम कौम को न केवल प्रतिष्ठा के उच्च आसन पर आसीन किया , बल्कि उन्हें शिष्टाचार और सभ्यता का पथप्रदर्शक भी बना दिया। यदि महानता इस में है कि मानव समाज के छिन्न–भिन्न तथा बिखरे अंशों को एकता के सूत्र में बांध दिया जाये , तो इस सम्मान का विशेष अधिकारी हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मदसल्ल के सिवा और कौन हो सकता है ? आप ने अरबों जैसी अखड़ कौम में , जहां बात बात पर मार काट होती थी , और युद्ध का सिलसिला कई पीढ़ियों तक जारी रहता था , एकता व संघटन का अपूर्व भाव पैदा कर दिया। आप के मंगलमय प्रादुर्भाव के समय अरब वासी रेगिस्तान के कणों की भांति छिन्न भिन्न और बिखरे पड़े थे। आप ने उन्हें एक मज़बूत चट्टान में परिवर्तित कर दिया। यदि महानता एवं श्रेष्ठता का अर्थ यह हो कि समाज से अंधविश्वास ,कुसंस्कार और दुराचार जैसी बुराइयों का निवारण किया जाये, तो इस मामले में भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. स्वयं अपनी मिसाल आप हैं। क्योंकि आप ने सारे अरब देश से इन चिरकालीन बीमारियों को दूर कर दिया। यदि महानता को उच्च नैतिकता का पर्याय माना जाये तो इस पहलू से भी कौन आप का मुकाबला कर सकता है ? क्योंकि अपने तो अपने बेगानों ने भी आपका ***अल्–अमीन*** (सर्वगुण–सम्पन्न) होना स्वीकारा है। यदि विजेता होना महानता का प्रतीक माना जाए तो इस दृष्टि से भी विश्व–इतिहास आपका द्वितीय प्रस्तुत करने में असमर्थ है। आप ने अपने जीवन का आरंभ एक असहाय अनाथ के रूप में किया और फिर तरक्की करके न सिर्फ एक महान विजेता और बादशाह बन गए बल्कि एक ऐसे सुविशाल सामराज्य की नींव भी रख दी कि जिसको 13 सौ साल से दुनिया की संयुक्त कोशिशें भी विनष्ट न कर सकीं। यदि महानता का आधार पथप्रदर्शक की ज़िन्दा शक्ति हो , कि जिस के आगे कोई दम मार न सके , तो इस रंग में भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल अद्वितीय हैं। संसार के चालीस करोड़ (अब 80 करोड़ – अनुवादक) इन्सानों पर — जो सारी दुनिया में फैले हुए हैं , और जातिवाद , राष्ट्रवाद या वर्णवाद जैसे भयंकर भेदभावों को भुला कर बंधुत्व के पावन एवं सुदृढ़ सुत्र में बंधे हुए हैं – हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का मंगलमय नाम आज भी जादू का असर रखता है।

संपूर्ण मानव–समाज में एकता और सौहार्द की नींव

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] के उपकार केवल अरब देश तक ही सीमित नहीं , बल्कि ये सार्वजनिक एवं सार्वभौम भी हैं। इन्ही बहुविध उपकारों के कारण आप की उपाधि " رَحْمَةً لِلْعَالَمِينَ " *रहमतन् लिल्–आलमीन* " *(=समस्त कौमों और राष्ट्रों के लिए दयालुता)* हुई। स्थानाभाव के निमित मैं यहां सिर्फ एक उपकार की चर्चा करूँ गा। आप ने अपने अनुयायिओं को केवल इतना ही नहीं कहा कि दुनिया की हर जाति , हर कौम और हर राष्ट्र में अल्लाह का भेजा हुआ कोई न कोई ***पैग़म्बर–अवतार***[1] अवश्य प्रकट हुआ है , बल्कि आप ने मुसलमान के लिये यह अनिवार्य ठहरा दिया कि वह संसार के सभी पूर्ववर्ती पैग़म्बरों–अवतारों को उसी तरह सच्चा और आदरणीय माने जिस तरह वह अपने पैग़म्बर हज़रत मुहम्मद[सल्ल.] को मानता है। यह वह अपूर्व शिक्षा है जो इस से पहले किसी धार्मिक शिक्षक

---

1. " ***अवतार*** " शब्द को यों प्रतिपादित किया गया है :

" He is necessarily a man with a message." **(The Bhagavad Gita** , by S. Chidbhavananada, Sri Ramkrishna Mission, p. 45) ,

अर्थात् "अवतार वास्तव में एक मनुष्य ही है जो संसार में (प्रभु का संदेश) लेकर प्रकट होता है।"

इसी टीका में अन्यत्र श्री रामकृष्ण परमहंस के यह शब्द उद्धृत हैं :

" Incarnation is the man of authority sent by Iswara into society. He comes to put in order all lapses and deviations in the practice of dharma."

(ibid. p. 277) ,

अर्थात् "अवतार वह दिव्य प्राधिकारी है जिस को परमेश्वर स्वयं मानवसमाज में भेजता है। यह महापुरुष धर्म में उत्पन्न विकारों और दोषों को दूर कर इसे पुनः सुव्यवस्थित कर देता है।"

यही भाव " ***रसूल अथवा पैग़म्बर*** " शब्द का है। एक और हिन्दू विद्वान के मतानुसार किसी भी ***अवतार*** को ***ईश्वर या भगवान*** समझना कोरी मूर्खता है :

"No man born is a God, whether he is Sri Krishna, Sri Rama or Jesus. They were simply the guiding human spirits of the time and hence,the ignorant man elevates them to godhead."

(Remedy the Frauds in Hinduism , by Kuttikhat Purushothama Chon, Bombay , 1991 AD , p. 34)

(अनुवादक)

ने न दी थी। इस सिद्धांत द्वारा हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने विश्व–सौहार्द और विश्व–शांति की नींव रख दी। आप ने सिर्फ व्यक्ति को व्यक्ति के साथ प्रेमपूर्वक और शांतिपूर्वक ढंग से मिल जुल कर रहना ही नहीं सिखलाया बल्कि यह भी बता दिया कि किस प्रकार एक राष्ट्र , जाति या कबीला अन्य राष्ट्रों , जातियों या कबीलों के साथ सुख–शांति से रह सकता है। इस से भी बढ़कर यह कि आप ने ही इस बात की शिक्षा भी दी कि विभिन्न धर्मावलम्बी–जनों के बीच किस प्रकार सौहार्द और शांति स्थापित हो सकती है। यह वह महत्त्वपूर्ण बात है जिस को अमलाने का हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.से पहले किसी धर्मसुधारक को विचार तक न आया। आप से पहले किसी महा पुरुष ने इस तथ्य को अभिव्यक्त न किया कि दुनिया की विभिन्न जातियों , कौमों और राष्ट्रों में अल्लाह की ओर से पैग़म्बर–अवतार प्रकट हुए। इन सभी धर्मप्रवर्तकों की सत्यता पर ईमान लाना ही वह एक मात्र उपाय है जिस से विश्व भर के समस्त सांप्रदायक तथा धर्ममूलक दंगे और फ़साद सदासर्वदा केलिये समाप्त हो सकते हैं।

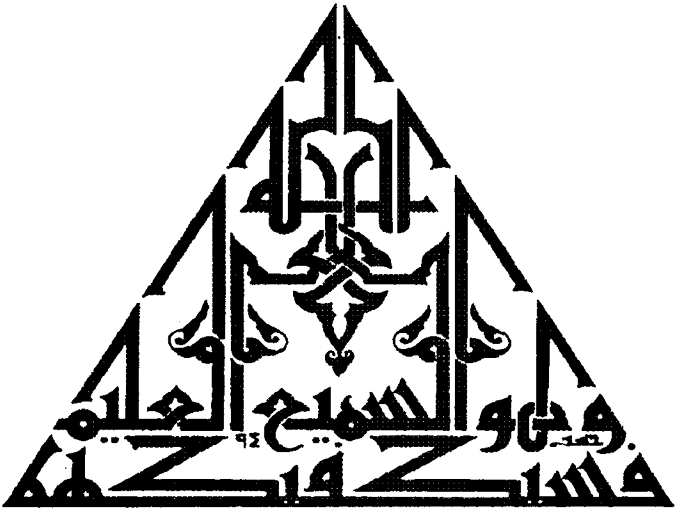

अध्याय 3

बहुविवाह पर आपत्ति

संसार के अभिज्ञात एवं मान्यताप्राप्त महापुरुष और बहुविवाह

सब से बड़ा हमला जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के पावन एवं निष्कलंक चरित्र पर किया जाता है वह आपका बहुविवाह है। हालांकि बहुविवाह की रीति केवल आप के व्यक्तित्व के साथ ही विशेष नहीं। लगभग संसार के सभी अभिज्ञात एवं मान्यताप्राप्त महापुरुषों के यहां इस प्रथा का चलन मौजूद है। हज़रत इब्राहीमअ.स.— जिन को आधी से भी ज़्यादा दुनिया सम्मान देती है — की एक से अधिक पत्नियां थीं। यही बात इस्राईल जाति के अनेक पैग़म्बरों के लिये प्रयोज्य है , जैसे हज़रत याक़ूबअ.स. , हज़रत मूसाअ.स. ,हज़रत दाऊदअ.स.। स्वयं हमारे हिन्दु–जगत के अनेकों धर्मात्मा , ऋषि और अवतार बहुविवाह के जीवन्त उदाहरण हैं। हिन्दुओं के दो सर्वश्रेष्ठ महापुरुष श्रीराम और श्रीकृष्ण — दोनों ही के यहां बहुविवाह पर अमल मिलता है। हज़रत ईसा मसीहअ.स.के बाइबिलीय (Bibilical) चरित्र को अगर प्रस्तुत किया जाए तो इस आदर्श को दुनिया एक दिन के लिये भी स्वीकार नहीं कर सकती , बल्कि इस आदर्श को व्यवहार में लाने से संपूर्ण मानवजाति का ख़ातिमा ही हो जाता है। क्योंकि बाइबिलानुसार हज़रत ईसा मसीहअ.स.ने विवाह ही नहीं किया।

इतना तो ज़ाहिर है कि इन पवित्रात्माओं ने बहुविवाह की रीति

वासनापूर्ति के लिये नहीं अपनाई , क्योंकि उनका निष्पाप जीवन भोगविलास और वासना जैसी तुच्छ भावनाओं से बिल्कुल पाक है। इनके पावन हृदय सांसारिक मोहमाया या शारीरिक सौन्दर्य से आकर्षित नहीं होते। हाँ ! हम पूर्ण विश्वास के साथ कह सकते हैं कि इन महापुरुषों ने किसी कारणवश ही ऐसा किया होगा। इस वास्तविकता के ठोस सबूत हमें केवल हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.की पवित्र जीवनी में ही मिलते हैं। कारण , आप के जीवन की सभी घटनाओं का संपूर्ण ब्योरा इतिहास में सुरक्षित है। यह अपूर्व विशेषता संसार के अन्य महापुरुषों को प्राप्त नहीं।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के
पवित्र जीवन के चार भाग

विवाह की दृष्टि से आप के पवित्र जीवन को चार अलग अलग भागों में विभाजित किया जा सकता है। पहला भाग वह है जब आप ने एक सच्चे संयमी ब्रह्मचारी का अविवाहित जीवन व्यतीत किया , और यह भाग आपके जीवन के प्रारंभिक 25 सालों पर आधारित है। दूसरा भाग वह है जब आपके विवाह में केवल एक ही पत्नी थी , और यह भाग 25 से 55 साल की आयु तक है। तीसरा भाग वह है जब आप ने बहुविवाह किये , और यह भाग 55 से 60 साल तक है। और चौथा भाग 60 साल से लेकर देहांत तक है , इस में आप ने कोई और विवाह नहीं किया।

अविवाहित जीवन

अब हम हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के जीवन के पहले भाग को लेते हैं। यह 25 सालों पर आधारित है इस में आप ने कोई विवाह नहीं किया। जीवन के पहले 25 साल — यही इन्सानी ज़िन्दगी का सर्वाधिक आवेशात्मक दौर है। इस दौर में कामवासना को रोकना अति दुष्कर होता है। विशेषकर गर्म देशों में जहां जवानी भी जल्द आ जाती है। और कामसंबंधी मनोभाव भी जल्द उभरते हैं। यही वह भाग है जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के बेमिसाल पवित्र आचरण के फलस्वरूप देश और जाति की ओर से " ***अल्-अमीन*** " की गौरवमय उपाधि प्राप्त होती है। ज़ाहिर है कि जाति किसी व्यक्ति को उसी वक्त कोई विशेष उपाधि प्रदान करती है जब उस में कोई ऐसा विशेष सद्गुण पाया जाता हो जो दूसरों

में नज़र न आता हो , और जिस की गरिमा के सामने सब नतमस्तक हों। धन से भी बढ़कर सौन्दर्य का आकर्षण है , अतः उस ज़माना में आपको जाति की ओर से ***"अल्-अमीन"*** की आदरसूचक उपाधि का मिलना इसी बात का सबूत है , कि यदि एक ओर लोग आपकी इमानदारी और सत्यता के कायल थे , तो दूसरी ओर — बावजूद अविवाहित अवस्था के — आपके शील , संयम और पवित्र आचरण के भी कायल थे। सर विल्यम मियूर , जिस ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की जीवनी एक विरोधी जीवनीकार के तौर लिखी है , वह भी मानता है समस्त ऐतिहासिक तथ्य और प्रमाण यही सिद्ध करते हैं कि —

"All authorities agree ' in ascribing to the youth of Muhammad a modesty of deportment and purity of manners rare among the people of Mecca'."

अर्थात् , *"जवानी में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. संयम , लज्जा तथा पवित्र आचार-विचार जैसे सद्गुणों से पूर्णतया सम्पन्न थे , हालांकि ये बातें मक्का में विरले ही दृष्टिगोचर होती थीं।"*

जवानी को दीवानी कहा जाता है , क्योंकि यही वह ज़माना है जब मनुष्य अपने मनोभावों के आवेश को विरले ही संयम की साँकल पहना सकता है। और जिस व्यक्ति को यह आवेशयुक्त ज़माना भी अपना दास न बना सका वह भला पक्की उम्र में कामवासना का दास क्या बने गा। ध्यान रहे कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का यह संयमयुक्त ब्रह्मचर्य जातीय संस्कारों या सामाजिक दबाव के कारण न था। क्योंकि उस समय अरब समाज पापकर्मों तथा अवैध यौनसंबंधों को बुरी निगाह से नहीं देखता था। बल्कि स्त्री-पुरुष के नाजाइज़ संबंधों पर लोग सार्वजनिक महफलों में खुले आम कविताएं पढ़ते थे।

एकविवाही जीवन

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की उम्र 25 साल थी जब आप ने ख़ीजा नामक विधवा से शादी की। हज़रत ख़दीजारज़. की उम्र चालीस वर्ष थी , यानि वो आप से पंद्रह साल बड़ी थी। आप की उम्र 50 साल थी जब हज़रत ख़दीजारज़. का देहांत हो गया। हज़रत ख़दीजारज़. के रहते आप ने कोई और विवाह नहीं किया। हज़रत ख़दीजारज़. के देहांत के कुछ समय बाद

आप ने अपने परम मित्र अबू बक्र[रज़.] की सुपुत्री हज़रत आइशा[रज़.] से निकाह किया। पर चूंकि उनकी आयु अभी छोटी थी[1], इस लिये उनके बालिग़ होने तक आप ने एक तरह से ब्रह्मचर्य ही धारण किया। अल्बत्ता आप ने अपने एक वफ़ादार *सुहाबी* (=अनुयायी साथी) की अति वृद्ध विधवा सौदह[रज़.] से आश्रय हेतु विवाह कर लिया। इस सुहाबी ने कुरैश के अत्याचारों से तंग आकर हबश देश में शरण ली थी। यही अकेली पत्नी और पांच साल तक —यानि तीन साल मक्का में और दो साल मदीना में — आप के घर में रही। हज़रत आइशा[रज़.] ***हिजरत*** के दूसरे साल आप के घर में आईं।

उस युग में बहुविवाह आवश्यकताधीन न था, यह एक अरब परंपरा थी। एक कुलीन और शरीफ़ आदमी के लिये तीन चार पत्नियों का पति होना एक साधारण सी बात थी। पति की दूसरी शादी पर पहली पत्नी को

---

1. शादी के वक्त हज़रत आइशा[रज़.] की उम्र क्या थी ? इस विषय में काफ़ी ग़लत फ़हमी पाई जाती है। इबन सअद कहता है कि जब हज़रत अबू बक्र[रज़.] को हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] की ओर से हज़रत आइशा[रज़.] का रिश्ता मांगा गया, तो उन्हों ने कहा कि इस लड़की का रिश्ता जुबैर से पहले ही तय हो चुका है, अतः मुझे उस से बात करना होगी। इस का यही मतलब हुआ कि हज़रत आइशा[रज़.] उस वक्त उस उम्र को पहुंच चुकी थीं जब लड़कियों की शादी–ब्याह का मामला तय हाने लगता है। ज़ाहिर है कि यह उम्र कम से कम छः साल तो हो नहीं सकती जैसा कि आम तौर पर कहा जाता है। हज़रत आइशा[रज़.] हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] की सुपुत्री हज़रत फ़ातिमा[रज़.] से लगभग पांच वर्ष छोटी थीं। हज़रत फ़ातिमा[रज़.] का जन्म ***नबूवत*** से पांच साल पहले हुआ था। हज़रत आइशा[रज़.] का हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] से निकाह ***नबूवत*** के दसवें साल शिवाल के महीने में हुआ, और रुख़सती ***हिजरत*** के दूसरे साल इसी महीने में हुई। इस हिसाब से हज़रत आइशा[रज़.] का निकाह दस गयारह साल की उम्र में हुआ था और रुखसती पन्द्रह–सौलह साल की उम्र में हुई। यह हज़रत मौलाना मुहम्मद अली [र.अ.] के अग्रणी अनुसंधान का निष्कर्ष है।

एक अन्य दृष्टि से यह उम्र तीन चार साल और ज़्यादा निकलती है। देहांत के वक्त हज़रत आइशा[रज़.] 67 साल की थीं, जिस में चालीस वर्ष वैधव्य के हैं। इस हिसाब से आपका जन्म ***नबूवत*** के चार साल पहले हुआ था। जिस का अर्थ यही हुआ कि निकाह के वक्त आप 14 साल की और रुख़सती के समय 18 या 19 वर्ष की थीं।

(अनुवादक)

कोई आपति न थी। यह प्रथा सिर्फ अमीरों तक ही सीमित न थी गरीबों में भी इसका चलन था। इसके पीछे एक विशेष कारण रहा है , वह यही कि अरबों के यहां गृहयुद्ध की बहुतात के कारण मर्दों की संख्या बहुत कम हो गई थी , क्योंकि वो अकसर जंगों में मारे जाते थे , अतः गरीबों के लिए भी दो तीन पत्नियां रखना मुश्किल न था। इस लिये भी कि औरतें मज़दूरी के काम करके पति की आमदनी बढ़ाती थीं।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का संबंध कुरैश के कुलीनतम कबीले बनी हाशिम से था। हज़रत ख़दीजारज़. से विवाह करके आप के पास माल भी काफ़ी आगया था। इस लिये अगर आप को दूसरी शादी की इच्छा होती तो कोई बाधा न थी। फिर औरतों का अभाव भी न था। कुरैश का एक प्रतिनिधि मंडल स्वयं यह प्रस्ताव आपके सामने रख चुका था , कि हम आपको अपना सरदार मानने को तैयार हैं , धन–दौलत जितनी चाहें देने को तैयार हैं , अरब की परम सुन्दरी आपकी सेवा में अर्पण करने को तैयार हैं। किन्तु हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने उनकी किसी बात को स्वीकार न किया। मक्का के लोग आप की उच्च नैतिकता पर इतने मोहित थे कि कोई भी व्यक्ति आप को दामाद बनाना अपना सौभाग्य समझता। उधर आपके अनुयायी भी ऐसे निष्ठावान् थे कि आप पर जान छिड़कते थे। उन्हों ने आपकी खातिर देश , धनसंपति , धरबार यहांतक कि प्राण भी निछावर कर दिये। तो क्या यदि आप की इच्छा दूसरी शादी की होती तो आपको औरतों की कमी थी ? इन परिस्थितियों में आप का अरब परंपरा के विरुद्ध एक ही पत्नी पर संतुष्ट रहना , यहाँ तक कि 55 साल को पहुंच जाना , जो गर्म इलाकों में बुढ़ापे की अवस्था है। इस से यही सिद्ध होता है कि आप इस बात को सिद्धांततः सही मानते थे , कि एक मर्द और एक औरत का पति–पत्नी बनकर रहना ही असल नियम है।

बहुविवाह

अब हम हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के पवित्र जीवन के तीसरे भाग को लेते हैं। यानि 55 से 60 साल तक की आयु। ज़ाहिर है कि यह बुढ़ापे की उम्र थी। जो व्यक्ति 25 साल अविवाहित रहकर एक अति संयमयुक्त ब्रह्मचर्य का प्रदशर्न करता है , और 25 से 55 साल तक एक से अधिक

बीवी को घर में रखने की इच्छा नहीं रखता, वही आदमी 55 साल के बाद यानि बुढ़ापे में, अपनी किसी इच्छा के अधीन बहुविवाह नहीं कर सकता। अगर आप के दिल के किसी कोने में भी यह इच्छा होती कि आप के घर में अनेक पत्नियां हों, तो इस इच्छा की अभिव्यक्ति आपकी जावानी के दिनों में होती, जब प्रायः इन्सान ऐसी बातों को चाहता है। लेकिन जब हम वाकात को देखते हैं तो ज्ञात होता है कि आप के बहुविवाह का ज़माना और अरब जातियों के साथ युद्ध का ज़माना बिल्कुल एक हैं। हज़रत आइशारज़॰ सन् 2 ***हिजरी*** में आप के घर आती हैं और सन् 2 ***हिजरी*** में ही पहला युद्ध होता है। इसके बाद आप सन् 3 ***हिजरी*** में एक और शादी करते हैं। सन् 8 ***हिजरी*** में मक्का विजय के उपरांत अरब जातियों के साथ युद्ध का यह सिलसिला समाप्त हो जाता है। और सन् 8 ***हिजरी*** के बाद आप और कोई शादी नहीं करते। तात्पर्य यह कि एक ओर सन् 2 *हिजरी* से सन् 8 ***हिजरी*** तक आप को अपने दिन–रात युद्ध में बिताना पड़ते हैं। और दूसरी ओर सन् 3 ***हिजरी*** से लेकर सन् 8 ***हिजरी*** तक ही आप बहुविवाह भी करते हैं। जिन लोगों ने आप के बहुविवाह पर आपत्ति प्रकट की है, उन्हों ने वाकात पर कभी चिन्तनमनन नहीं किया, कि क्या वजह है कि आप का बहुविवाह सिर्फ इस ज़माने तक ही सीमित है जो जन्ग में गुज़रता है। इधर युद्ध समाप्त होता है उधर आप इसके बाद कोई शादी नहीं करते। स्पष्ट है कि आप की अपनी इच्छा दूसरी शादी की न थी। क्योंकि आप ने अपनी जवानी का सारा ज़माना पचपन वर्ष तक एक ही विवाह पर गुज़ारा, आप को अपनी कामवासना पर पूरा नियन्त्रण प्राप्त था। पच्चीस साल तक आप ने ब्रह्मचर्य का संयमयुक्त पालन किया। और समाज के सम्मुख पवित्र आचरण का ऐसा आदर्श नमूना प्रस्तुत किया कि सब लोगों में आपके शील, आपके चरित्र की चर्चा होने लगी। एतएव बुढ़ापे में आ कर बहुविवाह करना और वह भी केवल जंग के ज़माने में ही करना — इन तथ्यों से इतना तो ज़रूर निकलता है कि इस बहुविवाह का जंग से अवश्य कोई संबंध है। अब ज़ाहिर है कि जंग में मर्द मारे जाते हैं, अतः जंग में मुसलमान मर्दों के मारे जाने की वजह से मुसलमान औरतों की संख्या बढ़ रही थी। अपने श्रद्धावान अनुयायिओं की विधवाओं का संरक्षण आप का कर्तव्य था। बाज़ वक्त किसी दुश्मन जाति के साथ मित्रता

स्थापित करना भी आप के मदेनज़र होता। लेकिन इस का आप की किसी व्यक्तिगत इच्छा या वासनापूर्ति से कोई संबंध न था। दूसरों की दयनीय और असहाय दशा के प्रति दया और संरक्षण–भाव प्रकट करना ही इस दयासागर का असल उद्देश्य नज़र आता है। इस तथ्य को एक ईसाइ विद्वान ***बॉसवर्थ स्मिथ*** ने भी स्वीकारा है , वह लिखता है :

"It would be remembered, however, that most of Muhammad's marriages may be explained at least as much by his pity for the forlorn condition of the persons concerned, as by other motives. They were almost all of them widows who were not remarkable either for their beauty or their wealth, but quite the reverse."

(Bosworth Smith)

अर्थात् ,*'' याद रहे कि हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ के बहुविवाह के जहां अन्य कारण हो सकते हैं , यह यथोचित वजह भी हो सकती है कि आप ने यह विवाह इन महिलाओं पर दया खा कर किये जो (पतियों के मारे जाने से) अकेली और असहाय रह गई थीं। ये औरतें लगभग सब की सब विधवा ही थीं। ये अपने सौन्दर्य या धनसंपति के लिये भी प्रसिद्ध न थीं। बल्कि वास्तविकता इसके बिल्कुल विपरीत थी।''*

सुख–चैन का अभाव

एक और बात भी विचारणीय है , वह यह कि जिस ज़माना में आप ने बहुविवाह किये उस वक्त की परिस्थितियां कैसी थीं। यह वह काल है जब युद्ध जारी है। और इस युद्ध में एक ओर मुट्ठी भर मुसलमान हैं जो मदीना में रक्षात्मक युद्ध लड़ रहे हैं। दूसरी और सारा अरब देश है जो मुसलमानों को तबाह करने पर तुला हुआ है। कभी इधर से एक कौम के हमला की सूचना मिलती है , कभी दूसरी कौम की तैयारी की खबर आती है। हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ और आप के साथी एक निरंतर संघर्ष में जुटे हुए थे। और यह उनके लिए एक कड़ी परीक्षा की घड़ी थी। क्योंकि इस्लाम की मौत और ज़िन्दगी का प्रश्न था। मदीना पर सेनादल बादलों की तरह चढ़ आते हैं। दिन रात यही चिन्ता है कि इस ओर से दुश्मन की रोकथाम कैसे हो , शत्रु के मुकाबला केलिये क्या उपाय किया जाए। स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ के साथी भी दिन रात शस्त्र धारण किये रहने की वजह से

तंग आचुके थे। उन्हों ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.से निवेदन किया :

" हे अल्लाह के रसूल ! अब तो हम दिन रात कवच और शस्त्र पहने पहने थक गये हैं।"

आप ने आश्वासन दिया कि यह संकट की घड़ियां भी समाप्त हो जाएं गी। शत्रु अगर बाहर से आक्रमण करते हैं तो स्वयं मदीना के अन्दर यहूदी और منافق ***मुनाफ़िक*** (=*कपटाचारी*) दुश्मन मौजूद हैं , जो हर वक्त मुसलमानों के सर्वनाश की चिन्ता में लगे हुए हैं। इन परिस्थितियों में अगर कोई विलासप्रिय कामुक भी होता तो उसे भी सारी मौज मस्ती भूल जाती , और अपनी तथा अपने साथियों के प्राणों की चिन्ता लग जाती। इन्ही नाजुक परिस्थितियों में भला हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ऐसे महा चरित्रवान व्यक्ति को, जिस का ब्रह्मचर्य सर्वथा निर्मल और निष्कलंक रहा हो , जिस के संयम पर दौलत और सौन्दर्य का जादू भी बेकार साबित हुआ हो , कब रंगरलियां मनाने की सूझ सकती है ?

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की रातें किस प्रकार गुज़रती थीं ?

आइये देखें कि यदि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के दिन विविध चिन्ताओं और घोर परिश्रम में गुज़रते थे तो आप की रातें किस प्रकार व्यतीत होती थीं। ठीक उसी ज़माने के बारे में हमें यह ऐतिहासिक शहादत मिलती है कि आप रात को تہجد "***तहज्जुद***" की नमाज़[1] में खड़े होते , और इस कदर खड़े रहते कि आप के पांव सूज जाते। आधी आधी रात تہجد "***तहज्जुद***" की नमाज़ में गुज़ार देते। अब सौचना यह है कि ऐश करने या मोजमस्ती मनाने का समय कौन सा था ? दिन को विभिन्न चिन्ताएं , और फिर युद्धों में स्वयं मज़दूरों की भांति काम करना — यह नहीं कि सेना काम में लगी हुई है और खुद महल में बैठे हुए हों। इस के अतिरिक्त हर तरह के झगड़ों का फैसला , पांच वक्त नमाज़ें पढ़ाना। और रात का कार्यक्रम यह कि इस का प्रारंभिक भाग عشاء ***इशा*** की नमाज़ में गुज़ार

1. تہجد "*तहज्जुद*" , वह नमाज़ जो रात में सो कर उठने के बाद पढ़ी जाती है। تہجد "*तहज्जुद*" का समय आधी रात से लेकर सुबह पौ फटने तक है। (अनुवादक)

दिया , फिर कुछ समय आराम किया और पुनः अल्लाह के समक्ष تَهَجُّد " **_तहज्जुद_** " की नमाज़ में खड़े हो गए। क्या इस कार्यक्रम के रहते कोई व्यक्ति आप के बारे में भोगविलास या मोजमस्ती का विचार भी मन में ला सकता है ?

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का सादा जीवन

बादशाह बन जाने के बाद भी आप वही सरल और सादा जीवन व्यतीत करते थे जो इस से पहले करते थे। सत्ताकाल में भी आप के घर का सामान सिवाय एक खजूर की चट्टाई के , जिस पर सोते , और एक पानी की ठिलिया के और कुछ न था। आप का लिबास अति सादा , मोटा और थिगली लगा होता। भोजन का हाल यह था कि घर में कई कई दिन तक सिवाय खजूर के और कुछ नहीं मिलता , भूखे पेट ही गुज़ारा करना पड़ता। माल आता , लेकिन आप उसकी ओर नज़र उठा कर भी नहीं देखते थे , अपने हाथों दूसरों में बांट देते थे। अपने घर एक पैसा नहीं ले जाते। अन्य मुसलमान स्त्रियों को सुख–सुविधाओं का उपभोग करते देख हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की पत्नियां कुछ अधिक सुखसामग्री की अभियाचना करती हैं , तो **_वह्य_** द्वारा यह उत्तर मिलता है :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلنَّبِيُّ قُل لِّأَزْوَٰجِكَ إِن كُنتُنَّ تُرِدْنَ ٱلْحَيَوٰةَ ٱلدُّنْيَا
وَزِينَتَهَا فَتَعَالَيْنَ أُمَتِّعْكُنَّ وَأُسَرِّحْكُنَّ سَرَاحًا جَمِيلًا ﴿٢٨﴾ وَإِن كُنتُنَّ
تُرِدْنَ ٱللَّهَ وَرَسُولَهُۥ وَٱلدَّارَ ٱلْءَاخِرَةَ فَإِنَّ ٱللَّهَ أَعَدَّ لِلْمُحْسِنَٰتِ مِنكُنَّ
أَجْرًا عَظِيمًا ﴿٢٩﴾

या अय्युहन्नबीयु कुल लिअज़्वाजिक इन् कुन्तुन्न तुरिद्नल हयातद्–दुनिया व ज़ीनतहा फ़तआलैन उमत्तिअ्कुन्न व उसर्रिह्कुन्न सराहन जमीला व इन कुन्तुन्न तुरिद्नल्लाह व रसूलहू वद्दारल्आख़िरत फ़इन्नल्लाह अअद्द लिल्मुहसिनाति मिन्कुन्न अज्रन अज़ीमा (33 : 28 , 29)

अर्थात् ," *हे नबी ! अपनी पत्नियों से कह दे : यदि तुम सांसारिक*

जीवन और उसकी शोभा चाहती हो, तो आओ, मैं तुम्हें देदिला कर अच्छी तरह से विदा कर दूँ। और यदि तुम अल्लाह और उसके रसूल और परलोक के घर को चाहती हो, तो अल्लाह ने तुम में से अच्छे कर्म करने वालियों के लिये महा प्रतिफल तैयार किया है।"

क्या एक कामुक व्यक्ति का यही उत्तर हो सकता है ? वासना के दास अपनी प्रिय स्त्रियों की समस्त जाइज़–नाजाइज़ माँगों को पूरा करते हैं, इस तरह के इन्कार से उन्हें नराज़ नहीं करते। यदि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के मन में स्त्रियों के प्रति इस तरह का कोई झुकाव होता तो उन्हों ने पत्नियों के रूप–श्रृंगार तथा सुखसुविधा की स्वयं व्यवस्था की होती। परन्तु ऐसा न करके हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने अमलन यह साबित कर दिया कि विषयभोग सरीखे तुच्छ भावों के लिए आपके दिल में कोई जगह न थी। इसी संबंध में ***बॉसवर्थ सिमिथ*** लिखता है :

"In the shepherd of the desert, in the Syrian trader, in the solitary of Mount Hira, in the reformer, in the minority of one, in the exile of Medina, in the acknowledged conqueror, in the equal of the Persian Chosroes and the Greek Heraclius, we can still trace a substantial unity. I doubt whether any other man, whose external conditions changed so much, ever himself changed less to meet them ; the accidents are changed, the essence seems to me to be the same in all."

(Bosworth Smith)

अर्थात्, *"जब हम हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के जीवन की विभिन्न अवस्थाओं पर नज़र डालते हैं — रेगिस्तान के चरवाहे के रूप में, शाम के व्यापारी के रूप में, हिरा के एकांतवासी के रूप में, अकेले सुधारक के रूप में, मदीना में निर्वासित के रूप में, एक सर्वमान्य विजेता के रूप में, ईरानी सम्राट खुस्रो और यूनानी सम्राट हिरेकलुस के समकक्ष के रूप में — इन सभी विविध दशाओं में आप का व्यवहार एकसमान रहता है, इस में किसी भी प्रकार का कोई अन्तर दृष्टिगोचर नहीं होता। हमें विश्व–इतिहास में संभवतः कोई और ऐसा व्यक्ति नज़र नहीं आता कि जिस के जीवन में इतने उतार–चढ़ाव आये हों, लेकिन उसके मनोभावों की दशा न बदली हो। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के बाह्य हालात बदल कर कुछ के कुछ हो गए किन्तु आप के व्यक्तित्व का मूल तत्त्व अपरिवर्तित रहा।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के पवित्र जीवन का चौथा भाग

अब हम हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की ज़िन्दगी के चौथे भाग की ओर आते हैं। आयु की दृष्टि से पचपन और साठ में कोई ज़्यादा अन्तर नहीं। किन्तु इस की क्या वजह है कि साठ साल के बाद आप कोई शादी नहीं करते। ध्यान रहे कि यही वह वक्त है जब अरब देश में संपूर्ण युद्धविराम हो गया। और इस्लाम तेज़ी से फैलने लगा। शांति काल ही विषयभोग या मोजमस्ती के लिये अधिक अनुकूल होता है। यदि आप ने किसी वासनावृति के अधीन विवाह किये होते ,तो संपूर्ण युद्धविराम हो जान के कारण अब हालात ज़्यादा अनुकूल थे ,आप जितने विवाह चाहते कर सकते थे। क्योंकि अब सारे अरब देश में आप की हकूमत थी ,न कोई मुकाबला था, न कोई विरोधी। पर चूंकि आपके ये सारे विवाह आवश्यकताधीन थे अतः ज़रूरत समाप्त होते ही इनका क्रम भी समाप्त हो गया।

अध्याय 4

आदर्श चरित्र

हज़रत आइशा रज़॰ की गवाही

हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ के पावन चरित्र का चित्रण आप की घनिष्ठ राज़दार , आपकी अर्द्धांगिनी हज़रत आइशा रज़॰ ने इन शब्दों में किया है : ***" हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ का चरित्र कुर्आन था। "*** अर्थात् कुर्आन शरीफ में नैतिकता संबंधी जितने सद्‌गुण वर्णित हैं वे सब आपके व्यक्तित्व में विद्यमान थे। दूसरे शब्दों में यह कि हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ कुर्आन शरीफ़ की शिक्षा का मूर्तिमान् रूप थे। यदि कुर्आन शरीफ़ में नैतिक शिक्षा का ज्ञानात्मक प्रदर्शन है ,तो हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ के पवित्र व्यक्तित्व में उसी का व्यवहारिक प्रदर्शन है।

सरलता , सादगी और निष्कपटता

सरलता , सादगी और निष्कपटता — ये हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल॰ के चरित्र के मूलाधार हैं। आप हर प्रकार का काम स्वयं अपने हाथ से कर लेते थे। भिखारी को भिक्षा देनी हो तो स्वयं अपने हाथ से उसके हाथ में रख देते। महमान की अपने हाथ से सेवा करते। घरेलू कामकाज में पत्नियों की मदद करते। अपनी बकरियों का दूध स्वयं दुहते। अपने कपड़ों की स्वयं मरम्मत कर लेते , अपनी जूती गांठ लेते। स्वयं अपने घर में झाड़ू दे लेते। अपने ऊँट को बाँध लेते ,उसके आगे घास डालते। आप ने दुनिया के किसी भी काम को तुच्छ न जाना। जब मस्जिद बनाई गई , तो आप

भी स्वयं मज़दूरों के संग टोकरी उठाते थे। दुश्मन से बचने के लिये खंदक (खाई) खोदनी पड़ी तो आप अपने सिपाहियों के बीच एक साधारण मज़दूर की तरह काम करते नज़र आते। आप बाज़ार से अपना सौदा स्वयं खरीद लाते , बल्कि दूसरों का भी ,जो ख़ुद ऐसा न कर सकते हों ,खरीद कर ला देते थे। आशय यह कि *नबी* और बादशाह होने के बावजूद आप ने किसी भी काम को अपने लिये तुच्छ न समझा। इस तरह आप ने अमलन बता दिया कि इन्सानी शराफत या नीचता के लिये पेशा कोई कसौटी नहीं। श्रेष्ठता का आधार मनुष्य का व्यवहार ,उसका सदाचार है। इस्लामी समाज में एक मोची ,एक दर्ज़ी ,एक टोकरी उठाने वाले मज़दूर को वही मानसम्मान प्राप्त है जो एक व्यापारी , एक मुलाज़िम या एक पदाधिकारी को प्राप्त है। आम मेलजोल में भी आप स्वयं को दूसरों के बराबर रखते थे। एक बार जंगल में खाना पकाने की ज़रूरत पेश आई तो एक एक काम सब को सौंपा गया ,ईंधन इकट्ठा करने का काम आप ने अपने ज़िम्मा लिया। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] को यह कभी पसन्द न था कि आपके साथी आपके स्वागत हेतु उठ खड़े हों। एक बार अपने साथियों को संबोधित कर फरमाया : *" **अजमियों** (=गैर–अरबों) की भांति मेरे स्वागत हेतु खड़े मत हो जाओ।"* और कहा कि मैं भी अल्लाह का एक विनम्र बन्दा हूँ , अन्य बन्दों की तरह भोजन करता हूँ , उन्हीं की तरह उठता बैठता हूँ। किसी ने सम्मान हेतु आप के हाथ का चुंबन करना चाहा , आप ने यह कह कर हाथ खींच लिया कि यह व्यवहार ***अजमियों*** का है ,जो वे अपने राजाओं महाराजाओं के प्रति प्रकट करते हैं। यदि गरीब गुलाम भी आप को भोजन का निमंत्रण देता तो आप तुरन्त निमंत्रण स्वीकार कर लेते। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] को समाज के किसी भी वर्ग के साथ ,भले ही वह कितना तुच्छ क्यों न हो ,मिलकर भोजन करने में आपति न थी। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] की आम गोष्ठियों में भी साधारण दर्शक केलिये यह बताना मुश्किल था कि इन में पैग़म्बरश्री कौन हैं। कारण ,आप ने कभी अपने लिये अलग से किसी आसन विशेष की व्यवस्था नहीं की।

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] को अपने मित्रों से बेहद प्रेम था। स्वागत करने में या हाथ मिलाने में हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] हमेशा पहल करते थे। हाथ मिलाते वक्त हाथ खींचने में कभी पहल न करते थे। जब किसी से मिलते

मुसकराते हुए मिलते। जरीर इबन अब्दुल्लाह कहते हैं :

" मैं ने जब भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को देखा सदा मुसकराते देखा।"

आम बात चीत में भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने कभी कृत्रिम संकोच से काम न लिया ,सदा सहज स्वभाव ही प्रदर्शित किया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. बच्चों को प्यार से अपनी बाहों में भर लेते ,और स्नेहपूर्वक उनके सिर पर हाथ फेरते। चुग़लखोरी आप को अति अप्रिय थी , किसी की अनुपस्थिति में उसकी निन्दा करने से हमेशा मना करते थे।

रोटी कपड़ा और मकान

खाने पीने के मामले में भी आप की आदतें अति सरल और सादा थीं। खजूर , जौ , माँस , दूध — जो चीज़ आसानी से मिल जाती उसे खा लेते। कभी कभी भोजन की व्यवस्था न हो पाने की वजह से भूखे गुज़ार देते। कई कई दिन तक रोटी न मिलती तो केवल खजूरों पर ही गुज़ारा होता था। यह उस ज़माने की बात है जब मदीना में आप बादशाह थे। कभी महमान घर आ गया ,और खाना कम हुआ तो सारे का सारा महमान को खिला दिया , और स्वयं भूखे रहे। सड़ी हुई या बदबूदार चीज़ों के निकट भी न जाते थे। ऐसी वस्तुएं जिन के सेवन से मुँह से बदबू आए आप पसन्द न करते थे , जैसे कच्चा प्याज़। भोजन से पहले और भोजन के उपरांत हाथ धोते , और बाद में मुँह खूब साफ करते।

आपका लिबास भी सादा था। पैवन्द या थिगली लगा कपड़ा पहन लेने में भी कोई संकोच न था ,और अच्छा कपड़ा मिल जाता तो उसे फैंक न देते थे। हाँ ! मर्दों के लिये रेशमी कपड़े पसन्द न करते थे। लिबास सादा किन्तु साफ सुथरा पहनते थे। जब बादशाहों और सम्राटों के साथ पत्रव्यवहार शुरू हुआ तो आप ने पत्रों पर मोहर लगाने केलिये एक (चांदी की) अंगूठी बनवाई। तदुपरांत इस अंगूठी को धारण किये रहे। अन्य बातों में भी आप सादगी के साथ साथ सफाई का विशेष ध्यान रखते थे। आप के मकान भी अति सादा थे ,ये कच्ची ईन्ट और गारे से बने छोटे छोटे कमरे थे। इनके अन्दर सामान कोई न था — एक चारपाई , एक पानी की ठिलिया और बस !

पवित्रता और सफाई

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ ***मिसवाक*** का बहुत इस्तेमाल करते थे। दिन में कई कई बार ***मिसवाक*** (=दातून) करते थे , सोने से पहले , सोते से उठकर ज़रूर ***मिसवाक करते***।[1] शरीर को भी साफ सुथरा रखते थे। सिर के बालों को और दाढ़ी को कंघी द्वारा तथा धोकर साफ सुथरा रखते थे। और ख़ुशबू का सेवन भी करते थे। आपके निकट बैठने वाले यह गवाही देते हैं कि आप के शरीर से ,लिबास से ,या मुँह से कभी दुर्गन्ध नहीं आई। बल्कि आपका पसीना तक सुगन्धित होता था। आप अपने शरीर और लिबास आदि को हर तरह से पाक साफ रखते थे। शौच के बाद मिट्टी और पानी का प्रयोग करते ताकि शरीर के साथ किसी प्रकार की गन्दगी न रहे। मलद्वार साफ करने के बाद हाथ मिट्टी से रगड़ कर धोते थे।[2] हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ न सिर्फ स्वयं पाक साफ रहते बल्कि दूसरों को भी यही उपदेश देते थे। किसी को मेले कपड़े पहने दखते तो धो लेने की सीख देते। मस्जिद में दीवार आदि पर थूकने से मना करते और यदि दीवार पर थूक आदि देख लेते तो उसे साफ करवा देते। और आदेश देते कि अगर किसी को मस्जिद के अन्दर बलग़म आदि आजाए तो उसे कपड़े में ले लेना चाहिये।[3] जुमा के दिन नमाज़ियों को नहा धो कर मस्जिद आने की ताकीद करते ,ताकि बदबू और बीमारी न फैले। इसी संदर्भ में आप ने वृक्षों के साये में शौच करने से मना फ़रमाया कि वहां लोग बैठते हैं , और रास्तों में भी कि लोग वहां से गुज़रते हैं।

---

1. मुँह की सफाई को आज सहत का पहला नियम माना गया है। अनेक बीमारियां केवल मुँह साफ न रखने से पैदा हाती हैं। दाँतों की मज़बूती का दारोमदार भी मुँह साफ रखने पर है। बच्चों को यह आदत डालनी चाहिये कि वे सोने से पहले और सोते से उठकर मुँह को मिसवाक ,दातून या ब्रश से अनिवार्यतः साफ किया करें।

2. ध्यान रहे भारतीय वतावरण में मिट्टी का प्रयोग सुरक्षित नहीं ,क्योंकि यह अरब देश की मिट्टी की तरह उस हद तक तप नहीं पाती जो कीटाणुविनाशक है ,हाँ राख का प्रयोग सही होगा क्योंकि वह भी अरब की मिट्टी की तरह कीटाणु रहित होती है। यही काम साबून से लिया जा सकता है।

3. आज कल इस काम के लिए टिशू पेपर इस्तेमाल किया जाता है। मस्जिद संबंधी यह नियम अन्य सम्मेलन–स्थलों के लिये भी प्रयोज्य है।

सत्यता और वचनपालन

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की ईमानदारी और सत्यता के प्रति निष्ठा सारे अरब में मशहूर थी। लोग आप को ***"अल्–अमीन"*** यानि सत्यनिष्ठ के नाम से पुकारते थे। आप के परम शत्रु अबू जहल ने स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को संबोधित कर कहा था :

" देखो , हम आप को झूठा नहीं कहते , लेकिन जो सन्देश आप लाये हैं उस को झूठा समझते हैं ।"

जब नज़र इबन अल्–हरस के साथी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. के विरुद्ध योजना बनाने लगे , तो उसने उन्हें लज्जित करते हुए कहा :

*"मुहम्मदसल्ल. तुम में एक लड़का था , सर्वश्रेष्ठ , बात में सब से सच्चा , ईमानदारी में सर्वोत्तम। अब जब वह बूढ़ा हो गया और तुम्हारे पास कुछ सन्देश लाया तो तुम उसे "ساحر" **"साहिर"** (=जादूगर) कहते हो , अल्लाह की कसम ! वह "ساحر" **साहिर**"नहीं ।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने जब भी कोई वचन दिया बड़े बड़े नुकसान उठा कर भी उसे पूरा किया। हुदैबिया की शांति–संधि में यह तय पाया कि अगर मक्का वालों में से कोई मुसलमान होकर आपके पास मदीना आये तो उसे मक्का वालों के हवाले कर दिया जाये गा। इस अनुचित शर्त को आप ने ऐसी परिस्थितियों में भी निभाया कि स्वयं मुसलमानों की आँखों में ख़ून उतर आया। ठीक उसी समय जब समझौता लिखा जा चुका था मक्का के एक सरदार का पुत्र अबू जन्दल आप की सेवा में उपस्थित हुआ और निवेदन किया कि इस्लाम कबूल करने की वजह से मुझे सख़्त यातनाएं दी जाती हैं। उस के शरीर पर मार के निशान भी थे। किन्तु आप ने फरमाया :

" अब तो हम वचनबद्ध हैं , अतः तुम्हारे लिये कुछ नहीं कर सकते।"

एक और व्यक्ति , जिस का नाम अतबा था , मुसलमान होकर मक्का से भागा और मदीना पहुंचा। कुरैश के दूत भी पीछे पीछे आ पहुंचे कि अतबा को वापस किया जाए। आप ने उसे वापस कर दिया। अतबा

ने निवेदन किया :

" हे अल्लाह के रसूल ! आप मुझे पुनः कुफ़्र पर मजबूर करते हैं ?"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फ़रमाया :

" मैं अपने वचन को तोड़ नहीं सकता ।"

दुःख और कष्ट झेलना

मनुष्य का सर्वोत्तम गुण सहनशीलता है। वही इन्सान दुनिया में उन्नति कर सकता है जो दुःखों और तकलीफों को सहर्ष झेलने के लिये तैयार हो। यह गुण हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.में पूर्णरुपेण विद्यमान था। व्यक्तिगत रूप से भी आप को अनेकों कष्ट उठाना पड़े। आप की सारी सन्तान , सिवाय हज़रत फ़ातिमारज़. के ,आप की आँखों के सामने मृत्यु को प्राप्त हुई। लेकिन आप ने इन ग़मों , इन व्यथाओं को बड़ी वीरता से सहन किया। विलाप तो दूर आपकी ज़ुबान से कभी शिकायत का शब्द भी न निकला। जब आपके एक बहुत प्यारे बच्चे इब्राहीम का स्वर्गवास हुआ , तो आप ने फरमाया :

" दिल में शोक है और आँखों में आँसू हैं , लेकिन हम अपने रब की मर्ज़ी पर संतुष्ट हैं।"

आप ने धर्मप्रचार के दौरान भी बड़ी बड़ी असफलताएं देखीं ,कोई बात तक सुनने को तैयार नहीं ,कोई उपहास करता है ,कोई गालियां देता है ,कोई अत्याचार करता है। लेकिन फिर भी यही कहते हैं कि जब तक अल्लाह राज़ी है मैं इन कष्टों को तुच्छ समझता हूँ। दुश्मनों ने बेहद सताया ,आप के रिश्तेदार ,आप के प्यारे दोस्त आपकी आँखों के सामने कतल किये गये , लेकिन आप ने अल्लाह के मार्ग में यह सब सहर्ष सहन किया, बदले का विचार तक मन में आने न दिया।

दृढ़ संकल्प और अडिगता

दुःखों और संकटों को झेलने में जिस अपूर्व धैर्य और दृढ़ता का प्रदर्शन हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने किया उसकी प्रशंसा कट्टर इस्लाम–विरोधी इतिहासकार भी करते हैं। अत्यन्त निराशाजनक परिस्थितियों में भी आप निराश नहीं हुए ,चारों ओर नाकामी के दृश्यों ने भी आप के अन्तिम

सफलता संबंधी विश्वास को विचलित न किया , आपका संकल्प और विश्वास सदैव एक पहाड़ की तरह अडिग रहा। बड़ी से बड़ी मुसीबत भी आप को अपने स्थान से हिला न सकी। जब आप के प्रिय चाचा अबू तालिब ने साफ जवाब दे दिया :

" भतीजे ! कदाचित अब मैं भी ज़्यादा देर तुम्हारा साथ न दे पाऊँ गा क्योंकि मैं जातिजनों का मुकाबला नहीं कर सकता।"

तब भी आप ने हम्मत न हारी। कुरैश जाति के सभी कबीलों ने आपका बाइकाट कर दिया ,तब भी आप अपनी बात पर जमे रहे। मक्का से निकल कर ताइफफ गए वहाँ भी किसी ने बात न सुनी उलटा पत्थर मार मार कर लहुलुहान और निढाल कर दिया। तब भी आप पहले की तरह लोगों का मार्गदर्शन करने में दृढ़संकल्प रहे ,और पूर्ववत उत्साहपूर्वक काम करते रहे। जब कतल के प्रयोजन से शत्रु ने आपके घर का घेराव किया ,तब भी उनके बीच से अकेले बाहर निकल गए। जब गुफा में शरण ली तो दुश्मन तलवारें लेकर सिर पर पहुंच गया उस संकट की घड़ी में भी अपने साथी हज़रत अबू बक्र[रज़.] से यही कहा :

" चिन्ता की कोई बात नहीं , अल्लाह हमारे साथ है ।"

आशय यह कि नाजुक से नाजुक परिस्थितियों में , और बड़ी से बड़ी नकामी में भी दृढ़ संकल्प और अटल साहस का परिचय दिया।

विनम्रता और पुरुषार्थ

विनम्रता और सहिष्णुता के सद्गुण भी आप में पूर्णरुपेण मौजूद थे। लेकिन इस के साथ साथ आप महा पराक्रमी और शूरवीर भी थे। दुश्मन का भय कभी आपके दिल में उत्पन्न न हुआ। जब मक्का में आप के कतल की योजनाएं बन रही थीं ,तब भी आप उसी आज़ादी से दिन के उजाले में और रात के अंधेरे निर्भय होकर बाहर निकलते थे। मक्का से सब मित्रों को विदा कर दिया ,लेकिन स्वयं दुश्मनों के बीच अकेले रहे। युद्ध के मैदान में जब सारी मुस्लिम सेना दुश्मनों के घेरे में आ गई तो आप ने अत्यन्त वीरता का प्रदर्शन करते हुए आवाज़ देकर सब को इकट्ठा कर लिया। एक और अवसर पर जब मुसलमान सेना भाग निकली तो आप अकेले दुश्मन की तरफ बढ़ रहे थे , और बुलंद आवाज़ से कह रहे थे कि *"मैं*

अल्लाह का रसूल हूँ कोई झूठा नहीं !'' डाका पड़ने की आशंका हुई तो आप सब से पहले बिना ज़ीन के घोड़े पर बैठ पता लगाने बाहर निकल गए। एक दिन किसी सफर में वृक्ष के नीचे अकेले लेटे हुए थे , कि एक शत्रु सिर पर आ पहुंचा और तलवार खींच कर आपको जगाया और कहा: '' ***अब तुम को मेरे हाथ से कौन बचा सकता है ?*** '' आप तनिक भी न घबराये और सहज स्वर में फ़रमाया : '' ***अल्लाह!*** '' प्रभु की इच्छा यह सुन शत्रु के हाथ से तलवार छूट गई। तब आप ने वही तलवार उठाकर उस से यही प्रश्न किया तो वह गिड़गिड़ाने लगा। दयावान् पैग़म्बरश्रीसल्ल ने उसे कुछ न कहा ,जाने दिया।

लज्जा व उपेक्षावृत्ति

सहाबा का कहना है कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.कुँवारी कन्याओं से भी ज़्यादा शर्मीले और लज्जावान् थे। क़ुर्आन शरीफ़ साक्षी है कि जब आप को बाज़ लोगों की नासमझी के कारण बड़े बड़े कष्ट पहुंचते ,तो आप उनको कुछ न कहते। नाम लेकर किसी का दोष बयान न करते , बल्कि यों कहते :

'' ***उन लोगों का क्या हाल है जो ऐसा करते हैं ।*** ''

एक व्यक्ति पर कुछ रंग देखा तो दूसरों को कहा :

'' ***बेहतर हागा कि कोई उसे समझा दे कि वह इस को धो डाले।*** ''

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने ईमान की उपमा एक वृक्ष से दी है , और ''***हया***'' *(=लज्जा व उपेक्षावृत्ति)* को उस की एक शाखा बताया है। लेकिन धर्म के मामले में आप बड़े ही गैरतमन्द और स्वाभिमानी थे। धर्म के ख़िलाफ़ कोई बात देखते तो तत्काल रोक देते।

न्याय

न्याय के मामले में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल एकदम उसूलपरस्त और निष्पक्ष थे। ***नबी*** बनने से पहले भी आप अपनी अपूर्व ईमानदारी ,सत्यवादिता और न्यायपरता केलिये मशहूर थे ,उस समय भी लोग अपने झगड़ों के फ़ैसले आप से कराते थे। जब मक्का को त्याग मदीना आये तो वहां के

बहुदेववदियों और यहूदियों ने भी आप को अपने सभी झगड़ों का न्यायकर्ता बनाया। हालांकि यहूदियों की इस्लाम के प्रति दुश्मनी भी कुछ कम न थी (ब्योरा पिछले पृष्ठों में गुज़र चुका है)।

एक यहूदी और एक मुसलमान का मुकदमा आप के पास आता है। मुसलमान कसूरवार होता है ,कुछ मुसलमान उसकी सिफ़ारिश भी करते हैं ,यह भी कहते हैं कि अगर इस को सज़ा हो गई तो सारे मुस्लिम समाज की नाक कट जाए गी। हो सकता है इस कदम से उसका कबीला इस्लाम से ही विमुख हो जाए। लेकिन आप ने निष्पक्ष होकर न्याय किया और फैसला यहूदी के हक में कर दिया। एक और अपराधी की ओर से सिफ़ारिश किये जाने पर फ़रमाया :

" ***अल्लाह की कसम ! अगर मुहम्मद की बेटी फ़ातिमा भी चोरी करे तो उसके भी हाथ काटे जाएं गे।***"

देहांत से कुछ ही समय पहले , मृत्युशैया पर यह घोषणा कराई :

" ***यदि मुझ पर किसी का कोई कर्ज़ हो तो वह आ कर लेले , किसी को मेरी वजह से कोई तकलीफ़ पहुंची हो तो वह बदला लेले।***"

क्षमाभाव

जिस अधिकता से हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने इस सदभाव का प्रदर्शन किया है उसकी दूसरी मिसाल सारे विश्व–इतिहास में उपलब्ध नहीं। उहद के यद्ध में आप के दांत शहीद हो गये , चेहरा ज़ख़्मी हो गया ,आप गिर गए। ***सहाबा*** में से कुछ ने निवेदन किया :

" ***हे पैग़म्बरश्री ! जिन लोगों ने अल्लाह के रसूल को इस कदर दुःख पहुंचाया है आप उनके लिये बददुआ कीजिये।***"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने फ़रमाया :

" ***मुझे अल्लाह ने सत्य का प्रचारक और दयालुता का प्रतीक बना कर भेजा है , शाप देना या लानत करना मेरा काम नहीं।***"

हाथ उठाये और प्रभु से यह प्रार्थना की :

" ***हे प्रभुवर ! मेरी कौम का मार्गदर्शन कर क्योंकि ये नहीं जानते कि क्या कर रहे हैं ।***"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का दिल कोई साधारण हृदय न था , वह तो

साक्षात दया का सागर था जिस में हर समय दयालुता की तरंगों का उद्दीपन होता रहता था। कठोर दुःख उठाते हुए भी दुश्मन केलिये बददुआ नहीं करते , उसके लिये प्रभु से क्षमायाचना ही करते हैं। एक बार अरब के किसी देहाती ने आप के गले में चादर डाल कर ज़ोर से खींचा। जब आप ने उसे पूछा कि क्या इस अपराध की तुझे सज़ा दी जाये ? उसने कहा कि नहीं ,क्योंकि आप बुराई का जवाब बुराई से नहीं देते। मक्का विजय के ऐतिहासिक शुभ अवसर पर जिस असीम उदारता और व्यापक क्षमादान का नमूना आप ने प्रस्तुत किया वह आज भी अपनी मिसाल आप है। दुश्मनों पर अधिकार पाने के बाद — दुश्मन भी कैसा , वही जिस ने मुसलमानों पर अत्याचार किये ,उनको जान से मार देने में ,इस्लाम को समूल विनष्ट कर देने में यहां तक कि स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को कतल कर देने में कोई कसर उठा न रखी — उनको बिना शर्त क्षमादान दे दिया। अबू सुफ़ियान जैसा दुश्मन सामने आया तो उसे उस के किसी कर्म का उलाहना न दिया। हालांकि इस्लाम को तबाह करने की सभी योजनाओं में वही आगे था। उसकी पत्नी हन्दाह ने उहद के युद्ध में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के प्रिय चाचाश्री हज़रत हम्ज़ारज़. के मृत शरीर से कलेजा निकाल कर चबा लिया था ,आप ने उसे भी क्षमा कर दिया।

करुणा और दयादृष्टि

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.की निष्पक्ष दयालुता समस्त प्राणियों पर एकसमान छाई हुई थी। यहां तक कि बेजुबान जीव भी इस से वंचित न थे। एक बार अपने अनुयायिओं को शिक्षा देते हुए हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने फ़रमाया :

> ***" एक औरत को (मरणोरांत) सिर्फ इस लिये यातना दी गई कि वह एक बिल्ली को भूखा बांध रखती थी। "***

एक और औरत के बारे में फ़रमाया कि अल्लाह ने उसे केवल इस लिये स्वर्ग में प्रवेश दे दिया कि उस ने एक प्यासे कुत्ते को अपने चमड़े का मोज़ा उतार कुंवें से पानी निकाल कर पिलाया था। अरब में ऐसी अनेक अंधविश्वासी कुप्रथाएं थीं जनके अन्तर्गत जानवरों को तरह तरह की यातनाएं देकर सताया जाता था। आप ने उन सब को समाप्त कर दिया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को बच्चों से विशेष लगाव था ,रास्ते में बच्चा मिल

जाता तो उसे प्यार करते ,छोटे बच्चों को गोद में उठा लेते कभी कभी वह आपके कपड़ों पर मूत देते ,लेकिन आप बुरा न मनाते। बच्चों वाली महिलाएं मस्जिद में नामज़ पढ़ने आतीं ,और जब बच्चे के रोने की आवाज़ आती तो आप नमाज़ को हलका कर देते। कभी कभी बच्चे को गोद में बिठा कर नमाज़ पढ़ लेते।

अरब देश में ,बल्कि विश्व भर में जितने भी दलित अथवा पीड़ाग्रस्त वर्ग हैं ,हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] उन सब के पक्ष में उठ खड़े हुए। अरब समाज औरतों के साथ दुर्व्यवहार करता था , आप ने यह कह कर कि ,

"जन्नत माताओं के चरणों तले है "

संपूर्ण नारी–जाति का मान बढ़ा दिया ,और दिलों में उसकी इज़्ज़त कायम कर दी। जो जो यातनाएं और कष्ट औरतों को देये जाते थे उन सब का निवारण किया। पहली बार औरत को विरासत में भागीदार बनाया। पतियों पर उनके अधिकार कायम किये। बल्कि नेकी और धर्मपराणता का आधार ही औरतों के प्रति सुव्यवहार ठहरा दिया। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] ने फ़रमाया :

" तुम में सब से अच्छा व्यक्ति वह है जो अपनी पत्नी के साथ अच्छा व्यवहार करता है।"

गुलामों के प्रति इतना अगाध स्नेह था कि हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] के अन्तिम शब्द यही थे :

" नमाज़ और गुलाम ।"

आप के पास जो गुलाम या लौंडी आई सब को आज़ाद कर दिया। किसी को दास बना कर नहीं रखा। युद्धों में जितने भी लोग कैद किये जाते , उस युग के नियमानुसार उनको दास और दासियां बना लिया जाता था। लेकिन हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल.] ने सब को आज़ाद कर दिया। सिर्फ एक बार कैदियों से अर्थदण्ड लिया। एक युद्ध में छः हज़ार कैदी बिना किसी अर्थदण्ड के आज़ाद कर दिये। हालांकि वे सब ग़ैरमुस्लिम थे। एक और युद्ध में सौ कबीलों को बनिा किसी अर्थदण्ड के आज़ाद कर दिया। एक अन्य युद्ध में सुप्रसिद्ध दानी हातिम ताई की बेटी कैद होकर आई। उसकी खातिर समस्त कैदियों को आज़ाद कर दिया। जिन के पास गुलाम थे , उनके मालिकों को आदेश दिया :

"जो खाना तुम स्वयं खाते हो वही गुलाम को खिलाओ। जैसा लिबास स्वयं पहनते हो वैसा ही गुलाम को पहनाओ।"
स्वतंत्रताप्रप्त गुलामों का इतना मान बढ़ाया कि उनको हकूमत के उच्च पद देकर बड़े बड़े कुलीन सरदारों को उनके मातहत कर दिया।

अनाथों, असहायों और विधवाओं के लिये तो इस दयासागर का सारा जीवन ही अर्पित था। जवानी से लेकर जीवन के अन्तिम क्षण तक अपनी सारी शक्तियां इन्ही के उद्धार में व्यय कर दीं। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने फ़रमाया :

"अनाथ के संरक्षक का मेरे साथ ऐसा ही संबंध है जैसे दो पास पास की अंगुलियों का।"

आपकी बेटी हज़रत फ़ातिमारज़. ने घरेलू काम काज के लिये सेविका मांगी तो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने फ़रमाया कि, अभी मुझे **"सुफ़ा"**[1] वालों का प्रबन्ध करना है।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. मांगने वाले को कभी खाली हाथ न लौटाते, चाहे वह मुसलमान हो या गैर–मूस्लिम। बीमारों का कुशलमंगल पूछने उनके पास जाते। यदि रोगी बहुदेववादी होता तब भी उस की खैरियत पूछने उसके पास जाते। आशय यह कि सर्वप्रकार के दीनदुखियों या अत्याचारग्रस्त इन्सानों के लिये आप के दिल में दयालुता की तरंगे मचलती थीं।

इसी लिए हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने
رَحْمَةً لِّلْعَالَمِيْنَ ***"रहमतन लिल्आलमीन"***
अर्थात्,
समस्मत प्राणी वर्गों, समस्त युगों और समस्त राष्ट्रों केलिये दयालुता
नाम पाया।

---

1. ये धर्मज्ञान के अभिलाषी लोग थे, इन के पास न घर था और न जीविका के साधन। ये लोग "***मस्जिदे नबवी***" में एक "***सुफ़ा***" नामक छते हुए चबूतरे में रहते थे और इनके खान पान की ज़िम्मेदारी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने अपने ऊपर ले रखी थी।

ولله الأسماء الحسنى فادعوه بها

अध्याय 5

अल्लाह के अस्तित्व पर विश्वास

बुनियादी शिक्षा

धर्म–जगत् के — " ***सफलतम महा पुरुष*** " — की कामयाबी का राज़ क्या था ? आखिर वह क्या विचारधारा या शिक्षा थी जिस पर दुनिया की इस —" ***सर्वांगपूर्ण , आकस्मिक तथा अद्‌भुत क्रांति*** "— की नींव रखी गई ? इन्सानों के दिलों को एक ऐसे विलक्षण, अद्वितीय और मुकम्मल इन्किलाब के लिए किस तरह तैयार किया गया ? किस तरह एक नई जीवनवर्धक रूह उन लोगों में फूँक दी गई जो सदियों से अंधविश्वास , अज्ञान , भ्रष्टाचार , अत्याचार और पापकर्मों के गर्त में पड़े हुए थे ? एक ऐसे राष्ट्र को —

> ***"जिस से बढ़ कर असंगठित और अनुशासनहीन जाति संपूर्ण संसार में और कोई न थीं , जहाँ के लोग दिन रात गृहसंग्रामों में व्यस्त रहते थे, और जिन के सारे प्रयास एक दूसरे को तबाह करने में व्यय होते थे"***

— सुसंगठित एवं एकताबद्ध कर देने का " ***नामुमकिन कार्य*** " कैसे संभव कर दिखाया ? मानव–समाज के इन विकटतम रोगों के उपचार हेतु

पहला नुस्खा क्या तजवीज़ किया गया ?

परमात्मा पर विश्वास

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की बेमिसाल कामयाबी का रहस्य उन का अल्लाह पर अगाध *ईमान* (विश्वास) था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. को इस बात का पूर्ण विश्वास था कि अल्लाह ने इन्सान को अच्छा इन्सान बनाने की मंगलमय योजना बनाई है ,जिस के अन्तर्गत सिर्फ एक जाति विशेष ,एक राष्ट्र विशेष या एक देश विशेष का ही पूर्ण उद्धार होने वाला नहीं ,बल्कि सारी दुनिया इस के दायरे में आने वाली है ,और यह कि इस दिव्य योजना को संसार की कोई शक्ति विफल नहीं कर सकती। जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को प्रभु का सब से पहला सन्देश यह मिला ,कि आप को परमात्मा ने ***नबूवत*** के श्रेष्ठतम पद पर इस लिये नियुक्त किया है कि आप संपूर्ण मानवजाति को तबाही और विनाश के गर्त से नकाल प्रतिष्ठा के उच्चतम स्थान पर आसीन कर दें। यह सन्देश पाते ही आप सच मुच काँप उठे। हिरा गुफा से सीधे घर पहुँचे ,और अपनी धर्मपत्नी से कहा कि मुझे चादर उढ़ा दो । जब तक चादर ओढ़ कर आराम नहीं किया आपकी कँपन दूर न हुई ,और मन हल्का न हुआ। निस्संदेह इन्सान को सुधारने का काम वास्तव में इतना दुष्कर है ,कि बड़े से बड़ा शक्तिशाली आदमी भी भलीभांति जानता है कि एक साधारण इन्सान के दिल को सुधारना उसके बस की बात नहीं। फिर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. तो बिल्कुल अकेले, साधनरहित और असहाय थे। आपके सामने जहालत और अधर्म की गन्दगी में सना सारा जहान था। लेकिन आप को परमात्मा के दिव्य प्रयोजन पर ,तथा इस बात पर पूर्ण विश्वास था कि चाहे कितनी ही कठिनाइयां क्यों न आयें यह कार्य सम्पन्न हो कर ही रहे गा। अतएव आप तत्काल इस काम में लग गए। शुरू शुरू में लोगों ने स्वप्नद्रष्टा कह कर आप के धर्मप्रचार को हँसी में टालना चाहा। किन्तु ज्यों ज्यों लोग आप के सन्देश को स्वीकारने लगे ,और इस में शक्ति नज़र आने लगी तो विरोध का सिलसिला आरंभ हो गया। यह विरोध बढ़ते बढ़ते अपनी चरम सीमा तक जा पहुंचा। यातना और अत्याचार के जितने तरीके उपलब्ध थे, सब को हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के अनुयायिओ पर आज़माया गया ,यहां तक

कि निर्मम हत्या से भी संकोच न किया। किन्तु इन कठिनतम एवं प्रतिकूल परिस्थितियों में भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.एक पहाड़ की तरह मज़बूत खड़े रहे। आप ने अपने साथियों को मशवरा दिया कि वे हबश की ओर ***हिजरत*** कर जाएं ,क्योंकि वह न्याय की भूमि है ,वहां किसी को उसके धर्म के कारण सताया नहीं जाता। और फरमाया :

" वहीं ठरे रहो जब तक अल्लाह तुम्हारे लिये इन कठिनाइयों से निकलने का रास्ता खोल दे।"

कितना दृढ़ विश्वास है इस बात पर कि अल्लाह मुक्ति–मार्ग ज़रूर खोल दे गा !

इस प्रकार आप के कुछ अनुयायी ***हिजरत*** कर सुरक्षित जगह पहुंच गए ,लेकिन आप अकेले दुश्मनों के बीच अपने स्थान पर जमे रहे। आप को कतल की धमकियां भी दी गईं। आप के प्रिय चाचा ने भी एक अवसर पर जाति वालों के विरोध को असह्य पाकर यह कह दिया कि वे अब उनका मकाबला नहीं कर सकते। उन्हों ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को संबोधित कर कहा : *"भतीजे ! मुझ पर उस ज़िम्मेदारी का बोझ न डाल जिसे में उठा नहीं सकता।"* लेकिन इस पर भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.अपने मिशन से तनिक भी विचलित न हुए। आप ने फ़रमाया:

" चाचाश्री ! अगर ये लोग सूरज को मेरे दायें हाथ में लाकर रख दें और चाँद को बायें में और मुझे यह कहें कि मैं धर्मप्रचार के कार्य को छोड़ दूँ तो यह न होगा। मैं इस काम को कभी नहीं छोड़ऊँ गा , यहांतक कि अल्लाह मुझे कामयाब करदे ,अन्यथा मैं इस कोशिश में स्वयं विनष्ट हो जाऊँ गा ।"

अबू तालिब आपके इस अडिग संकल्प के आगे झुक गया ,और कहा जाओ जो दिल चाहता है करो , मैं तुम्हारा साथ नहीं छोड़ूँ गा। यहाँ निराशा हुई, तो कुरैश स्वयं एक प्रतिनिधि मंडल के रूप में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.की सेवा में उपस्थित हुए , और कहा :

" यदि आप धन के अभिलाषी हो ,तो जितना धन चाहें हम जमा करके आपकी सेवा में अर्पित कर सकते हैं। यदि आप समाज में मानसम्मान और पद के अभिलाषी हो ,तो हम आप को अपना बादशाह और स्वामी मान कर प्रतिज्ञा लेने को तैयार हैं।

यदि आप को सौन्दर्य में रुचि है तो हम सुन्दर से सुन्दर कन्या आप के विवाह में दे सकते हैं।"

इस प्रलोभयुक्त प्रस्ताव को कोई साधारण मनुष्य ठुकरा न सकता था। कहां एक अत्याचारग्रस्त असहाय इन्सान ,कहां एक बादशाह जिस के अधिकार में दौलत भी हो और सौन्दर्य भी। किन्तु आप का उत्तर क्या था :

'मुझे न धन की ज़रूरत है न बादशाहत की। मुझे अल्लाह ने इस काम केलिये नियुक्त किया है कि मैं इन्सानों तक उस परम प्रभु का सन्देश पहुंचा दूँ , और उनको बुराई के बुरे परिणाम से डराऊँ। यदि तुम इस दिव्य सन्देश को स्वीकार कर लो तो तुम्हें इस जीवन में भी शांति प्राप्त होगी और आने वाले जीवन में भी। यदि तुम अल्लाह के सन्देश को रद्द करो तो अल्लाह मेरे और तुम्हारे बीच फैसला कर दे गा।"

इन प्रलोभों की चर्चा प्रारंभ कालीन *वह्य* में भी मौजूद है ,फ़रमाया :

وَإِن كَادُوا۟ لَيَفْتِنُونَكَ عَنِ ٱلَّذِىٓ أَوْحَيْنَآ إِلَيْكَ لِتَفْتَرِىَ عَلَيْنَا غَيْرَهُۥ ۖ وَإِذًا لَّٱتَّخَذُوكَ خَلِيلًا

व इन् कादू लयफ़्तिनूक अनिल्लज़ी अव्हय्ना इलैक लितफ़्तरिय अलैना ग़ैरहू व इज़ल्–लत्तख़ज़ूक ख़लीला *(17 : 73) ,*

अर्थात् ,"और दुश्मन तुझे उस (मिशन) से हटाने ही लगे थे जो हम ने तेरी ओर 'वह्य' किया , ताकि तू उसको छोड कर कोई और बात हम पर बना ले ,और तब ये तुझे ज़रूर अपना मित्र बना लेते।"

وَلَوْلَآ أَن ثَبَّتْنَـٰكَ لَقَدْ كِدتَّ تَرْكَنُ إِلَيْهِمْ شَيْـًٔا قَلِيلًا ﴿٧٤﴾

व लव् अन् सब्बत्नाक लक़द् किद्त्त तर्कनु इलैहिम शैअन् क़लीला (17 : 74) ,

अर्थात् ,"और यदि हम ने पहले से तुझे स्थिर न बनाया होता तो (इन प्रबल प्रलोभों के आगे) तू थोड़ा सा अवश्य उनकी ओर झुक जाता।"

घोर यातनाओं , अत्याचारों और निराशाओं के बीच हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ का यह दृढ़ विश्वास कि आप सफलता को अवश्य प्राप्त हो कर रहें गे —

यह भाव कुर्आन शरीफ़ के एक एक वाक्य और एक एक शब्द से परिलक्षित है। कुर्आन की आध्यात्मिक शक्ति की प्रबलता के बारे में आप को पक्का यकीन था कि इस दिव्य शक्ति के समक्ष दुनिया की कोई शक्ति टिक नहीं सकती :

وَلَوْ أَنَّ قُرْءَانًا سُيِّرَتْ بِهِ ٱلْجِبَالُ أَوْ قُطِّعَتْ بِهِ ٱلْأَرْضُ أَوْ كُلِّمَ بِهِ ٱلْمَوْتَىٰ ۗ
بَل لِّلَّهِ ٱلْأَمْرُ جَمِيعًا ۗ

व लौ अन्न कुर्आनन सुय्यिरत् बिहिल्–जिबालु अव कुत्तिअत बिहिल्–अर्जु अव् कुल्लिम बिहिल्–मौता बल् लिल्लाहिल्–अम्रु जमीआ (13 : 31) ,

अर्थात् , *"और यदि कोई कुर्आन हो जिस से पर्वत हटा दिये जाते ,या जिस से धरती के सारे फासले तय किये जा सकते ,या जिस के द्वारा मुर्दे बातें करने लगें (तो वह कुर्आन यही है) ,क्योंकि हुक्म तो सब अल्लाह का ही है।"*

لَوْ أَنزَلْنَا هَٰذَا ٱلْقُرْءَانَ عَلَىٰ جَبَلٍ لَّرَأَيْتَهُۥ خَٰشِعًا مُّتَصَدِّعًا مِّنْ خَشْيَةِ
ٱللَّهِ ۚ وَتِلْكَ ٱلْأَمْثَٰلُ نَضْرِبُهَا لِلنَّاسِ لَعَلَّهُمْ يَتَفَكَّرُونَ ﴿٢١﴾

लव् अन्ज़ल्ना हाज़ल्–कुर्आन अला जबलिन लरऐतहू ख़ाशिअम्–मुतसद्दिअम्– मिन् ख़श्यतिल्लाहि व तिल्कल्–अम्सालु नज़्–रिबुहा लिन्नासि लअल्लहुम यतफ़क्करून (59 : 21) ,

अर्थात् , *" और यदि हम इस कुर्आन को एक पर्वत पर उतारते तो तू उसे अल्लाह के भय से गिरा हुआ , चूर चूर हुआ देखता , और यह दृष्टांत हैं जो हम लोगों (को समझाने के लिये) प्रस्तुत करते हैं , ताकि वे चिन्तन मनन करें ।"*

विरोधाग्नि चारों ओर प्रज्वलित थी , किन्तु हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल. को पूर्ण विश्वास था कि यह अन्ततः सत्य की शक्ति के आगे टिक नहीं पाये गी। यह केवल कुछ ही दिनों की बात है।

وَٱصْبِرْ عَلَىٰ مَا يَقُولُونَ وَٱهْجُرْهُمْ هَجْرًا جَمِيلًا ﴿١٠﴾ وَذَرْنِى
وَٱلْمُكَذِّبِينَ أُو۟لِى ٱلنَّعْمَةِ وَمَهِّلْهُمْ قَلِيلًا ﴿١١﴾

"वस्बिर अला मा यक़ूलून वह्जुर्हुम् हज्रन जमीला व ज़र्नी वल्-मुकज़्ज़िबीन ऊलिन्नअमति व मह्हिल्हुम् क़लीला
(73 : 10-11) ,

अर्थात् ,"और जो कुछ ये कहते हैं उसे धैर्यपूर्वक सहन कर , और इन्हें त्याग दे — एक अनुकूल परित्याग के साथ। और मुझे और झुठलाने वाले समृद्धिशाली जनों को (अकेला) छोड़ दे ,और उन्हें थोडी सी मोहलत दे (ताकि इन के पापकर्म अन्तिम सीमा तक पहुंच जाएं)।"

فَعَصَىٰ فِرْعَوْنُ ٱلرَّسُولَ فَأَخَذْنَٰهُ أَخْذًا وَبِيلًا ﴿١٦﴾ فَكَيْفَ تَتَّقُونَ إِن
كَفَرْتُمْ يَوْمًا يَجْعَلُ ٱلْوِلْدَٰنَ شِيبًا ﴿١٧﴾ ٱلسَّمَآءُ مُنفَطِرٌۢ بِهِۦ ۚ كَانَ وَعْدُهُۥ
مَفْعُولًا ﴿١٨﴾

फ़असा फ़िर्औनु-र्रसूल फ़अख़ज़्नाहु अख़्ज़वंवबीला फ़कैफ़ तत्तकून इन् कफ़र्तुम यौमनं-यज्अलुल्-विल्दान शीबनिस्समाउ मुन्फ़तिरुम् बिही कान वअदुहू मफ़ऊला (73 : 16-18) ,

अर्थात् ,"फ़िरऔन ने पैग़म्बर की अवज्ञा की , तो हम ने उसे पकड़ा — देखो ! कैसी कठोर पकड़ से धर लिया। सो (हे सत्य के विरोधियो !) यदि तुम इन्कार करो ,तो तुम उस दिन से किस तरह बचो गे जो बच्चों को बूढ़ा कर देगा ? आकाश उस के आदेश से विस्फोटित होने वाला है, उसका वचन पूरा होकर रहता है।"

وَلِرَبِّكَ فَٱصْبِرْ ﴿٧﴾ فَإِذَا نُقِرَ فِى ٱلنَّاقُورِ ﴿٨﴾ فَذَٰلِكَ يَوْمَئِذٍ يَوْمٌ عَسِيرٌ
﴿٩﴾ عَلَى ٱلْكَٰفِرِينَ غَيْرُ يَسِيرٍ ﴿١٠﴾ ذَرْنِى وَمَنْ خَلَقْتُ وَحِيدًا ﴿١١﴾
وَجَعَلْتُ لَهُۥ مَالًا مَّمْدُودًا ﴿١٢﴾ وَبَنِينَ شُهُودًا ﴿١٣﴾ وَمَهَّدتُّ لَهُۥ تَمْهِيدًا
﴿١٤﴾ ثُمَّ يَطْمَعُ أَنْ أَزِيدَ ﴿١٥﴾ كَلَّآ ۖ إِنَّهُۥ كَانَ لِءَايَٰتِنَا عَنِيدًا ﴿١٦﴾ سَأُرْهِقُهُۥ
صَعُودًا ﴿١٧﴾

व लिरब्बिक फ़स्-बिर् फ़इज़ा नुक़िर फ़िन्नाक़ूरि फ़ज़ालिक यौमइज़न् यौमुन असीरुन अलल्-काफ़िरीन ग़ैरु यसीरिन् ज़र्नी व मन ख़लक़्तु वहीदनंव् वजअल्तु लहू मालम्- मम्दूदंव्

व बनीन शहूदंव् व महहद्त्तु लहू तम्हीदा सुम्म यत्मअु अन् अज़ीद कल्ला इन्नहू कान लिआयातिना अनीदन सउर्हिकुहू सअूदा
(74 : 7–17) ,

अर्थात् , *"और अपने रब के लिये बरदाश्त करते जोओ , अतः जब शंख बजाया जाये गा , तो उस दिन वह एक कठिन घड़ी होगी — काफ़िरों के लिये आसान न होगी ! मुझे छोड़ दे (कि उस से निपट लूँ) जिसे मैं ने अकेला पैदा किया ,फिर उसे प्रचूर धन दिया ,और सेवा में उपस्थित रहने वाले बेटे दिये ,और उसे खूब सामान दिया , किन्तु वह अब भी यही चाहता है कि मैं उसे और दूँ। ऐसा कदापि नहीं होगा , इस लिये कि वह हमारे सन्देश का दुश्मन है ,मैं उसे घोर संकट में डाल दूँगा ।"*

यह अति प्रारंभकालीन ***'वह्य'*** है। फिर ज्यों ज्यों विरोध बढ़ता गया ,शत्रु की नाकामी और सत्य के अभिभाव पर विश्वास भी बढ़ता गया। एक और प्रारंभकालीन ***'वह्य'*** में फ़िरऔन और अन्य सत्य–विरोधियों की चर्चा करते हुए फ़रमाया है :

فَأَخَذْنَـٰهُمْ أَخْذَ عَزِيزٍ مُّقْتَدِرٍ ﴿٤٢﴾ أَكُفَّارُكُمْ خَيْرٌ
مِّنْ أُوْلَـٰٓئِكُمْ أَمْ لَكُم بَرَآءَةٌ فِى ٱلزُّبُرِ ﴿٤٣﴾ أَمْ يَقُولُونَ نَحْنُ جَمِيعٌ
مُّنتَصِرٌ ﴿٤٤﴾ سَيُهْزَمُ ٱلْجَمْعُ وَيُوَلُّونَ ٱلدُّبُرَ ﴿٤٥﴾ بَلِ ٱلسَّاعَةُ مَوْعِدُهُمْ
وَٱلسَّاعَةُ أَدْهَىٰ وَأَمَرُّ ﴿٤٦﴾

फ़अख़ज़्नाहुम् अख़्ज़ अज़ीज़िम् मुक़्तदिरिन अकुफ़्फ़ारुकुम ख़ैरुम् मिन् ऊलाइकुम् अम् लकुम् बराअतुन फ़िज़्ज़ुबुरि अम् यकूलून नह्नु जमीअुम् मुन्तसिरुन सयुह्ज़मुल्–जम्अु व युवल्लूनद्दुबुर बलिस्साअतु मौअिदुहुम वस्साअतु अद्हा व अमर्रु
(54 : 42– 46)

अर्थात् , *"तब हम ने उन्हें उसी तरह पकड़ा जस तरह प्रभुत्वशाली , सर्वशक्तिमान पकड़ता है। तो क्या तुम्हारे 'काफ़िर' उन से अच्छे हैं , या तुम्हारे लिये दिव्य–ग्रन्थों में दोषमुक्ति लिखी हुई है ? क्या ये कहते हैं कि हम एक मज़बूत जत्था हैं — एक दूसरे की सहायता करने*

वाले! यह जत्था शीघ्र ही प्रास्त होगा ,और ये पीठ दिखाते हुए भाग जाएं गे। हाँ ! एक (वादे की) घड़ी उन का नियत समय है , और वह घड़ी अत्यन्त कष्टदायक और तिक्त होगी ।"

कई वर्ष बाद जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने बदर के युद्ध में देखा कि आप के साथ कुल मिला कर तीन सौ शस्त्ररहित आदमी हैं ,वे भी ऐसे कि युद्धकला से बिल्कुल अनजान। और मुकाबिल पर कुरैश के एक हज़ार सशस्त्र जवान हैं ,जो युद्धकला में पूरी तरह निपुण हैं। जो क्षण भर में मुसलमानों का सफाया करके रख दें गे। तो आप की दौड़ परमात्मा के द्वार तक ही थी। अतः सारी रात इसी प्रार्थना में बिता दी :

" हे अल्लाह ! मैं तुझे तेरी वाचा और तेरे वचन की दुहाई देता हूँ। हे अल्लाह ! यदि तेरी इच्छा (हमें विनष्ट करने की) है तो आज के बाद धरती पर तेरी उपासना करने वाला कोई न होगा। हे जीवंत परमात्मा! हे स्वयंस्थित विश्वाधार ! मैं तेरी दयालुता की याचना करता हूँ ।"

अन्ततः आप उस कुटिया से बाहर निकले ,उस समय आप की ज़ुबान पर वही आयतें थीं जिनका अनुवाद हम ऊपर दे आये हैं।

بَلِ ٱلسَّاعَةُ مَوْعِدُهُمْ وَٱلسَّاعَةُ أَدْهَىٰ وَأَمَرُّ

बलिस्साअतु मौअिदुहुम वस्साअतु अद्हा व अमर्रु —
यानि ***वह वादे की घड़ी जो दुश्मन के विनाश के लिये नियत थी वही आ पहुंची है।***

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को यकीन हो गया कि आज यह शक्तिशाली दुश्मन मुठी भर निहथ्थे मुसलमानों के हाथों विनष्ट हो जाए गा। अल्लाह की सत्ता पर तथा उसके वादों पर — यही वह अटल और अडिग विश्वास था जिस ने मक्का की कठिनतम एवं परीक्षात्मक घड़ियों में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. का साथ दिया। और मदीना के युद्धों में —— जहां दुश्मन की संख्या मुसलमानों के मुकाबिल तिगुनी ,चुगुनी ,दसगुनी भी होती थी — इसी अद्भुत विश्वास ने आप के भीतर दुश्मन से लौहा लेने की शक्ति भर दी और अन्ततः आप को कामयाब भी किया।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.को भलीभांति मालूम था कि अरब देश का सुधार

कितना मुश्किल कार्य है। आप को यह भी ज्ञात था कि अरबों की मूर्तिपूजा, उनके अधर्म और भ्रष्टाचार का निवारण न यहूदी कर सके और न ईसाई। लेकिन आप को इस बात का भी पूरा यक़ीन था कि आप न सिर्फ अरबों के बहुदेववादियों को सुधारने में सफल होंगे ,बल्कि अन्य आसमानी ग्रन्थों के अनुयायिओं को भी ,यहाँतक कि यहूदियों और ईसाइयों को भी सुधार देंगे ,जो स्वयं इन्हीं बुराइयों में लीन हो चुके थे। तात्पर्य यह कि आप को इस बात का पूर्वज्ञान मिल चुका था कि मानवसमाज के समस्त वर्गों , सम्प्रदायों और धर्मालम्बीयों का उद्धार आप ही के शुभ हाथों सम्पन्न होने वाला है। لَمْ يَكُنِ ٱلَّذِينَ كَفَرُوا۟ مِنْ أَهْلِ ٱلْكِتَـٰبِ وَٱلْمُشْرِكِينَ مُنفَكِّينَ حَتَّىٰ

تَأْتِيَهُمُ ٱلْبَيِّنَةُ ﴿١﴾ رَسُولٌ مِّنَ ٱللَّهِ يَتْلُوا۟ صُحُفًا مُّطَهَّرَةً ﴿٢﴾

लम् यकुनिल्–लज़ीन कफ़रू मिन् अहलिल्–किताबि वल्–मुश्रिकीन मुन्फ़क्कीन हत्ता तातीहुमुल्–बय्यिनतु रसूलुम्–मिनल्–लाहि यत्लू सुहुफ़म्मुतह्हरः *(98 : 1–2) ,*

अर्थात् ,*" वे लोग जो '**किताब**'–वालों* [1] *में से काफिर हुए ,और बहुदेववादी — ये लोग इस योग्य न थे कि पाप से मुक्ति पाते , यहांतक कि उन के पास प्रत्यक्ष प्रमाण आता — अल्लाह की ओर से एक पैग़म्बर आता जो पवित्र पृष्ठ पढ़कर सुनाता है जिन में समस्त स्थाई ग्रन्थ (सारगर्भित) हैं।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰को पहले ही बता दिया गया था कि *'किताब'*–वालों अर्थात् अपने आप को दिव्य–ग्रन्थ का अनुयायी कहने वालों , के दिल भी पत्थर की तरह कठोर हो चुके हैं ,बल्कि पत्थर से भी ज़्यादा सख़्त ,परन्तु अल्लाह अपनी विशेष कृपा के अन्तर्गत इन पत्थरों से भी आध्यात्मिक नदियां बहा दे गा :

ثُمَّ قَسَتْ قُلُوبُكُم مِّنۢ بَعْدِ ذَٰلِكَ فَهِىَ كَٱلْحِجَارَةِ أَوْ أَشَدُّ قَسْوَةً ۚ وَإِنَّ مِنَ

ٱلْحِجَارَةِ لَمَا يَتَفَجَّرُ مِنْهُ ٱلْأَنْهَـٰرُ ۚ وَإِنَّ مِنْهَا لَمَا يَشَّقَّقُ فَيَخْرُجُ مِنْهُ ٱلْمَآءُ ۚ

وَإِنَّ مِنْهَا لَمَا يَهْبِطُ مِنْ خَشْيَةِ ٱللَّهِ ۗ وَمَا ٱللَّهُ بِغَـٰفِلٍ عَمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٧٤﴾

1.'अहले किताब' (=किताब–वाले) , वे लोग जिन के पास कोई पूर्ववर्ती दिव्य–ग्रन्थ हो। (अनुवादक)

सुम्मा क़सत् क़ुलूबुकुम् मिम् बअदि ज़ालिक फ़हिय कल्हिजारति अव् अशद्दु क़स्वतन व इन्न मिनल्- हिजारति लमा यतफ़ज्जरु मिन्हुल्-अन्हारु व इन्न मिन्हा लमा यश्शक्क़कु फ़यख़्रुजु मिन्हुल्-माअु व इन्न मिन्हा लमा यहबितु मिन ख़श्यतिल्लाहु व मल्लाहु बिग़ाफ़िलिन अम्मा तअ्मलून (2 : 74) ,

अर्थात् , *"फिर तुम्हारे दिल इसके बाद कठोर हो गए ,पत्थरों के समान, बल्कि कठोरता में इस से भी बढ़कर। और पत्थर भी तो ऐसे होते हैं कि उन में से जलस्रोत फूट निकलते हैं , और कुछ ऐसे भी होते हैं जो फट जाते हैं तो उन में से पानी बहने लगता है। और कुछ ऐसे भी होते हैं जो अल्लाह के भय से गिर पड़ते हैं। और अल्लाह उस से बेख़बर नहीं जो तुम करते हो ।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लको सिर्फ़ इतना ही यक़ीन न था कि आप अरब वासियों का सुधार कर लें गे ,बल्कि आप को इस बात का भी पूर्ण विश्वास था कि आप का सन्देश समस्त मनुष्यजाति के लिये है ,अतः वह अन्ततः आप के इसी जीवनवर्धक सन्देश द्वारा सुपथ पर आ जाये गी। आप को इस बात का भी पूर्ण विश्वास था कि अल्लाह का प्रयोजन केवल अरब वासियों के आध्यात्मिक प्रशिक्षण तक ही सीमित नहीं बल्कि इस का संबंध सारी दुनिया से है। अतएव वह ***दुआ*** जो आपको पाँच वक़्त की नमाज़ केलिये सिखाई गई ,और जिसे आज भी आपके करोड़ों अनुयायी दिन रात पढ़ते हैं। उसका शुभारंभ इन शब्दों से होता है :

اَلْحَمْدُ لِلّٰهِ رَبِّ الْعٰلَمِيْنَ

अल्-हम्दु लिल्-लाहि रब्बिल्-आलमीन , (1 : 1)

अर्थात् , *"सब प्रशंसा अल्लाह के लिये है ,जो समस्त लोकलोकांतरों का पालनहार-स्रष्टा तथा उन्हें क्रमशः अपने **कमाल** यानि परमावस्था तक पहुंचाने वाला है।"*

यहां ***"रब्ब"*** शब्द प्रयुक्त हुआ है ,जिसका बुनियादी अर्थ हैं — एक वस्तु को एक चरण के बाद दूसरे चरण की ओर उन्नति देते चले जाना यहांतक कि वह अपने कमाल यानि परमावस्था को प्राप्त हो जाये। यह क़ुर्आन शरीफ़ की पहली आयत है ,और इस में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लको अल्लाह के उस दिव्य प्रयोजन से अवगत कराया गया जिस के अन्तर्गत

संपूर्ण मानवजाति का आध्यात्मिक प्रतिपालन आपके हाथों हाने वाला था। इसी लिये आप को सिर्फ अरब देश की ओर पैग़म्बर बना कर नहीं भेजा गया ,बल्कि आप संपूर्ण मानवजाति की ओर पैग़म्बर बन कर आये थे :

قُلْ يَـٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ إِنِّى رَسُولُ ٱللَّهِ إِلَيْكُمْ جَمِيعًا ٱلَّذِى لَهُۥ مُلْكُ ٱلسَّمَـٰوَٰتِ وَٱلْأَرْضِ ۖ

कुल् याअय्युहन्नासु इन्नी रसूलुल्लाहि इलैकुम् जमीअ–निल्लज़ी लहू मुल्कुस्समावाति वल्–अर्ज़ि (7 : 158) ,

अर्थात् ,*" (हे मुहम्मद !) कह : हे संसार वासियो ! मैं तुम सब की ओर अल्लाह का पैग़म्बर हूँ , उसका पैग़म्बर जिस का राज्य आकाश और धरती है।"*

وَمَآ أَرْسَلْنَـٰكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَـٰلَمِينَ ﴿١٠٧﴾

व मा अर्सल्नाक इल्ला रह्मतल्–लिल्आलमीन (21 : 107) ,

अर्थात् ,*"और हम ने तुझे (केवल एक कौम या एक राष्ट्र के उत्थान के लिये नहीं भेजा बल्कि) संसार की समस्त जातियों और राष्ट्रों की और दयालुता (का प्रतीक) बना कर भेजा है।"*

تَبَارَكَ ٱلَّذِى نَزَّلَ ٱلْفُرْقَانَ عَلَىٰ عَبْدِهِۦ لِيَكُونَ لِلْعَـٰلَمِينَ نَذِيرًا ﴿١﴾

तबारकल्–लज़ी नज़्ज़लल्–फ़ुर्कान अला अब्दिही लियकून लिल्आलमीन नज़ीरा (25 : 1) ,

अर्थात् ,*"अत्यन्त बरकत वाला है वह अल्लाह जिस ने अपने बन्दे पर यह **फ़ुर्कान** (सत्य–असत्य का प्रभेदक यानि कुर्आन) उतारा ,ताकि वह सारी जातियों और सारे राष्ट्रों के लिये सचेतकर्ता हो।"*

إِنْ هُوَ إِلَّا ذِكْرٌ لِّلْعَـٰلَمِينَ ﴿٢٧﴾

इन् हुव इल्ला ज़िक्रुल्–लिल्आलमीन (81 : 27) ,

अर्थात् ,*"(और यह कुर्आन) समस्त जातियों ,समस्त राष्ट्रों के लिये प्रतिष्ठा का साधन है।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰का यह अटल विश्वास अपनी चरम सीमा तक पहुंच

जाता है ,जब एक बार नहीं बल्कि तीन तीन बार अल्लाह का यह वादा दोहराया जाता है :

هُوَ ٱلَّذِىٓ أَرْسَلَ رَسُولَهُۥ بِٱلْهُدَىٰ وَدِينِ ٱلْحَقِّ لِيُظْهِرَهُۥ عَلَى ٱلدِّينِ كُلِّهِۦ

हुवल्–लज़ी अर्सल रसूलहू बिल्हुदा व दीनिल्–हक़्क़ि लियुज़्–हिरहू अलद्दीनि कुल्लिही ***(9 : 33 , 48 : 18 , 61 : 9)***

अर्थात् , *"परमात्मा वही है जिस ने अपने पैग़म्बर (मुहम्मद) को मार्गदर्शन और सत्यधर्म के साथ भेजा ताकि वह इस को (अन्य) सभी धर्मों पर अभिभावी कर दे।"*

सुधारकार्य भी अल्लाह पर विश्वास से शुरू हुआ

आशय यह कि वास्तव में हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] की इस अपूर्व सफलता का एक मात्र राज़ परमात्मा के अस्तित्व तथा उसके वादों पर अटल विश्वास था। यही विश्वास उस अद्भुत क्रांति का भी मूलाधार था जो आप ने दुनिया भर मैं उत्पन्न कर दी। आप ने जब सुधार का कार्य शुरू किया , तो उसका आरंभ इस तरह न किया कि अमुक बुराई समाज से दूर कि जाये, या अमुक अंधविश्वास का उपचार किया जाए ,या अमुक कुप्रथा को मिटाया जाये। बल्कि आप ने सब से पहले जो काम किया वह यही था कि लोगों के दिलों में अल्लाह की सत्ता के प्रति एक सुदृढ़ विश्वास पैदा किया जाए।

तेरह साल तक जो ***वह्य*** मक्का में उतरती रही उसमें सारा ज़ोर केवल इस बात पर था कि इस दुनिया का एक रचयिता है ,वही सब का पैदा करने वाला है ,वही सब का ***रब*** यानि पालनहार है ,उस की दयालुता की कोई सीमा नहीं ,वह बन्दों पर बारंबार दयादृष्टि करता है ,वह अपने भक्तों से प्रेम करता है ,वही हर चीज़ का दाता है ,वह अपने बन्दों की प्रार्थना और पुकार को सुनता है ,उसे नेकी प्रिय और पाप अप्रिय है ,वह उन लोगों पर विशेष दयादृष्टि करता है जो उसके बन्दों पर दयादृष्टि करते हैं ,वह उन से प्रेम करता है जो उस के बन्दों से प्रेम करते हैं ,और उन के दुखों और उनके संकटों में उनके काम आते हैं ,वह सच बोलने वालों से प्रेम करता है ,इत्यादि इत्यादि।

परमात्मा के अस्तित्व पर प्रकृति की गवाही

जो व्यक्ति स्वयं अल्लाह पर संपूर्ण विश्वास रखता है ,उसकी मिसाल उस तार के समान है ,जिस में बजली की करंट दौड़ रही हो। अब जो भी व्यक्ति इस से संबंध स्थापित करता है उस के भीतर भी ईमान और विश्वास की यह करंट स्थानांतरित हो जाती है। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] का दिल ईमान व विश्वास से इतना परिपूर्ण था कि जिन लोगों ने भी आप से संबंध स्थापित किया ,तो वही ईमान व विश्वास करंट की भांति उन के भीतर स्थानांतरित हो गया। फिर इस ईमान व विश्वास का हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की उस दिव्य शिक्षा द्वारा पालन पोषण होता रहा ,जिस में परमात्मा की सत्ता का ,उसकी कुदरत का ,उस के सर्वव्यापी नियंतरण का बार बार ज़िक्र होता। अतएव प्रारंभ कालीन ***वह्य*** में इन्ही बातों पर सब से अधिक बल मिलता है :

أَفَلَمْ يَنظُرُوٓا۟ إِلَى ٱلسَّمَآءِ فَوْقَهُمْ كَيْفَ بَنَيْنَـٰهَا وَزَيَّنَّـٰهَا وَمَا لَهَا مِن
فُرُوجٍ ﴿٦﴾ وَٱلْأَرْضَ مَدَدْنَـٰهَا وَأَلْقَيْنَا فِيهَا رَوَٰسِىَ وَأَنۢبَتْنَا فِيهَا مِن كُلِّ
زَوْجٍۭ بَهِيجٍ ﴿٧﴾ تَبْصِرَةً وَذِكْرَىٰ لِكُلِّ عَبْدٍ مُّنِيبٍ ﴿٨﴾ وَنَزَّلْنَا مِنَ
ٱلسَّمَآءِ مَآءً مُّبَـٰرَكًا فَأَنۢبَتْنَا بِهِۦ جَنَّـٰتٍ وَحَبَّ ٱلْحَصِيدِ ﴿٩﴾ وَٱلنَّخْلَ
بَاسِقَـٰتٍ لَّهَا طَلْعٌ نَّضِيدٌ ﴿١٠﴾ رِّزْقًا لِّلْعِبَادِ ۖ وَأَحْيَيْنَا بِهِۦ بَلْدَةً مَّيْتًا ۚ كَذَٰلِكَ
ٱلْخُرُوجُ ﴿١١﴾

अफ़लम् यन्ज़ुरू इलस्समाअि फ़ौक़हुम् कैफ़ बनैनाहा व ज़य्यन्नाहा व मालहा मिन फ़ुरूजिन वल्–अर्ज़ मदद्नाहा व अल्क़ैना फ़ीहा रवासिय व अंबत्ना फ़ीहा मिन् कुल्लि ज़ौजिम्बहीजिन , तब्सिरतवं व ज़िक्रा लिकुल्लि अब्दिम्मुनीब व नज़्ज़ल्ना मिनस्समाअि माअंमुबारकन फ़अंबत्ना बिही जन्नातिवं व हब्बल्–हसीद , वन्नख़ल बासिक़ातिल्लहा तल्अुन नज़ीदुन् रिज़्क़ल्–लिल्अिबादि व अहयय्ना बिही बल्दतम्मैतन कज़ालिकल्–ख़ुरूजु (50 : 6–11)

अर्थात् , *"तो क्या ये अपने ऊपर के आकाश को नहीं देखते — हम*

ने इसे कैसे बनाया ,और इसे कैसे सजया ,और इस (की रचना) में कोई त्रुटि नहीं। और रही धरती — हम ने इसे फैलाया और उस में पहाड़ रख दिये, और हम ने इस में हर जाति की सुन्दर वस्तुएं उत्पन्न कीं — (इस में) हर उस बन्दे के लिये दर्शन और चिन्तन की सामग्री है जो अल्लाह की ओर प्रवृत्त रहता है। और हम ने बादलों से बरकतवाला पानी बरसाया ,फिर हम ने उस के द्वारा बाग़ उगाये ,और अनाज जो काटा जाता है ,और खजूर के ऊँचे ऊँचे वृक्ष जिन का गाभा तह पर तह होता है — बन्दों के लिये भोजन–सामग्री ,और हम इस जल द्वारा मुर्दा धरती को ज़िन्दा करते हैं — इसी प्रकार (आध्यात्मिक मुर्दे) निकल पड़ें गे।"

مَّا لَكُمْ لَا تَرْجُونَ لِلَّهِ وَقَارًا ﴿١٣﴾ وَقَدْ خَلَقَكُمْ أَطْوَارًا ﴿١٤﴾ أَلَمْ تَرَوْا
كَيْفَ خَلَقَ ٱللَّهُ سَبْعَ سَمَٰوَٰتٍ طِبَاقًا ﴿١٥﴾ وَجَعَلَ ٱلْقَمَرَ فِيهِنَّ نُورًا
وَجَعَلَ ٱلشَّمْسَ سِرَاجًا ﴿١٦﴾ وَٱللَّهُ أَنۢبَتَكُم مِّنَ ٱلْأَرْضِ نَبَاتًا ﴿١٧﴾ ثُمَّ
يُعِيدُكُمْ فِيهَا وَيُخْرِجُكُمْ إِخْرَاجًا ﴿١٨﴾ وَٱللَّهُ جَعَلَ لَكُمُ ٱلْأَرْضَ بِسَاطًا
﴿١٩﴾ لِّتَسْلُكُوا۟ مِنْهَا سُبُلًا فِجَاجًا ﴿٢٠﴾

मालकुम् लातर्जून ल्लिाहि वक़ारा , व क़द् ख़लक़कुम अत्वारा अलम् तरव् कैफ़ ख़लक़ल्लाहु सब्अ समावाति तिबाक़ा , व जअलल्–क़मर फ़ीहिन्न नूरंव व जअलश्शम्स सिराजा , वल्लाहु अंबतकुम मिनल्–अर्ज़ि नबाता सुम्म युईदुकुम् फ़ीहा व युख़्–रिजुकुम् इख़राजा वल्लाहु जअल लकुमुल्–अर्ज़ बिसाता लितस्लुकू मिन्हा सुबुलन फ़िजाजा (71 : 13–20) ,

अर्थात् ,"तुम्हें क्या हुआ कि तुम अल्लाह से सम्मान की आशा नहीं रखते ? जबकि उस ने तुम्हें विभिन्न चरणों के अन्तर्गत पैदा किया है। क्या तुम नहीं देखते कि अल्लाह ने किस तरह सात आसमानों को समान बनाया और चांद को उनके बीच प्रकाश बनाया और सूरज को प्रदीप। और अल्लाह ने तुम्हें धरती से वनस्पति की भांति उगाया ,फिर वह तुम्हें पुनः इसी में लौटा देगा ,और तुम्हें (एक नवीन सृष्टि के रूप में) निकाल खड़ा करेगा। और उस ने तुम्हारे लिये धरती को सुविशल

बनाया ताकि तुम इसके खुले रास्तों में चलो।"

ٱلَّذِى خَلَقَ ٱلْمَوْتَ وَٱلْحَيَوٰةَ لِيَبْلُوَكُمْ أَيُّكُمْ أَحْسَنُ عَمَلًا ۚ وَهُوَ ٱلْعَزِيزُ ٱلْغَفُورُ ﴿٢﴾ ٱلَّذِى خَلَقَ سَبْعَ سَمَـٰوَٰتٍ طِبَاقًا ۖ مَّا تَرَىٰ فِى خَلْقِ ٱلرَّحْمَـٰنِ مِن تَفَـٰوُتٍ ۖ فَٱرْجِعِ ٱلْبَصَرَ هَلْ تَرَىٰ مِن فُطُورٍ ﴿٣﴾ ثُمَّ ٱرْجِعِ ٱلْبَصَرَ كَرَّتَيْنِ يَنقَلِبْ إِلَيْكَ ٱلْبَصَرُ خَاسِئًا وَهُوَ حَسِيرٌ ﴿٤﴾

अल्लज़ी ख़लक़ल्–मौत वल्–हयात लियब्लुवकुम् अय्युकुम् अह्सनु अमला , व हुवल्–अज़ीज़ुल्–ग़फ़ूरुल्–लज़ी ख़लक़ सब्अ समावातिन तिबाक़ा , मा तरा फ़ी ख़लक़िर्रहमानि मिन् तफ़ावुतिन, फ़र्जिअिल्–बसर हल् तरा मिन् फ़ुतूरिन , सुम्मर्जिअिल्बसर कर्रतैनि यन्क़लिब् इलैकल्– बस़रु ख़ासिअंव् व हुव हसीरुन

(67 : 2–4)

अर्थात् ," *उस ने मौत और ज़िन्दगी को पैदा किया ताकि वह तुम्हारी परीक्षा ले — कि तुम में से कौन अच्छे कर्म करता है। और वह प्रभुवत्वशाली ,क्षमाशील है जिस ने सात आसमान समान बनाये। तू "**रहमान**" की रचना में कोई विसंगति नहीं देखेगा। पुनः निगाह को लौटा — क्या तू कोई अव्यवस्था देखता है ? पुनः दृष्टि को बार बार घुमा ,निगाह तेरी ओर आश्चर्य से चकित वापस लौट आये गी ,और वह थकी हुई होगी।"*

इस तरह मनुष्य का ध्यान उस मौलिक तथ्य की ओर आकर्षित कराया कि आकाशों और धरती की इस विशाल संरचना में कैसे एकमात्र रचयिता का हाथ साफ कार्यरत दिखाई पड़ता है — वह इस तरह कि सारा ब्रह्मांड एक ही नियम के अधीन काम कर रहा है। इस नियम के निष्पादन में न तो कोई त्रुटि दृष्टिगत होती है और न कोई बिगाड़। अन्यत्र फ़रमाया है :

إِنَّ فِى خَلْقِ ٱلسَّمَـٰوَٰتِ وَٱلْأَرْضِ وَٱخْتِلَـٰفِ ٱلَّيْلِ وَٱلنَّهَارِ وَٱلْفُلْكِ ٱلَّتِى تَجْرِى فِى ٱلْبَحْرِ بِمَا يَنفَعُ ٱلنَّاسَ وَمَآ أَنزَلَ ٱللَّهُ مِنَ ٱلسَّمَآءِ مِن مَّآءٍ فَأَحْيَا بِهِ ٱلْأَرْضَ بَعْدَ مَوْتِهَا وَبَثَّ فِيهَا مِن كُلِّ دَآبَّةٍ وَتَصْرِيفِ ٱلرِّيَـٰحِ

وَٱلسَّحَابِ ٱلْمُسَخَّرِ بَيْنَ ٱلسَّمَآءِ وَٱلْأَرْضِ لَءَايَٰتٍ لِّقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿١٦٤﴾

इन्न फ़ी ख़ल्क़िस्समावाति वल्–अर्ज़ि वख़्तिलाफ़िल्– लैलि वन्नहारि वल्–फ़ुल्किल्लती तज्री फ़िल्–बहरि बिमा यन्फ़अुन्नास व मा अन्ज़लल्–लाहु मिनस्समाअि मिन् माअिन् फ़अह्याबिहिल्–अर्ज़ बअद मौतिहा व बस्स फ़ीहा मिन् कुल्लि दाब्बतिंव व तस्रीफ़िर्रीयाहि वस्सहाबिल्–मुसख़्ख़रि बैनस्–समाअि वल्–अर्ज़ि लआयातिल्–लिक़ौमिन यअक़िलून (2 : 164) ,

अर्थात् , *"आकाशों और धरती की रचना में , और रात–दिन के फेरबदल में ,और जहाज़ों में जो समुद्र में मनुष्यों के लाभ हेतु चलते हैं , और उस पानी में जो अल्लाह बादलों से बरसाता है , फिर उसके द्वारा धरती को उसके मरणोपरांत जीवित करता है ,और उस में हर प्रकार के जीव–जन्तु फैलाता है , और हवाओं के परिवर्तन में और बादलों में जो आकाश और धरती के मध्य अनुसेवी बनाये गए हैं — उन लोगों के लिये (प्रभु के) विश्वस्त निशान हैं जो बुद्धि से काम लेते हैं।"*

परमात्मा की सत्ता पर
मानव–प्रकृति की गवाही

कुर्आन शरीफ के अध्ययन से ज्ञात होता है कि कुदरत के समस्त दृश्यों और नज़ारों में परमात्मा का अस्तित्व साफ झलकता नज़र आता है। यह जो कुछ दिन रात हमारी आँखों के सामने घटता रहता है उसकी एक एक घटना इस बात की साक्षी है कि इस ब्रह्मांड का कोई रचयिता अवश्य है। उसी का सत्ताधिकार विश्व की सारी रचनाओं पर छाया हुआ है। परमात्मा की सत्ता के विषय में प्रस्तुत किये जाने वाले अन्य प्रमाणन वे हैं जिन का सीधा संबंध इन्सान की प्रकृति से है। आशय यह कि स्वयं मनुष्य की अपनी विशुद्ध प्रकृति पुकार पुकार कर कह रही है कि उस का कोई रचयिता है : أَمْ خُلِقُوا مِنْ غَيْرِ شَيْءٍ أَمْ هُمُ ٱلْخَٰلِقُونَ ﴿٣٥﴾

अम् ख़ुलिक़ू मिन् ग़ैरि शैअिन अम् हुमुल्–ख़ालिक़ून

अर्थात् ," *क्या ये बिना किसी के पैदा किये ही पैदा हो गए हैं ? या स्वयं ही (अपने आप को) पैदा करने वाले हैं* (52 : 35) ?"

أَمْ خَلَقُوا السَّمَٰوَاتِ وَالْأَرْضَ بَل لَّا يُوقِنُونَ

अम् ख़लक़ुस्समावाति वल्–अर्ज़ बल् ला यूक़िनून (52 : 36),
अर्थात् ," *क्या इन्हों ने ही आकाशों और धरती को पैदा किया है ? बल्कि इन को किसी भी बात का निश्चित ज्ञान नहीं।"*

وَإِذْ أَخَذَ رَبُّكَ مِن بَنِي آدَمَ مِن ظُهُورِهِمْ ذُرِّيَّتَهُمْ وَأَشْهَدَهُمْ عَلَىٰ أَنفُسِهِمْ أَلَسْتُ بِرَبِّكُمْ قَالُوا بَلَىٰ شَهِدْنَا

व इज़् अख़ज़ रब्बुक मिम् बनी आदम मिन् ज़ुहूरिहिम् ज़ुर्रिय्यतहुम् व अश्हदहुम् अला अन्फ़ुसिहिम् अलस्तु बिरब्बिकुम् क़ालू बला शहिद्ना (7 : 172) ,
अर्थात् ,*"और जब तेरे पालनहार–स्रष्टा ने आदम की सन्तान से , उनकी पीठों से उन की सन्तान निकाली ,और उनको अपने आप पर साक्षी ठहराया (और पूछा) : क्या मैं तुम्हारा पालनहार–स्रष्टा नहीं ? उन्हों ने कहा हाँ ! हम साक्षी हैं।"*

यों तो अल्लाह के अस्तित्व का एहसास इन्सान की प्रकृति में मौजूद है ,लेकिन क़ुर्आन शरीफ ने इसी भाव को एक और रूप में अभिव्यकत किया है वह यह कि परमात्मा इन्सान के इतना समीप है कि जिस की इन्सान कल्पना भी नहीं कर सकता :

وَنَحْنُ أَقْرَبُ إِلَيْهِ مِنْ حَبْلِ الْوَرِيدِ

व नहनु अक़्रबु इलैहि मिन् हब्लिल्वरीदि (50 : 16) ,
अर्थात् ,*"हम मनुष्य के उसकी जीवन–शिरा से भी अधिक समीप हैं।"*

وَنَحْنُ أَقْرَبُ إِلَيْهِ مِنكُمْ وَلَٰكِن لَّا تُبْصِرُونَ ﴿٨٥﴾

व नहनु अक़्रबु इलैहि मिन्कुम व लाकिंल्ला तुब्सिरून ,
अर्थात् ,*"और हम तुम्हारी अपेक्षा उसके (यानि तुम्हारी जान के) निकटतम होते हैं , पर तुम नहीं देखते।"* (56 : 85)

ईमान का प्रार्थना द्वारा व्यवहार में परिवर्तन

इस प्रकार के वाक्यों का अर्थ यही है कि मनुष्य के भीतर परमात्मा के अस्तित्व का एहसास उसके अपने अस्तित्व के एहसास से भी कहीं ज़्यादा प्रखर है। किन्तु मनुष्य के भीतरीय प्रकाश के अनुसार यह एहसास न्युनाधिक होता है। कुछ इन्सानों में यह एहसास बडा तीव्र होता है ,कुछ में कम ,आरै कुछ में बहुत की धुंदला। इस तरह परमात्मा को इन्सान की ज़िन्दगी का केन्द्रीय बिन्दू ठहराया गया। इस दृष्टिकोण के फलस्वरूप इन्सान को बाह्य जगत् में भी परमात्मा का अस्तित्व नज़र आने लगता है और अपने भीतर भी। इस लिये वह बार बार मदद और मार्गदर्शन के लिये परमात्मा की ओर झुकता है। ऐसा करने से ***ईमान*** एक वैचारिक वस्तु मात्र नहीं रहता। बल्कि प्रभु के आगे बार बार गिरने से ,उस से सहायता और मार्गदर्शन माँगने से इन्सान का ***ईमान*** व्यवहारिक रूप धारण कर लेता है। मनुष्य दिन में पांच बार अल्लाह के आगे गिरता है और हर बार उसके दिल की गहराइयों से यह भावयुक्त आवाज़ निकलती है :

ٱلْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ ٱلْعَٰلَمِينَ ﴿٢﴾ ٱلرَّحْمَٰنِ
ٱلرَّحِيمِ ﴿٣﴾ مَٰلِكِ يَوْمِ ٱلدِّينِ ﴿٤﴾ إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ ﴿٥﴾ ٱهْدِنَا
ٱلصِّرَٰطَ ٱلْمُسْتَقِيمَ ﴿٦﴾ صِرَٰطَ ٱلَّذِينَ أَنْعَمْتَ عَلَيْهِمْ غَيْرِ ٱلْمَغْضُوبِ
عَلَيْهِمْ وَلَا ٱلضَّآلِّينَ ﴿٧﴾

अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल्–आलमीन अर्रहमानिर्रहीमि मालिकि यौमिद्दीनि इय्याक नअबुदु व इय्यक नस्तअीनु इह्दिनस्सिरातल्–मुस्तकीम सिरातल्–लज़ीन अन्अम्त अलैहिम ग़ैरिल्मग्ज़ूबि अलैहिम व लज़्ज़ाल्लीन (1 : 1–7) ,

अर्थात् ,*"सब प्रशंसा अल्लाह के लिये है ,जो समस्त लोकलोकांतरों का पालनहार–स्रष्टा है ,अपार दयालु ,सतत् कृपालु , प्रतिफल के दिन का मालिक। हम तेरी ही उपासना करते हैं ,और तुझी से सहायता माँगते हैं। हम को सीधे मार्ग पर चला ,उन लोगों के मार्ग पर जिन को तू ने (वरदानों से) पुरस्कृत किया ,न उनके (मार्ग पर) जिन पर प्रकोप*

उतरा ,और न पथभ्रष्टों के।"

इन्सान के अन्दर जो तड़प है वह प्रार्थना के रूप में अभिव्यक्त होती है। परन्तु यह तड़प उस वक्त ज़्यादा हो जाती है जब इन्सान अपने आप को मुसीबतों और संकटों में घिरा हुआ पाता है ,और उस वक्त कम होती है जब मनुष्य को सुख के साधन प्रचूर मात्रा में उपलब्ध होते हैं :

وَإِذَا مَسَّ ٱلْإِنسَـٰنَ ضُرٌّ دَعَا رَبَّهُۥ مُنِيبًا إِلَيْهِ ثُمَّ إِذَا خَوَّلَهُۥ نِعْمَةً مِّنْهُ

نَسِىَ مَا كَانَ يَدْعُوٓا۟ إِلَيْهِ مِن قَبْلُ

व इज़ा मस्सल्–इन्सान जुर्रुन दआ रब्बहू मुनीबन इलैहि सुम्मा इज़ा ख़व्वलहू निअ्मतंम्–मिन्हु नसिय मा कान यद्अू इलैहि मिन् क़ब्लु (39 : 8) ,

अर्थात् ,*"और जब मनुष्य को कष्ट पहुंचता है ,वह अपने रब को पुकारता है — पूर्णतया प्रवृत होकर। फिर जब वह उसे अपनी ओर से वरदान प्रदान करता तो वह उस बात को भूल जाता है जिस के लिये (अल्लाह को) पहले पुकारता था।"*

فَإِذَا مَسَّ ٱلْإِنسَـٰنَ ضُرٌّ دَعَانَا ثُمَّ إِذَا خَوَّلْنَـٰهُ نِعْمَةً مِّنَّا قَالَ إِنَّمَآ أُوتِيتُهُۥ

عَلَىٰ عِلْمٍۭ

व इज़ा मस्सल्–इन्सान जुर्रुन दआना सुम्म इज़ा ख़व्वल्नाहु निअ्मलम्–मिन्ना काल इन्नमा ऊतीतुहू अला अिल्म् *(39 : 49)*

अर्थात् ,"सो जब मनुष्य को कष्ट पहुंचता है ,वह हमें पुकारता है ,फिर जब हम उसे अपनी ओर से अनुग्रहित करते हैं ,तो कहता है : यह मुझे अपने ज्ञान द्वारा प्राप्त हुआ।"

وَإِذَا مَسَّ ٱلْإِنسَـٰنَ ٱلضُّرُّ دَعَانَا لِجَنۢبِهِۦٓ أَوْ قَاعِدًا أَوْ قَآئِمًا فَلَمَّا كَشَفْنَا عَنْهُ

ضُرَّهُۥ مَرَّ كَأَن لَّمْ يَدْعُنَآ إِلَىٰ ضُرٍّ مَّسَّهُۥ

व इज़ा मस्सल्–इन्सानज्–जुर्रु दआना लिजंम्बिही अव क़ाअिदन अव क़ाअिमन फ़लम्मा कशफ़्ना अन्हु जुर्रहू मर्र कअन् लम् यद्अुना इला जुर्रिम्–मस्सहू (10 : 12) ,

अर्थात् ,"और जब मनुष्य को कष्ट पहुंचता है ,वह हमें पुकारता है —

लेटे–लेटे या बैठे–बैठे या खड़े–खड़े ,और जब हम उसका कष्ट दूर कर देते हैं तो वह ऐसे गुज़र जाता है कि मानो उस ने हमें किसी कष्ट के कारण —जो उसे पहुंचा हो —पुकारा ही न था।"

परमात्मा प्रार्थना सुनता है

इन्सान को केवल इतनी ही शिक्षा नहीं दी गई थी कि वह दुख और सुख दोनों दशाओं में परमात्मा को पुकारे और हर हाल में उस से मदद और मार्गदर्शन की याचना करे ,बल्कि उसे यह भी बताया गया कि परमात्मा उस की दुआओं को सुनता है :

وَقَالَ رَبُّكُمُ ٱدْعُونِىٓ أَسْتَجِبْ لَكُمْ

व क़ाल रब्बुकुमुद्‌अूनी अस्‌तजिब्‌ लकुम्‌ (40 : 60) ,
अर्थात्‌ ,*"और तुम्हारा रब कहता है : तुम मुझे पुकारो मैं तुम्हारी बात स्वीकार करऊँ गा।"*

أَمَّن يُجِيبُ ٱلْمُضْطَرَّ إِذَا دَعَاهُ وَيَكْشِفُ ٱلسُّوٓءَ وَيَجْعَلُكُمْ خُلَفَآءَ ٱلْأَرْضِ

अम्मंय्‌–युजीबुल्‌–मुज़्तर्र इज़ा दआहु व यक्शिफ़ुस्‌–सूअ व यज्‌अलुकुम्‌ ख़ुलफ़ाअल्‌–अर्ज़ि (27 : 62) ,
अर्थात्‌ ,*"भला कौन व्याकुल की प्रार्थना सुनता है जब वह उसे पुकारता है ,और कष्ट को दूर कर देता है , और तुम्हें धरती का अधिकारी बनाता है।"*

إِنَّ رَبِّى لَسَمِيعُ ٱلدُّعَآءِ ﴿٣٩﴾

अन्न रब्बी लसमीअुद्दुआअि (14 : 39) ,
अर्थात्‌ ,"निस्संदेह मेरा रब प्रार्थना सुनने वाला है।"

وَإِذَا سَأَلَكَ عِبَادِى عَنِّى فَإِنِّى قَرِيبٌ ۖ أُجِيبُ دَعْوَةَ ٱلدَّاعِ إِذَا دَعَانِ ۖ

فَلْيَسْتَجِيبُوا۟ لِى وَلْيُؤْمِنُوا۟ بِى لَعَلَّهُمْ يَرْشُدُونَ ﴿١٨٦﴾

व इज़ा सालक अिबादी अन्नी फ़इन्नी क़रीबुन , उजीबु दअ्‌वतद्‌–दाअि इज़ा दआनि फ़ल्‌यस्‌तजीबू ली वल्‌–युअ्‌मिनू बी लअल्लहुम्‌ यर्शुदून , (2 : 186) ,

अर्थात् ," *और जब मेरे बन्दे तुझ से मेरे बारे में पूछें तो कह कि मैं निकट ही हूँ। मैं प्रार्थना करने वाले की प्रार्थना को ,जब वह मुझे पुकारता है ,स्वीकार करता हूँ। सो चाहिये कि वे भी मेरे आज्ञाकारी बनें और मुझ पर ईमान लायें ताकि वे सही मार्ग पाएं।*"

परमात्मा पर भरोसा रखने की शिक्षा

इस के साथ ही इन्सान को यह भी सिखलाया गया कि वह हर हाल में परमात्मा पर भरोसा रखे ,दुखों और तकलीफ़ों में भी परमात्मा को अपना आसरा समझे और हिम्मत न हारे :

وَمَا تَوْفِيقِيٓ إِلَّا بِٱللَّهِۚ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْهِ أُنِيبُ ﴿٨٨﴾

व मा तौफ़ीक़ी इल्ला बिल्लाहि अलैहि तवक्कल्तु व इलैहि उनीबु (11 : 88)

अर्थात् ," *और मुझे सुअवसर अल्लाह की सहायता से ही प्राप्त होता है, उसी पर मेरा भरोसा है ,और मैं उसी की ओर प्रवृत्त होता हूँ।*"

قُلْ هُوَ رَبِّى لَآ إِلَٰهَ إِلَّا هُوَ عَلَيْهِ تَوَكَّلْتُ وَإِلَيْهِ مَتَابِ

क़ुल हुव रब्बी ला इलाह इल्ला हुव अलैहि तवक्कल्तु व इलैहि मताबि (13 : 30) ,

अर्थात् ," *कह : वही मेरा पालनहार–स्रष्टा है ,उस के सिवा और कोई ईश्वर नहीं ,उसी पर मेरा भरोसा है ,और उसी की ओर मेरी वापसी है।*"

وَمَا لَنَآ أَلَّا نَتَوَكَّلَ عَلَى ٱللَّهِ وَقَدْ هَدَىٰنَا سُبُلَنَاۚ وَلَنَصْبِرَنَّ عَلَىٰ
مَآ ءَاذَيْتُمُونَاۚ وَعَلَى ٱللَّهِ فَلْيَتَوَكَّلِ ٱلْمُتَوَكِّلُونَ ﴿١٢﴾

व मा लना अल्ला नतवक्कल अलल्लाहि व क़द् हदाना सुबुलना व लनस्बिरन्न अला मा आज़ैतुमूना व अलल्लाहि फ़ल्यतवक्कलिल्–मुतवक्किलून (14 : 12) ,

अर्थात् ," *भला हम क्यों न अल्लाह पर भरोसा करें ? जबकि वही हमें हमारे (सफलता के) मार्गों पर चलाता है। और हम अवश्य उन*

(अत्याचारों) को धैर्यपूर्वक सह जाएं गे जो तुम हम पर ढा रहे हो। और चाहिये कि भरोसा करने वाले अल्लाह पर ही भरोसा करें।"

وَتَوَكَّلْ عَلَى ٱلْحَيِّ ٱلَّذِى لَا يَمُوتُ وَسَبِّحْ بِحَمْدِهِۦ

وَكَفَىٰ بِهِۦ بِذُنُوبِ عِبَادِهِۦ خَبِيرًا ﴿٥٨﴾

व तवक्कल् अलल्–हैयिल्–लज़ी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही व कफ़ा बिही बिज़ुनूबि अिबादिही ख़बीरा (25 : 58) ,

अर्थात् ," *और जीवन्त परमात्मा पर भरोसा रख जो मरता नहीं ,और उसकी प्रशंसा के गीत गा ,और वह अपने बन्दों की त्रुटियों ,उनके अपराधों से पूर्णतया अवगत है।"*

وَمَن يَتَوَكَّلْ عَلَى ٱللَّهِ فَهُوَ

حَسْبُهُۥٓ إِنَّ ٱللَّهَ بَٰلِغُ أَمْرِهِۦ ۚ قَدْ جَعَلَ ٱللَّهُ لِكُلِّ شَىْءٍ قَدْرًا ﴿٣﴾

व मंय्यतवक्कल् अलल्लाहि फ़हुवा हस्बुहू इन्नल्लाह बालिग़ु अम्रिही क़द् जअलल्लाहु लिकुल्लि शैअिन क़द्रा (65 : 3) ,

अर्थात् ," और जो अल्लाह पर भरोसा रखता है तो वह उसके लिये काफी है। अल्लाह अपने प्रयोजन को पूरा करके रहता है। अल्लाह ने प्रत्येक वस्तु के लिये एक अन्दाज़ा निश्चित कर रखा है।"

प्रभु–शरण माँगने की शिक्षा

मनुष्य को यह शिक्षा भी दी गई कि जब कभी उसे मुसीबत पेश आए या ग़लत रस्ते पर पड़ जाने का भय हो ,तो वह तत्काल परमात्मा की शरण में आने की कोशिश करे :

قُلْ أَعُوذُ بِرَبِّ ٱلنَّاسِ ﴿١﴾ مَلِكِ ٱلنَّاسِ ﴿٢﴾ إِلَٰهِ ٱلنَّاسِ ﴿٣﴾

कुल अऊज़ु बिरब्बिन्–नासि मलिकिन्नासि इलाहिन्नासि ,

अर्थात् ," *कह : मैं मानवजाति के पालनहार–स्रष्टा की शरण माँगता हूँ , मानवजाति के वास्तविक सम्राट की , मानवजाति के एकमात्र परमात्मा की।"* *(114 : 1–3)*

وَقُل رَّبِّ أَعُوذُ بِكَ مِنْ هَمَزَٰتِ ٱلشَّيَـٰطِينِ ﴿٩٧﴾

وَأَعُوذُ بِكَ رَبِّ أَن يَحْضُرُونِ ﴿٩٨﴾

व कुल रब्बि अऊज़ु बिक मिन् हमज़ातिश्–शयातीन व अऊज़ु बिक रब्बि अंय्–यह्ज़ुरून (23 : 97–98) ,

अर्थात् ,*" और कह : मेरे पालनहार–स्रष्टा ! मैं शैतानों की दुष्प्रेरणाओं से तरी शरण माँगता हूँ। और मेरे पालनहार–स्रष्टा ! मैं तेरी शरण माँगता हूँ कि वे मेरे सामने आयें।"*

وَإِمَّا يَنزَغَنَّكَ مِنَ ٱلشَّيْطَـٰنِ نَزْغٌ فَٱسْتَعِذْ بِٱللَّهِ ۚ إِنَّهُۥ سَمِيعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٠٠﴾

व इम्मा यन्ज़ग़न्नक मिनश्–शैतानि नज़्गुन फस्तअिज़् बिल्लाहि इन्नहू समीअुन अलीमुन (7 : 200) ,

अर्थात् ,*" और यदि शैतान का लांछन तुझे कष्ट दे ,तो अल्लाह की शरण माँग ,क्योंकि वह सुनने वाला ,जानने वाला है।"*

और यह शिक्षा भी दी गई कि मनुष्य को मन की वास्तविक शांति केवल प्रभु–स्मरण द्वारा ही प्राप्त होती है :

ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ وَتَطْمَئِنُّ قُلُوبُهُم بِذِكْرِ ٱللَّهِ ۗ أَلَا بِذِكْرِ ٱللَّهِ تَطْمَئِنُّ ٱلْقُلُوبُ ﴿٢٨﴾

अल्लज़ीन आमनू व तत्मअिन्नु कुलूबुहुम बिज़िक्रिल्–लाहि अला बिज़िक्रिल्–लाहि तत्मअिन्नुल्–कुलूबु (13 : 28) ,

अर्थात् ,*" जो ईमान लाते हैं और जिन के हृदय अल्लाह के स्मरण द्वारा संतोष प्राप्त करते हैं। सनो ! अल्लाह के स्मरण से ही दिलों को शांति प्राप्त होती है।"*

अल्लाह इन्सान का मित्र है

परमात्मा स्रष्टा भी है ,शासक और विश्व–संचालक भी है ,लेकिन वह इन्सान का मित्र भी है :

وَإِنَّ ٱلظَّـٰلِمِينَ بَعْضُهُمْ أَوْلِيَآءُ بَعْضٍ ۖ وَٱللَّهُ وَلِىُّ ٱلْمُتَّقِينَ

व इन्नज़्-ज़ालिमीन बअज़ुहुम् अव्लियाउ बअज़िन वल्लाहु वयिुल्-मुत्तक़ीन (45 : 19) ,

अर्थात् ," *ज़ालिम एक दूसरे के मित्र हैं और अल्लाह कर्तव्यनिष्ठों का मित्र है।"*

أَمِ ٱتَّخَذُوا۟ مِن دُونِهِۦٓ أَوْلِيَآءَ ۖ فَٱللَّهُ هُوَ ٱلْوَلِىُّ وَهُوَ يُحْىِ ٱلْمَوْتَىٰ وَهُوَ عَلَىٰ كُلِّ شَىْءٍ قَدِيرٌ ۝٩

अमित्तख़ज़ू मिन्दूनिही अव्लियाअ फ़ल्लाहु हुवल्-वलीयु व हुव युह्यिल्-मव्ता व हुव अला कुल्लि शैअिन क़दीर (42 : 9),

अर्थात् ," *क्या उन्हों ने अल्लाह को छोड़ अन्य मित्र और सहायक बना लिये हैं ? परन्तु अल्लाह ही सच्चा मित्र और सहायक है , और वही मुरदों को जिन्दा करता है , और उसे हर वस्तु पर सत्ताधिकार प्राप्त है।"*

ٱللَّهُ وَلِىُّ ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ يُخْرِجُهُم مِّنَ ٱلظُّلُمَٰتِ إِلَى ٱلنُّورِ ۖ

अल्लाहु वलीयुल्-लज़ीन आमनू युख़्रिजुहुम मिनज़्-ज़ुलुमाति इलन्-नूरि (2 : 257) ,

अर्थात् ," *अल्लाह उन लोगों का मित्र है जो ईमान लाते हैं , और वह उन्हें अँधेरों से निकाल प्रकाश में लाता है।"*

وَكَفَىٰ بِٱللَّهِ وَلِيًّا وَكَفَىٰ بِٱللَّهِ نَصِيرًا

व कफ़ा बिल्लाहि वलीयंव व कफ़ा बिल्लाहि नसीरा (4 : 45)

अर्थात् ," और मित्र के रूप में भी अल्लाह ही काफ़ी है , और सहायक के रूप में भी अल्लाह ही काफ़ी है।"

अल्लाह की दयालुता अपरंपार है

यह भी बता दिया गया कि अल्लाह की दयालुता और उसका अनुग्रह का दायरा इन्सान की कल्पना से परे है। वह ईमान वालों पर भी दयादृष्टि करता है और काफिरों पर भी। वह नेकों पर भी कृपा करता है और पापियों पर भी :

❁ قُلْ يَـٰعِبَادِىَ ٱلَّذِينَ أَسْرَفُوا۟ عَلَىٰٓ أَنفُسِهِمْ لَا تَقْنَطُوا۟ مِن رَّحْمَةِ ٱللَّهِ ۚ
إِنَّ ٱللَّهَ يَغْفِرُ ٱلذُّنُوبَ جَمِيعًا ۚ إِنَّهُۥ هُوَ ٱلْغَفُورُ ٱلرَّحِيمُ ﴿٥٣﴾

कुल याअिबादियल्-लज़ीन अस्रफ़ू अला अन्फ़ुसिहिम् ला तक़्नतू मिंर्-रह्मतिल्लाहि इन्नल्लाह यग़्फ़िरुज़्-ज़ुनूब जमीअन इन्नहू हुवल्-ग़फ़ूरुर्रहीमु (39 : 53) ,

अर्थात् ,*" कह : मेरे बन्दो ! जिन्हों ने अपने प्राणों पर अत्याचार किया है —अल्लाह की दयालुता से निराश न हो ,क्योंकि अल्लाह सभी पाप क्षमा कर देता है। हाँ ! वह अत्यन्त क्षमाशील ,सतत् कृपालु है।"*

رَبَّنَا وَسِعْتَ كُلَّ شَىْءٍ رَّحْمَةً وَعِلْمًا

रब्बना वसिअ्त कुल्ल शैअिंर् रह्मतंव्-व अिल्मा (40 : 7) ,

अर्थात् ,*" हमारे पालनहार–स्रष्टा ! तेरी दयालुता और तेरा ज्ञान प्रत्येक वस्तु को घेरे हुए है।"*

قُلْ بِفَضْلِ ٱللَّهِ وَبِرَحْمَتِهِۦ فَبِذَٰلِكَ فَلْيَفْرَحُوا۟

कुल् बिफ़ज़्लिल्-लाहि व बिरह्मतिही फ़बिज़ालिक फ़ल्यफ़रहू

अर्थात् ,*" कह : अल्लाह के अनुग्रह और उसकी दयालुता पर —हाँ! चाहिये कि उसी पर खुश हों। " (10 : 58)*

إِلَّا مَن رَّحِمَ رَبُّكَ ۚ وَلِذَٰلِكَ خَلَقَهُمْ ۗ

इल्ला मंर्रहिम रब्बुक व लिज़ालिक ख़लक़हुम् (11 : 119) ,

अर्थात् ,*" सिवाय उनके जिन पर तेरे पालनहार–स्रष्टा की कृपादृष्टि हो और कृपादृष्टि के लिये ही उस ने उन्हें पैदा किया।"*

وَلَا تَا۟يْـَٔسُوا۟ مِن رَّوْحِ ٱللَّهِ ۖ إِنَّهُۥ لَا يَا۟يْـَٔسُ مِن رَّوْحِ ٱللَّهِ إِلَّا ٱلْقَوْمُ ٱلْكَـٰفِرُونَ

व ला तय्असु मिर्र–रवहिल्लाहि इन्नाहू ला यय्असु मिर्रवहिल्लाहि इल्लल्–क़ौमुल्–काफ़िरून (12 : 7),

अर्थात् ,*" और अल्लाह की दयालुता से निराश न हो , क्योंकि अल्लाह की दयालुता से सिवाय काफ़िरों के और कोई निराश नहीं होता।"*

كَتَبَ رَبُّكُمْ عَلَىٰ نَفْسِهِ ٱلرَّحْمَةَ

कतब रब्बुकुम् अला नफ़्सिहिर्-रह्मत (6 : 54) ,
अर्थात् ,*"तुम्हारे पालहार-स्रष्टा ने दयालुता को अपने ऊपर अनिवार्य कर लिया है।"*

فَإِن كَذَّبُوكَ فَقُل رَّبُّكُمْ ذُو رَحْمَةٍ وَٰسِعَةٍ

फ़इन् कज़्ज़बूक फ़कुल् रब्बुकुम् ज़ूरह्मतिंव्-वासिअतिन
(6 : 147),
अर्थात् ,*" यदि वे तुझे झुठलाएं तो कह दे : तुम्हारा पालनहार-स्रष्टा सर्वव्यापक ,दयालुता का स्वामी है।"*

وَرَحْمَتِى وَسِعَتْ كُلَّ شَىْءٍ

रह्मती वसिअत् कुल्ल शैअिन (7 : 156) ,
अर्थात् ,*" मेरी दयालुता ने हर चीज़ को घेर रखा है।"*

وَإِن تَعُدُّوا۟ نِعْمَتَ ٱللَّهِ لَا تُحْصُوهَآ

व इन् तअुद्दू निअमतल्-लाहि ला तुह्सूहा (14 : 34) ,
अर्थात् ,*" यदि तुम अल्लाह के उपकारों को गिनना चाहो तो उन्हें गिन न सको।"*

وَإِنَّ رَبَّكَ لَذُو فَضْلٍ عَلَى ٱلنَّاسِ وَلَٰكِنَّ أَكْثَرَهُمْ لَا يَشْكُرُونَ ﴿٧٣﴾

व इन्न रब्बक लज़ूफ़ज़्लिन् अलन्नासि व लाकिंन अक्सरहुम् ला यश्कुरून (27 : 73) ,
अर्थात् ,*" और तेरा रब लोगों पर अनुग्रह प्रदर्शित करता ही चला जाता है ,किन्तु अधिकतर लोग धन्यवाद प्रकट नहीं करते।"*

परामत्मा का प्रेमभाव

सब से पहली *वह्य* जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.पर उतरी ,उसमें यही बताया गया था कि अल्लाह ने इन्सान को प्रेमवश पैदा किया :

اقْرَأْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِي خَلَقَ ۝١ خَلَقَ الْإِنسَانَ مِنْ عَلَقٍ ۝٢ اقْرَأْ وَرَبُّكَ الْأَكْرَمُ ۝٣

इक़्रा बिस्मि रब्बिकल्–लज़ी ख़ालक़ ख़ालक़ल्–इन्सान मिन अलकिन इक़्रा व रब्बुकल्–अक्रमु (96 : 1–3) .

अर्थात्, " अपने पालनहार–स्रष्टा के नाम से पढ़ जिसने पैदा किया — इन्सान को प्रेम के कारण पैदा किया। पढ़ और तेरा पालनहार–स्रष्टा अत्यन्त अनुग्रशील है। "

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.का एक कथन है ,कि अल्लाह फ़रमाता है :

" मेरे प्रेमभाव ने यही चाहा कि मैं पहचाना जाऊँ सो मैं ने इन्सान की रचना की।"

अल्लाह के नामों में एक नाम وَدُوْد " **वदूद** " है , जिस का अर्थ है *" प्रेम करने वाला "* ।

إِنَّهُۥ هُوَ يُبْدِئُ وَيُعِيدُ ۝١٣ وَهُوَ الْغَفُورُ الْوَدُودُ ۝١٤

इन्नहू हुव युब्दिउ व युईदु व हुवल्–ग़फ़ूरुल्–वदूद

अर्थात् ,*"वही पहली बार सृष्टि रचता है , और (फिर) पुनरुत्पति करता है , और वह अत्यन्त क्षमाशील , प्रेम करने वाला है।"* (85 : 13–14)

إِنَّ رَبِّي رَحِيمٌ وَدُودٌ ۝٩٠

इन्न रब्बी रहीमुंव–वदूदुन (11 : 9) .

अर्थात् ,*" मेरा पालनहार–स्रेष्टा सतत् कृपालु ,प्रेम करने वाला है।"*

मनुष्य का परमात्मा के प्रति प्रमे–प्रदर्शन वास्तव में परमात्मा के प्रेमभाव का ही प्रतिबिम्ब है :

وَيُطْعِمُونَ الطَّعَامَ عَلَىٰ حُبِّهِۦ مِسْكِينًا وَيَتِيمًا وَأَسِيرًا ۝٨

व युत्अिमूनत्–तआम अला हुब्बिही मिस्कीनंव–व यतीमंव–व असीरा (76 : 8)

अर्थात् ,*" और वे उसके (यानि परमात्मा के) प्रेम हेतु गरीब, अनाथ और कैदी को भोजन कराते हैं।"*

وَمِنَ ٱلنَّاسِ مَن يَتَّخِذُ مِن دُونِ ٱللَّهِ أَندَادًا يُحِبُّونَهُمْ كَحُبِّ ٱللَّهِ ۖ وَٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓا۟ أَشَدُّ حُبًّا لِّلَّهِ

व मिन्न–नासि मंय्–यत्तख़िज़ु मिन् दूनिल्–लाहि अन्दादन युहिब्बूनहुम् कहुब्बिल्–लाहि वल्–लज़ीन आमनू अशद्दु हुब्बन लिल्–लाहि ,(2 : 165) ,

अर्थात् ,*" और कुछ लोग हैं जो अल्लाह के सिवाय उसके साझेदार ठहराते हैं , वे उन से ऐसा प्रेम करते हैं जो अल्लाह से करना चाहिये और जो लोग ईमान लाये उनका अल्लाह के प्रति प्रेम सर्वाधिक है।"*

قُلْ إِن كُنتُمْ تُحِبُّونَ ٱللَّهَ فَٱتَّبِعُونِى يُحْبِبْكُمُ ٱللَّهُ

कुल इन् कुन्तुम् तुहिब्बूनल्–लाह फ़त्तबिऊनी युह्–बिब्कुमुल्–लाहु

अर्थात् ,*" कह : यदि तुम अल्लाह से प्रेम करते हो तो मेरा अनुसरण करो ,अल्लाह तुम से प्रेम करेगा।"* ***(3 : 30)***

अल्लाह समस्त त्रुटियों और दोषों से रहित तथा समस्त सद्गुणों का मूलस्रोत है। इस लिये उसके प्रेम का विशेष प्रदर्शन केवल उन्ही लोगों के लिये होता है जो बुराइयों से बचते और नेकियों में आगे बढ़ते हैं :

وَٱللَّهُ يُحِبُّ ٱلْمُحْسِنِينَ

अल्लाहु युहिब्बुल्–मुह्–सिनीन (2 : 195 , 3 : 134 व 148)

अर्थात् ,*" अल्लाह उन लोगों से प्रेम करता है जो दूसरों के साथ नेकी करते हैं।"*

إِنَّ ٱللَّهَ يُحِبُّ ٱلتَّوَّٰبِينَ وَيُحِبُّ ٱلْمُتَطَهِّرِينَ

इन्नल्–लाह युहिब्बुत्तव्वाबीन व युहिब्बुल्–मुततह्–हिरीन

(2 : 222),

अर्थात् ,*" अल्लाह उन से प्रेम करता है जो बार बार उसकी ओर प्रवृत्त होते हैं , और वह उन से प्रेम करता है जो अपना शोधन करते हैं।"*

وَٱللَّهُ يُحِبُّ ٱلصَّٰبِرِينَ

वल्लाहु युहिब्बुस्साबिरीन (3 : 146) ,

अर्थात् ," *और अल्लाह धीरज धरने वालों से प्रेम करता है।"*

فَإِنَّ ٱللَّهَ يُحِبُّ ٱلْمُتَّقِينَ

फ़इन्नल्-लाह युहिब्बुल्-मुत्तक़ीन (3 : 76) ,
अर्थात् ," *सो अल्लाह कर्तव्यनिष्ठों से प्रेम करता है।"*

إِنَّ ٱللَّهَ يُحِبُّ ٱلْمُقْسِطِينَ

इन्नल्-लाह युहिब्बुल्-मुक़्सितीन (5 : 42) ,
अर्थात् ," *अल्लाह न्याय करने वालों से प्रेम करता है।"*

कर्मों का परिणाम और उत्तरदायित्व

परमात्मा के अस्तित्व के साथ साथ इन्सान के कर्मों की ज़िम्मेदारी पर भी बल दिया गया है। अच्छे काम का अच्छा ही परिणाम निकलता है। भले ही उसे हम आज देख पायें या न देख पायें। इसी प्रकार बुरे काम का दुष्टपरिणाम आज नज़र आये या न आये ,अन्तत: वह प्रकट हो कर ही रहेगा — इस सांसारिक जीवन में या मृत्यु के बाद। अत: इन्सान जो कुछ भी करता है उसके लिये वह परमात्मा के समक्ष उत्तरदायी है। समाज या प्रशासन उस से हिसाब ले सके या न ले सके लेकिन अल्लाह उस से ज़रूर हिसाब लेगा :

كُلُّ نَفْسٍۭ بِمَا كَسَبَتْ رَهِينَةٌ

कुल्लु नफ़्-सिम्-बिमा कसबत् रहीनतुन (74 : 38) ,
" प्रत्येक व्यक्ति उस के बदले , जो उसने कमाया , पकड़ा जाये गा।"

فَمَن يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ خَيْرًا يَرَهُۥ ﴿٧﴾ وَمَن يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَرَهُۥ

फ़मंय्-यअमल् मिस्क़ाल ज़र्रतिन ख़ैरन यरहू व मंय्-यअमल् मिस्क़ाल ज़र्रतिन शर्रन यरहू (99 : 7-8) ,
" जो कोई कण भर भी भलाई करे गा उसे देख ले गा। और जो कोई कण भर भी बुराई करे गा उसे देख ले गा।"

وَكُلَّ إِنسَـٰنٍ أَلْزَمْنَـٰهُ طَـٰٓئِرَهُۥ فِى عُنُقِهِۦ ۖ وَنُخْرِجُ لَهُۥ يَوْمَ ٱلْقِيَـٰمَةِ

كِتَـٰبًا يَلْقَىٰهُ مَنشُورًا ﴿١٣﴾ ٱقْرَأْ كِتَـٰبَكَ كَفَىٰ بِنَفْسِكَ ٱلْيَوْمَ عَلَيْكَ حَسِيبًا

कुल्ल इन्सानिन् अल्ज़म्नाहु ताअिरहू फ़ी अुनुक़िही व नुख़्रिजु लहू यौमल्–क़ियामति किताबन यल्क़ाहु मन्शूरा इक़्रा किताबक कफ़ा बिनफ़्सिकल्–यौम अलैक हसीबा (17 : 13–14) ,
अर्थात् ," *प्रत्येक इन्सान के कर्मों को हम ने उस की गरदन के साथ चिपका दिया है ,और हम उसके लिये क़ियामत के दिन एक किताब निकालें गे ,जिस को वह खुला हुआ पायेगा। अपनी किताब पढ़ ,अपना हिसाब लेने के लिये आज तू स्वयं ही काफ़ी है।"*

مَّنِ ٱهْتَدَىٰ فَإِنَّمَا يَهْتَدِى لِنَفْسِهِۦ ۖ وَمَن ضَلَّ فَإِنَّمَا يَضِلُّ عَلَيْهَا

وَلَا تَزِرُ وَازِرَةٌ وِزْرَ أُخْرَىٰ ۗ

मनिह्तदा फ़इन्नमा यह्तदी लिनफ़्सिही व मन् ज़ल्ल फ़इन्नमा यज़िल्लु अलैहा व ला तज़िरु वाज़िरतुंव्–वज़्र उख़्रा ,
अर्थात् ," *जो कोई सीधे मार्ग पर चलता है, वह अपने ही भले के लिये सीधे मार्ग पर चलता है। और जो कोई कुमार्ग पर चला, वह पापदोष वहन करने के लिये ही कुमार्ग पर चला। और कोई बोझ उठाने वाला दूसरे का बोझ नहीं उठाये गा।"* (17 : 15)

मनुष्य का हर कर्म और हर कथन रिकार्ड कर लिया जाता है

मनुष्य जो भी काम करता है ,या जो भी शब्द मुँह से निकालता है यह सब रिकार्ड कर लिया जाता है। और इस का एक फल होता है ,कोई चीज़ व्यर्थ नहीं जाती : كَلَّا بَلْ تُكَذِّبُونَ بِٱلدِّينِ ﴿٩﴾ وَإِنَّ عَلَيْكُمْ لَحَـٰفِظِينَ

कल्ला बल् तुकज़्ज़िबून बिद्दीनि व इन्न अलैकुम् लहाफ़िज़ीन
अर्थात् ," *नहीं ! तुम अन्तिम निर्णय को झुठलाते हो । और निस्संदेह तुम पर निरीक्षक नियुक्त हैं — प्रतिष्ठित अभिलेखक, वे जानते हैं जो तुम करते हो।"* (82 : 9–10)

كِرَامًا كَـٰتِبِينَ ﴿١١﴾ يَعْلَمُونَ مَا تَفْعَلُونَ ﴿١٢﴾

किरामन कातिबीन यअ्लमून मा तफ्अलून (82 : 11–12) ,
अर्थात् , *"प्रतिष्ठित अभिलेखक ,वे जानते हैं जो तुम करते हो।"*

إِذْ يَتَلَقَّى ٱلْمُتَلَقِّيَانِ عَنِ ٱلْيَمِينِ وَعَنِ ٱلشِّمَالِ قَعِيدٌ ﴿١٧﴾ مَّا يَلْفِظُ
مِن قَوْلٍ إِلَّا لَدَيْهِ رَقِيبٌ عَتِيدٌ ﴿١٨﴾

इज् यतलक्कल्–मुतलक्कियानि अनिल्–यमीनि व अनिश्–शिमालि कअीदुन मा यल्फिज़ु मिन् कौलिन इल्ला लदैहि रकीबुन अतीदुन (50 : 17–18) ,
अर्थात् ," *जब दो लेने वाले लेते जाते हैं — वे दायें और बायें इन्तज़ार में होते हैं। इन्सान कोई बात नहीं करता किन्तु उस के पास एक निरीक्षक तैयार होता है।"*

أَمْ يَحْسَبُونَ أَنَّا لَا نَسْمَعُ سِرَّهُمْ وَنَجْوَىٰهُم ۚ بَلَىٰ وَرُسُلُنَا لَدَيْهِمْ يَكْتُبُونَ

अम् यह्सबून अन्ना ला नस्मअु सिर्रहुम् व नज्वाहुम् बला व रुसुलुना लदैहिम यक्तुबून (43 : 80) ,
अर्थात् ,*"क्या ये समझते हैं कि हम इन की छुपी बातों और निजी परामर्शों को नहीं सुनते ? हाँ ! और हमारे भेजे हुए (फ़रिश्ते) स्वयं इन्ही के पास लिखते जाते हैं।"*

هَـٰذَا كِتَـٰبُنَا يَنطِقُ عَلَيْكُم بِٱلْحَقِّ ۚ إِنَّا كُنَّا نَسْتَنسِخُ مَا
كُنتُمْ تَعْمَلُونَ ﴿٢٩﴾

हाज़ा किताबुना यन्तिकु अलैकुम् बिल्–हक्कि इन्ना कुन्ना नस्तन्सिखु मा कुन्तुम् तअलमून (45 : 29) ,
अर्थात् ," *यह हमारा लेख तुम्हारे बारे में सच सच बोलता है। हम लिख लेते थे जो तुम कर्म करते थे।"*

وَيَقُولُونَ يَـٰوَيْلَتَنَا مَالِ هَـٰذَا ٱلْكِتَـٰبِ لَا يُغَادِرُ صَغِيرَةً وَلَا كَبِيرَةً إِلَّآ أَحْصَىٰهَا ۚ

व यकूलून यावैलतना मालि हाज़ल्–किताबि ला युग़ादिरु

सग़ीरतंव–व ला कबीरतन इल्ला अह्साहा (18 : 49) ,

अर्थात् ," और कहेंगे : हाय हमारा दुर्भाग्य ! यह कैसी किताब है कि न छोटी बात को पीछे छोड़ती है और न बड़ी को — सब को गिनवा देती है।"

अच्छे और बुरे कर्मों का तोला जाना

फिर हर इन्सान के कर्मों को तोला जाये गा। अगर उसकी नेकियां बढ़ गईं तो उस के साथ नेकों का सा व्यवहार किया जाये गा ,अगर बुराइयां बढ़ गईं तो उस के साथ पापियों का सा व्यवहार होगा :

وَنَضَعُ ٱلْمَوَٰزِينَ ٱلْقِسْطَ لِيَوْمِ ٱلْقِيَٰمَةِ فَلَا تُظْلَمُ نَفْسٌ شَيْـًٔا ۖ وَإِن كَانَ مِثْقَالَ حَبَّةٍ مِّنْ خَرْدَلٍ أَتَيْنَا بِهَا ۗ وَكَفَىٰ بِنَا حَٰسِبِينَ ﴿٤٧﴾

व नज़अुल्–मवाज़ीनल्क़िस्त लियौमिल्–क़ियामति फ़ला तुज़्लमु नफ़्सुन शैअन व इन् कान मिस्क़ाल हब्बतिंम्–मिन् ख़र्दलिन अतैना बिहा व कफ़ा बिना हासिबीन (21 : 47) ,

अर्थात् ," हम क़ियामत के दिन न्याय की तुलाएं स्थापित करें गे ,सो किसी जीव के प्रति तनिक भी अन्याय न हो गा ,और अगर राई के दाने के बराबर भी कर्म होगा हम उसे ले आयें गे ,और हिसाब लेने को हम पर्याप्त हैं।"

وَٱلْوَزْنُ يَوْمَئِذٍ ٱلْحَقُّ ۚ فَمَن ثَقُلَتْ مَوَٰزِينُهُۥ فَأُو۟لَٰٓئِكَ هُمُ ٱلْمُفْلِحُونَ ﴿٨﴾ وَمَنْ خَفَّتْ مَوَٰزِينُهُۥ فَأُو۟لَٰٓئِكَ ٱلَّذِينَ خَسِرُوٓا۟ أَنفُسَهُم بِمَا كَانُوا۟ بِـَٔايَٰتِنَا يَظْلِمُونَ ﴿٩﴾

वल्–वज़्नु यौमअिज़ि–निल्हक्क़ु फ़मन् सक़ुलत् मवाज़ीनुहू फ़ऊलाअिक हुमुल्–मुफ़्लिहून व मन् ख़फ़्फ़त् मवाज़ीनुहू फ़ऊलाअिकल्– लज़ीन ख़सिरू अन्फ़ुसहुम् बिमा कानू बिआयातिना यज़्लिमून (7 : 8–9) ,

अर्थात् ," और कर्मों को उस दिन न्यायपूर्वक तोला जाये गा। तो जिस की नेकियां भारी होंगी वही सफल होने वाले हैं। और जिस की नेकियां हल्की होंगी तो वही हैं जिन्हों ने अपने आप को घाटे में डाला —

कारण, वे हमारे आदेशों के बारे में ज़ुलम (यानि इन्कार) करते थे।"

कर्मों का परिणाम

प्रत्येक कर्म तत्काल एक परिणाम को जन्म देता है ,जिस का प्रभाव कर्ता पर भी ज़ाहिर होता जाता है। अल्लाह ने स्वयं को سَرِيْعُ الْحِسَاب "**सरीउल्-हिसाब**" (= *अत्यन्त तेज़ी से यानि तत्काल हिसाब लेने वाला*) बताया है। परन्तु इन आध्यात्मिक परिणामों को हमारी यह शारीरिक आँख नहीं देख सकती। हाँ ! क़ियामत के दिन जब सब के हिसाब का समय आजाये गा ,उस समय यह सब रोकें उठ जाएं गी ,और इन्सान की नज़र तेज़ हो जाए गी ,क्योंकि उस वक्त सारे भौतिक परदे हट जाएं गे :

لَّقَدْ كُنتَ فِى غَفْلَةٍ مِّنْ هَـٰذَا فَكَشَفْنَا عَنكَ غِطَآءَكَ فَبَصَرُكَ ٱلْيَوْمَ حَدِيدٌ

लक़द् कुन्त फ़ी ग़फ़्लतिंम्-मिन् हाज़ा फ़कशफ़्ना अन्क ग़िताअक फ़बसरुकल्-यौम हदीदुन (50 : 22) ,

अर्थात् ," *(हे मानव !) निश्चय ही तू इस दिन के प्रति असावधान था ,लेकिन अब हम ने तुम से तेरे परदे हटा दिये हैं, अतएव आज तेरी दृष्टि तेज़ है।"*

परमात्मा ने मनुष्य को पैदा करके छोड़ नहीं दिया। मनुष्य जो कुछ करता है परमात्मा उसका हिसाब लेता है। परमात्मा की सत्ता पर ईमान या विश्वास लाने का वास्तविक अर्थ भी यही है कि मनुष्य अपने हर कर्म के लिये स्वयं को अल्लाह के समक्ष उत्तरदायी जाने। इसी लिये क़ुर्आन शरीफ़ परमात्मा की सत्ता पर ईमान लाने का बार बार तक़ाज़ा करता है। यही वह एकमात्र जीवनतत्त्व था जिस का हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. ने अपने अनुयायिओं को भलीभांति बोध कराया ,और जिस ने कालांतर में उन सब के जीवन में एक अद्भुत एवं सुखद क्रांति उत्पन्न कर दी। इस धारणा-तत्त्व का सीधा संबंध मनुष्य के भावी जीवन से भी था। क्योंकि हर नेकी का फल अच्छा मिलेगा और हर बुराई का बुरा। कर्मों के यही अच्छे या बुरे परिणाम स्वर्ग या नरक का रूप धारण कर लेते हैं। नियम एक ही है — वही सांसारिक जीवन पर भी लागू होता है और दूसरे जीवन पर भी।

إِنَّ سَعْيَكُمْ لَشَتَّىٰ ﴿٤﴾ فَأَمَّا مَنْ أَعْطَىٰ وَاتَّقَىٰ ﴿٥﴾ وَصَدَّقَ بِالْحُسْنَىٰ ﴿٦﴾
فَسَنُيَسِّرُهُ لِلْيُسْرَىٰ ﴿٧﴾ وَأَمَّا مَنْ بَخِلَ وَاسْتَغْنَىٰ ﴿٨﴾ وَكَذَّبَ بِالْحُسْنَىٰ
﴿٩﴾ فَسَنُيَسِّرُهُ لِلْعُسْرَىٰ ﴿١٠﴾ وَمَا يُغْنِي عَنْهُ مَالُهُ إِذَا تَرَدَّىٰ

इन्न सअ्यकुम् लशत्ता फ़अम्मा मन् आता वत्तक़ा व सद्दक़ बल्–हुस्ना फ़सनुयस्सिरुहू लिल्युस्रा व अम्मा मम् बख़िल वस्तग़्ना व कज़्ज़ब बिल्–हुस्ना फ़सनुयस्सिरुहू लिल्अुस्रा व मा युग़्नी अन्हु मालुहू इज़ा तरद्दा (92 : 4–11) ,

अर्थात् , *" निस्संदेह तुम्हारा प्रयास अलग अलग है। अतः जो देता है और कर्तव्य निभाता है , और अच्छी बात को मान लेता है — तो हम उस के लिये आसानियां पैदा कर दें गे। और जो कन्जूसी करता है और स्वयं को स्वावलंबी समझता है , और अच्छी बात को झुठलाता है — हम उसके लिये मुश्किलें पैदा कर देते हैं, और जब वह विनष्ट होगा तो उसका माल उसके काम न आये गा।"*

अच्छे और बुरे कर्मों के परिणाम केवल व्यक्तियों के लिये ही प्रकट नहीं होते ,राष्ट्रों ,कौमों और समुदायों के लिये भी प्रकट होते हैं :

وَتَرَىٰ كُلَّ أُمَّةٍ جَاثِيَةً ۚ كُلُّ أُمَّةٍ تُدْعَىٰ إِلَىٰ كِتَابِهَا الْيَوْمَ تُجْزَوْنَ مَا كُنتُمْ
تَعْمَلُونَ ﴿٢٨﴾

व तरा कुल्ल उम्मतिन् जासियतन कुलु उम्मतिन तुद्आ इला किताबिहा अल्यौम तुज्ज़वन मा कुन्तुम् तअ्मलून (45 : 28) ,

अर्थात् , *" और तू प्रत्येक समुदाय या समाज को घुटनों के बल देखे गा प्रत्येक समुदाय या समाज अपने कर्मलेख की ओर बुलाया जाये गा। आज तुम्हें उसी का बदला दिया जाए गा जो तुम करते थे।"*

मानवजाति का

रूहानी अनुभव

अल्लाह पर विश्वास की ये मज़बूत नींवें इन्सानी दिलों में स्थापित की गईं , फिर उन की पुष्टि के लिये मानवजाति का रूहानी तजरबा उनके सामने रखा गया। परमात्मा हर युग में अपने आप को प्रकट करता रहा है ,यह वह सार्वभौम रूहानी अनुभव है जिस से कोई जाति ,कोई समाज

या कोई राष्ट्र वंचित नहीं रहा। क्योंकि अल्लाह की दृष्टि में सब इन्सान एकसमान हैं। निस्संदेह परमात्मा ने इन्सान को वो वो उत्तम शारीरिक शक्तियां प्रदान की हैं ,कि जिन से वह प्रकृति की विभिन्न शक्तियों को अपने अधीन कर सकता है ,प्रकृति के गुप्त रहस्यों पर पार पा सकता है। लेकिन इन्सान की ये सीमित शक्तियां परमात्मा के असीम व्यक्तित्व का पता लगाने में समर्थ नहीं :

لَّا تُدْرِكُهُ ٱلْأَبْصَٰرُ وَهُوَ يُدْرِكُ ٱلْأَبْصَٰرَ

ला तुद्रिकुहुल्अब्सारु व हुव युद्रिकुल्–अब्सार (6 : 103) , अर्थात् ," *दृष्टियां उस का पार नहीं पा सकतीं , और वह दृष्टियों का पार पा लेता है।"*

अतएव इन्सानों पर दया कर परमातमा स्वयं ही अपना आप उन पर प्रकट करता आया है। अतः अपने अस्तित्व को अपने ***पैग़म्बरों–अवतारों*** द्वारा हर युग में ,हर जाति पर प्रकट करता रहा है :

إِنَّآ أَوْحَيْنَآ إِلَيْكَ كَمَآ أَوْحَيْنَآ إِلَىٰ نُوحٍ وَٱلنَّبِيِّـۧنَ مِنۢ بَعْدِهِۦ ۚ وَأَوْحَيْنَآ
إِلَىٰٓ إِبْرَٰهِيمَ وَإِسْمَٰعِيلَ وَإِسْحَٰقَ وَيَعْقُوبَ وَٱلْأَسْبَاطِ وَعِيسَىٰ
وَأَيُّوبَ وَيُونُسَ وَهَٰرُونَ وَسُلَيْمَٰنَ ۚ وَءَاتَيْنَا دَاوُۥدَ زَبُورًا ﴿١٦٣﴾

इन्ना अवहैना इलैक कमा अवहैना इला नूहिंव् वंनबीयन मिम् बअदिहीं व अव्हैना इला इब्राहीम व इस्माअील व इस्हाक़ व यअकूब वल्–इस्बाति व अीसा व अैयूब व यूनुस व हारून व सुलैमान व आतैना दाऊद ज़बूरा (4 : 163) ,

अर्थात् ," *हम ने तेरी ओर उसी तरह "वह्य" भेजी जिस तरह हम ने नूह और उसके बाद (प्रकट होने वाले) पैग़म्बरों की ओर "वह्य" भेजी और हम ने इब्राहीम और इस्माईल और इस्हाक़ और याकूब और (उसकी) सन्तान ,और ईसा और अय्यूब और यूनुस और हारून और सुलैमान की ओर "वह्य" भेजी , और हम ने दाऊद को ज़बूर प्रदान की।"*

وَرُسُلًا قَدْ قَصَصْنَٰهُمْ عَلَيْكَ مِن قَبْلُ وَرُسُلًا لَّمْ نَقْصُصْهُمْ عَلَيْكَ ۚ
وَكَلَّمَ ٱللَّهُ مُوسَىٰ تَكْلِيمًا ﴿١٦٤﴾

व रुसुलन क़द् क़सस्नाहुम् अलैक मिन क़ब्लु व रुसुलम्–लम् नक़्सुस्हुम अलैक कल्लमल्–लाहु मूसा तक्लीमा (4 : 164) , अर्थात् , *" और कुछ पैग़म्बर हैं जिन की चर्चा हम पहले तुझ से कर चुके हैं ,और ऐसे भी पैग़म्बर हैं जिन की चर्चा हम ने तुझ से नहीं की, और अल्लाह ने मूसा से बहुत बातें कीं।"*

सिर्फ़ इन्सानों को ही पैग़म्बर बनाया गया। क्योंकि इन्सानों के लिये इन्सान ही आदर्श या नमूना हो सकता था :

قُل لَّوْ كَانَ فِى ٱلْأَرْضِ مَلَٰٓئِكَةٌ يَمْشُونَ مُطْمَئِنِّينَ لَنَزَّلْنَا عَلَيْهِم مِّنَ ٱلسَّمَآءِ مَلَكًا رَّسُولًا ﴿٩٥﴾

कुल् लौ कान फ़िल्–अर्ज़ि मलाअिकतुन यम्शून मुत्मअिन्नीन लनज़्ज़ल्ना अलैहिम मिनस्समाअि मलकर्रसूला (17 : 95) , *" कह : यदि धरती पर फ़रिश्ते निश्चिन्त चलते फिरते होते , तो हम अवश्य उनके लिये आकाश से फ़रिश्ते को पैग़म्बर बना कर भेजते।"*

وَمَآ أَرْسَلْنَا قَبْلَكَ إِلَّا رِجَالًا نُّوحِىٓ إِلَيْهِمْ ۖ فَسْـَٔلُوٓا۟ أَهْلَ ٱلذِّكْرِ إِن كُنتُمْ لَا تَعْلَمُونَ ﴿٧﴾ وَمَا جَعَلْنَٰهُمْ جَسَدًا لَّا يَأْكُلُونَ ٱلطَّعَامَ وَمَا كَانُوا۟ خَٰلِدِينَ ﴿٨﴾

व मा अर्सल्ना क़ब्लक इल्ला रिजालन नूही इलैहिम फ़स्अलू अह्लज़्–ज़िक्रि अन् कुन्तुम् ला तअलमून व मा जअल्नाहुम जसदन ला याकुलूनत्तआम व मा कानू ख़ालिदीन

(21 : 7–8),

अर्थात् *और हम ने तुझ से पहले किसी को (पैग़म्बर बना कर)नहीं भेजा सिवय मर्दों के ,जिन की ओर हम "वह्य" भेजते थे। सो तुम ज्ञान वालों से पूछ लो ,यदि तुम नहीं जानते। और हम ने उनके शरीर ऐसे नहीं बनाये थे कि वह खाना न खाते हों , और न वे अविकारी थे।"*

आशय यह कि संसार की हर जाति ,हर राष्ट्र में अल्लाह की ओर से मनुष्य ही मनुष्यों के मार्गदर्शन हेतु पैग़म्बर बनकर आते रहे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने केवल इतना ही नहीं बताया कि हर जाति ,हर कौम ,हर राष्ट्र में पैग़म्बर आते रहे ,बल्कि यह भी बतलाया कि यदि परमात्मा ने

अपने वारतालाप केलिये बाज़ प्रतिष्ठित पुण्यात्माओं को चुना ,तो इसके साथ ही उस ने साधारण इन्सानों के भीमर — अर्थात् उनकी प्रकृति में — यह बात रख दी कि उनको भी कभी कभार प्रभु की ओर से एक आध दिव्य सूचना प्राप्त होती रहे। चाहे वह सूचना सच्चे स्वप्न द्वारा प्राप्त हो ,كشف **कशफ़** *(दिव्य दर्शन)* द्वारा प्राप्त हो , या الهام **इलहाम** *(आकाशवाणी)* द्वारा। हाँ , पैग़म्बर–अवतार की وحی "**वह्य**" (Revelation) उच्च कोटि की *"वह्य"* है। इस को *"वह्य"* का फरिश्ता यानि ***जबराईल*** लेकर आता है :

وَمَا كَانَ لِبَشَرٍ أَن يُكَلِّمَهُ ٱللَّهُ إِلَّا وَحْيًا أَوْ مِن وَرَآيِٕ حِجَابٍ أَوْ يُرْسِلَ رَسُولًا فَيُوحِىَ بِإِذْنِهِۦ مَا يَشَآءُ ۚ إِنَّهُۥ عَلِىٌّ حَكِيمٌ ﴿٥١﴾

***व मा कान लिबशरिन लिबशरिन अंय्–युकल्लिमहुल्–लाहु इल्ला वह्यन अव मिंव–वराअि हिजाबिन अव युर्–सिल रसूलन फ़यूहिय बिइज़्निही मा यशाअु इन्नहू अलिय्युन हकीमुन** (42 : 51) ,*

अर्थात् ," *और किसी मानव के लिये संभव नहीं कि अल्लाह उस से बात करे सिवाय इसके कि यह तेज़ इशारे से हो ,या परदे के पीछे से ,या यह कि वह दूत (फरिश्ता) भेजे ,अतः अपने हुक्म से जो चाहे "वह्य" करे। निस्संदेह वह सर्वोच्च ,तत्त्वदर्शी है।"*

وَكَذَٰلِكَ أَوْحَيْنَآ إِلَيْكَ رُوحًا مِّنْ أَمْرِنَا ۚ مَا كُنتَ تَدْرِى مَا ٱلْكِتَٰبُ وَلَا ٱلْإِيمَٰنُ وَلَٰكِن جَعَلْنَٰهُ نُورًا نَّهْدِى بِهِۦ مَن نَّشَآءُ مِنْ عِبَادِنَا ۚ وَإِنَّكَ لَتَهْدِىٓ إِلَىٰ صِرَٰطٍ مُّسْتَقِيمٍ ﴿٥٢﴾

व कज़ालिक अवहैना इलैक रूहम्–मिन् अम्रिना मान कुन्त तद्री मल्–किताबु वलल्–ईमानु व लाकिन् जअल्नाहु नूरन नह्दी बिही मन् नशाअु मिन् अिबादिना व इन्नक लतह्दी इला सिरातिम्–मुस्तक़ीमिन (42 : 52) ,

अर्थात् ," *और इसी तरह हम ने अपने हुक्म से एक शब्द तेरी ओर "**वह्य**" किया। तू न जानता था कि **किताब** किया है , और न (यह कि) **ईमान** क्या है ? लेकिन हम ने इसे एक प्रकाश बनाया जिस के*

साथ हम अपने बन्दों में से जिसे चाहते हैं मार्ग दिखाते हैं। और तू निश्चय ही सीधे मार्ग की ओर पथप्रदर्शन करता है।"

وَأَوْحَيْنَآ إِلَىٰٓ أُمِّ مُوسَىٰٓ أَنْ أَرْضِعِيهِ فَإِذَا خِفْتِ عَلَيْهِ فَأَلْقِيهِ فِى ٱلْيَمِّ وَلَا تَخَافِى وَلَا تَحْزَنِىٓ إِنَّا رَآدُّوهُ إِلَيْكِ وَجَاعِلُوهُ مِنَ ٱلْمُرْسَلِينَ ۝٧

व अवहैना इला उम्मि मूसा अन् अर्ज़िओहि फइज़ाख़िफ़्ति अलैहि फ़अल्‌–क़ीहि फ़िल्‌यम्मि व ला तख़ाफ़ी व ला तह्ज़नी इन्ना रादूहु इलैकि व जाओलूहु मिनल्‌–मुर्सलीन (28 : 7) ,
अर्थात् , " और हम ने मूसा की माता की ओर 'वह्य' भेजी कि उसे दूध पिला , और जब उसके विषय में तुझे भय महसूस हो तो उसे नदी में डाल दे , और भयभीत न हो और न चिन्ता कर ,क्योंकि हम उसे तेरे पास वापस लायें गे ,और उसे पैग़म्बरों में से बनाएं गे।"

وَإِذْ أَوْحَيْتُ إِلَى ٱلْحَوَارِيِّـۧنَ أَنْ ءَامِنُوا۟ بِى وَبِرَسُولِى

व इज़् अव्हैतु इलल्‌–हवारीन अन् आमिनू बी व बिरसूली ,
अर्थात् ," और जब मैं ने ईसा के शिष्यों की ओर "वह्य" की कि मुझ पर तथा मेरे पैग़म्बर पर ईमान (विश्वास) लाओ।" (5 : 111)

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने यह भी बताया कि परमात्मा का यह दयाभाव इतना व्यापक है कि नास्तिक भी सच्चे स्वप्न देख लेते हैं। जिन के द्वारा उन्हें भी परोक्ष की कोई बात बता दी जाती है :

وَدَخَلَ مَعَهُ ٱلسِّجْنَ فَتَيَانِ قَالَ أَحَدُهُمَآ إِنِّىٓ أَرَىٰنِىٓ أَعْصِرُ خَمْرًا وَقَالَ ٱلْـَٔاخَرُ إِنِّىٓ أَرَىٰنِىٓ أَحْمِلُ فَوْقَ رَأْسِى خُبْزًا تَأْكُلُ ٱلطَّيْرُ مِنْهُ

व दख़ल मअहुस्‌–सिज्न फ़तयानि क़ाल अहदुहुमा इन्नी अरानी आसिरु ख़म्रन व क़ालल्‌–आख़रु इन्नी अरानी अह्मलु फ़ौक़ रासी ख़ुब्ज़न ताकुलुत्‌–तैरु मिन्हु (12 : 36) ,
अर्थात् ," और उस के (यानि हज़रत यूसुफ़) के साथ कैदखाना में दो यूवक और दाखिल हुए। उन में से एक ने कहा : मैं ने अपने आपको शराब निचोड़ते हुए देखा। और दूसरे ने कहा : मैं ने देखा कि मैं अपने सिर पर रोटियाँ उठाये हुए हूँ , जिन में से पक्षी खा रहे हैं।"

وَقَالَ ٱلْمَلِكُ إِنِّىٓ أَرَىٰ سَبْعَ بَقَرَٰتٍ سِمَانٍ يَأْكُلُهُنَّ سَبْعٌ عِجَافٌ وَسَبْعَ سُنۢبُلَٰتٍ خُضْرٍ وَأُخَرَ يَابِسَٰتٍ ۖ يَٰٓأَيُّهَا ٱلْمَلَأُ أَفْتُونِى فِى رُءْيَٰىَ

व क़ालल्–मलिकु इन्नी अरा सब्अ बक़रातिन सिमानिन याकुलुहुन्न सब्अुन अिजाफुन व सब्अ सुम्बुलातिन ख़ुज़्रिवं–व उख़र याबिसातिन याअय्युहल्–मलअु अफतूनी फ़ी रुअ्याय (12 : 43) अर्थात् ," और (मिस्र के) नरेश ने कहा : मैं ने सात मोटी गायें देखी हैं, उन्हें सात दुबली (गायें) खा गईं ,और सात बालें हरी और अन्य (सात) सूखी। हे राज–दरबारियो ! मेरे स्वप्न का अर्थ बताओ।"

ये दोनों युवक और नरेश काफिर (नास्तिक) थे। हज़रत यूसुफ़अ.स. ने उन सब को उनका स्वप्नफल बता कर भविष्य की उन घटनाओं से अवगत कर दीया जो इन स्वप्नों में निहित थीं। कालांतर में वैसा ही घटा जैसा हज़रत यूसुफअ.स. ने बताया था।

पैग़म्बरों की बात न
मानने का परिणाम

जिस तरह परमात्मा का यह साधारण नियम था कि वह अपनी प्रसन्नता की राहों को सब जातियों ,सब राष्ट्रों पर प्रकट करता रहा ,उसी तरह उस का एक और साधारण नियम यह भी था कि वह अपने भेजे हुए पैग़म्बर–अवतारों को सत्य की स्थापना में सफल करे। जहाँ कहीं ,और जब भी दुनिया में परमात्मा का भेजा हुआ पैग़म्बर–अवतार आया ,तो उसकी सारी क़ौम या जाति उस के विरुद्ध उठ खड़ी हुई। और उस ने अपने सारे भौतिक साधन इस बात पर लगा दिये कि किसी प्रकार वह पैग़म्बर और उसके लाये हुए सत्य को विनष्ट कर दे। लेकिन पैग़म्बर–अवतार के पीछे परमात्मा की रूहानी ताकत इतनी बलिष्ट थी कि उसके सामने समस्त भौतिक ताकतें शून्य हो कर रह गईं। बड़ी बड़ी शक्तिशाली कौमों और रष्ट्रों को ,बड़े बड़े क्रूर राजाओं को ,जब उन्हों ने सत्य को मिटाने की कोशिश की ,विनष्ट कर दिया गया। और ***सत्यमेव् जयते*** — सत्य ही सदासर्वदा विजयी हुआ।

أَلَمْ تَرَ كَيْفَ فَعَلَ رَبُّكَ بِعَادٍ ﴿٦﴾ إِرَمَ ذَاتِ ٱلْعِمَادِ ﴿٧﴾ ٱلَّتِى لَمْ يُخْلَقْ
مِثْلُهَا فِى ٱلْبِلَـٰدِ ﴿٨﴾ وَثَمُودَ ٱلَّذِينَ جَابُوا۟ ٱلصَّخْرَ بِٱلْوَادِ ﴿٩﴾ وَفِرْعَوْنَ
ذِى ٱلْأَوْتَادِ ﴿١٠﴾ ٱلَّذِينَ طَغَوْا۟ فِى ٱلْبِلَـٰدِ ﴿١١﴾ فَأَكْثَرُوا۟ فِيهَا ٱلْفَسَادَ ﴿١٢﴾
فَصَبَّ عَلَيْهِمْ رَبُّكَ سَوْطَ عَذَابٍ ﴿١٣﴾

अलम् तर कैफ़ फ़अल रब्बुक बिआदिन इरम ज़ातिल्–इमाद अल्लती लम् युख़्लक़् मिस्लुहा फ़िल्–बिलादि व समूदल्–लज़ीन जाबुस्– सख़्र बिल्वादि व फ़िर्औन ज़िल्–अवतादिल्–लज़ीन तग़व् फ़िल–बिलादि फ़अक्सरू फ़ीहल्–फ़साद फ़सब्ब अलैहिम् रब्बुक सव्त अज़ाबिन (89 : 6–13) .

अर्थात् ," *क्या तू ने नहीं देखा कि तेरे रब ने आद (जाति) के साथ क्या किया ? ऊँचे भवनों वाले इरम के साथ जिन के तुल्य नगरों में पैदा नही हुए थे ? और (तेरे रब ने) समूद के साथ क्या किया , जिन्हों ने घाटी में चट्टानें तराशीं ? और (तेरे रब ने) लशकरों वाले फ़िरऔन के साथ क्या किया , जिन्हों ने शहरों में काफी उतपात मचया ? सो तेरे रब ने उन पर यातना का कोड़ा बरसाया।"*

وَقَالَ ٱلَّذِينَ كَفَرُوا۟ لِرُسُلِهِمْ لَنُخْرِجَنَّكُم مِّنْ أَرْضِنَآ أَوْ لَتَعُودُنَّ فِى
مِلَّتِنَا ۖ فَأَوْحَىٰٓ إِلَيْهِمْ رَبُّهُمْ لَنُهْلِكَنَّ ٱلظَّـٰلِمِينَ ﴿١٣﴾ وَلَنُسْكِنَنَّكُمُ
ٱلْأَرْضَ مِنۢ بَعْدِهِمْ ۚ ذَٰلِكَ لِمَنْ خَافَ مَقَامِى وَخَافَ وَعِيدِ ﴿١٤﴾

व क़ालल्–लज़ीन कफ़रू लिरुसुलिहिम लनुख़्–रिजन्नकुम् मिन् अर्ज़िना अव् लतऊदुन्न फ़ी मिल्लतिना फ़अव्हा इलैहिम् रब्बुहुम्लनुह्–लिकन्नज़्–ज़ालिमीन वलनुस्–किनन्नकुमुल्–अर्ज़ मिम्–बअदिहिम् ज़ालिक लिमन् ख़ाफ़ मक़ामी व ख़ाफ़ वईदि

अर्थात् ,*"और काफिरों ने अपने पैग़म्बरों से कहा : हम तुम्हें अपने देश से निष्कासित कर देंगे या तुम्हें हमारे धर्म में वापस आना होगा। तो उनके रब ने उनकी ओर "वह्य" भेजी : हम इन अत्याचारियों को अवश्य विनष्ट कर दें गे, और इनके बाद हम निश्चय ही तुम्हें इस देश में बसा देंगे।"* (14 : 13–14)

وَلَقَدْ كَتَبْنَا فِي الزَّبُورِ مِنْ بَعْدِ الذِّكْرِ أَنَّ الْأَرْضَ يَرِثُهَا عِبَادِيَ
الصَّالِحُونَ ﴿١٠٥﴾ إِنَّ فِي هَٰذَا لَبَلَاغًا لِّقَوْمٍ عَابِدِينَ ﴿١٠٦﴾

वलक़द् कतब्ना फ़िज़्-ज़बूरि मिम् बअदिज़्-ज़िक्रि अन्नल्-अर्ज़ यरिसुहा अिबादियस्-सालिहून इन्न फ़ी हाज़ा लबलाग़ल्-लिक़ौमिन् आबिदीन (21 : 105-106) ,

अर्थात् ,'' *और हम उपदेश के बाद किताब में यह लिख चुके हैं कि धरती के वारिस मेरे नेक बन्दे होंगे। इस में उपासकों के लिये एक शुभ-सन्देश है।''*

فَقُلْنَا اذْهَبَا إِلَى الْقَوْمِ الَّذِينَ كَذَّبُوا بِآيَاتِنَا فَدَمَّرْنَاهُمْ تَدْمِيرًا
﴿٣٦﴾ وَقَوْمَ نُوحٍ لَّمَّا كَذَّبُوا الرُّسُلَ أَغْرَقْنَاهُمْ وَجَعَلْنَاهُمْ لِلنَّاسِ
آيَةً ۖ وَأَعْتَدْنَا لِلظَّالِمِينَ عَذَابًا أَلِيمًا ﴿٣٧﴾ وَعَادًا وَثَمُودَ وَأَصْحَابَ
الرَّسِّ وَقُرُونًا بَيْنَ ذَٰلِكَ كَثِيرًا ﴿٣٨﴾ وَكُلًّا ضَرَبْنَا لَهُ الْأَمْثَالَ ۖ
وَكُلًّا تَبَّرْنَا تَتْبِيرًا ﴿٣٩﴾

फ़क़ुल्नज़्-हबा इलल्-क़ौमिल्लज़ीन कज़्ज़बू बिआयातिना फ़दम्मर्नाहुम तदमीरा व क़ौम नूहिल्-लम्मा कज़्ज़बुर्रुसुल अग़्रक़्नाहुम व जअल्नाहुम लिल्नासि आयतन व आतद्ना लिज़्ज़ालिमीन अज़ाबन अलीमा व आदवं व समूदा व अस्हाबर्रस्सि व क़ुरूनम् बैन ज़ालिक कसीरा व कुल्लन ज़रबना लहुल्-अम्साल व कुलन तब्बरना तत्बीरा (25 : 36-39) ,

अर्थात् ,'' *फिर हम ने उनको (यानि मूसा और हारून को) कहा : तुम दोनों उन लोगों के पास जाओ जिन्हों ने हमारे सन्देशों को झुठलाया है। सो हम ने उन्हें वैसे ही विनष्ट कर दिया जैसे विनष्ट करना चाहिये। और नूह की जाति ने पैग़म्बरों को झुठलाया ,तो हम ने उन्हें डुबो दिया। और उन्हें लोगों के लिये निशान बनाया। और ज़ालिमों के लिये हम ने दुखदायिनी यातना तैयार कर रखी है — और आद और समूद और रस्स के निवासियों को ,और उनके बीच बहुत सी पीढ़ियों*

को (विनष्ट किया)। और सभी के लिये हम ने दृष्टांत प्रस्तुत किये, और सभी को हम ने सर्वनाश तक पहुंचाया।"

ثُمَّ صَدَقْنَٰهُمُ ٱلْوَعْدَ فَأَنجَيْنَٰهُمْ وَمَن نَّشَآءُ وَأَهْلَكْنَا ٱلْمُسْرِفِينَ ﴿٩﴾

सुम्म सदक़नाहुमुल्-वअद फ़अन्जैनाहुम् व मन् नशाअु व अहलक्नल् मुस्रिफ़ीन (21 : 9) ,

अर्थात् ," *फिर हम ने इन (पैग़म्बरों) के साथ अपना वचन पूरा किया, सो हम ने उन्हें तथा जिन्हें चाहा मुक्ति दी , और मर्यादा भंग करने वालों को हम ने विनष्ट कर दिया।"*

وَكَمْ قَصَمْنَا مِن قَرْيَةٍ كَانَتْ ظَالِمَةً وَأَنشَأْنَا بَعْدَهَا قَوْمًا ءَاخَرِينَ ﴿١١﴾

व कम् क़समना मिन् क़र्यतिन कानत् ज़ालिमतवं व अन्शाना बअदहा क़ौमन आख़रीन (21 : 11) ,

अर्थात् ," *और कितनी ही बस्तियां , जो ज़ालिम थीं ,हम ने उन्हें उजाड़ दिया ,और उन के बाद एक दूसरी जाति को उठा खड़ा किया।"*

وَقُلْ جَآءَ ٱلْحَقُّ وَزَهَقَ ٱلْبَٰطِلُ إِنَّ ٱلْبَٰطِلَ كَانَ زَهُوقًا

व कुल जाअल्-हक्कु व ज़हक़ल्बातिलु इन्नल्-बातिल कान ज़हूक़ा (17 : 81) ,

अर्थात् ," *और कह : सत्य आ गया और असत्य मिट गया ,असत्य सदा मिटता ही आया है।"*

بَلْ نَقْذِفُ بِٱلْحَقِّ عَلَى ٱلْبَٰطِلِ فَيَدْمَغُهُۥ فَإِذَا هُوَ زَاهِقٌ

बल् नक़्ज़िफ़ु बिल्हक़्क़ि अलल्-बातिलि फ़यद्मग़ुहू फ़इज़ा हुवा ज़ाहिक़ुन (21 : 18) ,

अर्थात् ," *नहीं , हम सत्य को असत्य पर दे मारते हैं ,तो वह उस का भेजा ही निकाल देता है , और वह मिट जाता है।"*

हर देश का आध्यात्मिक इतिहास गवाह है कि मानव जाति ने इस रूहानी तजरबे का स्वाद हर युग ,और हर देश में चखा है। यह परमात्मा के सक्रिय होने की प्रबल दलील थी। जिस ने सत्य की जड़ों को पैग़म्बर

के अनुयायिओं के अंतर्हृदय तक पहुंचा दिया। और अब स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके व्यक्तित्व में उनके सामने एक ज़िन्दा तजरबा मौजूद था। उन्हों ने अपनी आँखों से देख लिया कि किस तरह तीव्र विरोद्ध के बावजूद सत्य दिन पर दिन अभिभावी होता गया और कुफ़्र (असत्य) मिटता चला गया। यहां तक कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के जीवन काल में ही 23 साल के अन्दर कुफ़्र का नाम व निशान समूचे अरब देश से मिट गया।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने ईमान (विश्वास) को अमल (व्यवहार) में कैसे परिवर्तित किया

आरंभ काल से ही मुसलमानों को नमाज़ के रूप में अमलन अल्लाह की आज्ञाओं के आगे नतमस्तक होना सिखलाया गया। काम काज की बड़ी ज़बरदस्त व्यस्तता के अन्दर जब उन के कान में यह आवाज़ पड़ती ***"हय्य अलस्–सलाह"*** कि — ***नमाज़ के लिए आजाओ !*** तो वे सब काम छोड़ छाड़ कर मस्जिद की ओर दौड़ पड़ते थे ,ताकि अपने सिरों को अपने वास्तविक स्वामी के आगे झुकाएं। और नमाज़ के वक्त सब एक पंक्ति में कन्धे से कन्धा मिला कर खड़े हो जाते। मालिक और गुलाम अमीर और ग़रीब , श्रेष्ठ और नीच — अल्लाह के समक्ष खड़े होते वक्त सब भेदभाव समाप्त हो जाते और सभी एकसमान अपने प्रभु की सेवा में उपस्थित होते। नमाज़ की हर मुद्रा अल्लाह की बड़ाई , अल्लाह की महत्ता का एक गहरा नक़्श नमाज़ियों के दिलों पर अंकित कर देती है। जब बार बार ***" अल्लाहु अक्बर ! "*** की आवाज़ उन के कानों में पड़ती तो उनका मन आप से आप अल्लाह के आगे झुक पड़ता ,और इस तरह उनके भीतर अल्लाह की आज्ञाओं के आगे सिर झुकाने की ज़बरदस्त शक्ति पैदा होती चली जाती। मानो परमात्मा पर ईमान उनकी ज़ुबान से निकल कर उनके दिलों की गहराइयों तक पहुंच जाता ,और फिर वहां से निकल कर नमाज़ी के अंग अंग में समा जाता। फल यह कि परमात्मा की आज्ञाओं के आगे सिर झुकाना अब उनका द्वितीय स्वभाव बन जाता। यह था ईमान का वह रंग जिस ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके अनुयायिओं के भीतर एक अद्भुत क्रांति पैदा कर दी। प्रत्येक आदेश जो अल्लाह की ओर से उतरता उसके प्रति विशुद्ध भाव से सिर झुकाते चले जाते। क्यों और किस तरह — यह

प्रश्न उनके मन में कभी उत्पन्न न होते। उनके लिये बस इतना जान लेना ही काफी था कि यह अल्लाह का हुक्म है। तत्काल उसके आगे सिर झुक जाता। अल्लाह पर ईमान ने उनकी विचारधारा ही बदल डाली। रसम व रिवाज की मज़बूत ज़न्जीरें ,सदियों पुरानी कुप्रथाएं — ये सब इस विश्वास के आगे इस तरह चिरमिरा गईं कि मानो कभी थी ही नहीं। जब अल्लाह पर ईमान अपनी चरम सीमा को पहुंच गया तो समस्त असत्य विचार, समस्त कुप्रथाएं और कुरीतियाँ आप से आप विलुप्त हो गईं। हमारा एक परमात्मा है ,यह उसका हुक्म है ,इसका मानना बस हमारे लिये अनिवार्य है — यही वह सुखद मनोवृत्ति थी जिस ने मुस्लिम समाज में सर्वप्रथमे व्यक्तिगत क्रांति उत्पन्न की ,फिर सामाजिक क्रांति ,फिर जातिगत क्रांति और अन्ततः राष्ट्रीय क्रांति।

पाप जननी –– शराब

मुस्लिम समाज की समस्त अपवित्रताएं एक एक कर दूर होती चली गयीं। यहां तक कि शराबखोरी जैसी खतरनाक लत को भी एक आन की आन में समाप्त कर डाला। दुनिया में अनेकों बार यह कोशिश हुई कि शराब के सेवन को मिटा दिया जाए। लेकन यह कोशिश कर बार नाकाम रही। सब से आखरी तजरबा वह था जो हमारी आँखों के सामने अमरीका ने किया। जहां शराब पर पाबन्दी ने ,हालांकि वह पूर्ण प्रतिबन्ध न था, अपराधों की दर को इतना बढ़ा दिया कि प्रशासन को स्वयं अपना निषेधात्मक कानून वापस लेना पड़ा। इस के विपरीत सिर्फ एक आवाज़ ने सारे अरब देश से इस पाप–जननी का अस्तित्व इस तरह मिटा कर रख दिया कि मानो उन लोगों के यहां शराबखोरी कभी थी ही नहीं। हालांकि शराब पीने के मामले में वो अधुनिक अमरीका से किसी भी तरह कम न थे। वह कौन सी चमत्कारी आवाज़ थी जिस ने इस असंभव को संभव कर दिखया ?

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓاْ إِنَّمَا ٱلْخَمْرُ وَٱلْمَيْسِرُ وَٱلْأَنصَابُ وَٱلْأَزْلَـٰمُ رِجْسٌ مِّنْ
عَمَلِ ٱلشَّيْطَـٰنِ فَٱجْتَنِبُوهُ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٩٠﴾

या अय्युहल्लज़ीन आमनू इन्नमल्–ख़म्रु वल्–मैसिरु वल्–अन्साबु

वल्– अज़लामु रिज्सुम्–मिन अमलिश्–शैतानि फ़ज्तनिबूहु लअल्लकुम् तुफ़्लिहून (5 : 90) ,

अर्थात् , *" हे ईमान वालो ! शराब और जुआ और देवप्रतिमाएं और पाँसे — (ये सब) अपवित्र काम हैं ,ये शैतान के काम हैं। अतः इन से बचो ताकि तुम कामयाब हो जाओ।"*

जब इस आवाज़ की मुनादी मदीना की गलियों में हुई तो शराब के सभी पात्र गलियों में तौड़ दिये गए। और मदीना की गलियों में शराब इस तरह बहने लगी मानो बारिश का पानी बह निकला हो। अरब देश से न सिर्फ शराब का सेवन ही समाप्त हुआ ,बल्कि स्वयं शराब का अस्तित्व ही सदासर्वदा के लिये विलुप्त हो कर रह गया। लोगों ने उन बरतनों को भी विनष्ट कर दिया जिन में शराब निकाली जाती थी। इस में संदेह नहीं कि आज मुसलमान अपने वास्तविक स्थान से गिर चुके हैं। लेकिन इस गई गुज़री हालत में भी अगर उनकी तुलना अन्य राष्ट्रों से की जाये ,तो साफ विदित होगा कि मुसलमान सामूहिक रूप से आज भी शराबख़ोरी से बचे हुए हैं। अल्लाह पर ईमान ने मुसलमानों को केवल अपवित्र धारणाओं, अपवित्र आदतों और अपवित्र कर्मों से ही बचाये नहीं रखा ,बल्कि उनके अन्दर एक ऐसी नवीन रूह फूंक दी जिस के फलस्वरूप वो समस्त अच्छी बातों और संस्कारों के मामले में सर्वसंसार के लिए मार्गदर्शक बन गए।

صَدَقَ اللّٰهُ الْعَلِيُّ الْعَظِيْم

अध्याय — 6

मानवजाति की एकता

अरब समाज में भेदभाव

संपूर्ण मानवजाति की एकता का विचार ——— यह हज़रत पैगम्बरश्रीसल्ल का मानव सभ्यता पर वह उपकार है ,कि जिस की दूसरी मिसाल किसी अन्य पैग़म्बर–अवतार या किसी अन्य महापुरुष की शिक्षा में नहीं मिलती। यह वास्तव में *"तौहीद"* (=*परमेश्वर के एकत्व*), जो हज़रत पैगम्बरश्रीसल्लकी शिक्षा का आधारभूत सिद्धांत है ,का सरल एवं अनिवार्य परिणाम है। विश्व–इतिहास का एक एक पन्ना पढ़ जाइए ,सब से पहला इन्सान जिस ने मानवजाति की एकता की आवाज़ बुलन्द की, बल्कि उसे अपने धर्म का मूलाधार ठहराया ,हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके सिवा और कोई नहीं मिले गा। निस्संकोच कहा जा सकता है कि यह रहस्य इतना बुलन्द था कि अल्लाह की *"वह्य"* के बिना इन्सानी मन–मस्तिष्क में प्रकट नहीं हो सकता था। अरब देश की अपनी हालत अति दयनीय थी उनकी आपसी फूट और उनका विघटन ,दोनों चरम सीमा तक पहुंच चुके थे। उन के भेदभाव ,उनकी छिन्न–भिन्नता को देख कर किसी भी अरब वासी के मन में संपूर्ण मानव समाज की एकता का विचार उत्पन्न नहीं हो सकता था। हालांकि अरब लोग एक की जाति के लोग थे ,उनकी भाषा भी एक थी। लेकिन उनकी अपनी दशा यह थी कि एक शाखा दूसरी शाखं

से ;एक वंश दुसरे वंश से और एक कबीला दूसारे कबीले से अलग था। सब ने अपनी अपनी जगह पर छोटे छोटे राज्य स्थापित कर रखे थे ,जो रात दिन परस्पर युद्ध में जुटे रहते थे। और युद्ध भी ऐसे कि पीढ़ी पर पढ़ी ख़तम होने में ही न आते थे। आज यदि प्रत्यक्षतः सुलह हो गई तो कल फिर जन्ग की आग भड़क उठती थी। अरब लोग रेगिस्तान की रेत के कणों की तरह एक दूसरे से अलग थे। उन की इस दुर्गति का सही और पर्याप्त चित्रण कुर्आन शरीफ़ की इस आयत में है :

وَكُنتُمْ عَلَىٰ شَفَا حُفْرَةٍ مِّنَ ٱلنَّارِ

व कुन्तुम् अला शफ़ा हुफ़्रतिंम् मिनन्–नारि (3 : 103) ,
अर्थात् ," *तुम एक आग के गढ़े के किनारे पर खड़े थे।"*

संपूर्ण मानवजाति की
एकता की सुखद घोषणा

विश्व–इतिहास में संपूर्ण मानवजाति की एकता के पावन विचार का उदय सब से पहले अरब देश में ही हुआ। कितने सुस्पष्ट और असंदिग्ध शब्दों में इस एकता की घोषणा की गई है :

وَمَا كَانَ ٱلنَّاسُ إِلَّآ أُمَّةً وَٰحِدَةً فَٱخْتَلَفُوا۟

व मा काननू–नासु इल्ला उम्मतवं–वाहिदतन् फ़स्तलफ़ू ,
अर्थात् ,*"और सभी इन्सान एक ही जाति हैं ,पर वे आपस में झगड़ते हैं।"* (10 : 19)

وَإِنَّ هَٰذِهِۦٓ أُمَّتُكُمْ أُمَّةً وَٰحِدَةً وَأَنَا۠ رَبُّكُمْ فَٱتَّقُونِ ﴿٥٢﴾
فَتَقَطَّعُوٓا۟ أَمْرَهُم بَيْنَهُمْ زُبُرًا ۖ كُلُّ حِزْبٍۭ بِمَا لَدَيْهِمْ فَرِحُونَ ﴿٥٣﴾
فَذَرْهُمْ فِى غَمْرَتِهِمْ حَتَّىٰ حِينٍ ﴿٥٤﴾

व इन्न हाज़िही उम्मतुकुम् उम्मतंव्–वाहिदतंव्– व अना रब्बुकुम फ़त्तकून फ़तक़त्तअू अम्रहुम बैनहुम् ज़ुबुरन कुल्लु हिज़बिम्–बिमा लदैहिम् फ़रिहून फ़ज़र्हुम् फ़ी गम्रतिहिम हत्ता हीनिन्
" और यह तुम्हारी जाति एक ही जाति है ,और मैं तुम्हारा पालनहार–स्रष्टा

हूँ ,अतः मेरे प्रति कर्तव्यनिष्ठ रहो। लेकिन उन्हों ने अपने मामले को परस्पर काट कर टुकड़े टुकड़े कर दिया ,अब प्रत्येक गरोह उसी पर संतुष्ट है जो उनके पास है। सो उन्हें एक समय तक अपनी अज्ञानता में पड़ा रहने दे।" (23 : 52–54)

إِنَّ هَٰذِهِۦٓ أُمَّتُكُمۡ أُمَّةً وَٰحِدَةً وَأَنَا۠ رَبُّكُمۡ فَٱعۡبُدُونِ ﴿٩٢﴾
وَتَقَطَّعُوٓاْ أَمۡرَهُم بَيۡنَهُمۡۖ كُلٌّ إِلَيۡنَا رَٰجِعُونَ ﴿٩٣﴾

इन्न हाज़िही उम्मतुकुम् उम्मतंव्–वाहिदतंव्– व अना रब्बुकुम फ़ाअबुदूनि वतक़त्तअू अम्रहुम् बैनहुम् कुल्लुन इलैना राजिअून

अर्थात् ,*"(हे मनुष्यो !) यह तुम्हारी जाति वास्तव में एक ही जाति है और मैं तुम्हारा पालनहार–स्रष्टा हूँ ,सो मेरी उपासना करो ,पर उन्हों ने अपने आपको गरोहों में बाँट दिया ,सब हमारी ही ओर लौट कर आने वाले हैं।" (21 : 92–93)*

كَانَ ٱلنَّاسُ أُمَّةً وَٰحِدَةً فَبَعَثَ ٱللَّهُ ٱلنَّبِيِّـۧنَ مُبَشِّرِينَ
وَمُنذِرِينَ وَأَنزَلَ مَعَهُمُ ٱلۡكِتَٰبَ بِٱلۡحَقِّ

काानन्–नासु उम्मतवं–वाहिदतन् फ़बअसल्–लाहुन्–नबीयीन मुबश्शिरीन व मुन्ज़िरीन व अन्ज़ल मअहुमुल्–किताब बिल्हक़्क़्

अर्थात् ,*" सभी इन्सान एक ही जाति हैं ,सो अल्लाह ने (सब के) बीच नबी प्रकट किये शुभसूचना देते हुए और सचेत करते हुए ,और उनके साथ सत्य पर आधारित किताब उतारी।" (2 : 213)*

यह कोई संयोगिक विचार न था जो किसी प्रेरणावश मन में प्रकट हुआ ,बल्कि इस को सभ्यता का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत करार दिया गया। जिस का सविस्तार ब्योरा ***क़ुर्आन शरीफ़*** और हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के व्यवहार (= سُنَّت ***'सुन्नत***) में देखा जा सकता हैं।

जातिवाद , वर्णवाद और भाषावाद

इस बात से इनकार नहीं हो सकता कि कौमों और कबीलों का अस्तित्त्व केवल एक दूसरे को जानने ,एक को दूसरे से प्रभिन्न करने के लिये है। भेदभाव के लिये नहीं।

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ إِنَّا خَلَقْنَـٰكُم مِّن ذَكَرٍ وَأُنثَىٰ وَجَعَلْنَـٰكُمْ شُعُوبًا وَقَبَآئِلَ لِتَعَارَفُوٓا۟

याअय्युहन्–नासु इन्ना ख़लक़्नाकुम मिन् ज़करिंव् व उन्सा व जअल्नाकुम् शुअूबंव् व क़बाइल लितआरफ़ू (49 : 13) ,
अर्थात् ," *हे संसारवासियो ! हम ने तुम्हें एक (मूल)–पुरुष और एक (मूल)–स्त्री से उत्पन्न किया , और तुम्हारे वंश और कबीले बनाये ताकि तुम एक दूसरे को पहचानो।"*

कुर्आन शरीफ में रंगों और भाषाओं की विविधता को भी स्वीकारा गया है :

وَمِنْ ءَايَـٰتِهِۦٓ أَنْ خَلَقَكُم مِّن تُرَابٍ ثُمَّ إِذَآ أَنتُم بَشَرٌ تَنتَشِرُونَ ﴿٢٠﴾

व मिन् आयातिही अन् ख़लक़कुम् मिन् तुराबिन सुम्म इज़ा अन्तुम बशरुन तन्तशिरून (30 : 20) ,
अर्थात् ," और उस के निशानों में से एक निशान यह है कि उस ने तुम्हें मिट्टी से पैदा किया ,फिर तुम मनुष्य हो जो फैल जाते हो।"

وَمِنْ ءَايَـٰتِهِۦ خَلْقُ ٱلسَّمَـٰوَٰتِ وَٱلْأَرْضِ وَٱخْتِلَـٰفُ أَلْسِنَتِكُمْ وَأَلْوَٰنِكُمْ ۚ إِنَّ فِى ذَٰلِكَ لَـَٔايَـٰتٍ لِّلْعَـٰلِمِينَ ﴿٢٢﴾

व मिन् आयातिही ख़ल्क़ुस्–समावाति वल्–अर्ज़ि वख़्तिलाफ़ु अल्सिनतिकुम् व अल्वानिकुम् इन्न फ़ी ज़ालिक लआयातिल्–लिल्आलिमीन (30 : 22) ,
अर्थात् ," और उस के निशानों में से एक निशान आकाशों और धरती की सृष्टि और तुम्हारी भाषाओं और तुम्हारे रंगों की विविधता है। निस्संदेह इस में ज्ञान वालों के लिये निशान हैं।"

किसी भी देश के वासी हों ,कोई सी भाषा बोलते हों ,उनकी त्वचा का रंग कुछ भी हो — सभी एक ही खानदान के सदस्य हैं ,जो एक ही धरती की पीठ पर एक ही आकाश की छत तले रहते ,और कुदरत के वरदानों से एकसमान लाभान्वित होते हैं।

يَٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ ٱتَّقُوا۟ رَبَّكُمُ ٱلَّذِى خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ
وَٰحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيرًا وَنِسَآءً

या अय्युहन्–नासुत्तक़ू रब्बकुमुल्लज़ी ख़लक़कुम् मिन् नफ़्सिंव् वाहिदतिंव् व ख़लक़ मिन्हा ज़ौजहा व बस्स मिन्हुमा रिजालन् कसीरंव व निसाअन् (4 : 1) ,

"हे संसारवासयो ! अपने पालनहार–स्रष्टा के प्रति कर्तव्यनिष्ठ रहो , जिस ने तुम्हें एक की जीव से पैदा किया , और उसी से उसका जोड़ा पैदा किया फिर इन दो से अनेकों स्त्री–पुरुष (दुनिया में) फैलाये।"

وَهُوَ ٱلَّذِى جَعَلَ لَكُمُ ٱلنُّجُومَ لِتَهْتَدُوا۟ بِهَا فِى ظُلُمَٰتِ ٱلْبَرِّ وَٱلْبَحْرِ ــــــ
وَهُوَ ٱلَّذِىٓ أَنشَأَكُم مِّن نَّفْسٍ وَٰحِدَةٍ فَمُسْتَقَرٌّ وَمُسْتَوْدَعٌ ــــــ
وَهُوَ ٱلَّذِىٓ أَنزَلَ مِنَ ٱلسَّمَآءِ مَآءً فَأَخْرَجْنَا بِهِۦ نَبَاتَ كُلِّ شَىْءٍ
فَأَخْرَجْنَا مِنْهُ خَضِرًا نُّخْرِجُ مِنْهُ حَبًّا مُّتَرَاكِبًا

हुवल्लज़ी जअल लकुमुन्–नुजूम लितह्तदू बिहा फ़ी ज़ुलुमातिल्–बर्रि वल्–बह्रि ..... व हुवल्–लज़ी अन्शअकुम मिन नफ़्सिंव् वाहिदतिन फ़मुस्तक़र्रुंव व मुस्तव्दअुन ...... वहुवल्–लज़ी अन्ज़ल मिनस्समाअि माअन् फ़अख़्रज्ना बिही नबात कुल्लि शैअिन फ़अख़्रज्ना मिन्हु ख़ाज़िरन नुख़्रिजु मिन्हु हब्बम् मुतराकिबन (6 : 97 – 99) ,

अर्थात् , *" वही है जिस ने तुम्हारे लिये (आकाश में) सितारे बनाये ताकि तुम उनकी सहयाता से भूमि और समुद्र के अँधेरों में रास्ता पाओ ..... वही है जिस ने तुम्हें एक ही जीव से उत्पन्न किया। फिर एक ठहरने का स्थान है और एक सौंपा जाने का स्थान .... और वही है जिस ने बादलों से पानी उतारा फिर उसके द्वारा हम ने सर्वप्रकार के पेड़–पौधे निकाले , फिर इस से हम हरी कोंपलें निकालते हैं , फिर उस से हम गुच्छित दाने निकालते हैं।"*

يَٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ ٱعْبُدُوا۟ رَبَّكُمُ ٱلَّذِى خَلَقَكُمْ وَٱلَّذِينَ مِن

قَبۡلِكُمۡ لَعَلَّكُمۡ تَتَّقُونَ ﴿٢١﴾ ٱلَّذِي جَعَلَ لَكُمُ
ٱلۡأَرۡضَ فِرَٰشٗا وَٱلسَّمَآءَ بِنَآءٗ وَأَنزَلَ مِنَ ٱلسَّمَآءِ مَآءٗ فَأَخۡرَجَ بِهِۦ
مِنَ ٱلثَّمَرَٰتِ رِزۡقٗا لَّكُمۡۖ

या अय्युहन्नासुअ्-बुदू रब्बकुमुल्-लज़ी ख़लक़कुम् वल्-लज़ीन मिन् क़ब्लिकुम् लअल्लकुम् तत्तकूनल्-लज़ी जअल लकुमुल्-अर्ज़ फ़िराशंव् वस्समाअ बिनाअंव् व अन्ज़ल मिनस्समाअि माअन फ़अख़्रज बिही मिनस्-समराति रिज़्क़ल्-लकुम् (2 : 21-22)

अर्थात् ,*" हे संसारवासियो ! अपने रब की उपासना करो , जिस ने तुम्हें पैदा किया और उन्हें भी जो तुम से पहले थे — ताकि तुम कर्तव्यनिष्ठ बनो — जिसने धरती को तुम्हारे लिये फ़र्श बनाया ,और आकाश को छत बनाया , और बादलों से पानी बरसाया , फिर उस (पानी) से तुम्हारे भेजन केलिये फल निकाले।"*

परमात्मा के विश्वव्यापी भौतिक एवं आध्यात्मिक नियम

जहां एक ओर यह शिक्षा दी कि परमात्मा के भौतिक नियम संपूर्ण मानवजाति के लिये एकसमान हैं — सब के लिये एक ही धरती है ,जिस में सभी को एक ही नियम के अन्तर्गत जीविका के साधन प्राप्त होते हैं। परमात्मा द्वारा भौतिक अथवा शारीरिक प्रतिपालन समस्त कौमों ,समाजों और रष्ट्रों के लिए एक जैसा है। वह ईमान वालों का भी प्रतिपालन करता है और काफिरों (नास्तिकों) का भी :

قُلۡ أَتُحَآجُّونَنَا فِي ٱللَّهِ وَهُوَ رَبُّنَا وَرَبُّكُمۡ وَلَنَآ
أَعۡمَٰلُنَا وَلَكُمۡ أَعۡمَٰلُكُمۡ

कुल अतुहाज्जूनना फ़िल्-लाहि व हुव रब्बुना व रब्बुकुम् व लना आमालुना व लकुम् आमालुकुम् (2 : 139),

अर्थात् ,*" कह : क्या तुम हम से अल्लाह के विषय में झगड़ते हो ? जबकि वह हमारा भी पालनहार-स्रष्टा है और तुम्हारा भी पालनहरा-स्रष्टा है ,और हमारे लिये हमारे कर्म हैं और तुम्हारे लिये तुम्हारे कर्म हैं।"*

दूसरी ओर यह भी बता दिया कि अल्लाह के रूहानी कानून भी सारी दुनिया के लिये एकसमान हैं। जिस प्रकार परमात्मा संपूर्ण मानवसमाज की शारीरिक आवश्यकताएं पूरी करता है ,उसी प्रकार वह उन की रूहानी ज़रूरतों की व्यवस्था भी करता है। अगर मार्गदर्शन हेतु उसके पैग़म्बर–अवतार एक कौम या राष्ट्र में प्रकट हुए ,तो दूसरी जाति को उनके मंगलमय आविर्भाव से वंचित न रखा गया :

وَإِن مِّنْ أُمَّةٍ إِلَّا خَلَا فِيهَا نَذِيرٌ

व इन मिन् उम्मतिन इल्ला ख़ला फ़ीहा नज़ीरुन (35 : 24)
अर्थात् ," *कोई कौम या राष्ट्र ऐसा नहीं कि जिस में कोई डराने वाला न गुज़रा हो ।*"

وَلِكُلِّ أُمَّةٍ رَّسُولٌ

व लिकुल्लि उम्मतिर्रसूलुन (10 : 47)
अर्थात् ," *प्रत्येक कौम या जाति का एक पैग़म्बर था।*"

وَلِكُلِّ قَوْمٍ هَادٍ ۝٧

व लिकुल्लि क़ौमिन हादिन (13 : 7)
अर्थात् ," *प्रत्येक कौम या जाति का एक मार्गदर्शक था।*"

وَلَقَدْ بَعَثْنَا فِي كُلِّ أُمَّةٍ رَّسُولًا أَنِ اعْبُدُوا
اللَّهَ وَاجْتَنِبُوا الطَّاغُوتَ

व लक़द् बअस्ना फ़ी कुल्लि उम्मतिर्रसूलन अनिअबुदुल्–लाह वज्तनिबुत्ताग़ूत (16 : 36) ,
अर्थात् ," *और निस्संदेह हम ने प्रत्येक कौम या जाति के बीच एक पैग़म्बर नियुक्त किया , (यह सन्देश लेकर) कि अल्लाह की उपासना करो और शैतान से बचो।*"

لِكُلٍّ جَعَلْنَا مِنكُمْ شِرْعَةً وَمِنْهَاجًا

लिकुल्लिन जअलना मिन्कुम् शिर्अतंव् व मिन्हाजन (5 : 48),

अर्थात् ," *तुम में की प्रत्येक (जाति) के लिये हम ने एक धर्मविधान और एक धर्मपथ बनाया।*"

कर्मफल का नियम भी एक ही है

एक और नियम भी है जो समस्त इन्सानों के लिये एकसमान कार्यरत है ,और वह है कर्मों का लेखाजोखा या कर्मफल का नियम। प्रत्येक इन्सान को वैसा ही कुछ मिलेगा ,जैसे वह कर्म करे गा :

فَمَن يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ خَيْرًا يَرَهُۥ ﴿٧﴾ وَمَن يَعْمَلْ مِثْقَالَ ذَرَّةٍ شَرًّا يَرَهُۥ

फ़मंय् यअमल् मिस्क़ाल ज़र्रतिन ख़ैरन यरहू व मंय्–यअमल् मिस्क़ाल ज़र्रतिन शर्रन यरहू (99 : 7–8)

अर्थात् ," *जो एक कण के बराबर नेकी करता है वह उस देख लेगा और जो एक कण के बराबर बुराई करता है वह उसे देख लेगा।*"

لَكُمْ دِينُكُمْ وَلِيَ دِينِ ﴿٦﴾

लकुम् दीनुकुम व लिय दीनि (109 : 6)

अर्थात् ," *(कह दो : हे काफ़िरो !) तुम्हारे लिये तुम्हारे (कर्मों का) बदला है और मेरे लिये मेरे कर्मों का बदला है।*"

وَإِن كَذَّبُوكَ فَقُل لِّي عَمَلِي وَلَكُمْ عَمَلُكُمْ أَنتُم
بَرِيٓـُٔونَ مِمَّآ أَعْمَلُ وَأَنَا بَرِيٓءٌ مِّمَّا تَعْمَلُونَ ﴿٤١﴾

व इन् कज़्ज़बूक फ़कुल ली अमली व लकुम् अमलकुम् अन्तुम् बरीऊन मिम्मा आमलु व अना बरीउन मिम्मा तअमलून (10 : 41)

अर्थात् ," *अगर ये तुझे झूठा कहते हैं , तो कह दे : मेरे लिये मेरा कर्म है और तुम्हारे लिये तुम्हारा कर्म , तुम उस से बरी हो जो मैं करता हूँ और मैं उस से बरी हूँ जो तुम करते हो।*"

وَقُلْ ءَامَنتُ بِمَآ أَنزَلَ ٱللَّهُ مِن كِتَٰبٍ وَأُمِرْتُ لِأَعْدِلَ بَيْنَكُمُ
ٱللَّهُ رَبُّنَا وَرَبُّكُمْ لَنَآ أَعْمَٰلُنَا وَلَكُمْ أَعْمَٰلُكُمْ

व कुल् आमन्तु बिमा अन्ज़लल्–लाहु मिन् किताबिन् व उमिर्तु लिआदिल बैनकुम् अल्लाहु रब्बुना व रब्बुकुम् लना आमालुना व लकुम् आमालुकुम् (42 : 15) .

अर्थात् ," *और कह दे : मैं उस पर ईमान लाया जो अल्लाह ने किताब से उतारा है ,और मुझे आदेश दिया गया है कि मैं तुम्हारे बीच न्याय करूँ। अल्लाह हमारा पालनहार–स्रष्टा है और वही तुम्हारा पालनहार–स्रष्टा है। हमारे कर्म हमारे लिये हैं और तुम्हारे कर्म तुम्हारे लिये हैं।"*

मानवसमाज की एकता के सिद्धांत को अमलाना अति दुष्कर कार्य था

मानवजाति की एकता और संगठन का इस से उच्चतम सिद्धांत और कोई नहीं हो सकता ,कि समस्त इन्सान चाहे वे किसी भी देश के निवासी हों ,कोई भी भाषा बोलते हों ,उनके शरीर का रंग कैसा भी हो इन्सान होने के नाते वे सब एक की क़ौम ,एक ही जाति हैं। सबका पालनहार–स्रष्टा एक ही है ,अतएव उसने सभी इन्सानों की भौतिक आवश्यकताओं की आपूर्ति के साथ साथ उनके आध्यात्मिक समायोजन की भी एकसमान सुव्यवस्था कर रखी है। मार्गदर्शन के लिये उसने समय समय पर अपने पैग़म्बर–अवतार भेजे। सभी को उनके कर्मों के अनुरूप कर्मफल मिलता है — इस दुनिया में भी और अगले जीवन में भी। यह शिक्षा सिद्धांततः अति उच्च थी। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लसे पहले कोई महापुरुष इस शैक्षिक उच्चता को प्राप्त नहीं हुआ। लेकिन इस से भी कठिनतम कार्य यह था ,कि लोगों को अमलन उस स्थान पर खड़ा कर दिया जाए जहां जातिवाद, वर्णवाद, भाषावाद या राष्ट्रवाद जैसे तुच्छ भेदभाव मिट कर रह जाएं। अरबों को अपने वंश ,अपने देश और अपनी भाषा पर बड़ा नाज़ था। आधुनिक योरोपियन जातियों की भांति अरबों के यहाँ भी दूसरी कौमों के विरुद्ध भेदभाव ,घृणा या पक्षपात की भावना अति तीव्र थी। उन्हें अपनी भाषा पर बड़ा गर्व था। वह अरबी भाषा की सरसता ,मार्मिकता ,भावात्मकता तथा उसके लालित्य की तुलना में संसार की अन्य सभी भाषाओं को बिल्कुल तुच्छ समझते थे। इसी लिये वे अन्य कौमों को عَجَم ***"अजम"*** कहते थे जिसके माना हैं ***गूँगा*** , मतलब यह कि ग़ैर–अरबी लोग अपने मनोभावों

को पूर्णतया अभिव्यक्त नहीं कर सकते। عَجْمَآءُ " ***अज्माअु*** " ***पशु*** को कहते हैं , ***जो बोल नहीं सकता।*** जाति और वंश की दृष्टि से भी वे अपने आप को सर्वोच्च समझते थे। भले ही राजनैतिक रूप में वे एक ओर ईरानियों के और दूसरी ओर रोमियों के दबाव तले थे। लेकिन वे स्वयं को उन से उच्च जाति का इन्सान समझते थे। हबशियों के विषय में उनकी धारणा यह थी कि उनका अस्तित्व केवल गुलाम बनने के लिये ही है। अतः इस परिदृश्य में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके सामने सब से पहला महत्त्वपूर्ण कार्य यही था ,कि अरबों के दिल व दिमाग़ से वर्णवाद, जातिवाद और भाषावाद की यह सदियों पुरानी अवैज्ञानिक मान्यताएं दूर कर दी जायें। क्योंकि आगे अरबों ने ही आप के सर्वकालीन दिव्य सन्देश को अखिल संसार में पहुंचाना था।

व्यवहारिक एकता की प्रथम नींव

इन अवैज्ञानिक भेदभावों के समूल उच्चाटन का पथम उपचार–केन्द्र मस्जिद था। जहाँ मुसलमान पाँच वक्त एकत्र होते ,और जहाँ उनके समस्त जातिगत ,वंशगत ,वर्णगत तथा भाषागत भेदभाव अमलन समाप्त हो कर रह जाते। क्योंकि मस्जिद में एक हबशी गुलाम आपने मालिक के साथ कंधे से कंधा मिलाकर खड़ा होता। समानता का यह अभियास दिन में पांच पांच बार कराया जाता ,जिस का सहज परिणाम यही था कि लोग मस्जिद से बाहर भी एक दूसरे के प्रति समानता का सुव्यवहार करने लगे। शुरू शुरू में कुरैश के बड़े बड़े सरदार अहंकारवश हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की सभाओं और गोष्ठियों में शामिल न होते थे। क्योंकि वहाँ गुलाम हबशी तथा अन्य निम्नजातियों के लोग भी बिना किसी भेदभाव के पूरी स्वतंत्रता एवं मानसम्मान के साथ उपस्थित होते। जबकि अभिमान से चूर कुरैश की नज़र में उनका अस्तित्व कीड़े मकोड़ों से अधिक न था :

مَا نَرَىٰكَ إِلَّا بَشَرًا مِّثْلَنَا

وَمَا نَرَىٰكَ ٱتَّبَعَكَ إِلَّا ٱلَّذِينَ هُمْ أَرَاذِلُنَا بَادِىَ ٱلرَّأْىِ

मा नराक इल्ला बशरम् मिस्लना व मा नराकत् तबअक इल्लल्–लज़ीन हुम अराज़िलुना बादियर्राथि (11 : 27) ,

अर्थात्, " हम तुझे अपने जैसा इन्सान ही पाते हैं। और हम नहीं देखते कि किसी ने तेरा अनुसरण किया हो सिवाय उन लोगों के जो हम में सरसरी नज़र से ही नीचतम दिखाई देते हैं।"

وَمَآ أَنَا۠ بِطَارِدِ ٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓا۟ ۚ إِنَّهُم مُّلَٰقُوا۟ رَبِّهِمْ وَلَٰكِنِّىٓ أَرَىٰكُمْ قَوْمًا تَجْهَلُونَ

व मा अना बितारिदिल्लज़ीन आमनू इन्नहुम् मुलाकू रब्बिहिम् वलाकिन्नी अराकुम् कौमन तज्हलून (11 : 29) .

अर्थात्, " और मैं इन्हें नहीं निकाल सकता जो ईमान लाये हैं। वे निश्चय की अपने पालनहार–स्रष्टा से भेंट करने वाले हैं। परन्तु मैं तुम्हें एक ***जाहिल*** *(=अज्ञानी) कौम पाता हूँ।"*

وَلَآ أَقُولُ لِلَّذِينَ تَزْدَرِىٓ أَعْيُنُكُمْ لَن يُؤْتِيَهُمُ ٱللَّهُ خَيْرًا ۖ ٱللَّهُ أَعْلَمُ بِمَا فِىٓ أَنفُسِهِمْ ۖ

व ला अकूलु लिल्लज़ीन तज़्दरी आयुनुकुम् लंय् यूतियहुमुल्–लाहु ख़ैरन अल्लाहु आलमु बिमा फी अन्फुसिहिम (11 : 31) .

अर्थात्, " और न मैं उन के विषय में — जिन्हें तुम्हारी आँखें तुच्छ देखती हैं — यह कहता हूँ कि अल्लाह उनको कोई भलाई प्रदान नहीं करेगा — अल्लाह खूब जानता है जो उनके दिलों में है।"

वैसे तो इन आयतों का संबंध हज़रत नूहअ.स. से है, किन्तु इन में स्पष्ट संकेत हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की ओर ही है। अतएव आप को अलग से संबोधित कर फ़रमाया :

وَٱصْبِرْ نَفْسَكَ مَعَ ٱلَّذِينَ يَدْعُونَ رَبَّهُم بِٱلْغَدَوٰةِ وَٱلْعَشِىِّ يُرِيدُونَ وَجْهَهُۥ ۖ وَلَا تَعْدُ عَيْنَاكَ عَنْهُمْ تُرِيدُ زِينَةَ ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا ۖ وَلَا تُطِعْ مَنْ أَغْفَلْنَا قَلْبَهُۥ عَن ذِكْرِنَا وَٱتَّبَعَ هَوَىٰهُ وَكَانَ أَمْرُهُۥ فُرُطًا ﴿٢٨﴾

वस्बिर् नफ्सक मअल्लज़ीन यद्ऊन रब्बहुम बिल्ग़दावति वल्–अशीयि युरीदून वजहहू वला तअदु ऐनाक अन्हुम् तुरीदु

ज़ीनतल्– हयातिद्दुनिया वला तुतिअ मन् अग़्फ़ल्ना क़ल्बहू अन ज़िक्रिना वत्तबअ हवाहु व कान अम्रुहू फ़ुरुतन (18 : 28)

अर्थात् , *" और अपने आप को उन लोगों के साथ रोके रख जो सुबह व शाम अपने पालनहार–स्रष्टा को पुकारते हैं ,उसी की प्रसन्नता को चाहते हैं। और अपनी निगाहें इनकी ओर से हटा कर और तरफ न दौड़ा , (कि) तू सांसारिक जीवन की रमणीयता पर रीझ पड़े। और उसकी बात न मान जिस का दिल हम ने अपनी याद के प्रति निश्चेत बना दिया है ,और वह अपनी वासनाओं का अनुसरण करता है ,और उसका मामला गया गुज़रा है।"*

इस प्रकार कुरैश के कुलीन लोग और हबशी गुलाम पांच नमाज़ों में और अन्य धर्म–सभाओं में — जहाँ हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लअपना सन्देश पहुंचाते — समानता प्रदर्शित करते हुए एक ही स्तर पर एकत्र होते थे। जिस का परिणाम यह निकला कि मुसलमानों के मनमस्तिष्क से यह विचार मिटता चला गया कि नसल और रंग के आधार पर इन्सान छोटे बड़े हो सकते हैं। वे सामाजिक और कारोबारी मामलों में भी इसी प्रकार सब को एकसमान समझने लगे। फिर उन्हें यह भी बता दिया गया कि प्रतिष्ठा और सम्मान का आधार मनुष्य का वंश ,वर्ण या उसकी भाषा नहीं बल्कि इसका वास्तविक आधार मनुष्य की धर्मपरायणता और कर्तव्यनिष्ठा है :

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ إِنَّا خَلَقْنَـٰكُم مِّن ذَكَرٍ وَأُنثَىٰ وَجَعَلْنَـٰكُمْ شُعُوبًا وَقَبَآئِلَ
لِتَعَارَفُوٓا۟ ۚ إِنَّ أَكْرَمَكُمْ عِندَ ٱللَّهِ أَتْقَىٰكُمْ ۚ

याअय्युहन्नासु इन्ना ख़लक़नाकुम् मिन ज़करिंव् व उन्सा व जअल्नाकुम् शुअूबंव् व क़बाइल लितआरफ़ू इन्न अक्रमकुम् अिन्दल्लाहि अत्क़ाकुम (49 : 13) ,

अर्थात् , *" हे संसारवासियो ! हम ने तुम्हें एक पुरुष और एक स्त्री से पैदा किया, और तुम्हारे वंश और कबीले बनाये ताकि तुम एक दूसरे को पहचानो। निस्संदेह अल्लाह की दृष्टि में तुम में से प्रतिष्ठित वही है जो सर्वाधिक कर्तव्यनिष्ठ हो।"*

إمام ***इमाम*** यानि आध्यात्मिक पथप्रदर्शक का पद मुस्लिम समाज

का सर्वोच्च पद है ,यह पद भी वंश या त्वचा का रंग देख कर न मिलता था ,इस के योग्य उसी व्यक्ति को समझा जाता था जो कुर्आन का सर्वाधिक ज्ञाता हो। मस्जिद के दो ही पदाधिकारी थे ,एक مؤذن ***मुअज़्ज़िन*** (=*अज़ान देने वाला*) और दूसरा امام *इमाम* ,इस संदर्भ में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फ़रमाया :

" लोगों का इमाम वही होगा जो सब से अधिक अल्लाह की किताब का ज्ञाता हो।"

(मिश्कात 4 : 26)

" तुम में से अज़ान वह दे जो सब से ज़्यादा नेक हो ,और इमाम वह हो जो सब से ज़्यादा कुर्आन शरीफ़ का ज्ञान रखता हो।"

(मिश्कात 4 : 26)

स्वयं अपनी मस्जिद में ***मुअज़्ज़िन*** का काम आप ने हज़रत बिलालरज़. के सुपुर्द किया ,जो हबशी थे और गुलाम रह चुके थे। और आप स्वयं ***इमाम*** थे। इसके अतिरिक्त आप ने अरबों और हबशियों में मिल कर भोजन करने और रिश्ते–नाते करने की परंपरा स्थापित की। रंग और नसल के भेदभाव को यहाँ तक मिटा दिया गया ,कि न सिर्फ आध्यात्मिक क्षेत्र में ही एक हबशी अरबों पर प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकता था ,बल्कि हकूमत और प्रशासन के क्षेत्र में भी वह हाकिम और अरब लोग उसकी प्रजा बन सकते थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने फरमाया :

"(आदेश) सुनो और आज्ञाकारिता दिखाओ ,चाहे हकूमत एक हबशी को सौंपी गई हो , जिस का सिर किशमिश के दाना की तरह हो।"

*(**बुख़ारी** 10 : 54)*

अध्याय 7

इन्सान का उच्च स्थान

मनुष्य का परमात्मा के सिवाय किसी और के आगे झुकना मानवता का अपमान है

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल का मानवजाति पर एक और परम उपकार यह है कि आप ने इन्सान को सच मुच सृष्टि के शिखर पर आसीन कर दिखाया। आप की शिक्षानुसार इन्सान धरती के समस्त जीवों में सर्वश्रेष्ठ है। इसी लिये आप ने इन्सान को दूसरी चीज़ो के सामने झुकने से मना किया। तात्पर्य यह कि इस्लामी تَوْحِيْد *"तौहीद"* (=*विशुद्ध एकेश्वरवाद*) का सहज तकाज़ा यही है कि इन्सान सिर्फ एक परमात्मा के आगे झुके। अन्य सभी सृष्टि वर्गों पर उसे प्रधानता प्राप्त है। फल यह कि मनुष्य को किसी दूसरी वस्तु के समक्ष झुकना नहीं चाहिये :

قَالَ أَغَيْرَ ٱللَّهِ أَبْغِيكُمْ إِلَٰهًا وَهُوَ فَضَّلَكُمْ عَلَى ٱلْعَٰلَمِينَ

काल अग़ैरल्–लाहि अब्ग़ीकुम् इलाहंव् व हुव फ़ज़्ज़लकुम् अलल्–आलमीन (7 : 140) ,

अर्थात् ," *कह : क्या मैं तुम्हारे लिये अल्लाह के सिवा कोई और उपास्य ढूँढूँ जबकि उस ने तुम को समस्त सृष्टि–वर्गों पर प्रधानता दी है।*"

मनुष्य को ***फ़रिश्तों*** (=देवताओं) पर भी श्रेष्ठता प्राप्त है :

وَإِذْ قُلْنَا لِلْمَلَٰٓئِكَةِ ٱسْجُدُوا۟ لِءَادَمَ فَسَجَدُوٓا۟

व इज़् कुल्ना लिल्मलाअिकतिस्जुदू लिआदम फ़सजदू ,
अर्थात् ," *और जब हमने फ़रिश्तों से कहा : (मूलपुरुष)* ***आदम*** *के आगे झुक जाओ तो वे सब झुक गए।" (2 : 34)*

मूर्तिपूजा को इस लिये निंदनीय करार दिया गया कि इस से बढ़कर कोई और चीज़ इन्सान केलिये अपमानजनक नहीं :

قَالَ أَتَعْبُدُونَ مَا تَنْحِتُونَ ﴿٩٥﴾ وَاللَّهُ خَلَقَكُمْ وَمَا تَعْمَلُونَ ﴿٩٦﴾

अतअबुदून मा तन्हितून वल्–लाहु ख़लक़कुम् व मा तअमलून
अर्थात् ," क्या तुम उस की पूजा करते हो , जिसे तुम स्वयं अपने हाथों से गढ़ते हो ? जबकि अल्लाह ने तुम्हें रचा और उसे भी जो तुम बनाते हो ?" *(37 : 95–96)*

لِمَ تَعْبُدُ مَا لَا يَسْمَعُ وَلَا يُبْصِرُ وَلَا يُغْنِى عَنكَ شَيْئًا

लिम तअबुदु मा ला यस्मअु व ला युब्सिरु व ला युग़्नी अन्क शैअन (19 : 42) ,
अर्थात् ," *तू क्यों उस की पूजा करता है जो न सुनता है ,और न देखता है ,और न तेरे कुछ काम आ सकता है ?"*

परमात्मा के सिवा किसी और के आगे झुकना ,मानो अपने आपको प्रतिष्ठा और सम्मान के उस सर्वोच्च स्थान से नीचे गिराना है जो परमात्मा ने मनुष्य को प्रदान कर रखा है :

وَمَن يُشْرِكْ بِاللَّهِ فَكَأَنَّمَا خَرَّ
مِنَ السَّمَاءِ فَتَخْطَفُهُ الطَّيْرُ أَوْ تَهْوِى بِهِ الرِّيحُ فِى مَكَانٍ سَحِيقٍ

व मंय् युश्–रिक बिल्लाहि फ़कअन्नमा ख़र्र मिनस्समाअि फ़तख़्तफ़ुहुत्– तैरु अव् तह्वी बिहिर्रीहु फ़ी मकानिन् सहीक़िन् (22 : 31) ,
अर्थात् ," *और जो कोई अल्लाह के साथ किसी और को शरीक (=साझी) ठहराता है तो मानो वह बुलन्दी से गिर पड़ा ,फिर उसे पक्षी उचक ले गए या हवा ने उसे उड़ा कर किसी सुदूर स्थान पर फैंक दिया।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने महा पुरुषों और सन्त–महात्माओं के आगे झुकने को भी شرْك " **शिर्क** " (*अल्लाह के प्रति साझेदारी*) करार दिया :

اتَّخَذُوٓا۟ أَحْبَارَهُمْ وَرُهْبَـٰنَهُمْ أَرْبَابًا مِّن دُونِ ٱللَّهِ وَٱلْمَسِيحَ ٱبْنَ مَرْيَمَ وَمَآ أُمِرُوٓا۟ إِلَّا لِيَعْبُدُوٓا۟ إِلَـٰهًا وَٰحِدًا ۖ لَّآ إِلَـٰهَ إِلَّا هُوَ ۚ سُبْحَـٰنَهُۥ عَمَّا يُشْرِكُونَ

इत्तख़िज़ू अह्बारहुम् व रुहबानहुम् अर्बाबंम् मिन् दूनिल्–लाहि वल्–मसीहब्न मर्यम व मा उमिरू इल्ला लियअबुदू इलाहंव् वाहिदन् ला इलाह इल्ला हुव सुब्हानहु अम्मा युश्–रिकून *(9 : 31)* ,

अर्थात् ," *इन्हों ने अपने विद्वानों और संयासियों को अल्लाह के सिवाय* ***रब*** *बना लिया है , और मरयम के पुत्र मसीहा को (भी)। जबकि इन को इसके सिवा और कुछ आदेश न था कि एक परमात्मा की उपासना करें — उस के सिवा और कोई ईश्वर नहीं ,वह उस से पाक है जो वे उसके साथ साझी ठहराते हैं।"*

ब्रह्मांड की सभी वस्तुएं मनुष्य की सेवा के लिये रची गई हैं

इस बात को भी मानवता के लिये अपमानजनक ठहराया गया कि मनुष्य सूरज ,चाँद ,सितारों या अन्य प्राकृतिक शक्तियों की पूजा करे या उनके आगे नतमस्तक हो। क्योंकि ये सब चीज़ें इन्सान की निःशुल्क सेवा के लिये रची गई हैं। अतएव मनुष्य का यह परम कर्तव्य है कि वह इन चीज़ों को अपनी सेवा में लगाये ,न यह कि उलटा उन ही का सेवक बन जाये :

۞ ٱللَّهُ ٱلَّذِى سَخَّرَ لَكُمُ ٱلْبَحْرَ لِتَجْرِىَ ٱلْفُلْكُ فِيهِ بِأَمْرِهِۦ وَلِتَبْتَغُوا۟ مِن فَضْلِهِۦ

अल्लाहुल् लज़ी सख़्ख़र लकुमुल्–बह्र लितज्–रियल्–फुल्कु फ़ीहि बिअम्रिही व लितब्तग़ू मिन फ़ज़्–लिही ***(45 : 12)*** ,

अर्थात् ," *अल्लाह वह है जिस ने समुद्र (और दरिया) को तुम्हारे अधीन कर दिया ताकि उस की आज्ञा से उस में नौकाएं चलें ,और ताकि तुम उसका अनुग्रह तलाशो।"*

وَتَصْرِيفِ ٱلرِّيَٰحِ وَٱلسَّحَابِ ٱلْمُسَخَّرِ بَيْنَ ٱلسَّمَآءِ وَٱلْأَرْضِ

व तस्रीफ़िर्रियाहि वस्सहाबिल्–मुसख़्ख़रि बैनस्समाअि वल्–अर्ज़ि

अर्थात् ,"और हवाओं के फेरबदल में , और बादलों में जो आकाश और धरती के बीच अनुसेवी बनाये गए हैं।" (2 : 164)

وَسَخَّرَ ٱلشَّمْسَ وَٱلْقَمَرَ كُلٌّ يَجْرِىٓ إِلَىٰٓ أَجَلٍ مُّسَمًّى

व सख़्ख़रश्–शम्स वल्–क़मर कुल्लुन यज्–री इला अजलिन मुसम्मा (31 : 29) ,

अर्थात् ," उस ने सूरज और चाँद को निःशुल्क तुम्हारे काम में लगा रखा है — प्रत्येक एक पूर्वनिश्चित समय तक अपने अपने परिक्रमा–पथ पर चलता रहेगा।'

وَسَخَّرَ لَكُمُ ٱلْفُلْكَ لِتَجْرِىَ فِى ٱلْبَحْرِ بِأَمْرِهِۦ

وَسَخَّرَ لَكُمُ ٱلْأَنْهَٰرَ

व सख़्ख़र लकुमुल्–फ़ुल्क लितज्–रिय फ़िल्बह्–रि बिअम्रिही व सख़्ख़र लकुमुल्–अन्हार (14 : 32) ,

अर्थात् , " और नौकाओं को तुम्हारी सेवा में लगाया ,ताकि वे समुद्र में उसकी आज्ञा से चलें ,और दरयाओं को तुम्हारा अनुसेवी बनाया।".

وَسَخَّرَ لَكُمُ ٱلَّيْلَ وَٱلنَّهَارَ وَٱلشَّمْسَ وَٱلْقَمَرَ ۖ وَٱلنُّجُومُ مُسَخَّرَٰتٌۢ بِأَمْرِهِۦٓ

व सख़्ख़र लकुमुल्लैल वन्नहार वश्शम्स वल्–क़मर वन्–नुजूमु मुसख़्ख़रातुन बिअम्रिही इन्ना फ़ी ज़ालिक लआयातिल् – लिक़ौमिन यअक़िलून (16 : 12) ,

अर्थात् ," और उस ने रात और दिन को ,तथा सूरज और चाँद को तुम्हारे लिये काम में लगाया है। और सितारे भी उसी के हुक्म से बिना वेतन काम में लगाये गए हैं।"

وَسَخَّرَ لَكُم مَّا فِى ٱلسَّمَٰوَٰتِ وَمَا فِى ٱلْأَرْضِ جَمِيعًا مِّنْهُ

व सख़्ख़र लकुम् मा फ़िस्–समावाति व मा फ़िल्–अर्ज़ि जमीअंम्–मिन्हु (45 : 13) ,

अर्थात् ," *और जो कुछ आकाशों में है और जो कुछ धरती में है ,उस ने सब को अपनी कृपा से तुम्हारी सेवा में लगा दिया है।*"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰की शिक्षानुसार सृष्टि वर्गों में मनुष्य का स्थान एक विजेता का स्थान है ,उसे संपूर्ण सृष्टि का शासक बना कर भेजा गया है:

وَإِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلَٰٓئِكَةِ إِنِّى جَاعِلٌ فِى ٱلْأَرْضِ خَلِيفَةً

व इज़् क़ाल रब्बुक लिल्मलाअिकति इन्नी जाअिलुन फ़िल अर्ज़ि ख़लीफ़तन् (2 : 30) ,

अर्थात् ," *और जब तेरे पालनहार स्रष्टा ने फरिश्तों से कहा कि मैं धरती में उसे पैदा करने वाला हूँ जो वहाँ राज करेगा।*"

मनुष्य और ज्ञान–उपार्जन

इन्सान को ज्ञान उपार्जन की विशेष क्षमता प्रदान की गई है ,जिस के फलस्वरूप वह समस्त वस्तुओं का ज्ञान हासिल कर सकता है :

وَعَلَّمَ ءَادَمَ ٱلْأَسْمَآءَ كُلَّهَا

व अल्लम आदमल्–अस्माअ कुल्लहा (2 : 31) ,

अर्थात् ," *और उस ने (मूलपुरुष) आदम को सब नाम सिखाये।*"

अरब के लोग أُمِّى "***उम्मी***" यानि अनपढ़ थे ,पढ़ने लिखने का उनके यहाँ कोई चलन न था। स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰भी साक्षात أُمِّى ***उम्मी*** थे न लिखना जानते और न पढ़ना :

وَمَا كُنتَ تَتْلُوا۟ مِن قَبْلِهِۦ مِن كِتَٰبٍ وَلَا تَخُطُّهُۥ بِيَمِينِكَ

व मा कुन्तु तत्लू मिन् क़ब्लिही मिन् किताबिंव् व ला तख़ुत्तुहू बियमीनिक (29 : 48)

अर्थात् ," *और तू इस से पहले न कोई किताब पढ़ता था न अपने दायें हाथ से इसे लिखता था।*"

परन्तु हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]का सब से पहला सन्देश — जो मानवजाति के मार्गदर्शन हेतु आप को दिया गया — उस में लिखने और पढ़ने का ही हुक्म है :

اَقْرَاْ بِاسْمِ رَبِّكَ الَّذِي خَلَقَ ﴿١﴾

इक्रा बिस्मि रब्बिकल्–लज़ी ख़लक़ (96 : 1) ,
अर्थात् ," *अपने पालनहार–स्रष्टा के नाम से पढ़ जिस ने पैदा किया।*"

اقْرَأْ وَرَبُّكَ الْأَكْرَمُ ﴿٣﴾ الَّذِي عَلَّمَ بِالْقَلَمِ ﴿٤﴾ عَلَّمَ الْإِنسَانَ مَا لَمْ يَعْلَمْ

इक्रा व रब्बुकल्–अक्रमुल् लज़ी अल्लम बिल्क़लमि अल्लमल्–इन्सान मा लम् यअलम् (96 : 3–5) ,
अर्थात् ," *पढ़ और तेरा पालनहार–स्रष्टा अत्यन्त अनुग्रहशील है , जिस ने कलम द्वारा ज्ञान सिखाया — मनुष्य को वह कुछ सिखाया जो वह नहीं जानता था।*"

सृष्टि–वर्गों पर चिन्तनमनन

सिर्फ लिखने पढ़ने को ही महत्त्व नहीं दिया गया ,बल्कि यह शिक्षा भी दी गई कि इन्सान अपने इर्दगिर्द के सृष्टि वर्गों पर चिन्तन मनन द्वारा अपने ज्ञान में अभिवृद्धि करे :

وَكَأَيِّن مِّنْ آيَةٍ فِي السَّمَاوَاتِ وَالْأَرْضِ يَمُرُّونَ عَلَيْهَا
وَهُمْ عَنْهَا مُعْرِضُونَ ﴿١٠٥﴾

व कऐयिंम् मिन् आयतिन फ़िस्समावाति वल्–अर्ज़ि यमुर्रून अलैहा व हुम अन्हा मुअरिज़ून (12 : 105) ,
अर्थात् ," *और आकाशों और धरती में कितने ही निशान हैं कि जिन पर लोग (बिना चिन्तनमनन) गुज़र जाते हैं , और वे उन से मुँह फेरे हुए होते हैं।*"

إِنَّ فِي خَلْقِ السَّمَٰوَٰتِ وَالْأَرْضِ وَاخْتِلَٰفِ الَّيْلِ وَالنَّهَارِ
لَأَيَٰتٍ لِّأُوْلِي الْأَلْبَٰبِ ﴿١٩٠﴾ الَّذِينَ يَذْكُرُونَ اللَّهَ
قِيَٰمًا وَقُعُودًا وَعَلَىٰ جُنُوبِهِمْ وَيَتَفَكَّرُونَ فِي خَلْقِ السَّمَٰوَٰتِ
وَالْأَرْضِ رَبَّنَا مَا خَلَقْتَ هَٰذَا بَٰطِلًا

इन्न फ़ी ख़ल्क़िस्समावाति वल्–अर्ज़ि वख़्तिलाफ़िल् लैलि वन्नहारि लआयातिल्–लिऊलिल्–अल्बाब अल्लज़ीन यज़्कुरूनल्लाह क़ियामवं व क़ुऊदवं–व अलाजुनूबिहिम् व यतफ़क्करून फ़ी ख़ल्किस्– समावाति वल्–अर्ज़ि रब्बना मा ख़लक़्त हाज़ा बातिला
(3 : 189–190) ,

अर्थात् , *"निस्संदेह आकाशों और धरती की रचना में तथा रात और दिन की अदला–बदली में बुद्धिमानों के लिये अनेक निशान हैं ,जो खड़े और बैठे और लेटे हुए अल्लाह को याद करते रहते हैं ,और आकाशों और धरती की उत्पति के विषय में चिन्तनमनन करते रहते हैं। (उन के अन्तःकरण से स्वतः यह आवाज़ निकलती है) : हे हमारे पालनहार–स्रष्टा ! तू ने इस (सृष्टि) को बेकार पैदा नहीं किया।"*

जो ज्ञान इस तरह के चिन्तनमनन द्वारा प्राप्त होता है वह भी विश्वसनीय है ,क्योंकि यह भी बता दिया गया कि सारे ब्रह्मांड़ में प्रभु का ही विधान कार्यरत है :

الَّذِي خَلَقَ سَبْعَ سَمَٰوَٰتٍ طِبَاقًا مَّا تَرَىٰ فِي خَلْقِ الرَّحْمَٰنِ
مِن تَفَٰوُتٍ ——— ثُمَّ ارْجِعِ الْبَصَرَ كَرَّتَيْنِ يَنقَلِبْ إِلَيْكَ
الْبَصَرُ خَاسِئًا وَهُوَ حَسِيرٌ ﴿٤﴾

अल्लज़ी ख़लक़ सब्अ समावातिन् तिबाक़न् मा तरा फ़ी ख़लक़िर्–रहमानि मिन् तफ़ावुतिन्.....सुम्मर्–जिअिल्–बसर कर्रतैनि यन्क़लिब् इलैकल् बसरु ख़ासिअवं व हुव हसीरुन
(67 : 3–4) ,

अर्थात् ," *उस ने सात आकाशों को एक दूसरे के ऊपर पैदा किया। तू रहमान की रचना में कोई विसंगति नहीं पाये गा। फिर निगाह दौड़ा — क्या तू कोई अव्यवस्था देखता है ? .... पुनः नज़र को बार बार दौड़ा — तेरी नज़र तेरी ओर आश्चर्यचकित तथा थकी हुई लौट आये गी।*"

फिर यह भी बता दिया गया कि हर चीज़ जो अल्लाह ने रची है उसे एक निश्चित परिमाण ,एक निश्चित अन्दाज़े के अन्तर्गत पैदा किया गया है ,अतः वह अपनी पूर्वनिर्धारित सीमा से आगे नहीं जा सकती। और यह कि हर वस्तु की उन्नति और विकास का मार्ग पहले से ही निश्चित कर दिया गया है ,जिस पर चल कर ही वह परमावस्था को प्राप्त होती है : سَبِّحِ اسْمَ رَبِّكَ الْأَعْلَى ﴿١﴾ الَّذِي خَلَقَ فَسَوَّىٰ ﴿٢﴾ وَالَّذِي قَدَّرَ فَهَدَىٰ

सब्बिहिस्म रब्बकल् आलल्-लज़ी ख़लक़ फ़सव्वा वल्-लज़ी क़द्दर फ़हदा (87 : 1-3) ,

अर्थात् ," *अपने सर्वोच्च पालनहार-स्रष्टा के नाम का गुणगान कर ,जो सृष्टि रचता है ,फिर उसे परमावस्था तक पहुंचाता है ,वही (सृष्टे वस्तुओं को अन्दाज़ों अनुसार) परिमित करता है ,और फिर (उनका) मागदर्शन करता है।*"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ने इन्सान को दास से स्वामी बना दिया

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰का जन्म जिस ज़माना में हुआ ,उस समय इन्सान सभ्यता के उस स्तर पर आचुका था ,जहाँ वह अपने आप को प्रकृति की प्रत्येक शक्ति का दास समझता था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ने उसे इस दासता से निकाल उस उच्च स्थान पर आसीन कर दिया ,जहाँ से वह इन समस्त शक्तियों को वश में कर उनको अपनी सेवा में लगा सकता था। फल यह कि मुसलमान न केवल धार्मिक क्षेत्र में ही बल्कि ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में भी बहुत आगे निकल गए। यहाँ तक कि ज्ञान-विज्ञान के मामले में संसार की अन्य जातियों के शिक्षक बन गए। गिनती के कुछ की वर्षों में सारा अरब लिखने पढ़ने लग गया। फिर मुसलमान जहाँ जहाँ गये या जो जो राष्ट्र उन के अधिकार में आये ,वहाँ

भी शिक्षा का चलन आम हो गया। इस्लामी प्रशासन ने भी ज्ञान–विज्ञान के प्रसार हेतु जगह जगह विश्वविद्यालय और ज्ञानकेन्द्र स्थापित कर दिये, इस प्रकार ज्ञान–विज्ञान संबंधी अनुसंधान के द्वार खुल गये।[1]

इन्सान स्वभावतः पवित्र है

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ने जहाँ एक ओर भौतिक ज्ञान–विज्ञान और सभ्यता के द्वार खोल दिये ,वहीं दूसरी ओर इन्सान के आध्यात्मिक दृष्टिकोण में भी एक आश्चर्यजनक क्रांति उत्पन्न कर दी। सब से पहला वैचारिक परिवर्तन यह था कि जो भी मनुष्य पैदा होता है वह पवित्र प्रकृति लेकर पैदा होता है। चाहे उसका जन्म मुसलमान घराने में हो या गैर–मुस्लिम घराने में।

لَقَدْ خَلَقْنَا ٱلْإِنسَـٰنَ فِىٓ أَحْسَنِ تَقْوِيمٍ ﴿٤﴾

लक़द् ख़लक़्नल्–इन्सान फ़ी अह्सनित् तक़्वीमनि (95 : 4) ,
अर्थात् ," *निस्संदेह हम ने मनुष्य को सर्वोत्तम संरचना के अन्तर्गत पैदा किया।"*

فَأَقِمْ وَجْهَكَ لِلدِّينِ حَنِيفًا ۚ فِطْرَتَ ٱللَّهِ ٱلَّتِى فَطَرَ ٱلنَّاسَ عَلَيْهَا ۚ لَا تَبْدِيلَ لِخَلْقِ ٱللَّهِ ۚ ذَٰلِكَ ٱلدِّينُ ٱلْقَيِّمُ وَلَـٰكِنَّ أَكْثَرَ ٱلنَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٣٠﴾

फ़अक़िम् वज्हक लिद्दीनि हनीफ़ा फ़ित्रतल् लाहिल्– लती फ़तरन्– नास अलैहा ला तब्दील लिख़ल्क़िल्लाहि ज़ालिकद्दीनुल्–क़ैयिमु वलाकिन्न अक्सरन्–नासि ला यअलमून (30 : 30) ,
अर्थात् ,"' *सो एकाग्रचित होकर अपना ध्यान धर्म में केन्द्रित कर , अल्लाह की बनाई हुई मानव–प्रकृति पर स्थिर रह जिस के अन्तर्गत*

1. भारत के नोबेल प्राइज़ विजेता सर सी. वी. रमण (Sir C.V.Raman) के विचारानुसार हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰का मानवीय सभ्यता के प्रति सब से बड़ा योगदान उनका "एकेश्वरवाद" (=*तौहीद*) था ,इसी सिद्धांत ने इन्सान को अन्य सभी दासताओं से मुक्त कर उसके सामने ज्ञान–विज्ञान के सभी द्वार खोल दिये। (अनुवादक)

उस ने मनुष्यों को रचा है। अल्लाह की रचना में कोई बदलाव नहीं। यही स्थाई धर्म है — परन्तु अधिकतर लोग नहीं जानते।"

इस आयत की व्याख्या करते हुए हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने फ़रमाया :

"प्रत्येक मानव शिशु जब जन्म लेता है तो इन्सानी फ़ितरत (सहज स्वभाव) या सचे धर्म पर पैदा होता है ,फिर उसके माँ–बाप उसे यहूदी या ईसाई या मजूसी बना देते हैं।"

(***बुख़ारी*** 32 : 70)

बहुदेववादियों के नाबालग बच्चे स्वर्ग में

मतलब यह कि हर बच्चा चाहे उसका जन्म मुसलमान घराने में हो या किसी बहुदेववादी मूर्तिपूजक के ,या यहूदी ,या ईसाई के ,वह ***मुस्लिम*** (=*प्रभु के नियमों के प्रति समर्पित*) ही पैदा होता है , अर्थात् सही प्रकृति लेकर पैदा होता है। माँ या बाप की असत्य धारणाएं उसके वास्तविक यानि प्राकृतिक स्वभाव को बिगाड़ नहीं सकतीं। इस लिये इस तथ्य को भी स्वीकार किया गया कि तमाम बच्चे जो बालग होने से पहले मृत्यु को प्राप्त हो जाएं ,चाहे वह मुसलमानों के बच्चे हों या बहुदेववादियों के — सब स्वर्ग में जाते हैं। एक अन्य अवसर पर हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने अपना एक स्वप्न बयान किया कि मैं ने जन्नत में हज़रत इबराहीम[अ.स.] को देखा उनके चारों ओर सभी लोगों के वे बच्चे थे ,जो ***फ़ितरत*** की अवस्था में मृत्यु को प्राप्त हो गये ,यानि बालग़ होने से पहले मर गये।

इस पर बाज़ ***सहाबा*** (=अनुयायी साथियों) ने आप से प्रश्न पूछा :

" हे अल्लाह के रसूल ! क्या बहुदेववादियों की सन्तान भी ?"

आप ने उत्तर दिया :

" हाँ ! बहुदेववादियों की सन्तान भी।"

*(**बुख़ारी** 92 : 48)*

इन्सान के निष्पाप जन्म का विचार इन्सान के भीतर निष्पाप जीवन व्यतीत करने की शक्ति प्रदान करता है। अगर वह बुराई से बचता और पुण्यकर्म करता है ,तो यही उसके प्राकृतिक धर्म का सही प्रयोजन है। और अगर वह बुराई करता और नेकी को छोड़ता है तो वह अपनी فطرت ***फ़ितरत*** यानि सहज स्वभाव के विरुद्ध चलता है। ऐसा मनोभाव पाप पर

विजय पाने में मनुष्य का सहायक बनता है। क्योंकि वह जान लेता है कि नेकी मेरी فِطْرَت ***फ़ितरत***, मेरी प्रकृति की सहज आवाज़ है ,और बुराई मेरी فِطْرَت ***फ़ितरत*** ,मेरी इन्सानियत को बिगाड़ने वाली चीज़ है।

इन्सान में परमात्मा की आत्मा का फूंका जाना

हज़रत पैगम्बरश्रीसल्ल॰ने मानवजाति की एक और महत्त्वपूर्ण उत्कृष्टता की ओर भी ध्यान आकर्षित कराया। आप ने केवल इतनी ही घोषणा नहीं की कि इन्सान जन्मजात पापी नहीं ,उसकी فِطْرَت ***फ़ितरत*** ,उसकी प्रकृति नेक है ,बल्कि आप ने यह भी बताया कि हर इन्सान में ,जन्म लेने वाले प्रत्येक शिशु में परमात्मा की आत्मा फूंकी जाती है :

ٱلَّذِىٓ أَحْسَنَ كُلَّ شَىْءٍ خَلَقَهُۥ ۖ وَبَدَأَ خَلْقَ ٱلْإِنسَـٰنِ مِن طِينٍ ﴿٧﴾ ثُمَّ جَعَلَ نَسْلَهُۥ مِن سُلَـٰلَةٍ مِّن مَّآءٍ مَّهِينٍ ﴿٨﴾ ثُمَّ سَوَّىٰهُ وَنَفَخَ فِيهِ مِن رُّوحِهِۦ ۖ

अल्लज़ी अह्‌सन कुल्ल शैअिन ख़लक़हू व बदअ ख़ल्क़ल्–इन्सानि मिन् तीनिन् सुम्म जअल नस्लहू मिन् सुलालतिम् मिंम् माअिम् महीनिन् सुम्म सव्वाहु व नफ़ख़ फ़ीहि मिर्रुहिही *(32 : 7–9)*

अर्थात् , *" जिस ने प्रत्येक वस्तु को , जिस की उस ने रचना की , सुन्दर बनाया। और मनुष्य की रचना को मिट्टी से शुरू किया , फिर उस की नसल एक सारतत्त्व से चलाई ,जो एक तुच्छ पानी में आ जाता है। फिर उसके (शरीर का) पूर्ण गठन किया ,और अपनी आत्मा उस में फूंकी।"*

إِذْ قَالَ رَبُّكَ لِلْمَلَـٰٓئِكَةِ إِنِّى خَـٰلِقٌۢ بَشَرًا مِّن طِينٍ ﴿٧١﴾

فَإِذَا سَوَّيْتُهُۥ وَنَفَخْتُ فِيهِ مِن رُّوحِى فَقَعُوا۟ لَهُۥ سَـٰجِدِينَ ﴿٧٢﴾

इज़ क़ाल रब्बुक लिल्‌मलाअिकति इन्नी ख़ालिक़ुम् बशरम् मिन् तीनिन् फ़इज़ा सव्वैतुहू व नफ़ख़्तु फ़ीहि मिर्रुही फ़क़अू लहू साजिदीन *(38 : 71–72)* ,

अर्थात् ," *जब तेरे पालनहार–स्रष्टा ने फ़रिश्तों से कहा : मैं मिट्टी से एक मनुष्य रचने जा रहा हूँ। सो जब मैं उसका पूर्ण गठन कर लूँ , और अपनी आत्मा उस में फूंक दूँ , तो उसके प्रति समर्पण करते हुए गिर*

जाओ।"

ज़ाहिर है कि अल्लाह की जिस आत्मा के इन्सान में फूंके जाने की यहाँ चर्चा है ,वह साधारण प्राण नहीं जो समस्त जीवों में पाये जाते हैं। बल्कि यह वह आत्मा या रूह है जिसका सीधा संबंध परमात्मा से है। पैग़म्बर और सन्त–महात्मा इसी दिव्य संबंध को और अधिक उन्नत और सुदृढ़ करने के लिये प्रकट होते हैं। अविकसित अथवा बीजरूप में यह आत्मा प्रत्येक इन्सान में विद्यमान रहती है। इस आयत में इस तथ्य की ओर भी संकेत है कि मनुष्य की आत्मा का परमात्मा की आत्मा से एक प्राकृतिक संबंध है। यही संबंध उसके आध्यात्मिक जीवन का मूलाधार है। अधिकांश इन्सानों में فطرت ***फितरत*** की यह चमक कई प्रकार की अशुद्धताओं के कारण पूरे तौर पर अभिव्क्त नहीं हो पाती। हाँ ! एक पुण्यात्मा में यह दिव्य प्रकाश पूर्णरूपेण चमक उठता है ,जिस से उस के भीतर एक नवीन जीवन का एहसास जाग उठता है।

मानव–जीवन का उच्चतम उद्देश्य

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की शिक्षानुसार मनुष्य के जीवन की अन्तिम एवं उच्चतम उपलब्धि प्राकृतिक शक्तियों का वशीकरण नहीं ,हालांकि यह भी आप की शिक्षा का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। मनुष्य के जीवन का परम लक्ष्य इस से भी बुलंद है — यानि आत्मा का परमात्मा से साक्षात्कार। यह पावन अभिलाषा इन्सान की प्रकृति में बीज के समान पहले से ही मौजूद होती। मनुष्य अपने सुकर्मों द्वारा इस बीज को अंकुरित कर परवान चढ़ाता है। यहांतक कि परमात्मा से उस का संबंध चरम सीमा तक पहुंच जाता है। कुर्आन शरीफ़ ने इस रूहानी अवस्था का नाम نفس مطمئنة ***"नफ़से मुत्मअिनह"*** (=*सन्तुष्ट आत्मा*) रखा है। जब मनुष्य इस अवस्था को प्राप्त हो जाता है तो वह इसी जीवन में स्वर्ग का सुख भोगने लग जाता है। और इस को ***"परमात्मा की ओर लौट कर आना"*** इस लिये कहा है कि मनुष्य वास्तव में परमात्मा के यहाँ से ही आता है ,और जीवन का अन्तिम लक्ष्य भी परमात्मा के साक्षात्कार में ही पा लेता है :

يَٰٓأَيَّتُهَا ٱلنَّفْسُ ٱلْمُطْمَئِنَّةُ ﴿٢٧﴾

ٱرْجِعِىٓ إِلَىٰ رَبِّكِ رَاضِيَةً مَّرْضِيَّةً ﴿٢٨﴾ فَٱدْخُلِى فِى عِبَٰدِى ﴿٢٩﴾
وَٱدْخُلِى جَنَّتِى ﴿٣٠﴾

या अय्यतुहन्नफ़्सुल् मुत्मअिन्नतुर्जिअी इला रब्बिक राज़ियतम् मर्ज़ीयतन फ़द्ख़ुली फ़ी अिबादी वद्ख़ुली जन्नती

अर्थात् ," *हे सन्तुष्ट आत्मा ! अपने पालनहार–स्रष्टा की ओर लौट आ ,तू उस से राज़ी ,वह तुझ से राज़ी ,सो मेरे भक्तों में सम्मिलित हो जा ,और मेरे स्वर्ग में प्रवेश कर।" (89 : 27–30)*

कुर्आन शरीफ़ और हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की शिक्षानुसार मानव जीवन का अन्तिम लक्ष्य لقاءالله *"लिक़ाअुल्लाह"* (=*प्रभु–साक्षात्कार*) है :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلْإِنسَٰنُ إِنَّكَ كَادِحٌ إِلَىٰ رَبِّكَ كَدْحًا فَمُلَٰقِيهِ ﴿٦﴾

या अय्युहल्–इन्सानु इन्नक कादिहुन इला रब्बिक कद्हन फ़मुलाक़ीहि *(84 : 6),*

अर्थात् ,*"हे मनुष्य ! तू घोर साधना द्वारा अपने पालनहार–स्रष्टा को प्राप्त होने वाला है ,और अन्ततः उस से साक्षात्कार करने वाला है।"*

قَدْ خَسِرَ ٱلَّذِينَ كَذَّبُوا۟ بِلِقَآءِ ٱللَّهِ

क़द् ख़सिरल्–लज़ीन कज़्ज़बू बिलिक़ाअिल्–लाहि *(6 : 31) ,*

अर्थात् ," *वे लोग अवश्य घाटे में हैं जो अल्लाह से (अपनी) भेंट को झुठलाते हैं।"*

قَدْ خَسِرَ ٱلَّذِينَ كَذَّبُوا۟ بِلِقَآءِ ٱللَّهِ وَمَا كَانُوا۟ مُهْتَدِينَ ﴿٤٥﴾

क़द् ख़सिरल्–लज़ीन कज़्ज़बू बिलिक़ाअिल्–लाहि व मा कानू मुहतदीन

अर्थात् ," *वे लोग विनष्ट होगए जिन्हों ने अल्लाह की भेंट को झुठलाया और उन्हों ने मार्ग न पाया।" (10 : 45)*

يُدَبِّرُ ٱلْأَمْرَ يُفَصِّلُ ٱلْءَايَٰتِ لَعَلَّكُم بِلِقَآءِ رَبِّكُمْ تُوقِنُونَ

युदब्बिरुल्–अम्र युफ़स्सिलुल्–आयाति लअल्लकुम बिलिक़ाअि रब्बिकुम् तूक़िनून *(13 : 2) ,*

अर्थात् , *" वह (अपने) व्यापार का यथोचित विनियमन करता है , आयतों को खोल कर बयान करता है , ताकि तुम अपने पालनहार–स्रष्टा की भेंट का विश्वास करो।"*

وَإِنَّ كَثِيرًا مِّنَ ٱلنَّاسِ بِلِقَآيِ رَبِّهِمْ لَكَٰفِرُونَ ۝٨

व इन्न कसीरम्मिनन्–नासि बिलिक़ाअि रब्बिहम् लकाफ़िरून

अर्थात् , *" और निस्संदेह अधिकतर लोग अपने पालनहार–स्रष्टा की भेंट का इनकार करते हैं।" (30 : 8)*

भौतिक जीवन का आध्यात्मिक जीवन से संबंध

यह उदात्त एवं उत्कृष्ट धारणा कि सांसारिक जीवन मनुष्य का अन्तिम लक्ष्य नहीं ,और न प्राकृतिक शक्तियों पर विजय पाना ही मानव जीवन का असल उद्देश्य है। बल्कि हमारा यह वर्तमान जीवन असल में इस से भी उच्च मूल्यों को पहचाने का एक साधन मात्र है। इन्सानी जीवन का परम लक्ष्य मनावीय जीवात्मा का परमात्मा से पुनर्मिलन है। यही धारणा मरणोपरांत जीवन की बुनियाद है। वास्तव में यह दोनों जीवन कोई दो अलग अलग वस्तुएं नहीं। दोनों ही जीवन मूलतः एक हैं। क्योंकि वह दूसरा जीवन हमारे इस वर्तमान जीवन से ही उत्पन्न होता है।

وَمَن كَانَ فِى هَٰذِهِۦٓ أَعْمَىٰ فَهُوَ فِى ٱلْـَٔاخِرَةِ أَعْمَىٰ

व मन कान फ़ी हाज़िही आमा फ़हुव फ़िल्–आख़िरति आमा

अर्थात् , *" और जो कोई इस दुनिया में अँधा रहा वह दूसरी जिन्दगी में भी अँधा होगा।" (17 : 72)*

وَيُدْخِلُهُمُ ٱلْجَنَّةَ عَرَّفَهَا لَهُمْ ۝٦

व युद्–ख़िलुहुमुल्–जन्नत अर्रफ़हा लहुम् *(47 : 6) ,*

अर्थात् , *" और अल्लाह उन्हें जन्नत में प्रविष्ट करेगा , जिसकी पहचान उन्हें (यहीं) करा दी है।"*

अतः जिस लक्ष्य–प्राप्ति की ओर बार बार इन्सान का ध्यान आकर्षित कराया गया है ,कि वह उसे पाने की कोशिश करे ,वह परम लक्ष्य

" **प्रभु–प्रसन्नता** " है। और " **प्रभु–प्रसन्नता** " को दूसरी जिन्दगी का सब से बड़ा वरदान करार दिया गया है :

وَعَدَ ٱللَّهُ ٱلْمُؤْمِنِينَ وَٱلْمُؤْمِنَٰتِ جَنَّٰتٍ تَجْرِى مِن تَحْتِهَا ٱلْأَنْهَٰرُ خَٰلِدِينَ فِيهَا وَمَسَٰكِنَ طَيِّبَةً فِى جَنَّٰتِ عَدْنٍ ۚ وَرِضْوَٰنٌ مِّنَ ٱللَّهِ أَكْبَرُ ۚ ذَٰلِكَ هُوَ ٱلْفَوْزُ ٱلْعَظِيمُ ﴿٧٢﴾

वअदल्–लाहुल्–मुअमिनीन वल्मुअमिनाति जन्नातिन तज्री मिन् तह्–तिहल्–अन्हारु ख़ालिदीन फ़ीहा व मसाकिन तैयिबतन फ़ी जन्नाति अद्निन् व रिज़्–वानुंव्–मिनल्–लाहि अक्बरु ज़ालिक हुवल्–फ़ौज़ुल्–अज़ीमु *(9 : 72) ,*

अर्थात् ," *अल्लाह ने ईमान वाले पुरुषों और ईमान वाली स्त्रियों को बाग़ों का वचन दिया है ,जिन के नीचे नहरें बहती हैं — उन्हीं में रहेंगे। और सदाबहार बागों में पवित्र निवास–स्थानों का (वचन)। और अल्लाह की प्रसन्नता —जो सब से बड़ा वरदान है। यही महा सफलता है।"*

जिस तरह ईमान वालों को यह आदेश है कि वह इस जीवन में परमात्मा का स्तुतिगान करें ,उस जीवन में भी उनका रुचिकर्म यही स्तुतिगान होगा :

دَعْوَىٰهُمْ فِيهَا سُبْحَٰنَكَ ٱللَّهُمَّ وَتَحِيَّتُهُمْ فِيهَا سَلَٰمٌ ۚ وَءَاخِرُ دَعْوَىٰهُمْ أَنِ ٱلْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ ٱلْعَٰلَمِينَ ﴿١٠﴾

दअवाहुम् फ़ीहा सुब्हानकल्–लाहुम्म व तहिय्यतुहुम फ़ीहा सलामुन व आख़िरु दअवाहुम अनिल्–हम्दु लिल्–लाहि रब्बिल्–आलमीन

अर्थात् ," *उस (दूसर) जीवन में उनकी पुकार यही होगी कि ,हे अल्लाह ! तेरा व्यक्तित्व पवित्र और त्रुटिरहित है। और वहाँ उनका पारस्पारिक अभिवादन "सलाम" (="**शांति**") होगा। और उन की अन्तिम पुकार यह होगी : सब प्रशंसा अल्लाह के लिये है जो समस्त लोकलोकांतरों का पालन कर उन को उनके कमाल तक पहुंचाने वाला है।" (10 :10)*

मनुष्य की उन्नति और विकास का क्षेत्र असीम है

इस तरह इन्सान के स्वर्गीय जीवन की अन्तिम पुकार और इस जीवन की पहली पुकार एक ही है :

ٱلْحَمْدُ لِلَّهِ رَبِّ ٱلْعَٰلَمِينَ

अल्-हम्द् लिल्-लाहि रब्बिल्आलमीन ! (1 : 1)

यानि , *" सब प्रशंसा अल्लाह के लिये है जो समस्त लोकलोकांतरों का पालन कर उन को उनके कमाल तक पहुंचाने वाला है।"*

हाँ ! भौतिक परदों और बन्धनों के कारण यहाँ मनुष्य को इस आध्यात्मिक जीवन का आभास एक सीमित हद तक की हो पाता है । पर अगले जहान में उसके सामने उन्नति और विकास का एक सीमावहीन क्षेत्र खुल जाए गा। जहाँ एक बुलन्दी के बाद दूसरी बुलन्दी और दूसरी के बाद तीसरी बूलन्दी की ओर उसका आरोहण होगा ,और यह असीम क्रम चलता ही जएगा : لَٰكِنِ ٱلَّذِينَ ٱتَّقَوْا۟ رَبَّهُمْ لَهُمْ غُرَفٌ مِّن فَوْقِهَا غُرَفٌ مَّبْنِيَّةٌ

लाकिनिल्-लज़ीनत्तकव् रब्बहुम् लहुम् गुरफुम्-मिन् फ़ौक़िहा गुरफुम् मब्नीयतुन *(39 : 20) ,*

अर्थात् ,*" परन्तु जो लोग अपने पालनहार-स्रष्टा के प्रति कर्तव्यनिष्ठ रहते हैं ,उनके लिये उच्च स्थान हैं जिनके ऊपर और भी उच्च स्थान हैं।"*

نُورُهُمْ يَسْعَىٰ بَيْنَ أَيْدِيهِمْ وَبِأَيْمَٰنِهِمْ يَقُولُونَ رَبَّنَآ أَتْمِمْ لَنَا نُورَنَا وَٱغْفِرْ لَنَآ

नूरुहुम् यस्आ बैन अयदीहिम् व बिअयमानिहिम् यकूलून रब्बन अत्मिम् लना नूरना वग्-फ़िर्लना *(66 : 8) ,*

अर्थात् ,*" उनका प्रकाश उन के आगे और उनकी दायीं ओर दौड़ रहा होगा। कहें गे : हमारे पालनहार-स्रष्टा ! हमारा प्रकाश हमारे लिये पूर्ण कर दे ,और हमारा संरक्षण कर।"*

इस प्रकार हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी शिक्षा ने स्वयं जन्नत में भी मनुष्य के लिये उन्नति और विकास के नवीन क्षेत्र खोल दिये। वहाँ इन्सान

एक के बाद एक उच्चता के दरजे प्राप्त कर ऊपर ही ऊपर उठता चला जाता है। और उन्नति के पथ पर सतत् ऊपर जाने की यह इच्छा मनुष्य में कभी समाप्त न होगी। और उस की आत्मा एक के बाद एक उच्चता का दर्जा प्राप्त कर सदा ऊपर की ओर उड़ान भरती चली जाये गी।

आग रूहानी रोगों का अलाज है

वह लोग जिन्हों ने इस सांसारिक जीवन में दूसरे जीवन की प्राप्ति के मौके को गँवा दिया ,उन्हें भी अन्ततः नया जीवन दिया जाये गा।हाँ ! जो आध्यात्मिक रोग उन्हों ने स्वयं अपने हाथों अपने अन्दर पैदा कर लिये हैं उनके उपचार हेतु ,तथा उनको इन बीमारियों से रोगमुक्त करने के लिये एक आग की ज़रूरत होगी ,जिसे जहन्नम या नरक कहा जाता है।

इसी लिये कुर्आन शरीफ़ में एक स्थल पर नरक को पापियों का مولٰی ***मौला*** यानि ***मित्र*** कहा गया है *(57 : 15)* ,और दूसरी जगह उसे उनकी اُمّ ***उम्म*** यानि *माँ* कहा गया है *(101 : 9)*। मानो वे उसकी गौद में परवरिश पाकर एक नई ज़िन्दगी प्राप्त करें गे। अल्लाह ने समस्त इन्सानों को — आस्तिक हों या नास्तिक , ईमानधारी हों या काफिर — अपनी कृपादृष्टि के लिये पैदा किया है *(11 : 119)*। और परमात्मा का यह प्रयोजन पूर्ण होकर रहे गा। पापी लोग भी अपने पापों की सज़ा भोग कर ,और समस्त अशुद्धताओं से स्वच्छ होकर अन्ततः उस नवीन जीवन में प्रविष्ट होंगे। जैसा कि हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] की एक ***हदीस*** (=*कथन*) में कहा गया है कि — वे نہرِ حیات ***'नहरे हयात'*** (=*जीवन की नहर*) में डाले जाएंगे ,और अल्लाह एक मुठी भर कर उन लागों को भी जहन्नम से बहर निकाल लेगा जिन की नेकियां राई के दाने बराबर भी न होंगी। और इस प्रकार जहन्नम बिल्कुल खाली हो जाये गा :

> ***'जहन्नम पर एक समय आये गा जब एक भी इन्सान उसके अन्दर बाकी न रहे गा।'*** (कन्जुल्–उम्माल)
>
> ***''जहन्नम पर एक समय आये गा जब वह उस खेत के समान हो जायेगा जिस की खेती काट ली गई हो ,और वह एक समय तक हराभरा रहने के बाद खुशक होगया हो।''*** (*कन्जुल्–उम्माल*)

अध्याय 8

नमाज़ और प्रार्थना

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के तीन प्रथन कार्य

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] का एक और महा सेवा-कार्य यह है कि उन्होंने नमाज़ (प्रार्थना) को न सिर्फ व्यक्तिकगत उन्नति का प्रधान साधन ठहराया ,बल्कि प्रार्थना को उस अपूर्व संगठन और बंधुत्व की सुखद बुनियाद भी बना दिया जिस का निर्माण इस्लाम ने किया। सब से पहला पैग़ाम जो आप ने मानवजाति को सुनाया वह ,जैसा कि हम देख आये हैं, यही था कि ***पढ़ो और लिखो ताकि तुम्हें इ़ज्ज़त और प्रतिष्ठा का स्थान प्राप्त हो जाये***। आप की दूसरी ***वह्य*** या दूसरा पैग़ाम लोगों तक सत्य बात पहुंचाना और अपने रब यानि पालनहार-स्रष्टा की महिमा का गुणगान करना था :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلْمُدَّثِّرُ ۝١ قُمْ فَأَنذِرْ ۝٢ وَرَبَّكَ فَكَبِّرْ ۝٣

या अय्युहल्-मुदस्सिरु कुम् फ़अन्ज़िर् व रब्बक फ़कब्बिर

अर्थात् ," *हे चादर ओढ़ने वाले ! उठ और लोगों को सचेत कर, और अपने रब की महिमा कर।" (74 : 1-3)*

और तीसरा पैग़ाम यह था कि मनुष्य प्रार्थाना द्वारा प्रभु से संबंध स्थापित कर उत्तमोत्तम गतियों को प्राप्त हो सकता है :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلْمُزَّمِّلُ ۝١ قُمِ ٱلَّيْلَ إِلَّا قَلِيلًا ۝٢ نِّصْفَهُۥٓ أَوِ ٱنقُصْ مِنْهُ قَلِيلًا ۝٣

أَوْ زِدْ عَلَيْهِ وَرَتِّلِ ٱلْقُرْءَانَ تَرْتِيلًا ﴿٤﴾

या अय्युहल्-मुज़्ज़म्मिलु कुमिल्-लैल इल्ला क़लीलन निस्फ़हू अविन्कुस् मिन्हु क़लीलन् अव् ज़िद् अलैहि व रतलिल्-कुर्आन तर्तीला *(73 : 1–4)* ,

अर्थात् ," *हे कपड़ा ओढ़ने वाले ! रात को (नमाज़ में) खड़ा रह , सिवाय थोड़े भाग के , (अर्थात्) इसका आधा या उस से कुछ कम कर ले ,या इस पर बढ़ा ले ,और कुर्आन शरीफ़ को धीरे धीरे पढ़।"*

आशय यह कि न सिर्फ दिन को अल्लाह की उपासना कर ,बल्कि रात का अधिकांश भाग भी नमाज़ में ही गुज़ार। एक अन्य प्रारंभकालीन *वह्य* में आता है :

أَقِمِ ٱلصَّلَوٰةَ لِدُلُوكِ ٱلشَّمْسِ إِلَىٰ غَسَقِ ٱلَّيْلِ وَقُرْءَانَ ٱلْفَجْرِ إِنَّ قُرْءَانَ ٱلْفَجْرِ كَانَ مَشْهُودًا ﴿٧٨﴾ وَمِنَ ٱلَّيْلِ فَتَهَجَّدْ بِهِۦ نَافِلَةً لَّكَ عَسَىٰٓ أَن يَبْعَثَكَ رَبُّكَ مَقَامًا مَّحْمُودًا ﴿٧٩﴾

अक़िमिस्सलात लिदुलूकिश्-शम्सि इला ग़सक़िल्-लैलि व कुर्आनल्- फ़ज्र इन्नल्-कुर्आनल्-फ़ज्रि कान मश्हूदा व मिनल्-लैलि फ़तहज्जद् बिही नाफ़िलतल्-लक असा अंय्-यब्असक रब्बुक मक़ामम्-महमूदा *(17 : 78–79)* ,

अर्थात् ,*"सूरज ढलने से लेकर रात के अँधेरे तक नमाज़ को कायम रख ,और सुबह (की नमाज़ में) कुर्आन के पढ़ने को भी ,निस्संदेह सुबह के कुर्आन में एकाग्रता होती है। और रात के कुछ भाग में इस (कुर्आन) के साथ जागता रह। यह तेरे लिये "**नफ़ल**" के तौर है , आशा है कि तेरा रब तुझे बड़ी प्रशंसा के स्थान पर आसीन कर देगा।"*

इस में समस्त मानवजाति केलिये यह पैग़ाम था कि जो व्यक्ति गौरव और प्रतिष्ठा के उच्च पद पर आसीन होना चहता है ,उसे चाहिये कि दिन को भी प्रभु की उपासना करे और रात को भी। यद्यपि नमाज़ इन्सानी उन्नति का प्रधान साधन है ,तथापि मनुष्य को अपना सारा समय नामज़ में ही बितना नहीं चाहिए। साफ बता दिया कि नमाज़ को उसके नियमित वक्तों पर ही अदा करना चाहिए।

فَسُبْحَٰنَ ٱللَّهِ حِينَ تُمْسُونَ وَحِينَ تُصْبِحُونَ ﴿١٧﴾ وَلَهُ ٱلْحَمْدُ
فِى ٱلسَّمَٰوَٰتِ وَٱلْأَرْضِ وَعَشِيًّا وَحِينَ تُظْهِرُونَ ﴿١٨﴾

फ़सुब्हानल्–लाहि हीन तुम्सून व हीन तुस्बिहून व लहुल्–हम्दु फ़िस्–समावाति वल्–अर्ज़ि व अशीयंव् व हीन तुज़्–हिरून

अर्थात् ," *सो अल्लाह की महिमा करो ,जब तुम्हारा रात का समय होता है और जब तुम्हारा सुबह का समय होता है ,और उस के लिये आकाशों और धरती में प्रशंसा है , और पिछले पहर में भी (महिमा करो) और जब तुम्हारी दोपहर हो चुकी हो।" (30 : 17–18)*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने उपासना को मनुष्य के दैनिक व्यापार में शामिल किया

अल्लाह के इन्ही आदेशों के अन्तर्गत हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने नमाज़ के पाँच वक्त मुकर्रर किये। इन वक्तों पर मुसलमान एक जगह जमा होते और एक साथ नमाज़ अदा करते। आप ने दुआ और नमाज़ को एक स्थाई रूप दे दिया ,और इस बात को किसी व्यक्ति की मर्ज़ी पर नहीं छोड़ा कि जब उसे अवकाश मिले प्रार्थना कर लिया करे। नमाज़ या परमात्मा की ओर प्रवृत्ति को इन्सान के दैनिक कारोबार में इस तरह प्रविष्ट कर दिया कि इन्सान अपना काम–धन्दा भी करता रहे और एक निश्चित समय पर परमात्मा के आगे झुक जाए ,और उस से सहायता और मार्गदर्शन की याचना करे। فجر ***फ़जर*** की नमाज़ सुबह सो कर उठने के बाद है। ظهر ***ज़ुहर*** (तीसरे पहर के अग्रिम भाग की नमाज़) और عصر ***असर*** (तीसरे पहर के अन्तिम भाग की नमाज़) —ये दोनों नमाज़ें ठीक कामधन्दे के बीच हैं। और जब दिन समाप्त और सूरज अस्त होता है तो उस वक्त एक नमाज़ (यानि مغرب ***मग़रिब*** की नमाज़) है ,और फिर रात को आराम करने से पहले एक और नमाज़ (यानि عشاء ***इशाअ*** की नमाज़) है। ये पाँच नमाज़ें فَرض ***फ़र्ज*** यानि अनिवार्य नमाज़ें हैं।

नमाज़ को स्थाई रूप देने का उद्देश्य यही नज़र आता है कि इन्सान के दिल में परमात्मा के अस्तित्व का एहसास सुदृढ़ता से बद्धमूल हो जाये। आराम करके उठे तो परमात्मा को याद कर ले ,आराम करने जाये तो

परमात्मा को याद कर ले ,कामधन्दे की व्यस्तता में भी परमात्मा की याद का वक्त रख दिया ताकि कहीं कामकाज में इतना न फँस जाये कि परमात्मा को ही भूल जाये। कामधन्दे से फ़ारग होने पर भी परमात्मा को याद कर ले। यही सांसारिक कामधन्दे हैं जिन में फँस कर इन्सान परमात्मा को भूल जाता है। अतएव इन के बीच उसे बार बार याद दिलाया कि उसका एक मालिक भी है ,जो उसका पालनहार है ,जिस से सहायता माँगते रहना चहिये। उसको संमार्ग दिखाने वाला एक परोक्षद्रष्टा भी है जिस से वह यह प्रार्थना करे कि वह उसे सही और सीधे मार्ग पर चलाये। उसे यह भी याद दिलाया कि वह अपने समस्त कर्मों के लिये सब से ज़्यादा परमात्मा के सामने उत्तरदायी है। और जब उसे कोई खुशी या सफलता प्राप्त हो तो उस वक्त भी उसे याद रहे कि मैं परमात्मा की निर्बल रचना हूँ और मुझे जो कुछ प्राप्त होता है उसी के अनुग्रह द्वारा होता है। जब असफलता और मुसीबत का कोई दौर इन्सान की ज़िन्दगी में आये तो उस वक्त भी वह परमात्मा का सहारा ले और निराशा को अपने पास न आने दे ,बल्कि इस बात पर ईमान रखे कि जिस परमात्मा ने दुःख और असफलता भेजी है वह सुख और कामयाबी भी प्रदान करे देगा।

उपासना को शक्तिस्रोत बनाया

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की शिक्षा में दुआ और नमाज़ पर सर्वाधिक बल दिया गया है। मुसलमान का ध्यान बार बार इसी तथ्य की ओर आकर्षित कराया गया है ,ताकि परमात्मा के अस्तित्व पर विश्वास मनुष्य के भीतर एक ज़िन्दा शक्ति बन जाए। एक सच्चे मुसलमान की तीन विशेषताओं का वर्णन कुर्आन शरीफ़ की प्रारंभिक आयतों में यों मिलता है

ذَٰلِكَ ٱلْكِتَٰبُ لَا رَيْبَ فِيهِ هُدًى لِّلْمُتَّقِينَ ﴿٢﴾ ٱلَّذِينَ يُؤْمِنُونَ بِٱلْغَيْبِ
وَيُقِيمُونَ ٱلصَّلَوٰةَ وَمِمَّا رَزَقْنَٰهُمْ يُنفِقُونَ ﴿٣﴾

ज़ालिकल्–किताबु ला रैब फ़ीहि हुदल्–लिल्मुत्तक़ीनल् लज़ीन युअमिनून बिल्ग़ैबि व युक़ीमूनस्सलात व मिम्मा रज़क़्नाहुम युन्फ़िक़ून *(2 : 2–3) ,*

अर्थात् ," *यह किताब , इस में कोई संदेहात्मक बात नहीं ,कर्तव्यनिष्ठों को सही मार्ग पर चलाने वाली है , जो (अल्लाह की) परोक्ष (सत्ता) पर ईमान लाते हैं , और नमाज़ कायम करते हैं , और जो कुछ हम ने उन्हें दिया है उस में से (अल्लाह के मार्ग में) व्यय करते हैं।"*

यहाँ परमात्मा पर विश्वास के बाद पहली बात नमाज़ कायम करना है। मानो यह बताया है कि मनुष्य का अनदेखे परमात्मा पर ईमान नमाज़ द्वारा ही व्यवहारिक रूप धारण करता है। और नमाज़ का उद्देश्य यह है कि इन्सान का परमात्मा की सत्ता पर विश्वास बढ़ता चला जाये। और फिर नमाज़ के बाद परामत्मा के मार्ग में व्यय करने का उल्लेख यह बताने के लिये है ,कि नमाज़ से इन्सान के अन्दर परमात्मा द्वारा रची सृष्टि के प्रति स्नेह और सेवा भाव पैदा होता है। अतः सच्चे भक्त का यह कर्तव्य है कि वह अपने आप को जनसेवा में अर्पित कर दे। इसी लिए हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी शिक्षा में कल्याण और सफलता का मूलाधार नमाज़ को ठहराया गया है :

قَدْ أَفْلَحَ ٱلْمُؤْمِنُونَ ۝١ ٱلَّذِينَ هُمْ فِى صَلَاتِهِمْ خَٰشِعُونَ ۝٢

क़द अफ़्लहल्–मुअमिनूनल्–लज़ीन हुम् फ़ी सलातिहिम् ख़ाशिऊन

अर्थात् ," *ईमान वाले निश्चिय ही कामयाब हैं ,जो अपनी नमाज़ में विनम्रता प्रकट करते हैं। " (23 : 1–2)*

यहाँ कामयाबी के लिये मूल अरबी शब्द "فلاح "***फ़लाह***" प्रयुक्त हुआ है। "فلاح ***फ़लाह***" का अर्थ है *कामयाबी ,मनोरथ पालेना ,रूहानी और भौतिक दोनों प्रकार की भलाइयाँ हासिल कर लेना*। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की शिक्षानुसार नमाज़ या परमात्मा की ओर प्रवृत्ति ही वास्तविक सफलता है। इसी लिये *अज़ान* में حَيَّ عَلَى الصَّلٰوة ***'हय्य अलस्–सलाह"*** (=*नामाज़ के लिये आओ*) के तुरन्त बाद حَيَّ عَلَى الفَلَاح ***'हय्य अलल्–फ़लाह'***'(=*कामयाबी के लिये आओ*) पुकारा जाता है।

उपासना इन्सान के हृदय को पाक और ईश्वरीय सद्गुणों के रंग में रंग देती है

नमाज़ का उद्देश्य यह बताया गया है ,कि वह इन्सान के मनमस्तिष्क को हर तरह की अस्वच्छताओं से पाक ,और उसकी भीतरीय पापवृत्ति का

दमन कर देती है :

ٱتْلُ مَآ أُوحِىَ إِلَيْكَ مِنَ ٱلْكِتَٰبِ وَأَقِمِ ٱلصَّلَوٰةَ ۖ إِنَّ ٱلصَّلَوٰةَ تَنْهَىٰ
عَنِ ٱلْفَحْشَآءِ وَٱلْمُنكَرِ ۗ

उत्लु मा ऊहिय इलैक मिनल्–किताबि व अक़िमिस्सलात इन्नस्सलात तन्हा अनिल्–फ़ह्शाअि वल्–मुन्करि *(29 : 45) ,*
अर्थात् ," *उसे पढ़ जो तेरी ओर किताब से वह्य किया गया है , और नमाज़ को कायम रख क्योंकि नमाज़ अश्लीलता और बुराई से रोक देती है।"*

وَأَقِمِ ٱلصَّلَوٰةَ طَرَفَىِ ٱلنَّهَارِ وَزُلَفًا مِّنَ ٱلَّيْلِ ۚ إِنَّ
ٱلْحَسَنَٰتِ يُذْهِبْنَ ٱلسَّيِّـَٔاتِ ۚ

व अक़िमिस्सलात तरफ़यिन्नहारि व ज़ुल्फ़म्–मिनल्–लैलि इन्नल्–हसनाति युज़्–हिब्नस्सय्याति *(11 : 114) ,*
अर्थात् ," *और नमाज़ को क़ायम रख — दिन के दोनों छोरों में और रात के पहले भाग में। निस्संदेह नेकियां बुराइयों को दूर कर देती हैं।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने फरामया :

"मुझे बताओ कि यदि किसी के घर के द्वार के सामने नहर बह रही हो ,जिस में वह रोज़ पाँच बार नहाये ,तो क्या उसके शरीर पर कोई मैल रह जाये गी ? "

लोगों ने कहा : *नहीं !* तो आप ने फ़रमाया :

" यही पाँच नमाज़ों की मिसाल है जिन के द्वारा अल्लाह इन्सान के सारे दोष धो देता है। " (*बुख़ारी* 9 : 6)

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की शिक्षानुसार नमाज़ का प्रयोजन यही है कि मनुष्य की आत्मा परमात्मा में लीन हो जाये ,क्योंकि वही समस्त सद्गुणों और पवित्रओं का एकमात्र स्रोत और धारक है :

وَلِلَّهِ ٱلْأَسْمَآءُ ٱلْحُسْنَىٰ

व लिल्–लाहिल्–अस्माअुल्–हुस्ना (7 : 180) ,
अर्थात् ," *समस्त उच्चतम सद्गुण अल्लाह के लिये हैं।"*

لَهُ ٱلْأَسْمَآءُ ٱلْحُسْنَىٰ

लहुल्–अस्माउल्–हुस्ना (59 : 24),

अर्थात्, "*समस्त उच्चतम सद्गुण उसी के हैं।*"

आप ने यह भी फरमाया :

"तुम अपने आप को अल्लाह के सद्गुणों के रंग में रंग लो।"

तात्पर्य यह कि परमात्मा के साथ संबंध स्थापित करने का उद्देश्य यही है कि परमात्मा के सद्गुणों को आत्मसात कर लिया जाए :

"जब तुम में से कोई व्यक्ति नमाज़ पढ़ता है तो मानो वह अपने प्रभु के साथ गुप्त वार्तालाप करता है।" (***बुख़ारी*** 9 : 8)

नमाज़ पढ़ते समय नमाज़ी को ऐसा प्रतीत होना चाहिये कि मानो वह सचमुच अपने रचयिता और स्वामी के सामने खड़ा है :

" अल्लाह की उपासना इस तरह कर कि मानो तू उसे साक्षात देख रहा है, यदि तू उसे नहीं देखता तो वह निश्चय ही तुझे देख रहा है।" (***बुख़ारी*** 2 : 37)

وَٱسْتَعِينُوا۟ بِٱلصَّبْرِ وَٱلصَّلَوٰةِ ۚ وَإِنَّهَا لَكَبِيرَةٌ إِلَّا عَلَى ٱلْخَٰشِعِينَ ﴿٤٥﴾ ٱلَّذِينَ يَظُنُّونَ أَنَّهُم مُّلَٰقُوا۟ رَبِّهِمْ وَأَنَّهُمْ إِلَيْهِ رَٰجِعُونَ ﴿٤٦﴾

वस्तअीनू बिस्सब्रि वस्सलाति व इन्नहा लकबीरतुन इल्ला अलल्–ख़ाशिअीनल् लज़ीन यज़ुन्नून अन्नहुम् मुलाक़ू रब्बिहिम् व अन्नहुम् इलैहि राजिअून *(2 : 45–46)*,

अर्थात्, "*धैर्य और नमाज़ के साथ प्रभु की सहायता माँगते रहो। यह निश्चय ही बड़ा कठिन कार्य है, किन्तु उन के लिये (कठिन) नहीं जो विनम्रता प्रकट करते हैं, जो विश्वास रखते हैं कि वे अपने रब से भेंट करने वाले हैं, और उसी की ओर लौट कर जाने वाले हैं।*"

इन सब प्रवचनों और आदेशों का उद्देश्य यही था कि इन्सान के दिल में यह विश्वास पैदा हो कि वह इसी दुनिया में अपने पालनहार प्रभु से भेंट कर सकता है, और कम से कम नामज़ में वह ऐसा महसूस करे कि वह सचमुच अल्लाह के समक्ष खड़ा है।

परमात्मा से मार्गदर्शन और सहायता की याचना

नमाज़ के परम उद्देश्यों में से एक यह भी था कि इन्सान अपने आप को परमात्मा से अलग और दूर न समझे ,बल्कि हर दशा में परमात्मा से सहायता और मार्गदर्शन की याचना करता रहे। एक मुसलमान को सिखाया गया है कि वह दिन में लगभग चालीस बार यह प्रार्थना करे :

إِيَّاكَ نَعْبُدُ وَإِيَّاكَ نَسْتَعِينُ ۝٥ ٱهْدِنَا ٱلصِّرَٰطَ ٱلْمُسْتَقِيمَ ۝٦

इय्याक नअबुदु व इय्यक नस्तअीनु इह्–दिनस्सरातल्– मुस्तक़ीम

अर्थात् ," *(हे अल्लाह !) हम तेरी ही उपासना करते हैं और तुझी से सहायता माँगते हैं। तू हम को सीधे मार्ग पर चला।"* *(1 : 4–5)*

नमाज़ इन्सान का रूहानी भोजन है

अर्थ यह कि हर घड़ी मुसलमान का दिल अपने परमात्मा के साथ हो ,और हर हाल में परमात्मा की मदद और उसके मार्गदर्शन की तड़प उसके दिल में पैदा हो। एक स्थल पर नमाज़ को इन्सान की आत्मा का भोजन कहा गया है :

وَسَبِّحْ بِحَمْدِ رَبِّكَ قَبْلَ طُلُوعِ
ٱلشَّمْسِ وَقَبْلَ غُرُوبِهَا ۖ وَمِنْ ءَانَآئِ ٱلَّيْلِ فَسَبِّحْ وَأَطْرَافَ ٱلنَّهَارِ لَعَلَّكَ
تَرْضَىٰ ۝١٣٠ وَلَا تَمُدَّنَّ عَيْنَيْكَ إِلَىٰ مَا مَتَّعْنَا بِهِۦٓ أَزْوَٰجًا مِّنْهُمْ
زَهْرَةَ ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا لِنَفْتِنَهُمْ فِيهِ ۚ وَرِزْقُ رَبِّكَ خَيْرٌ وَأَبْقَىٰ ۝١٣١
وَأْمُرْ أَهْلَكَ بِٱلصَّلَوٰةِ وَٱصْطَبِرْ عَلَيْهَا ۖ لَا نَسْـَٔلُكَ رِزْقًا ۖ نَّحْنُ
نَرْزُقُكَ ۗ وَٱلْعَٰقِبَةُ لِلتَّقْوَىٰ ۝١٣٢

व सब्बिह बिहम्दि रब्बिक क़ब्ल तुलूअिश्–शम्सि व कब्ल ग़ुरूबिहा व मिन् आनाअिल्–लैलि फ़सब्बिह् व अत्राफ़न्नहारि लअल्लक तर्ज़ा व ला तमुद्दन्न अैनैक इला मा मत्तअना बिही अज़्वाजम्–मिन्हुम्

ज़हरतल्–हयातिद्दुनिया लिनफ़्तिनहुम फ़ीहि व रिज़्क़ु रब्बिक ख़ैरुवं–व अब्क़ा वामुर् अह्लक बिस्सलाति वस्तबिर अलैहा ला नस्अलुक रिज़्क़न नह्नु नर्ज़ुक़ुक वल्–आक़िबतु लित्तक़्वा

(20 : 130–132)

अर्थात् ,*" और सूरज निकलने से पहले और उसके अस्त होने से पहले अपने रब का प्रशंसायुक्त गुणगान कर ,और रात की घड़ियों में भी उसका गुणगान कर ,और दिन के दोनों छोरों में भी ,ताकि तू प्रसन्न हो जाये। और अपनी निगाहें उस (सुख सामग्री) के पीछे न थका जो हम ने उन में के विभिन्न वर्गों को इस सांसारिक जीवन की परीक्षा हेतु उपलब्ध की है। ताकि हम उन को इसके द्वारा आज़मायें ,और तेरे रब की जीविका सर्वोत्तम और चिरस्थाई है। और (हे मुहम्मद !) अपने अनुयायिओं को नमाज़ का आदेश दे और स्वयं भी इस पर कायम रह। हम तुझ से जीविका नहीं माँगते ,बल्कि तुझे जीविका प्रदान करते हैं। और उत्तम परिणाम बुराई से बचने वालों के लिये ही है।"*

इन आयतों में भौतिक या शारीरिक सुखसामग्री के मुकाबिल रूहानी सुख साधनों का उल्लेख है ,जिन को "خَيْر" ***ख़ैरुन*** "और أَبْقَى"***अब्क़ा***" (यानि *"सर्वोत्तम"* और *"चिरस्थाई"*) ,तथा तुम्हारे ***"रब की जीविका"*** अर्थात् रूहानी जीविका या भोजन कहा है। जिस प्रकार एक इन्सान अपने शरीर के अस्तित्व को बनाये रखने के लिये बार बार भोजन का मोहताज है ,उसी प्रकार वह अपने रूहानी अस्तित्व को बनाये रखने के लिये बार बार रूहानी भोजन का मोहताज है। सो बार बार नमाज़ पढ़ने का प्रयोजन यही है कि मनुष्य अपनी आत्मा के अस्तित्व को बनाये रखने केलिये उसे समय समय पर भोजन कराता रहे। यह रूहानी भोजन क्या है ? स्वयं को बार बार प्रभु की सेवा में उपस्थित करना और उस के अस्तित्व का एहसास अपने दिल पर अंकित करना।

उपासना को समानता और एकता का प्रबल साधन बनाया

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने नमाज़ को दो हिस्सों में विभाजित किया , एक वह जो इन्सान एकांत में अकेले अदा करे , दूसरा वह जो ***जमाअत*** के साथ

मस्जिद में अदा करे। एकांत की नमाज़ का मात्र प्रयोजन इन्सान की अन्तःशुद्धि ,उसको सर्वप्राकर के पापकर्मों से मुक्त करना है। लेकिन जमाअत नमाज़ का उद्देश्य इस के अतिरिक्त कुछ और भी हैं। वह यह कि मनुष्य–जाति के अन्दर एकता और सौहार्द का एक अमली रंग पैदा किया जाये। पाँच बार मस्जिद में एकत्र होने से प्रथमतः इन्सान के सामाजिक संबंध बढ़ते हैं। आम नमाज़ों में यह समारोह केवल एक मुहल्ले तक सीमित होता है। लेकिन कुछ नमाज़ें ऐसी भी रखी गई हैं जिन में इस समारोह का दायरा व्यापक होता चला जाता है। जैसे जुमा की नमाज़ , कि इस के लिये अनेक मुहल्लों के नमाज़ियों को ***जामअ*** यानि बड़ी मस्जिद में जमा होना होता है। और ईद की नमाज़ों में यह समारोह और भी विशाल रूप धारण कर लेता है। और साल में एक बार ***हज्ज*** के पावन अवसर पर दुनिया के सभी भूभागों से आये हुए लाखों मुसलमानों को एक ही स्थल पर एकत्र होने का सौभाग्य प्राप्त होता है।

इन समारोहों का सब से बड़ा प्रयोजन यही है कि मानवजाति को समानता की व्यवहारिक शिक्षा दी जाए ,और यह कि उन तमाम भेदभावों को मिटा दिया जाए जिन को इन्सानों ने स्वयं पैदा कर लिया है। ज्यों ही एक मुसलमान मस्जिद के दरवाज़े के अन्दर कदम रखता है ,वह अपना पद ,अपनी धनदौलत ,अपनी इ़ज़्ज़त व शोहरत —सब भूल जाता है। मस्जिद के अन्दर प्रवेश करते ही सब मुसलमान सच मुच ऐसा महसूस करने लगते हैं कि उन का परमात्मा एक है ,और प्रभु के समक्ष उनका स्तर और रूप भी एकसमान है ,अर्थात् वे सब उसी एकमात्र प्रभु के बन्दे हैं। पाँच वक्त का यही समारोह था जिस में समानता के इस्लामी सिद्धांत का अमली अभ्यास और ज्ञापन होता था। आप शब्दों द्वारा मानवीय समानता और बन्धुत्व का चाहे कितना ही लुभावना प्रचार क्यों न करें ,जब तक इस उद्धार सिद्धांत को अमलाया न जाये लोगों के दिल प्रभावित नहीं हो सकते। परमेश्वर की एकता के इक़रार ने मुसलमानों के भीतर मानवीय एकता को जन्म दिया। उनके दिलों में यह पावन भावना केवल नामज़ द्वारा ही परवान चढ़ी। और इसी सुखद भावना के व्यवहारिक प्रदर्शन ने मुसलमानों को संसार की अन्य सभी जातियों और कौमों में एक विशिष्ट स्थान प्रदान किया है।

हर समय और हर दशा में प्रार्थना की शिक्षा

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने प्रार्थना को या प्रभु के साथ संबंध स्थापित करने के भाव को केवल मस्जिद या नमाज़ तक ही सीमित नहीं रखा ,बल्कि आप ने यही चाहा कि यह पावन भावना हर वक्त इन्सान के दिल व दिमाग़ पर छायी रहे। अतएव उसे हर वक्त यह एहसास हो कि उसका एक सर्वशक्तिमान् परमात्मा है ,जिस के हाथ में हर चीज़ का नियंत्रण है। इस लिये हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने हर वक्त और हर दशा में प्रार्थना करते रहने की सीख दी। जब सोने के लिये बिस्तर पर लेटे उस वक्त भी दुआ करे, जब कामधन्दे के लिये घर से बाहर निकले उस वक्त भी दुआ करे, जब काम–धन्दा समाप्त कर घर के भीतर आये उस वक्त भी दुआ करे ,सफर को निकले तो दुआ करे ,सफर से वापस आये तो दुआ करे ,खाना खाना आरंभ करे तो दुआ करे ,खाना समाप्त करे तो दुआ करे ,किशती पर या किसी अन्य जानवर पर सवार हो तो दुआ करे ,किसी शहर में दाखिल हो तो दुआ करे। तात्पर्य यह कि जिस भी अवस्था में हो प्रभु से प्रार्थना करे। ऐसा करने से उसके दिल पर परमात्मा के अस्तित्व का पर्याप्त एहसास अंकित हो जाये गा ,और उसे यही लगे गा कि वह परमात्मा के सामने तथा उसी के संरक्षण में अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। सोते समय की दुआ यह है :

> ***" हे अल्लाह ! मैं अपनी जान तुझे सौंपता हूँ और अपने सारे कार्य तेरे सुपुर्द करता हूँ ,और अपना सारा ध्यान तेरी ओर केन्द्रित करता हूँ , और अपने लिये तेरी सहायता माँगता हूँ , तेरी ओर उत्सुकतापूर्वक आता हूँ और तुझ से भयभीत रहता हूँ। हे अल्लाह ! तेरे सिवा मेरे लिये न तो कोई शरण है और न मुक्ति का साधन। मैं तेरी किताब पर ईमान (-विश्वास) लाता हूँ ,जो तू ने (हमारे मार्गदर्शन हेतु) उतारी और तेरे नबी पर ईमान लाता हूँ जिसे तू ने भेजा।"*** (*बुख़ारी* 4 : 75 , 80 : 7)

नींद से उठते वक्त यह दुआ करे :

> ***" सब प्रशंसा अल्लाह के लिये है , जिस ने हमें मरणोपरांत जिवित किया ,उसी की ओर दूसरे जीवन में उठकर जाना है।***

अल्लाह के सिवा और कोई ईश्वर नहीं , वह एक है उसका कोई साझी नहीं। सारा राज्य उसी का है , और उसी के लिये समस्त प्रशंसा है , और उसे हर चीज़ पर सत्ताधिकार प्राप्त है।"

(*बुख़ारी* 80 : 6)

कामकाज या लोकव्यवहार आदि के लिये घर से निकले तो यह प्रार्थना करे :

" अल्लाह के नाम से। मैं अल्लाह पर भरोसा रखता हूँ। हे अल्लाह ! हम तेरी शरण माँगते हैं ,कि कहीं हम ठोकर न खायें,या पथभ्रष्ट न हो जायें ,या दूसरों पर जुलम न कर बैठें,या दूसरों से अज्ञानतापूर्वक पेश न आयें ,या फिर दूसरे हम से अज्ञानतापूर्वक पेश आयें।"

(*हिस्न हसीन*)

जब घर वापस आये तो यह प्रार्थना करे :

" हे अल्लाह ! मैं तुझ से विनति करता हूँ कि जब भी मैं घर में प्रविष्ट हूँ तो उत्तम रीति से प्रविष्ट हूँ ,और जब बाहर निकलूँ तो उत्तम रीति से निकलूँ। हम अल्लाह के नाम से दाखिल होते हैं और हम अल्लाह पर ही भरोसा करते हैं।"

(*हिस्न हसीन*)

भोजन करने से पहले परमात्मा से बरकत माँगे :

" अल्लाह के नाम से तथा उस के अनुग्रह से।"

(*हिस्न हसीन*)

भोजन कर लेने के बाद प्रभु की स्तुति करे :

" सब प्रशंसा अल्लाह के लिये है जिस ने हमें खाने और पीने को दिया और हमें मुस्लिम बनाया।" (*हिस्न हसीन*)

घर से सफर के लिये निकले तो यों प्रार्थना करे :

" हे अल्लाह ! हम अपने इस सफर में तुझ से प्रार्थना करते हैं कि तू हमें नेकी और धर्मपरायणता पर स्थिर रख और हमें ऐसे काम करने की तौफ़क़ (=सुयोग) प्रदान कर जिन से तू राज़ी हो। हे अल्लाह ! तू ही सफर में हमारा साथी है , और तू ही हमारे घरवालों का संरक्षक है।" (*हिस्न हसीन*)

किसी शहर में प्रवेश करते समय यह प्रार्थना करे :

" हे अल्लाह ! हम तुझ से इस शहर की और इस शहर के वासियों की भलाई माँगते हैं। और हम तुझ से इस शहर की तथा इस शहर के निवासियों की शरारत के प्रति तेरी शरण माँगते हैं। हे अल्लाह ! तू इस शहर के रहने वालों (के दिलों) में हमारा प्रेम डाल और इस शहर के रहने वालों में से नेक लोगों की प्रीति हमारे दिलों में डाल। " *(हिस्न हसीन)*

बीमार का कुशलमंगल पूछने जाये तो उस की सहत के लिये प्रार्थना करे :

" हे अल्लाह ! सब लोगों का प्रतिपालन करने वाले ! तू बीमारी को दूर कर ,तू ही स्वास्थ्य-दाता है ,कोई स्वास्थ्य नहीं सिवाय उसके जो तू प्रदान करे ,(इस बीमार को) ऐसा स्वास्थ्य प्रदान कर कि रोग का कोई असर शेष न रहे। " *(मिश्कात 5 : 1)*

नौका में सवार हो तो यह प्रार्थना करे :

" अल्लाह के नाम से इस का चलना और इस का ठहरना हो , मेरा रब रक्षा करने वाला ,दयालु है। " *(मिश्कात 5 : 2)*

जानवर पर सवार हो तो यह दुआ माँगे :

" पवित्रतास्वरूप एवं त्रुटिरहित है वह परम सत्ता जिस ने इसे हमारे काम में लगाया। हमें इस काम का सामर्थ्य प्राप्त न था। और हम सब अपने पालनहार-स्रष्टा की ओर ही लौट कर जाने वाले हैं। " *(मिश्कात 5 : 2)*

शारीरिक स्वच्छता ,वज़ू ,स्नान के समय अपनी आत्मा की शुद्धि के लिये भी प्रार्थना करे :

" हे अल्लाह मुझे उन में से बना जो तेरी ओर प्रवृत्त होते हैं , और मुझे उन में से बना जो पवित्रता धारण करते हैं। "

(हिस्न हसीन)

दुश्मन से मुकाबला के समय यह प्रार्थना करे :

" हे अल्लाह ! हम इन के मुकाबला में तेरी सहायता माँगते हैं, और इन की शरारतों के प्रति तेरी शरण माँगते हैं। "

(हदीस)

رَبَّنَا لَا تُؤَاخِذْنَآ إِن نَّسِينَآ أَوْ أَخْطَأْنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تَحْمِلْ عَلَيْنَآ إِصْرًا
كَمَا حَمَلْتَهُۥ عَلَى ٱلَّذِينَ مِن قَبْلِنَا ۚ رَبَّنَا وَلَا تُحَمِّلْنَا مَا لَا طَاقَةَ لَنَا بِهِۦ ۖ
وَٱعْفُ عَنَّا وَٱغْفِرْ لَنَا وَٱرْحَمْنَآ ۚ أَنتَ مَوْلَىٰنَا فَٱنصُرْنَا عَلَى ٱلْقَوْمِ ٱلْكَٰفِرِينَ

रब्बना ला तुआख़िज़्ना इन्नसीना अव् अख़्ताना रब्बना व ला तह्–मिल् अलैना इस्रन कमा हमल्तहू अलल्लज़ीन मिन् क़ब्लिना रब्बना व ला तुहम्मिल्ना मा ला ताक़त लना बिही वअफ़ु अन्ना वग़्–फ़िर्लना वर्हम्ना अन्त मौलाना फ़न्सुर्ना अलल्क़ौ मिल्काफ़िरीन (कुर्आन 2 : 286)

अर्थात्, *" हमारे पालनहार–स्रष्टा ! यदि हम भूल जाएं या हम से चूक हो जाये तो तू हमें उस पर न पकड़। हमारे पालनहार–स्रष्टा ! हम पर (प्रतिज्ञाभंग करने का) बोझ न डाल, जैसा तू ने उन पर डाला जो हम से पहले थे। हमारे पालनहार–स्रष्टा ! हम पर ऐसा बोझ न डाल जिस के उठाने की हम में शक्ति नहीं। (जो अपराध हम से हुए) वो हमें क्षमा करदे। और (भविष्य में) हमारा संरक्षण कर और हम पर दयादृष्टि कर और हमें काफ़िरों के मुकाबला में विजय दे।"*

अध्याय 9

जनसेवा

प्रभु–उपासना द्वारा जनसेवा की भावना का उदय

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की प्रारंभिक *वह्य* में यदि एक ओर परमात्मा की उपासना पर बल है , तो दूसरी ओर जनसेवा पर भी उतना ही बल मौजूद है। बल्कि आप की शिक्षानुसार वह उपासना ,वह पूजा–अरचना, वह इबादत एकदम बेकार है जिस से उपासक के मन में निस्स्वार्थ जनसेवा की भावना उत्पन्न न हो। प्रारंभ कालीन *सूरतों* में की एक छोटी सी *सूरत* यह है :

أَرَءَيْتَ ٱلَّذِى يُكَذِّبُ بِٱلدِّينِ ﴿١﴾ فَذَٰلِكَ ٱلَّذِى يَدُعُّ ٱلْيَتِيمَ ﴿٢﴾ وَلَا
يَحُضُّ عَلَىٰ طَعَامِ ٱلْمِسْكِينِ ﴿٣﴾ فَوَيْلٌ لِّلْمُصَلِّينَ ﴿٤﴾ ٱلَّذِينَ هُمْ عَن
صَلَاتِهِمْ سَاهُونَ ﴿٥﴾ ٱلَّذِينَ هُمْ يُرَآءُونَ ﴿٦﴾ وَيَمْنَعُونَ ٱلْمَاعُونَ ﴿٧﴾

अ रऐतल्–लज़ी युकज़्ज़िबु बिद्दीनि फ़ज़ालिकल्–लज़ी यदुअउल्–यतीम व ला यहुज़्ज़ु अला तआमिल्–मिस्कीनि फ़वैलुन लिल्मुसल्लीनल्–लज़ीन हुम् अन् सलातिहिम् साहूनल्–लज़ीन हुम् युराऊन व यम्नऊनल्माऊन *(107 : 1–7) ,*

अर्थात् ," *क्या तू ने उस व्यक्ति को देखा जो धर्म को झुठलाता है ? यह वही है जो अनाथ को धक्के देता है ,और अभावग्रस्त को भोजन कराने की प्रेरणा नहीं देता। अतः उन नमाज़ियों का नाश हो ,जो अपनी*

नमाज़ के प्रति असावधान हैं ,जो दिखावे केलिये (नेकी) करते हैं , और जनसेवा के लघुतम कार्यों को रोकते हैं।"

तात्पर्य यह कि उस उपासना से कोई लाभ नहीं जो उपासक के मन में मानवसेवा की भावना पैदा न करे। प्रभु की उपासना और जनसेवा — यही मनुष्य के वे दो उत्कृष्टतम सद्गुण हैं जिन की शिक्षा धर्म देता है। किन्तु इन दोनों में से ज़्यादा दुष्कर जनसेवा का ही कार्य है ,यह मानो ऊँची घाटी पर चढ़ना है :

فَلَا ٱقْتَحَمَ ٱلْعَقَبَةَ ﴿١١﴾ وَمَآ أَدْرَىٰكَ مَا ٱلْعَقَبَةُ ﴿١٢﴾ فَكُّ رَقَبَةٍ ﴿١٣﴾ أَوْ
إِطْعَـٰمٌ فِى يَوْمٍ ذِى مَسْغَبَةٍ ﴿١٤﴾ يَتِيمًا ذَا مَقْرَبَةٍ ﴿١٥﴾ أَوْ مِسْكِينًا ذَا
مَتْرَبَةٍ ﴿١٦﴾

फ़लक़्तहमल्–अक़बत व मा अद्राक मल्–अक़बतु फ़क्क़ु रक़बतिन अव् इत्आमुन् फ़ी यौमिन ज़ी मस्ग़बतिन् यतीमन् ज़ा मक़रबतिन अव् मिस्कीनन् ज़ा मत्रबतिन *(90 : 11–16) ,*

अर्थात् ," *हम ने इन्सान को दो ऊँचे रासते दिखा दिये हैं। परन्तु वह ऊँची घाटी पर चढ़ने का साहस नहीं करता। और तू क्या जाने कि वह ऊँची घाटी क्या है ? दास को दासता से मुक्त करना या भूख के समय निकटवर्ती अनाथ को या धूलग्रस्त दीनदरिद्र को खाना खिलाना।"*

अनाथ और दीनदरिद्र की सहायता करना ही काफ़ी न था। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने उनके मानसम्मान की शिक्षा भी दी :

كَلَّا ۖ بَل لَّا تُكْرِمُونَ ٱلْيَتِيمَ ﴿١٧﴾ وَلَا تَحَـٰٓضُّونَ عَلَىٰ طَعَامِ ٱلْمِسْكِينِ ﴿١٨﴾
وَتَأْكُلُونَ ٱلتُّرَاثَ أَكْلًا لَّمًّا ﴿١٩﴾ وَتُحِبُّونَ ٱلْمَالَ حُبًّا جَمًّا ﴿٢٠﴾

कल्ला बल् ला तुक्रिमूनल्–यतीम व ला तहाज़्ज़ून अला तआमिल्–मिस्कीनि व ताकुलूनत्तुरास अक्लल्–लम्मव् व तुहिब्बूनल्–माल हुब्बन जम्मा *(89 : 17–20) ,*

अर्थात् ," कदापि नहीं ! तुम अनाथ की इज़्ज़त नहीं करते न तुम ए दूसरे को मोहताज को खाना खिलाने की प्रेरणा देते हो ,और दा माल सारे का सारा समेट कर खा जाते हो ,और तुम धन को अति रखते हो।"

इन्सान को जो धन दिया गया है वह जमा करने के लिये नहीं दिया गया ,उस धन में गरीबों और अभावग्रस्तों का भी हक़ है। जो धनवान् जनसेवा रूपी इस हक़ को अदा नहीं करता उसे उसके सर्वनाश से डराया गया है :

إِنَّا بَلَوْنَٰهُمْ كَمَا بَلَوْنَآ أَصْحَٰبَ ٱلْجَنَّةِ إِذْ أَقْسَمُوا۟ لَيَصْرِمُنَّهَا مُصْبِحِينَ ﴿١٧﴾ وَلَا يَسْتَثْنُونَ ﴿١٨﴾ فَطَافَ عَلَيْهَا طَآئِفٌ مِّن رَّبِّكَ وَهُمْ نَآئِمُونَ ﴿١٩﴾ فَأَصْبَحَتْ كَٱلصَّرِيمِ ﴿٢٠﴾ فَتَنَادَوْا۟ مُصْبِحِينَ ﴿٢١﴾ أَنِ ٱغْدُوا۟ عَلَىٰ حَرْثِكُمْ إِن كُنتُمْ صَٰرِمِينَ ﴿٢٢﴾ فَٱنطَلَقُوا۟ وَهُمْ يَتَخَٰفَتُونَ ﴿٢٣﴾ أَن لَّا يَدْخُلَنَّهَا ٱلْيَوْمَ عَلَيْكُم مِّسْكِينٌ ﴿٢٤﴾ وَغَدَوْا۟ عَلَىٰ حَرْدٍ قَٰدِرِينَ ﴿٢٥﴾ فَلَمَّا رَأَوْهَا قَالُوٓا۟ إِنَّا لَضَآلُّونَ ﴿٢٦﴾ بَلْ نَحْنُ مَحْرُومُونَ ﴿٢٧﴾

इन्ना बलव्नाहुम कमा बलव्ना अस्हाबल्-जन्नति इज़् अक्समू लयस्रिमुन्नहा मुस्बिहीन व ला यस्तस्नून फ़ताफ़ अलैहा ताअिफुम् मिर्रब्बिक वहुम् नाअिमून फ़अस्बहत् कस्सरीमि फ़तनादव् मुस्बिहीन अनिग्दू अला हर्सिकुम् इन कुन्तुम् सारिमीन फ़न्तलकू व हुम यतख़ाफ़तून अंला यद्ख़ुलन्नहल् यौम अलैकुम मिस्कीनुवं व ग़दव् अला हर्दिन क़ादिरीन फ़लम्मा रअवहा क़ालू इन्ना लज़ाल्लून बल् नह्नु मह्रूमून (68 : 17–27) ,

अर्थात् ," *हम उनकी परीक्षा लेंगे जिस तरह हम ने बाग़ वालों की परीक्षा ली जब उन्हों ने कसमें खायीं कि सुबह होते ही उसके फल काटें गे ,और वे (गरीबों के लिये) एक भाग अलग न करते थे। सो उस बाग़ पर तेरे रब की ओर से फेरा लगाने वाली (विपदा) फेरा लगा कर चली गई, और वे सोते रहे। और उनका बाग़ कटी हुई खेती के समान हो गया। उधर सुबह होते ही उन्हों ने एक दूसरे को पुकारा ,कि अगर तुम ने अपनी खेती को काटना है तो सवेरे ही चलो। सो वे चल पड़े और आपस में चुपके चुपके कहते जाते थे कि आज हमारे पास कोई गरीब न आने पाये — वे गरीबों को रोकने की शक्ति रखते थे। और*

वे सवेरे ही जा पहुंचे ,लेकिन जब उसे देखा तो कहने लगे : हम रास्ता भूल गए हैं ,(फिर कहा) : नहीं ! हम तो वंचित किये गये हैं।"

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] आरंभकाल से ही
असहाय और अत्याचारग्रस्त लोगों के पक्षधर थे

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] अपने जीवन के आरंभकाल से ही असहाय और अत्याचारग्रस्त लोगों के पक्षधर थे। जवानी में ही आप ***"हिलफ अल्-फ़ज़ूल"*** नामक जनसेवी संस्था के सदस्य बन गये थे। इस संस्था का उद्देश्य यही था कि ज़ालिम और बलवान से अत्याचारग्रस्त और कमज़ोर का हक़ वापस दिलाया जाये। इस संस्था के प्रत्येक सदस्य का कर्तव्य था कि वह ज़ालिम के हाथ को रोक दे। इस संस्था का नेतृत्व हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] और आपके वंश बनू हाशिम को प्राप्त था।

जब कुरैश ने बारंबार अपने शिष्टमंडल अबू तालिब के पास भेजे कि उन्हें इस बात पर आमादा करें कि वे हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] को उनके हवाले कर दें ,ताकि वे लोग हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] से स्वयं निपट लें। उस अवसर पर अबू तालिब ने कुरैश को कविता में उत्तर दिया था , जिस में के कुछ दोहों का भाव यही था कि ,किया मैं उस व्यक्ति को तुम्हारे हवाले कर दूँ जो" ***अनाथों का संरक्षक और विधवाओं का आश्रय है ?*** "

जब हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] को *वह्य* द्वारा जनसुधार के महा कार्य पर नियुक्त किया गया ,और आप इस कार्य के महत्त्व और इसकी व्यापकता के भय से काँप उठे ,तो आपकी धर्मपत्नी हज़रत ख़दीजा[रज़] ने — जो आप के राज़ों से भलीभांति अवगत थीं — आप को यों तस्सली दी :

"ऐसा कदापि नहीं होगा ,अल्लाह आपको कभी असफल नहीं करे गा। क्योंकि आप रिश्तेदारों के प्रति अपना धर्म निभाते हैं ,और कमज़ोरों का बोझ उठाते हैं। जो स्वयं कमाने योग्य नहीं उसे कमा कर देते हैं और महमान की इ़ज़्ज़त करते हैं। और संकट में लोगों की मदद करते हैं।" *(बुख़ारी 1 : 1)*

दुनिया के नैतिक पतन पर
हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] की चिन्ता

मनुष्य मात्र के प्रति संवेदना और हमदर्दी आप के दिल में कूट कूट कर भरी हुई थी। आप को केवल लोगों के शारीरिक कष्टों की ही चिन्ता न थी

बल्कि उनकी आत्माओं को बचाने की प्रबल तड़प भी आप के सुकोमल हृदय में मौजूद थी। उनके नैतिक और आध्यात्मिक पतन पर भी आप का दिल कुढ़ता था। यह चिन्ता इतनी तीव्र थी कि कुर्आन शरीफ़ में इसका वर्णन यों आया है :

لَعَلَّكَ بَـٰخِعٌ نَّفْسَكَ أَلَّا يَكُونُوا۟ مُؤْمِنِينَ ﴿٣﴾

लअल्लक बाख़िउन नफ़्सक अल्ला यकूनू मुअमनीन (26 : 3) ,
अर्थात् ," *कदाचित तू अपने प्राण इस चिन्ता में विनष्ट कर देगा कि ये क्यों (परमात्मा पर) ईमान नहीं लाते ?* "

فَلَعَلَّكَ بَـٰخِعٌ نَّفْسَكَ عَلَىٰٓ ءَاثَـٰرِهِمْ إِن لَّمْ يُؤْمِنُوا۟ بِهَـٰذَا ٱلْحَدِيثِ أَسَفًا

फ़लअल्लक बाख़िउन नफ़्सक अला आसारिहिम इन लम् युअ्मिनू बिहाज़ल्-हदीसि असफ़ा (18 : 6) ,
अर्थात् ," *क्या तू इनके लिये चिन्तित हो कर अपने प्राण विनष्ट कर देगा ,कि ये परमात्मा की बताई हुई बात (क्यों) नहीं मानते ?* "

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने कमज़ोर और अत्याचारग्रस्त वर्गों को उनके अधिकार दिलाये

जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने समाज के लिये नियम लागू किये तो सब से पहले उस कुप्रथा को मिटा दिया जिस के अनुसार अनाथ बच्चे और विधवा औरत को विरासत से वंचित किया जाता था। अरब समाज का प्रधान नियम यही था कि दाय के माल का हक़दार वही है जो घोड़े की पीठ पर सवार होता है ,और अपने जातिजनों की दुश्मन से रक्षा करता है। ऐसे देश में जहाँ रात दिन जन्ग का सिलसिला जारी रहता था ,इस नियम का महत्त्व सचमुच बहुत ही बड़ा था। लेकिन ठीक उस समय जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लको युद्धों का समाना था ,और आप अपने छोटे से अनुयायी–समुदाय को दुश्मन की विशाल सेना से बचाने में लगे हुए थे, आप ने रक्षा करने वाले सैनिकों ,बेसहारा अनाथों और विधवा औरतों को एक ही स्तर पर लाकर खड़ा कर दिया :

لِّلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ

ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ مِمَّا قَلَّ مِنْهُ أَوْ كَثُرَ ۚ نَصِيبًا مَّفْرُوضًا ﴿٧﴾

लिर्रिजालि नसीबुन मिम्मा तरकल्–वालिदानि वल्–अक़्रबून व लिन्निसाअि नसीबुन मिम्मा तरकल्–वालिदानि वल्–अक़्रबून मिम्मा क़ल्ल मिन्हु अव् कसुर नसीबंम्–मफ़्रूज़ा *(4 : 7) ,*

अर्थात् *," पुरुषों के लिये उस (धन) में का एक भाग है जो (उन के) माता पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ जाएं ,और स्त्रियों केलिये (भी) उस में का एक भाग है जो (उन के) माता पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ जाएं , चाहे थोड़ा हो या बहुत — एक निश्चित भाग (सब का होगा)।"*

وَءَاتُوا۟ ٱلْيَتَٰمَىٰٓ أَمْوَٰلَهُمْ ۖ وَلَا تَتَبَدَّلُوا۟ ٱلْخَبِيثَ بِٱلطَّيِّبِ ۖ وَلَا تَأْكُلُوٓا۟
أَمْوَٰلَهُمْ إِلَىٰٓ أَمْوَٰلِكُمْ ۚ إِنَّهُۥ كَانَ حُوبًا كَبِيرًا ﴿٢﴾

व आतुल्–यतामा अम्वालहुम व ला ततबद्दलुल्–ख़बीस बित्तय्यिबि व ला ताकुलू अम्वालहुम इला अम्वालिकुम इन्नहू कान हूबन् कबीरा *(4 : 2) ,*

अर्थात् *," और अनाथों को उनका माल दे दो ,और अपनी रद्दी चीज़ों को उनकी अछी चीज़ों से न बदलो ,और उन के माल को अपने माल के साथ मिला कर हड़प न कर जाओ — यह महा पाप है।"*

अन्य लोगों के प्रति सौहार्द और सेवाभाव

अब हम हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ के कुछ पावन कथन प्रस्तुत करें गे जिन से आप को इस बात का सहज अनुमान हो जाए गा कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰की शिक्षा में साधारण सौहार्द और जनसेवा जैसे कोमल भावों को क्या महत्त्व हासिल था। और यह कि इस पावन शिक्षा को अमलाने में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰के अनुयायिओं ने कैसा कमाल कर दिखाया :

" जिस को अपने भाई की आवश्यकता की चिन्ता हो ,अल्लाह को उस की आवश्यकता की चिन्ता होती है। और जो कोई एक मुसलमान के कष्ट को दूर करता है अल्लाह क़ियामत के दिन के

कष्टों में से उसका एक कष्ट दूर कर देगा।"

(बुख़ारी 46 : 3)

" तू ईमान वालों को देखे गा कि वे एक दूसरे पर दया करने में ,एक दूसरे से प्रेम करने में ,एक दूसरे पर अनुग्रह करने में एक शरीर के समान हैं ,कि जिस के एक अंग में कोई पीड़ा हो तो सारा शरीर पीड़ित हो उठता है।"

(बुख़ारी 78 : 27)

" तुम्हारे गुलाम तुम्हारे भाई हैं। अल्लाह ने उन्हें तुम्हारे अधीन किया है। सो जिस व्यक्ति का भाई उसके अधीन हो उसे चाहिये कि जो स्वयं खाए उसे भी खिलाये ,और जो कपड़ा स्वयं पहने उसे भी पहनाये। और उन पर ऐसा काम न डालो जो उन्हें अभिभूत कर दे ,और यदि तुम उन से कोई घोर परिश्रम का काम लो तो उसके करने में उन की सहायता करो।" (बुखारी 2 : 22)

" जो व्यक्ति विधवा औरत और गरीब का कुछ काम करता है मानो वह वैसा ही है जो अल्लाह के मार्ग में जिहाद करता है ,या जो रात भर नमाज़ पढ़ता और दिन को रोज़ा रखता है।" (बुख़ारी 69 : 1)

" मैं और अनाथ का संरक्षक स्वर्ग में इन दो (ऊँगलियों) की तरह (साथ साथ) होंगे। " और यह कह कर आप ने अपनी दो ऊँगलियों की ओर इशारा किया यानि तर्जनी और बीच वाली ऊँगली की ओर।" (बुखारी 78 : 24)

" अल्लाह उस पर दया नहीं करता जो इन्सानों पर दया नहीं करता। " (बुख़ारी 78 : 18)

" वह हम में से नहीं जो हमारे छोटों पर दया नहीं करता और हमारे बड़ों का सम्मान नहीं करता।" (मिश्कात)

बेज़ुबान जीवजन्तुओं पर दया

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰के सुकोमल हृदय में केवल इन्सानों के लिये ही दयाभाव न था ,बल्कि उसमें बेज़ुबान जीवजन्तुओं के लिये भी दयालुता की

तरंगें मचलती थीं। आप ने फ़रमाया :

" ***बेज़ुबान पशुओं के मामले में अल्लाह से डरो। उन पर सवारी करो जब वे अछी हालत में हों ,उन के माँस का सेवन भी उसी वक्त करो जब वे अछी हालत में हों।***"

(अबू दाऊद 15 : 43)

" ***एक व्यभिचारिणी के पाप क्षमा कर दिये गये ,वह एक कुत्ते के पास से गुज़री जो एक कुँवें पर अपनी ज़ुबान निकाले हाँप रहा था ,प्यास के मारे मृत्यु के निकट था ,उस स्त्री ने अपना चमड़े का मोज़ा उतारा और उसे अपने दुपट्टे से बाँध उस में कुत्ते के लिये कुँवें से पानी निकाला। इस (पुण्यकर्म) के कारण उस के पाप क्षमा कर दिये गये।***"

सहाबारज़. ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.से निवेदन किया , कि क्या पशुओं के प्रति सुव्यवहार के लिये भी पुण्यफल होगा ? आप ने फरमाया :

" ***प्रत्येक जीवजन्तु के साथ ,जो जान रखता हो ,नेकी करने का एक पुण्यफल है।***" *(मिश्कात 6 : 6)*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल. की उद्धारता और दानशीलता

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.की उद्धारता और दानशीलता लोकोक्ति के तौर पर दशे भर में मशहूर थी। आप ने कभी किसी याचक को ,जिस ने आप से कुछ माँगा , ***"नहीं"*** नहीं कहा। जब *सहाबा*रज़.आप की दानशीलता की चर्चा करते तो आप को أجْوَدُ النَّاس ***"अज्वदुन्नास"*** कहते थे , अर्थात् *सब लोगों से अधिक उद्धार और दानशील*। और आप की उद्धारता और दानशीलता की मिसाल यों दिया करते थे :

" ***हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.उस हवा से भी अधिक उद्धार और दानशील थे जो अच्छे बुरे सब पर चलती है।***"

(बुख़ारी 1 : 1)

परमात्मा के प्रेम को जनसेवा की नींव ठहराया

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.अपने अनुयायिओं को सदा यही सीख देते थे कि वे दूसरों के प्रति उद्धारता और दानशीलता प्रकट करें। आप ने अपनी

धर्मशिक्षा का सारांश इन दो वाक्यो में बयान किया है :

طاعةٌ لامْرِالله شفقةٌ على خَلْق الله

"ताअतुन लिअम्-रिल्लाहि शफ़क़तुन अला ख़ल्-क़िल्लाहि"

अर्थात् , *" अल्लाह के प्रति आज्ञाकारिता और उसके रचे प्राणीमात्र के प्रति सौहार्द।"*

प्राणीमात्र के प्रति आप का यह अगाध प्रेम परमात्मा के प्रेम के कारण ही था। इसी लिये आप की शिक्षा में इस बात पर अत्यन्त ज़ोर है कि तुम्हारे प्राणीमात्र के प्रति प्रेम का मूल–आधार प्रभुप्रेम हो :

وَيُطْعِمُونَ ٱلطَّعَامَ عَلَىٰ حُبِّهِۦ مِسْكِينًا وَيَتِيمًا وَأَسِيرًا ﴿٨﴾ إِنَّمَا نُطْعِمُكُمْ لِوَجْهِ ٱللَّهِ لَا نُرِيدُ مِنكُمْ جَزَآءً وَلَا شُكُورًا ﴿٩﴾

व युत्अिमूनत्–तआम अला हुब्बिही मिस्कीनंव् व यतीमंव् व असीरा इन्नमा नुत्अिमुकुम् लिवज्हिल्लाहि ला नुरीदु मिन्कुम् जज़ाअंव् व ला शुकूरा *(76 : 8–9) ,*

अर्थात् ,*" और (ईमान वाले) परमात्मा के प्रेम हेतु गरीब और अनाथ और कैदी को भोजन कराते हैं। (और कहते हैं) : हम तुम्हें केवल अल्लाह की प्रसन्नता हेतु भोजन कराते हैं ,हम तुम से न कोई बदला चाहते हैं और न धन्यवाद।"*

وَلَٰكِنَّ ٱلْبِرَّ مَنْ ءَامَنَ بِٱللَّهِ وَٱلْيَوْمِ ٱلْءَاخِرِ وَٱلْمَلَٰٓئِكَةِ وَٱلْكِتَٰبِ وَٱلنَّبِيِّۦنَ وَءَاتَى ٱلْمَالَ عَلَىٰ حُبِّهِۦ ذَوِى ٱلْقُرْبَىٰ وَٱلْيَتَٰمَىٰ وَٱلْمَسَٰكِينَ وَٱبْنَ ٱلسَّبِيلِ وَٱلسَّآئِلِينَ وَفِى ٱلرِّقَابِ

व लाकिंनल्–बिर्र मन् आमन बिल्लाहि वल्यौमिल्–आख़िरि वल्–मलाअिकति वल्–किताबि वन्नबीयीन वआतल्–माल अला हुब्बिही ज़विल्–कुर्बा वल्–यतामा वल्–मसाकीन वब्नस्–सबीलि वस्साअिलीन व फ़िर्रिक़ाबि *(2 : 177) ,*

अर्थात् ,*"और बड़ी नेकी यह है कि एक व्यक्ति अल्लाह पर और अन्तिम दिन पर और फ़रिश्तों पर और किताब पर और नबियों पर ईमान लाये । और अल्लाह के प्रेम हेतु निकट संबंधियों और अनाथों और गरीबों और मुसाफिरों और माँगने वालों और कैदियों के छुड़ाने के लिये*

धन व्यय करे।"

وَمَثَلُ ٱلَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَٰلَهُمُ ٱبْتِغَآءَ مَرْضَاتِ ٱللَّهِ وَتَثْبِيتًا مِّنْ أَنفُسِهِمْ كَمَثَلِ جَنَّةٍۭ بِرَبْوَةٍ أَصَابَهَا وَابِلٌ فَـَٔاتَتْ أُكُلَهَا ضِعْفَيْنِ فَإِن لَّمْ يُصِبْهَا وَابِلٌ فَطَلٌّ

व मसलुल्–लज़ीन युन्फ़िकून अम्वालहुमुब्तिग़ाअ मर्–ज़ातिल्लाहि व तस्बीतम्–मिन् अन्फ़ुसिहिम कमसलि जन्नतिम् बिरब्वतिन असाबहा वाबिलुन फ़आतत् उकुलहा ज़िअफ़ैनि फ़इंल्लम् युसिब्हा वाबिलुन फ़तल्लुन *(2 : 265) ,*

अर्थात् *," उन लोगों की उपमा जो अपना धन अल्लाह की प्रसन्नता पाने के लिये तथा अपनी आत्माओं को सुशक्त करने केलिये व्यय करते हैं ,उस बाग़ के दृष्टिांत सरीखी है जो ऊँची उपजाऊ भूमि पर हो ,फिर उस पर ज़ोरदार वर्षा हो तो वह अपनी उपज दुगुनी कर दे ,और यदि उस पर ज़ोर की वर्षा न बरसे ,हल्की फुहार ही काफी हो जाये।"*

नैतिकता के इस पावन स्रोत से जो दानशीलता और उद्धारता प्रकट होती है वह मनुष्य के माल को बढ़ाती है :

فَـَٔاتِ ذَا ٱلْقُرْبَىٰ حَقَّهُۥ وَٱلْمِسْكِينَ وَٱبْنَ ٱلسَّبِيلِ ۚ ذَٰلِكَ خَيْرٌ لِّلَّذِينَ يُرِيدُونَ وَجْهَ ٱللَّهِ ۖ وَأُو۟لَـٰٓئِكَ هُمُ ٱلْمُفْلِحُونَ ﴿٣٨﴾ وَمَآ ءَاتَيْتُم مِّن رِّبًا لِّيَرْبُوَا۟ فِىٓ أَمْوَٰلِ ٱلنَّاسِ فَلَا يَرْبُوا۟ عِندَ ٱللَّهِ ۖ وَمَآ ءَاتَيْتُم مِّن زَكَوٰةٍ تُرِيدُونَ وَجْهَ ٱللَّهِ فَأُو۟لَـٰٓئِكَ هُمُ ٱلْمُضْعِفُونَ ﴿٣٩﴾

फ़आति ज़ल्क़ुर्बा हक़्क़हू वल्–मिस्कीन वब्नस्सबीलि ज़ालिक ख़ैरुल्–लिल्लज़ीन युरीदून वज्हल्लाहि व ऊलाअिक हुमुल्–मुफ़लिहून व मा आतैतुम मिन् रिबल्–लियर्बू फ़ी अम्वालिन्नासि फ़ला यर्बू अिन्दल्लाहि वमा आतैतुम मिन ज़कातिन तुरीदून वज्हल्लाहि फ़ऊलाअिक हुमुल्–मुज़्–अिफ़ून *(30 : 38–39)*

अर्थात् *," और निकटवर्ती रिश्तेदार को उसका हक़ दे , और निर्धन और मुसाफिर को भी । यह व्यवहार उनके लिये उत्तम है जो अल्लाह की प्रसन्नता के इच्छुक हैं ,और यही सफल होने वाले हैं। और जो धन तुम*

*ब्याज पर देते हो ,कि लोगों के धन में (ब्याज) बढ़ता रहे ,तो वह अल्लाह के यहाँ नहीं बढ़ता। और जो कुछ तुम "**ज़कात**" के रूप में देते हो , अल्लाह की प्रसन्नता चाहते हुए — तो यही वो हैं जिन का माल कई गुना होता चला जाता है।"*

दान–पुण्य से माल बढ़ता है

दान–पुण्य से माल की जो बढ़ोती होती है ,उस की उपमा बीज के उस दाने से दी गई है ,जो बोया जाये तो सात गुना बल्कि उस से भी कई गुना हो जाता है :

مَّثَلُ ٱلَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَٰلَهُمْ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ كَمَثَلِ حَبَّةٍ أَنۢبَتَتْ سَبْعَ سَنَابِلَ فِى كُلِّ سُنۢبُلَةٍ مِّا۟ئَةُ حَبَّةٍ ۗ وَٱللَّهُ يُضَٰعِفُ لِمَن يَشَآءُ ۗ وَٱللَّهُ وَٰسِعٌ عَلِيمٌ ﴿٢٦١﴾

मसलुल्लज़ीन युन्फ़िक़ून अम्वालहुम् फ़ी सबीलिल्लाहि कमसलि हब्बतिन अम्बतत् सब्अ सनाबिल फ़ी कुल्लि सुम्बुलतिम् मिअतु हब्बतिन वल्लाहु युज़ाअिफु लिमंय्यशाउ वल्लाहु वासिअुन अलीमुन

अर्थात् ," *उन लोगों की उपमा जो अपने धन को अल्लाह के मार्ग में व्यय करते हैं एक दाने की उपमा जैसी है जिस से सात बालें उगती हैं ,और हर बाली में सौ दाना होता है ,और अल्लाह जिस के लिये चाहता है इस से भी कई गुना देता है। और अल्लाह अत्यन्त उद्धार ,सर्वज्ञा है।" (2 : 261)*

दानकर्म निस्स्वार्थ हो

दानकर्म दिखावे तथा हर प्रकार के स्वार्थ से रिक्त होना चाहिये। ताकि दानकर्म करने वाले को इसका सही लाभ पहुंचे। बल्कि जिस को दान दिया जाये उस पर उपकार जताने तक का विचार भी दानी के मन में नहीं आना चाहिये :

ٱلَّذِينَ يُنفِقُونَ أَمْوَٰلَهُمْ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ ثُمَّ لَا يُتْبِعُونَ مَآ أَنفَقُوا۟ مَنًّا

وَلَآ أَذًى لَّهُمْ أَجْرُهُمْ عِندَ رَبِّهِمْ وَلَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ
﴿٢٦٢﴾ ۞ قَوْلٌ مَّعْرُوفٌ وَمَغْفِرَةٌ خَيْرٌ مِّن صَدَقَةٍ يَتْبَعُهَآ أَذًى ۗ وَٱللَّهُ غَنِىٌّ
حَلِيمٌ ﴿٢٦٣﴾ يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا تُبْطِلُوا۟ صَدَقَٰتِكُم بِٱلْمَنِّ وَٱلْأَذَىٰ
كَٱلَّذِى يُنفِقُ مَالَهُۥ رِئَآءَ ٱلنَّاسِ وَلَا يُؤْمِنُ بِٱللَّهِ وَٱلْيَوْمِ ٱلْءَاخِرِ ۖ
فَمَثَلُهُۥ كَمَثَلِ صَفْوَانٍ عَلَيْهِ تُرَابٌ فَأَصَابَهُۥ وَابِلٌ فَتَرَكَهُۥ صَلْدًا ۖ
لَّا يَقْدِرُونَ عَلَىٰ شَىْءٍ مِّمَّا كَسَبُوا۟ ۗ

अल्लज़ीन युन्फ़िकून अम्वालहुम फ़ी सबीलिल्लाहि सुम्म ला युत्बिऊन मा अन्फ़कू मन्नंव् व लाअज़ल् लहुम् अज्रुहुम् अिन्द रब्बिहिम व ला ख़्वफुन अलैहिम व ला हुम यहज़नून कौलुम् मअरूफुवं वमग़्फ़िरतुन् ख़ैरुम् मिन् सदक़तिन् यत्बअुहा अज़न् वल्लाहु ग़नीयुन हलीम याअय्युहल्लज़ीन आमनू ला तुब्तिलू सदक़ातिकुम बिल्मन्नि वल्अज़ा कल्लज़ी युन्फ़िक़ु मालहू रिआअन्नासि व लायुअमिनु बिल्लाहि वल्–यौमिल् आख़िरि फ़मसलुहू कमसलि सफ़्वानिन अलैहि तुराबुन फ़असाबहू वाबिलुन फ़तरकहू सल्दन ला यक़्दिरून अला शैअिम् मिम्मा कसबू *(2 : 262–264) ,*

अर्थात् ," *जो लोग अपना धन अल्लाह के मार्ग में व्यय करते हैं ,और व्यय करने के पश्चात् न उपकार जताते हैं और न दुख देते हैं ,उनका प्रतिफल उनके रब के पास है। और उन्हें कोई भय न होगा ,और न वे चिन्तित होंगे। एक अच्छा बोल और क्षमाशीलता उस दान–पुण्य से उत्तम है ,जिस के पीछे दुख पहुंचाया जाये। अल्लाह सर्वरूप सम्पन्न, अति सहनशील है। हे ईमान वालो ! अपने दानकर्म को उपकार जता कर और दिल दुखा कर बेकार मत करो ,उस व्यक्ति की तरह जो अपना धन लोगों को दिखाने के लिये व्यय करता है और अल्लाह तथा अन्तिम दिन पर विश्वास नहीं रखता। उस की उपमा उस चटियल चट्टान जैसी है जिस पर मिट्टी हो ,फिर उस पर ज़ोरदार वर्षा हो ,*

और वह उसे बिल्कुल नन्गा करके छोड़ दे —उस में से कुछ भी हाथ न आये गा जो कमाया था।"

उत्तम वस्तु ही दान की जाये

वही वस्तु दान में दी जाये जो अच्छी हो ,जिसे दानी स्वयं अपने लिये पसन्द करता हो :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓاْ أَنفِقُواْ مِن طَيِّبَٰتِ مَا كَسَبۡتُمۡ وَمِمَّآ
أَخۡرَجۡنَا لَكُم مِّنَ ٱلۡأَرۡضِۖ وَلَا تَيَمَّمُواْ ٱلۡخَبِيثَ مِنۡهُ تُنفِقُونَ وَلَسۡتُم
بِـَٔاخِذِيهِ إِلَّآ أَن تُغۡمِضُواْ فِيهِۚ وَٱعۡلَمُوٓاْ أَنَّ ٱللَّهَ غَنِيٌّ حَمِيدٌ ٢٦٧

या अय्युहल् लज़ीन आमनू अन्फ़िक़ू मिन् तय्यिबाति मा कसब्तुम व मिम्मा अख़्रज्ना लकुम् मिनल् अर्ज़ि व ला तयम्ममुल्–ख़बीस मिन्हु तुन्फ़िक़ून व लस्तुम बिआख़िज़ीहि इल्ला अन् तुग़्–मिज़ू फ़ीहि वाअलमू अन्नल्–लाह ग़नीयुन हमीदुन *(2 : 267) ,*

अर्थात् ," *हे ईमान वालो ! उन उत्तम वस्तुओं में से (अल्लाह के मार्ग में) व्यय करो जो तुम कमाते हो ,और उस से जो हम ने तुम्हारे लिये धरती से निकाला है ,और उस में की रद्दी चीज़ दानार्थ देने का इरादा भी न करो ,क्योंकि तुम स्वयं उसको लेने पर तैयार नहीं सिवाय इसके कि इस की कीमत कम कराओ। और जान लो कि अल्लाह किसी का मोहताज नहीं ,वह सदा प्रशंसनीय है।"*

दानशीलता का आधार विवेक है

सच्चे दानशील लोग वही हैं जिन्हें अल्लाह ने विवेक और प्रज्ञान का दिव्य प्रसाद दिया हो। ध्यान रहे कि कृपणता और कन्जूसी शैतानी कर्म है :

ٱلشَّيۡطَٰنُ يَعِدُكُمُ ٱلۡفَقۡرَ وَيَأۡمُرُكُم بِٱلۡفَحۡشَآءِۖ وَٱللَّهُ يَعِدُكُم مَّغۡفِرَةٗ مِّنۡهُ
وَفَضۡلٗاۗ وَٱللَّهُ وَٰسِعٌ عَلِيمٌ ٢٦٨ يُؤۡتِي ٱلۡحِكۡمَةَ مَن يَشَآءُۚ وَمَن يُؤۡتَ
ٱلۡحِكۡمَةَ فَقَدۡ أُوتِيَ خَيۡرٗا كَثِيرٗاۗ وَمَا يَذَّكَّرُ إِلَّآ أُوْلُواْ ٱلۡأَلۡبَٰبِ ٢٦٩

अश्शैतानु यअिद्कुमुल्–फ़क्र व या मुरुकुम् बिल्–फ़ह्शाअि

वल्लाहु यअिदुकुम् मग़्फ़िरतंम् मिन्हु व फ़ज़्लन् वल्लाहु वासिअुन अलीमुन युअतिल्–हिक्मत मन यशाअु व मिंय् युअ्तल्–हिक्मत फ़क़द् ऊतिय ख़ैरन कसीरन वमा यज़्ज़क्करु इल्ला ऊलुल्–अल्बाबि *(2 : 268–269) ,*

अर्थात् ," *शैतान तुम को गरीबी से डराता है और तुम्हें कंजूसी का मार्ग सुझाता है ,जबकि अल्लाह तुम्हें अपनी ओर से क्षमा और अनुग्रह का वचन देता है। और अल्लाह बड़ा ही दानी ,बड़ा ही ज्ञानी है। वह जिसे चाहता है विवेक और प्रज्ञान देता है। और जिसे विवेक और प्रज्ञान दिया जाये तो समझो उसे बहुत बड़ी दौलत मिल गई। परन्तु बुद्धिमानों के सिवा कोई नसीहत कबूल नहीं करता।*"

दान प्रत्यक्ष्य भी हो और गुप्त भी

दान–पुण्य का कर्म प्रत्यक्ष्य भी हो सकता है ,जैसे राष्ट्रीय या कौमी चन्दे ,इस से औरों को प्रेरणा मिलती है। दान–पुण्य का कर्म गुप्त भी हो सकता है ,जैसे गरीबों आदि की सहायता :

إِن تُبْدُوا۟ ٱلصَّدَقَـٰتِ فَنِعِمَّا هِىَ ۖ وَإِن تُخْفُوهَا وَتُؤْتُوهَا ٱلْفُقَرَآءَ فَهُوَ خَيْرٌ
لَّكُمْ ۚ وَيُكَفِّرُ عَنكُم مِّن سَيِّـَٔاتِكُمْ ۗ وَٱللَّهُ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرٌ ﴿٢٧١﴾

इन् तुब्दुस्सदक़ाति फ़निअिम्मा हिय व इन् तुख़्फ़ूहा व तुअतूहल्–फ़ुक़राअ फ़हुव ख़ैरुल्–लकुम व युकफ़्–फ़िरु अन्कुम मिन सय्यिआतिकुम वल्लाहु बिमा तअमलून ख़बीरुन *(2 : 271)*

अर्थात् ," *यदि तुम खुले तौर पर दान दो तो क्या ही अच्छी बात है ! और अगर तुम इसे गुप्त रखो और मोहताजों को दो ,तो यह भी तुम्हारे लिये उत्तम है। और यह दान तुम से तुम्हारी बाज़ बुराइयाँ दूर कर देगा। और अल्लाह उस से भलीभांति अवगत है जो तुम करते हो।*"

दान मुस्लिम और ग़ैर–मुस्लिम दोनों को दिया जाये

दान जिस तरह मुसलमान को दया जाये उसी प्रकार ग़ैर–मुस्लिम को भी दिया जाये। मदद करते वक्त किसी से इस लिये मुँह न फेरा जाय कि वह मुसलमान नहीं ग़ैर–मुस्लिम है :

۞ لَّيْسَ عَلَيْكَ هُدَىٰهُمْ وَلَٰكِنَّ ٱللَّهَ يَهْدِى مَن يَشَآءُ ۗ وَمَا
تُنفِقُوا۟ مِنْ خَيْرٍ فَلِأَنفُسِكُمْ ۚ وَمَا تُنفِقُونَ إِلَّا ٱبْتِغَآءَ وَجْهِ ٱللَّهِ ۚ وَمَا
تُنفِقُوا۟ مِنْ خَيْرٍ يُوَفَّ إِلَيْكُمْ وَأَنتُمْ لَا تُظْلَمُونَ ﴿٢٧٢﴾

लैस अलैक हुदाहुम् व लाकिन्नल्-लाह यह्दी मंय्यशाउ वमा तुन्फ़िकू मिन ख़ैरिन फ़लिअन्फ़ुसिकुम् वमा तुन्फ़िकून इल्लब्तिग़ाअ वज्हिल्लाहि व मा तुन्फ़िकू मिन ख़ैरिन युवफ़्फ़ इलैकुम व अन्तुम ला तुज़्लमून *(2 : 272) ,*

अर्थात् , *" उन्हें सीधे मार्ग पर लाना तुम्हारे ज़िम्मा नहीं ,अल्लाह जिसे चाहता है सीधे मार्ग पर लगा देता है। और जो भी वस्तु तुम दानार्थ व्यय करो गे वह तुम्हारे अपने ही भले के लिये है। और तुम सिर्फ़ अल्लाह की प्रसन्नता के लिये व्यय करते हो। और जो भी तुम दानार्थ व्यय करो गे वह तुम्हें पूरा पूरा लौटा दिया जाये गा और तुम्हें नुकसान नहीं पहुंचाया जायेगा।"*

दान का पात्र कौन है ?

दान के पात्र विशेष रूप से वही लोग हैं जो माँगने से बचते हैं :

لِلْفُقَرَآءِ ٱلَّذِينَ أُحْصِرُوا۟ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ لَا يَسْتَطِيعُونَ ضَرْبًا فِى
ٱلْأَرْضِ يَحْسَبُهُمُ ٱلْجَاهِلُ أَغْنِيَآءَ مِنَ ٱلتَّعَفُّفِ تَعْرِفُهُم بِسِيمَٰهُمْ لَا
يَسْـَٔلُونَ ٱلنَّاسَ إِلْحَافًا ۗ

लिल्फ़ुक़रा-अिल्लज़ीन उह्सिरू फ़ी सबीलिल्लाहि ला यस्ततीअून ज़र्बन फ़िल्-अर्ज़ि यह्सबुहुमुल्-जाहिलु अग़नियाअ मिनत्तअफ़्फ़ुफ़ि तअरिफ़ुहुम बिसीमाहुम ला यस्अलूनन्-नास इल्हाफ़न (2 : 273)

अर्थात् , *" (दान) उन मोहताजों के लिये है जो अल्लाह की राह में रोके गये हैं ,वो धरती में (रोज़ी रोटी के लिये) भागदौड़ नहीं कर सकते , माँगने से बचने के कारण अनजान उन्हें धनवान समझ लेता है। तू उन्हें उन के लक्षणों द्वारा पहचान लेगा — वे लोगों से लिपट कर निहीं माँगते।"*

धन में औरों का हक़

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने धन–दौलत के बारे में मुसलमानों के दृष्टिकोण को बिल्कुल बदल कर रख दिया। मुसलमान माल व दौलत रख सकता था, लेकिन वह यह भी जानता था कि उस के माल में औरों का भी हक़ है। उन का भी हक़ है जो भीख माँगते हैं, उन का भी जिन के पास धनसम्पति नाम की कोई वस्तु नहीं, पर वे भीख नहीं माँगते। क़ुर्आन शरीफ़ में नेक और धर्मपरायण लोगों का उल्लेख इन शब्दों में किया गया है :

كَانُوا قَلِيلًا مِّنَ اللَّيْلِ مَا يَهْجَعُونَ ﴿١٧﴾ وَبِالْأَسْحَارِ هُمْ يَسْتَغْفِرُونَ ﴿١٨﴾ وَفِي أَمْوَالِهِمْ حَقٌّ لِّلسَّائِلِ وَالْمَحْرُومِ ﴿١٩﴾

कानू क़लीलम्–मिनल् लैलि मा यह्जअून व बिल्–अस्हारिहुम यस्तग़फ़िरून व फ़ी अम्वालिहिम् हक़्क़ुल् लिस्साअिलि वल्–मह्रूमि *(51 : 17–19)*,

अर्थात्, *" वे रात में कम ही सोते थे, और सुबह की घड़ियों में भी अल्लाह के संरक्षण की याचना करते थे। और उन के मालों में माँगने वाले का भी हक़ है, और उस का भी जो निर्धन है।"*

الَّذِينَ هُمْ عَلَىٰ صَلَاتِهِمْ دَائِمُونَ ﴿٢٣﴾ وَالَّذِينَ فِي أَمْوَالِهِمْ حَقٌّ مَّعْلُومٌ ﴿٢٤﴾ لِّلسَّائِلِ وَالْمَحْرُومِ ﴿٢٥﴾

अल्लज़ीन हुम अला सलातिहिम् दाअिमून वल्लज़ीन फ़ी अम्वालिहिम हक़ुन मअलूमुन लिस्साअिलि वल्–मह्रूमि (70 : 23–25)

अर्थात्, *"जो अपनी नमाज़ों पर सदा स्थिर हैं। और जिन के माल में एक निश्चित भाग है, माँगने वालों के लिये और अभावग्रस्त के लिये।"*

जिस ***"हक़"*** यानि *'निश्चित भाग'* का यहाँ उल्लेख है वह ***ज़कात*** के अतिरिक्त है। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने फ़रमाया :

'एक मुसलमान के माल में ज़कात के अतिरिक्त भी (दूसरों का) हक़ है।' (*तिर्मिज़ी* 7 : 27)

एक मुसलमान धन कमा सकता है, उसे अपने कबज़े में रख भी सकता है। लेकिन वह सारी दौलत उस की अपनी नहीं। उस में एक भाग

औरों का भी है। चाहे माल थोड़ा हो या ज़्यादा। अनिवार्य है कि इस में से कुछ भाग दान के तौर देदे। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने फ़रमाया :

" दानकर्म प्रत्येक मुसलमान के लिये अनिवार्य है।"

(बुख़ारी 24 : 30)

*"**दान**" (अ.,صدقة "सदक़ा")*

शब्द के अर्थ में व्यापकता

और जब हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]से पूछा गया कि जिस के पास धन नहीं वह क्या करे ? फ़रमाया :

" वह अपने हाथ से कुछ काम करे ,और अपने को भी लाभ पहुंचाये और दान भी दे।"

लोगों ने पुनः निवेदन किया कि यदि फिर भी उस के पास कुछ न हो ? आप ने फ़रमाया :

" किसी व्यक्ति की ,जो कष्ट में हो ,किसी प्रकार मदद करे।"

पुनः निवेदन किया गया कि यदि उस में ऐसा करने का भी सामर्थ्य न हो ? फ़रमाया :

" वह अच्छे कर्म करे और बुरे कर्मों से बचे यह भी उस की ओर से एक (तरह का) दान है।"

(***बुख़ारी*** 24 : 30)

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने ***"दान"*** शब्द के अर्थ में इतनी व्यापकता पैदा कर दी , कि उस से अधिक की कल्पना भी नहीं की जा सकती , फ़रमाया :

" इन्सान की ऊँगलियों की प्रत्येक हड्डी पर प्रति दिन صدقة *"सदक़ा" (=दान)* ***अनिवार्य है। एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को जानवर पर सवार होने में मदद देता है तो यह भी*** صدقة *"सदक़ा"* ***है। हर अच्छी बात एक*** صدقة *"सदक़ा"* ***है , हर कदम जो नमाज़ की ओर जाने के लिये उठाता है वह भी*** صدقة *"सदक़ा"* ***है।"***

(***बुख़ारी*** 46 : 24)

यहाँ तक कि अपने भाई से प्रसन्न मुख होकर मिलना भी ***"सदक़ा"*** है :

" हर अच्छा कर्म एक صدقة ***"सदक़ा" है। यह (भी) एक उत्तम कर्म है कि तू अपने भाई से प्रसन्न मुख होकर मिले या अपने डोल से उसके पात्र में पानी डाले।"***

(***तिर्मिज़ी*** 25 : 45)

दो ही मूल–सद्‌गुण हैं जो इन्सान को इन्सान बनाते हैं। एक यह कि हर हाल में परमात्मा से ***दुआ*** माँगते रहना ,दूसरे अपने भाई की मदद करते रहना। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने यह दोनों सद्‌गुण अपने अनुयायिओं में पूर्णरूपेण पैदा कर दिये।

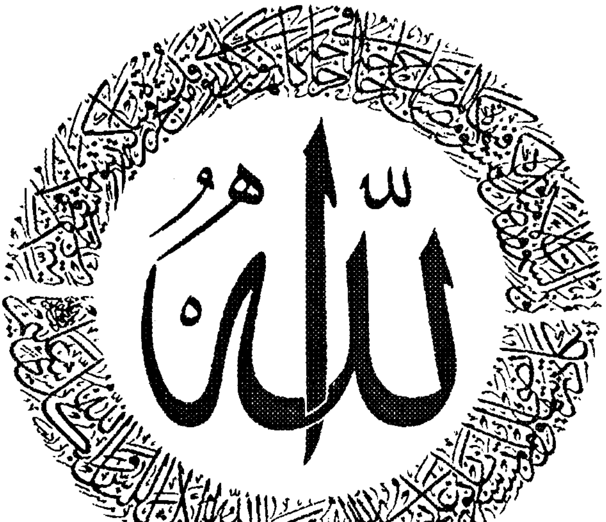

अध्याय 10

चरित्र निर्माण

नैतिक सुधार को संपूर्ण सुधार-कार्यक्रम में प्रधानता

उन सुधार कार्यों में , जो प्राथमिक रूप से हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के दृष्टिगत थे , चरित्र निर्माण का महत्त्वपूर्ण कार्य भी एक था। इन्सानों के शारीरिक दुखों और तकलीफ़ों के संदर्भ में हम देख आये हैं ,कि आप का दिल किस प्रकार दुखता था। गुलाम ,अनाथ ,विधवा ,मोहताज, विपत्तिग्रस्त ,अत्याचारग्रस्त जिस का हक़ छीन लिया गया हो — इन सब के प्रति सहिष्णुता का भाव आपके दिल में इतना उत्कृष्ट था ,कि ***नबी*** के पद पर आसीन होने से पहले भी आप अपनी निस्स्वार्थ एवं बहुमुखी जनसेवा के कारण सारे समाज में एक प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त कर चुके थे। ***नबी*** के पद पर नियुक्त किये जाने के बाद आप ने इन्ही सद्‌गुणों को दूसरों में भी पैदा कर दिया। असहाय और अत्याचारग्रस्त के लिये वही सहिष्णुता दूसरों के दिलों में उत्पन्न कर दी ,जो आप के सुकोमल हृदय में थी। किन्तु आप के जनसुधार का क्षेत्र इन कार्यों से कहीं उच्चतर था। आप के दिल को सब से ज़्यादा तकलीफ़ इन्सानों के नैतिक पतन से पहुंचती थी। आप ने इस दोष को महसूस किया। और उधर अल्लाह की ***वह्य*** ने भी यही बता दिया कि सामाजिक ,सांस्कृतिक और प्रशासनिक सुधारों से पहले इन्सानों का नैतिक सुधार परम आवश्यक है। अन्याय और अत्याचार को रोकने के लिये नियमों का प्रतिपादन भी ज़रूरी था। लेकिन

आप इस तथ्य को भलीभांति जानते थे कि नियम भी इन्सानों को उसी वक्त लाभ दे सकते हैं जब उनका नैतिक पक्ष सही और स्वस्थ हो ,और जिन लोगों ने इन नियमों पर अमल करना या कराना है उनका नैतिक स्तर अति उच्च हो। अतएव जहाँ आप की प्रारंभिक *"वह्य"* में अल्लाह की सत्ता पर विश्वास ,मानवजाति की एकता ,जीवों में इन्सान की सर्वश्रेष्ठता, प्रभु उपासना की महत्ता ,प्राणी मात्र के प्रति स्नेह और सौहार्द जैसे बुनियादी सिद्धांतों का उल्लेख है ,वहीं चरित्र निर्माण के महत्त्व पर भी विशेष बल मिलता है।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल
की अपूर्व सत्यवादिता

एक बात जो दोस्त और दुश्मन दोनों को समान रूप से मान्य थी वह यह कि आप की सत्यवादिता पर कभी किसी ने ऊँगली नहीं उठाई। जब हज़रत अबू बक्ररज़. को लोगों ने कहा कि आप के मित्र हज़रत मुहम्मदसल्ल. यह दावा करते हैं कि उन पर अल्लाह की ओर से ***"वह्य"*** उतरती है। तो उन्हों ने इस बात का केवल इतना ही उत्तर दिया कि वे निश्चय ही अपने दावा में सच्चे हैं ,क्योंकि आप ने कभी इन्सानों पर झूठ नहीं बोला भला परमात्मा पर किस तरह झूठ बोल सकते हैं ? अभी आप के धर्मप्रचार के प्रारंभिक दिन ही थे जब आप पर यह ***वह्य*** उतरी कि अपने निकटतम संबंधियों को सचेत करो। आप ने सफ़ा पहाड़ी पर खड़े हो कर कुरैश के एक एक कबीले को नाम लेकर पुकारा ,और जब वे जमा हो गए तो आप ने उन से कहा ,कि यदि मैं तुम्हें यह कहूँ कि इस पहाड़ के पीछे एक शक्तिशाली लशकर तुम पर हमला करने के लिये तैयार बैठा है ,तो क्या तुम मेरा विश्वास कर लो गे ? तो सब ने एकस्वर होकर कहा :

> ***" हाँ हम अवश्य विश्वास कर लें गे। हम ने सिवाय सच के आप की ज़ुबान से और कुछ नहीं सुना। "*** (*बुख़ारी* 65 : 26)

एक अन्य अवसर पर आप के सब बड़े बड़े विरोधी यह तय करने के लिय एकत्र हुए ,कि इस बात का एकमत हो कर कोई निर्णय लें ,कि आखिर मुहम्मद ***रसूलुल्–लाह*** में किया दोष उत्पन्न हो गया है। हर तरह के प्रश्नों पर बहस हुई। क्या आप ज्योतिषि हैं ? क्या आप स्वप्न द्रष्टा हैं ? क्या आप कवि हैं ? क्या आप झूठे हैं ? इस बात पर सब एकमत

हो कर बोल उठे कि आप कदापि झूठे नहीं। कारण ,हम ने आप के मुखकमल से कभी झूठ नहीं सुना।

उस ज़माना में भी जब विरोद्ध की गति तीव्र हो चुकी थी ,और कुरैश मुसलमानों के साथ युद्ध आरंभ कर चुके थे। ईसाई नरेश हिरेकल ने आप के परम शत्रु अबू सुफ़ियान को ,वह उस समय व्यापार के सिलसिले में शाम आया हुआ था , अपने दरबार में बुलाया और उस से कुछ प्रश्न किये, जिन में का एक प्रश्न यह था :

" क्या तुम न कभी उन पर झूठ बोलने का आरोप लगाया , इस से पूर्व कि उन्हों ने नबूवत का दावा किया ?"

तो अबू सुफ़ियान ने उत्तर दिया :

" ***नहीं*** /" (*बुख़ारी* 1 : 1)

यह हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी सत्यवादिता ही थी जिस के फलस्वरूप आप ने अपने समकालीन समाज से ***"अल्-अमीम"*** की सम्मानजनक उपाधि प्राप्त की।

सच बोलन की शिक्षा

सत्यवादिता के उच्चतम स्थान पर आसीन होने के कारण हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने चरित्र निर्माण के संबंध में सब से पहले जिस बात पर ज़ोर दिया वह सत्यवादिता ही थी। फ़रमाया :

" सत्य नेकी की ओर ले जाता है और नेकी जन्नत की ओर ले जाती है। एक व्यक्ति सत्य बोलता रहता है यहाँ तक की वह صدّيق *"सिद्दीक़"* ***यानि सत्यवादी बन जाता है। और झूठ बुराई की ओर ले जाता है और बुराई आग की ओर ले जाती है। एक व्यक्ति झूठ बोलता चला जाता है यहाँ तक कि वह अल्लाह के यहाँ महा झूठा लिखा जाता है।"*** (*बुख़ारी* 78 : 69)

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने जिस धर्मसमूह की बुनियाद रखी ,उस में हर सदस्य के लिये यह अनिवार्य ठहराया गया ,कि वह न सिर्फ स्वयं सच बोल बल्कि दूसरों को भी सच बोलने की सीख देता रहे :

وَٱلْعَصْرِ ﴿١﴾ إِنَّ ٱلْإِنسَٰنَ لَفِى خُسْرٍ ﴿٢﴾ إِلَّا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ وَعَمِلُوا۟

الصّٰلِحٰتِ وَتَوَاصَوْا بِالْحَقِّ وَتَوَاصَوْا بِالصَّبْرِ ﴿٣﴾

वल् अस्रि इन्नल् इन्नसान लफ़ी ख़ुस्रिन इल्लल् लज़ीन आमनू व अमिलुस्सलिहाति व तवासव् बिल्हक़्क़ि व तवासव् बिस्सब्रि

(103 : 1–3)

अर्थात् ," *समय साक्षी है — कि मनुष्य घाटे में है , सिवाय उन लोगों के जो ईमान लाते और अच्छे कर्म करते हैं , और एक दूसरे को सत्य का उपदेश देते हैं ,और एक दूसरे को धैर्य की सीख देते हैं।"*

जअफर तैयार[रज़] ने जब सम्राट नजाशी के समक्ष हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की शिक्षा का उल्लेख किया ,तो यों कहा :

" परमात्मा ने हमारे बीच हमारे सुधार हेतु एक पैग़म्बर उत्पन्न किया ,वह हमें एकमात्र परमात्मा की उपासाना की ओर बुलाता है। हमें सदा सच बोलने का आदेश देता है ,और कहता है कि हम अमानतें लौटा दें ,रिश्तेदारियाँ निभायें और पड़ोसियों से नेक व्यवहार करें।'

(इबन हिश्शाम)

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की शिक्षा यह थी कि जब भी व्यक्ति सत्य पर आरूढ़ होता है वह असत्य को तोड़ कर रख देता है ,चाहे असत्य कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो।

بَلْ نَقْذِفُ بِالْحَقِّ عَلَى الْبَاطِلِ فَيَدْمَغُهُ فَإِذَا هُوَ زَاهِقٌ

बल् नक़ज़िफ़ु बिल्हक़्क़ि अलल्–बातिलि फ़यद्मग़ुहू फ़इज़ा हुवा ज़ाहिक़ुन *(21 : 18) ,*

अर्थात् ," *नहीं ! हम सत्य को असत्य पर दे मारते हैं ,तो वह उस का भेजा निकाल कर रख देता है ,और वह (झूठ) मिट जाता है।"*

وَقُلْ جَاءَ الْحَقُّ وَزَهَقَ الْبَاطِلُ إِنَّ الْبَاطِلَ كَانَ زَهُوقًا

व क़ुल् जाअल्–हक़्क़ु व ज़हक़ल्–बातिलु इन्नल्बातिल कान ज़हूक़ा *(17 : 81) ,*

अर्थात् ," *और कह दे : सत्य आ गया और असत्य भाग गया। असत्य तो भाग जाने वाली चीज़ है।"*

जहाँ इन्सान को झूठ बोलने से लाभ होता हो और सच बालने से नुकसान ,तो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰शिक्षा यही है कि सच ही बोले चाहे नुकसान ही उठाना पड़े :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ كُونُوا۟ قَوَّٰمِينَ بِٱلْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلَّهِ وَلَوْ عَلَىٰٓ أَنفُسِكُمْ أَوِ ٱلْوَٰلِدَيْنِ وَٱلْأَقْرَبِينَ ۚ إِن يَكُنْ غَنِيًّا أَوْ فَقِيرًا فَٱللَّهُ أَوْلَىٰ بِهِمَا ۖ فَلَا تَتَّبِعُوا۟ ٱلْهَوَىٰٓ أَن تَعْدِلُوا۟ ۚ وَإِن تَلْوُۥٓا۟ أَوْ تُعْرِضُوا۟ فَإِنَّ ٱللَّهَ كَانَ بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا ﴿١٣٥﴾

याअय्युहल्–लज़ीन आमनू कूनू क़व्वामीन बिल्क़िस्ति शुहदाअ लिल्लाहि व लव् अला अन्फ़ुसिकुम् अविल्–वालिदैनि वल्–अक़्बीन इन्य्यकुन् ग़नीयन अव् फ़क़ीरन फ़ल्लाहु अव्ला बिहिमा फ़ला तत्तबिअुल्–हवा अन् तअदिलू व इन् तल्वू अव् तुअरिज़ू फ़इन्नल्लाह कान बिमा तअमलून ख़बीरा *(4* : 135) ,

अर्थात् ,*"हे ईमान वालो ! न्याय पर स्थिर रहने वाले , अल्लाह के लिये (सच्ची) गवाही देने वाले बन जाओ। यद्यपि मामला स्वयं तुम्हारे अपने या माता–पिता या निकट संबंधियों के खिलाफ हो। यदि कोई अमीर हो या गरीब ,तो अल्लाह का (तुम्हारी अपेक्षा) दोनों पर सर्वाधिक अधिकार है। अतः तुम अपनी तुच्छ इच्छाओं का अनुसरण न करो कि कहीं अन्याय न कर बैठो। यदि तुम बात को पेचदार बना दो या सत्य से पहलु बचा लो — तो निस्संदेह जो तुम करते हो अल्लाह उस से पूर्णतया अवगत है।"*

सच्चाई पर उस हालत में भी स्थिर रहना ज़रूरी है,जब उस से दुश्मन को ही लाभ पहुंचता हो :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ كُونُوا۟ قَوَّٰمِينَ لِلَّهِ شُهَدَآءَ بِٱلْقِسْطِ ۖ وَلَا يَجْرِمَنَّكُمْ شَنَـَٔانُ قَوْمٍ عَلَىٰٓ أَلَّا تَعْدِلُوا۟ ۚ ٱعْدِلُوا۟ هُوَ أَقْرَبُ لِلتَّقْوَىٰ ۖ

याअय्युहल्–लज़ीन आमनू कूनू क़व्वामीन लिल्लाहि शुहदाअ बिल्क़िस्ति व ला यज्रि मन्नकुम् शनआनु कौमिन अला अल्ला तअदिलू इअदिलू हुव अक़रबु लित्तक़्वा *(5 : 8)* ,

अथात् ," *हे ईमान वालो ! अल्लाह के लिये (सच्चाई को) स्थापित करने वाले ,न्याययुक्त गवाही देने वाले बन जाओ ,और किसी कौम की दुश्मनी तुम्हें इस पर आमादा न कर दे कि तुम न्याय न करो। न्याय करो ,यही धर्मपरयणता के अधिक निकट है।"*

परलोक में भी सिर्फ सच्चाई ही इन्सान के काम आये गी ,

قَالَ ٱللَّهُ هَـٰذَا يَوْمُ يَنفَعُ ٱلصَّـٰدِقِينَ صِدْقُهُمْ ۚ لَهُمْ جَنَّـٰتٌ تَجْرِى مِن تَحْتِهَا ٱلْأَنْهَـٰرُ خَـٰلِدِينَ فِيهَآ أَبَدًا ۚ رَّضِىَ ٱللَّهُ عَنْهُمْ وَرَضُوا۟ عَنْهُ ۚ ذَٰلِكَ ٱلْفَوْزُ ٱلْعَظِيمُ ﴿١١٩﴾

क़ालल्-लाहु हाज़ा यौमु यन्फ़अुस्सादिक़ीन सिद्क़ुहुम् लहुम् जन्नातुन तज्री मिन् तहतिहल्-अन्हारु ख़ालिदीन फ़ीहा अबदन रज़ियल्लाहु अन्हुम् व रज़ू अन्हु ज़ालिकल्-फ़ौज़ुल्-अज़ीमु

अर्थात् ," *अल्लाह कहे गा : यह वह दिन है जब सच बोलने वालों को उन की सच्चाई लाभ दे गी। उन के लिये बाग़ होंगे जिन के नीचे नहरें बहती हैं। उन्ही में रहेंगे। अल्लाह उन से राज़ी होगा और वे अल्लाह से राज़ी होंगे — यही महा सफलता है !"* (5 : 119)

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने अनुयायिओं को सत्यवादी बना दिया

विश्व के समस्त सुधारकों में यह उत्कृष्ट विशेषता हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]को ही प्राप्त है कि कामयाबी का जो मार्ग आप ने प्रस्तुत किया उस पर लोगों को चला कर दिखा भी दिया। सच्चाई ने आप के अनुयायिओं के दिलों में इतनी गहरी जड़ें पकड़ लीं , कि वे न केवल सच्चाई से प्रेम करने लग गये, बल्कि उन्हों ने सत्य की ख़ातिर बड़े बड़े दुख भी उठाये। उन को यह शिक्षा दी गई थी कि ज़ालिम बादशाह के सामने भी सच ही बोलें :

" ***सब से बड़ा "जहाद" यह है कि ज़ालिम बादशाह के सामने सच्ची बात कह दी जाये।"*** (*तिर्मज़ी* 31 : 21)

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]के दो सौ साल बाद जब *हदीस* के प्रेषियों (Transmitters) की सत्यता को परखने के लिये नियम बनाये गए ,तो एक बात जिस पर सब एकमत थे यह थी ,कि हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]के किसी

सुहाबी (*=सहवर्ती अनुयायी*) पर जान बूझ कर झूठ बोलने का आरोप नहीं लगाया जा सकता। स्वयं कुर्आन शरीफ के आख़िरी ज़माना की ***वह्य*** में भी इस बात की पुष्टि मौजूद है :

وَلَـٰكِنَّ ٱللَّهَ حَبَّبَ إِلَيْكُمُ ٱلْإِيمَـٰنَ وَزَيَّنَهُۥ فِى قُلُوبِكُمْ

وَكَرَّهَ إِلَيْكُمُ ٱلْكُفْرَ وَٱلْفُسُوقَ وَٱلْعِصْيَانَ

वलाकिन्नल्–लाह हब्बब इलैकुमुल्–ईमान व ज़य्यनहू फ़ी कुलूबिकुम् व कर्रह इलैकुमुल्–कुफ़्र वल्–फ़ुसूक वल्–इस्यान (49 : 7)
अर्थात् ," *अल्लाह ने तुम्हारे दिलों में ईमान के प्रति प्रेम रख दिया है ,और उसे तुम्हारे दिलों में शोभान्वित कर दिया है ,और तुम्हारे दिलों में कुफ़्र और गुनाह के प्रति अरुचि रख दी है।*"

إيمان ***"ईमान"*** शब्द के अंतर्गत समस्त नेकियाँ आ जाती हैं। और सच्चाई को सम्पूर्ण नेकियों का मूलाधार करार दिया गया है। जब मक्का से मुसलमान ***हिजरत*** कर मदीना पहुंचे तो उस वक्त भी उन में सच्चाइ का महा गुण मौजूद था ,कुर्आन कहता है :

وَٱلَّذِينَ لَا يَشْهَدُونَ ٱلزُّورَ وَإِذَا مَرُّوا۟ بِٱللَّغْوِ مَرُّوا۟ كِرَامًا ﴿٧٢﴾

वल्–लज़ीन ला यश्हदूनज़्ज़ूर व इज़ा मर्रू बिल्लग़्वि मर्रू किरामा (25 : 72) ,
अर्थात् ," *वे जो झूठ के पास नहीं फटकते , और जब बेकार बातों पर गुज़रते हैं तो पूर्ण शिष्टाचार के साथ गुज़र जाते हैं।*"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी सुदृढ़ता

सुदृढ़ता — यह दूसरा सद्गुण है जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके पावन व्यक्तित्व में रोशन सितारे की नाईं चमकता नज़र आता है। जब आप को हर ओर से दुख और कष्ट पहुंचाए जाते थे ,कामयाबी की कोई झलक नज़र न आती थी और आप के चाचाश्री अबू तालिब भी जाति वालों के बढ़ते विरोध से तंग आ कर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लका साथ छोड़ ,आप को दुश्मनों के हवाले करने के लिये तैयार नज़र आते थे ,हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल

उस नाज़ुक परिस्थिति में भी पूर्ववत दृढ़संकल्प ही रहे। आप ने अपने चाचाश्री को संबोधित कर फ़रमाया :

" अगर ये लोग सूरज को मेरे दायें होथ में और चाँद को मेरे बायें हाथ में लाकर भी रख दें ,और मुझ से यह चाहें कि मैं इस काम को छोड़ दूँ तो मैं इसे नहीं छोड़ूँ गा ,यहाँ तक कि अल्लाह मुझे इस में सफल कर दे या मैं इस प्रयास में विनष्ट हो जाऊँ।" (इबन हिश़ाम)

और जब मक्का वालों ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लको तरह तरह के प्रलोभनों द्वारा प्रलोभित करना चाहा तो आप ने सत्ता ,धन और सौन्दर्य तीनों वस्तुओं को ,जो मनुष्य के लिये आकषर्ण का कारण हो सकती हैं , ठुकरा दिया ,और कहा कि मुझे इन तीनों चीज़ों की आवश्यकता नहीं ,मैं तो केवल तुम्हें पाप और अधर्म के कुपथ से हटा पुण्य और धर्म के सुपथ पर डालना चाहता हूँ। तीन साल तक आप को तथा आपके कबीले बनी हाशिम को एक घाटी में कैद कर लिया जाता है ,जहाँ सिवाय ***हज्ज*** के दिनों के आप पर धर्मप्रचार का द्वार बन्द होगया ,और आप को अत्यन्त कष्ट और तकलीफ़ में जीवन बिताना पड़ा। तब भी आप के संकल्प की सुदृढ़िता में कोई परिवर्तन नहीं आया। मदीना की ओर भागते वक्त आप एक गुफा में शरण लेते हैं ,और दुश्मन खोजता हुआ ठीक गुफा के सिर पर आ पहुंचता है। उस समय दुश्मन की एक ही नज़र आप के जीवन का अन्त कर देने के लिये काफी थी। उस समय भी आप के मुखकमल से यही निकला — ***"अल्लाह हमारे साथ है !"*** तात्पर्य यह कि हर निराशाजनक परिस्थिति में आप पहाड़ की नाईं सुदृढ़ और अटल रहे। कोई भय ,कोई प्रलोभन आपकी संकल्पबद्धता को विचलित न कर सका।

सच्चाई के बाद
सुदृढ़ता की शिक्षा

सच्चाई के अतिरिक्त दूसरा नैतिक सद्गुण , जिस पर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी शिक्षा में विशेष बल मिलता है ,यही सुदृढ़ता या संकल्पबद्धता है। कुर्आन शरीफ में जहाँ एक दूसरे को सत्य का उपदेश देने का आदेश है वहीं यह आदेश भी है कि मुसलमान एक दूसरे को धैर्य धरने और दृढ़संकल्प रहने की सीख देते रहें। आशय यह कि अपने व्यवहार और अपनी वाणी द्वारा एक दूसरे को यह समझाते रहें कि सत्य को अंगीकार कर लेने से जो जो

कष्ट और कठिनाइयाँ पेश आयें तो उनके समक्ष सुदृढ़ रहना चाहिये। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने बताया कि जब इन्सान दृढ़संकल्प हो सत्यमार्ग पर डट जाता है , और तकलीफों और कठिनाइयों की परवा नहीं करता , लोग उसके दुश्मन बन जाते हैं ,तो उसको सांत्वना और आश्वासन देने अल्लाह के फरिश्ते आसमान से उतरते हैं ,और उसके सहायक बन जाते हैं :

إِنَّ ٱلَّذِينَ قَالُواْ رَبُّنَا ٱللَّهُ ثُمَّ ٱسْتَقَٰمُواْ تَتَنَزَّلُ
عَلَيْهِمُ ٱلْمَلَٰٓئِكَةُ أَلَّا تَخَافُواْ وَلَا تَحْزَنُواْ وَأَبْشِرُواْ بِٱلْجَنَّةِ ٱلَّتِى
كُنتُمْ تُوعَدُونَ ﴿٣٠﴾ نَحْنُ أَوْلِيَآؤُكُمْ فِى ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا وَفِى ٱلْءَاخِرَةِ
وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَشْتَهِىٓ أَنفُسُكُمْ وَلَكُمْ فِيهَا مَا تَدَّعُونَ ﴿٣١﴾

इन्नल्-लज़ीन क़ालू रब्बनल्-लाहु सुम्मस्तक़ामू ततनज़्ज़लु अलैहिमुल् मलाअिकतु अल्ला तख़ाफ़ू व ला तह्ज़नू व अब्शिरू बिल्जन्नतिल् लती कुन्तुम तूअदून नह्नु अवलियाअुकुम फ़िद्दुनिया व फ़िल्-आख़िरति व लकुम् फ़ीहा मा तश्तही अन्फ़ुसुकुम वलकुम् फ़ीहा मा तद्दअून *(41 : 30–31) ,*

अर्थात् ,*" वे लोग जो कहते हैं : हमारा रब अल्लाह है , फिर सुपथ पर जमे रहते हैं ,उन पर फरिश्ते उतरते हैं और उन्हें आश्वासन देते हैं : डरो नहीं और न चिन्ता करो , बल्कि उस "जन्नत" की ख़ुशी मानाओ जिसका तुम को वादा दिया जाता था। हम इस सांसारिक जीवन में भी तथा परलोक में भी तुम्हारे सहायक और मित्र हैं। और तुम्हें अपने जीवन काल में ही वो सब कुछ मिल कर रहे गा जो तुम्हारे दिल चाहते हैं ,और तुम्हें अपने जीवन काल में वह भी मिल कर रहेगा जो तुम माँगते हो।"*

निम्न आयत में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके साथियों के हृदयों का चित्रण है , जिस को पैग़म्बरों के ज़िक्र के अन्तर्गत चित्रित किया गया है :

وَمَا لَنَآ أَلَّا نَتَوَكَّلَ عَلَى ٱللَّهِ وَقَدْ هَدَىٰنَا سُبُلَنَا ۚ وَلَنَصْبِرَنَّ عَلَىٰ

مَآ ءَاذَيۡتُمُونَاۚ وَعَلَى ٱللَّهِ فَلۡيَتَوَكَّلِ ٱلۡمُتَوَكِّلُونَ ﴿١٢﴾

व मा लना अल्ला नतवक्कल अलल्–लाहि व क़द् हदाना सुबुलना वलनस्बिरन्न अला माआज़ैतुमूना व अलल्–लाहि फ़ल्यतवक्कलिल् मुतवक्किलून *(14 : 12)* ,

अर्थात् ," और भला हम क्यों न अल्लाह पर भरोसा करें ? जबकि उसी ने हमें हमारे मार्ग दिखाये हैं। और हम ज़रूर उन अत्याचारों को धैर्यपूर्वक सह जाएं गे जो तुम हम पर ढा रहे हो। और भरोसा करने वाले अल्लाह पर ही भरोसा करते हैं।"

صبر ***"सब्र"*** (=*धैर्य*) जिस को धारण करने का बार बार मुसलमानों को आदेश दिया जाता है ,उस से मुराद यही दृढ़संकल्प तथा सुदृढ़ता है। ***"सब्र"*** का अर्थ है *कठिनाइयों और संकटों के समय अपने आप को सत्य पर आरूढ़ रखना।* ***"सब्र"*** और संकल्पबद्धता की प्रेरणा से कुर्आन शरीफ़ भरा पड़ा है :

وَٱسۡتَقِمۡ كَمَآ أُمِرۡتَۖ وَلَا تَتَّبِعۡ أَهۡوَآءَهُمۡۖ وَقُلۡ ءَامَنتُ بِمَآ
أَنزَلَ ٱللَّهُ مِن كِتَٰبٖۖ وَأُمِرۡتُ لِأَعۡدِلَ بَيۡنَكُمُۖ

वस्तक़िम् कमा उमिर्त व ला तत्तबिअ अह्वाअहुम व कुल् आमन्तु बिमा अन्ज़लल्–लाहु मिन् किताबिन व उमिर्तु लिआदिल बैनकुम

अर्थात् ," *अतः इसी सत्य की ओर लोगों को बुलाता रह ,और सीधे मार्ग पर चलता रह जैसा तुझे हुक्म दिया गया है। और उन की तुच्छ इच्छाओं का अनुसरण न कर ,और कह दे : मैं उस पर ईमान लाया जो अल्लाह ने किताब से उतारा है और मुझे हुक्म दिया गया है कि मैं तुम्हारे बीच न्याय करूँ।" (42 : 15)*

فَٱسۡتَقِمۡ كَمَآ أُمِرۡتَ وَمَن تَابَ مَعَكَ وَلَا تَطۡغَوۡاْۚ إِنَّهُۥ بِمَا تَعۡمَلُونَ بَصِيرٞ
﴿١١٢﴾ وَلَا تَرۡكَنُوٓاْ إِلَى ٱلَّذِينَ ظَلَمُواْ فَتَمَسَّكُمُ ٱلنَّارُ

वस्तक़िम् कमा उमिर्त व मन ताब मअक व ला तत्ग़व इन्नहू बिमा तअमलून बसीरुन व ला तर्कनू इलल्–लज़ीन ज़लमू फ़तमस्–सकुमुन्नारु (11 : 112–113) ,

अर्थात् ,"सीधे मार्ग पर चलता रह जैसा तुझे हुक्म दिया गया है ,और वे भी जो तौबा करके तेरे साथ हो गए। और मर्यादा का उल्लंघन न करो। क्योंकि ये जो कुछ करते हैं अल्लाह उस से पूर्णतया अवगत है। और उन लोगों की ओर मत झुको जो ज़ालिम हैं ,अन्यथा तुम्हें आग छू जाये गी।"

"सब्र" (*=सुदृढ़ता*) और ***दुआ*** — यही वे दो द्वार हैं जहाँ से परमात्मा की सहायता आती है।

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ ٱسْتَعِينُوا۟ بِٱلصَّبْرِ وَٱلصَّلَوٰةِ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ مَعَ ٱلصَّـٰبِرِينَ

या अय्युहल्लज़ीन आमनुस्-तअीनू बिस्सब्रि वस्-सलाति इन्नल्-लाह मअस्-साबिरीन *(2 : 153) ,*

अर्थात् ,"हे ईमान वालो ! सब्र और दुआ के साथ परमात्मा की सहायता माँगो। निस्संदेह अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है।"

فَٱصْبِرْ ۖ إِنَّ ٱلْعَـٰقِبَةَ لِلْمُتَّقِينَ ﴿٤٩﴾

फ़स्-बिर इन्नलआक़िबत लिल्मुत्तक़ीन *(11 : 49) ,*

अर्थात् ," अतः सब्र (=सुदृढ़ता) से काम ले , क्योंकि सुखद परिणाम उन्ही लोगों के लिये है जो कर्तव्यनिष्ठा प्रकट करते हैं।"

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ ٱصْبِرُوا۟ وَصَابِرُوا۟ وَرَابِطُوا۟ وَٱتَّقُوا۟ ٱللَّهَ لَعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿٢٠٠﴾

या अय्युहल्लज़ीन आमनुस्-बिरू व साबिरू व राबितू वत्तकुल्लाह लअल्लकुम तुफ़्लिहून *(3 : 200) ,*

अर्थात् ," हे ईमान वालो ! सुदृढ़ता प्रकट करो ,और सुदृढ़ता में एक दूसरे से आगे बढ़ने की कोशिश करो ,और मुकाबला के लिये तैयार रहो, और अल्लाह के प्रति कर्तव्यनिष्ठ रहो ताकि तुम कामयाब हो जाओ।"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने अनुयायिओं में संकल्पबद्धता का गुण उत्तम कोटि तक पैदा कर दिया। फलतः उन्हें समस्त कठिनाइयाँ तुच्छ प्रतीत होने लगीं। दुश्मन बार बार कई गुना विशाल सेनाओं के साथ

आक्रमण करता ,परन्तु वे अपनी जगह पर पूर्ण सुदृढ़ता के साथ जमे रहे ,और संसार की कोई शक्ति उन्हें भयभीत न कर सकी।

साहस और निर्भयता

साहस और निर्भयता — यह नैतिकता का एक और सद्गुण था जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ने अपने अनुयायिओं में पैदा किया। उन के दिलों में अल्लाह का भय इस हद तक पैदा हो गया ,कि वे अल्लाह के अतिरिक्त अन्य सभी से निर्भय हो गए।

ٱلَّذِينَ قَالَ لَهُمُ ٱلنَّاسُ إِنَّ ٱلنَّاسَ قَدْ جَمَعُوا۟ لَكُمْ فَٱخْشَوْهُمْ فَزَادَهُمْ إِيمَـٰنًا
وَقَالُوا۟ حَسْبُنَا ٱللَّهُ وَنِعْمَ ٱلْوَكِيلُ ﴿١٧٣﴾ فَٱنقَلَبُوا۟ بِنِعْمَةٍ مِّنَ ٱللَّهِ وَفَضْلٍ لَّمْ
يَمْسَسْهُمْ سُوٓءٌ وَٱتَّبَعُوا۟ رِضْوَٰنَ ٱللَّهِ ۗ وَٱللَّهُ ذُو فَضْلٍ عَظِيمٍ ﴿١٧٤﴾ إِنَّمَا
ذَٰلِكُمُ ٱلشَّيْطَـٰنُ يُخَوِّفُ أَوْلِيَآءَهُۥ فَلَا تَخَافُوهُمْ وَخَافُونِ إِن كُنتُم
مُّؤْمِنِينَ ﴿١٧٥﴾

अल्लज़ीन क़ाल लहुमुन्नासु इन्नन्–नास क़द् जमऊ लकुम् फ़ख़्शवहुम् फ़ज़ादहुम् ईमानंव् व क़ालू हस्बुनल्लाहु व निअमल्वकीलु फ़न्क़लबू बिनिअमतिम् मिनल्लाह व फ़ज़्लिल् लम् यम्सस्हुम् सूउंव् वत्तबऊ रिज़वानल्लाह वल्लाहु ज़ूफ़ज़्लिन अज़ीमिन इन्नमा ज़ालिकुमुश्–शैतानु युख़व्विफु अव्लियाअहू फ़ला तख़ाफ़ूहुम व ख़ाफ़ूनि इन कुन्तुम् मुअमिनीन (3 : 173–175)

अर्थात् ,*"उन्हें लोगों ने कहा : (दुश्मन ने) तुम्हारे खिलाफ लशकर एकत्र किये हैं ,सो उन से डरो। तो इस बात ने उनका ईमान बढ़ाया ,और वे बोले : हमारे लिये अल्लाह काफी है ,और वह क्या ही अच्छा कार्यसाधक है ! सो वो अल्लाह के कृपाप्रसाद और अनुग्रह को लेकर वापस लौटे। उन्हें कोई दुख न पहुंचा ,और उन्हों ने अल्लाह की इच्छा का अनुसरण किया। और अल्लाह बड़ा अनुग्रहशील है। यह शैतान ही है जो अपने साथियों को डराता है ,सो तुम उन से न डरो और मुझ से ही डरो यदि तुम ईमान वाले हो।"*

لَا تَخَافَآ إِنَّنِى مَعَكُمَآ أَسۡمَعُ وَأَرَىٰ ﴿٤٦﴾

ला तख़ाफ़ा इन्ननी मअकुमा अस्मअु व अरा *(20 : 46) ,*
अर्थात् , *" डरो नहीं मैं तुम्हारे साथ हूँ — मैं देखता हूँ और सुनता हूँ।"*

وَلَآ أَخَافُ مَا تُشۡرِكُونَ بِهِۦٓ

व ला अख़ाफ़ु मा तुश्रिकून बिही *(6 : 80)*
अर्थात् , *" और मैं उस से कदापि नहीं डरता जो तुम अल्लाह के साझी बनाते हो।"*

وَكَيۡفَ أَخَافُ مَآ أَشۡرَكۡتُمۡ وَلَا تَخَافُونَ أَنَّكُمۡ أَشۡرَكۡتُم بِٱللَّهِ مَا لَمۡ يُنَزِّلۡ بِهِۦ عَلَيۡكُمۡ سُلۡطَٰنًاۚ

व कैफ़ अख़ाफ़ु मा अश्रक्तुम व ला तख़ाफ़ून अन्नकुम् अश्रक्तुम बिल्लाहि मा लम् युनज़्ज़िल् बिही अलैकुम सल्ताना *(6 : 81) ,*
अर्थात् , " और मैं उस से किस तरह डरूँ जो तुम अल्लाह का साझी बनाते हो ,और तुम को इसका भय नहीं कि तुम उस को अल्लाह का साझी ठहराते हो जिस के लिये उसने कोई प्रमाण नहीं उतारा।"

ٱلَّذِينَ يُبَلِّغُونَ رِسَٰلَٰتِ ٱللَّهِ وَيَخۡشَوۡنَهُۥ وَلَا يَخۡشَوۡنَ أَحَدًا إِلَّا ٱللَّهَۗ

अल्लज़ीन युबल्लिग़ून रिसालातिल्लाहि व यख़्शव्नहू व ला यख़्शव्न अहदन इल्लल्-लाह *(33 : 39) ,*
अर्थात् , *" जो अल्लाह के सन्देश पहुंचाते हैं और उसी से डरते हैं ,और अल्लाह के सिवा और किसी से नहीं डरते।"*

إِنَّ ٱلَّذِينَ قَالُواْ رَبُّنَا ٱللَّهُ ثُمَّ ٱسۡتَقَٰمُواْ فَلَا خَوۡفٌ عَلَيۡهِمۡ وَلَا هُمۡ يَحۡزَنُونَ

इन्नल् लज़ीन क़ालू रब्बुनल्लाहु सुम्मस्तक़ामू फ़ला ख़ौफ़ुन अलैहिम् व ला हुम यह्ज़नून *(46 : 13) ,*
अर्थात् , *" जो कहते हैं : अल्लाह हमारा रब है ,फिर सीधे मार्ग पर स्थिर रहते हैं — उन्हें कोई भय नहीं न वे चिन्तित होते हैं।"*

أَلَآ إِنَّ أَوْلِيَآءَ ٱللَّهِ لَا خَوْفٌ عَلَيْهِمْ وَلَا هُمْ يَحْزَنُونَ ﴿٦٢﴾

अल्ला इन्न अव्-लिया-अल्लाहि ला ख़ौफ़ुन अलैहिम् व ला हुम यह्ज़नून *(10 : 62) ,*

अर्थात् ,*" सुनो ! अल्लाह के मित्रों पर न तो कोई भय है और न वो चिन्तित होते हैं।"*

मुसलमानों की इसी निर्भयता और चरित्रबल के निमित्त *वह्य* द्वारा यह शुभसूचना दी गई ,कि मुसलमान युद्ध में बिना शस्त्र भी अपने से दुगुनी संख्या पर भारी पड़ें गे।

فَإِن يَكُن مِّنكُم مِّاْئَةٌ صَابِرَةٌ يَغْلِبُوا۟ مِاْئَتَيْنِ ۚ

وَإِن يَكُن مِّنكُمْ أَلْفٌ يَغْلِبُوٓا۟ أَلْفَيْنِ بِإِذْنِ ٱللَّهِ ۗ وَٱللَّهُ مَعَ ٱلصَّـٰبِرِينَ

फ़इंय् यकुन मिन्कुम मिअतुन साबिरतुन यग्लिबू मिअतैनि व इंय्यकुन मिन्कुम् अल्फुन यग़्लिबू अल्फ़ैनि बिइज़्निल्लाहि वल्लाहु मअस्साबिरीन (8 : 66) ,

अर्थात् ,*" सो यदि तुम में के सौ धैर्यवान हों तो वे दो सौ पर भारी पड़ें गे ,और यदि तुम में के एक हज़ार हैं तो वे अल्लाह की आज्ञा से दो हज़ार पर भारी होंगे। और अल्लाह सब्र करने वालों के साथ है।"*

और जब मुसलमानों के साथ हथियारों की शक्ति भी हो तो वे अपने से दस गुना संख्या पर विजयी होंगे।

إِن يَكُن مِّنكُمْ عِشْرُونَ صَـٰبِرُونَ يَغْلِبُوا۟ مِاْئَتَيْنِ ۚ

وَإِن يَكُن مِّنكُم مِّاْئَةٌ يَغْلِبُوٓا۟ أَلْفًا مِّنَ ٱلَّذِينَ كَفَرُوا۟

इंय्यकुन् मिन्कुम् अिश्रून साबिरून यग़्लिबू मिअतैनि व इंय्यकुन् मिन्कुम मिअतुन यग़्लिबू अल्फ़म्मिल्लज़ीन कफ़रू(8 : 65) ,

अर्थात् ,*" यदि तुम में के बीस धैर्यवान हों तो वे दो सौ पर भारी पड़ें गे ,और यदि तुम में के सौ हों तो वे हज़ार काफ़िरों पर भारी पड़ें गे।"*

इन आयतों की सत्यता पर स्वयं इतिहास साक्षी है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰की आँखों के सामने मुसलमान निहत्थे होते हुए भी ,बदर के युद्ध में अपने से तिगुने शत्रु पर भारी पड़े ,और उहद के युद्ध में अपने से

चोगुने शत्रु पर भारी पड़े ,अहज़ाब के युद्ध में अपने से दस गुना दुश्मन पर विजयी हुए। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके देहांत के बाद मुसलमानों को जो युद्ध ईरान और रोम जैसे शक्तिशाली राज्यों के साथ लड़ने पड़े उन में मुसलमानों की संख्या और शत्रु की संख्या का तो कोई अनुपात ही न था फिर भी वो प्रायः विजयी ही होते रहे।

विनम्रता और विनयशीलता की शिक्षा

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने जहाँ एक ओर यह शिक्षा दी कि शत्रु चाहे कितना ही शक्तिशाली क्यों न हो मुसलमान को उस से भयभीत नहीं होना चाहिये, तो दूसरी और आप ने मुसलमानों के दिलों में विनम्रता और विनयशीलता का उच्च भाव भी पैदा कर दिया।

وَلَا تَمْشِ فِى ٱلْأَرْضِ مَرَحًا ۖ إِنَّكَ لَن تَخْرِقَ ٱلْأَرْضَ وَلَن تَبْلُغَ ٱلْجِبَالَ طُولًا ﴿٣٧﴾ كُلُّ ذَٰلِكَ كَانَ سَيِّئُهُۥ عِندَ رَبِّكَ مَكْرُوهًا ﴿٣٨﴾

व ला तम्शि फ़िल्अर्ज़ि मरहन इन्नक लन् तख़्रिकल्–अर्ज़ व लन् तब्लुग़ल् जिबाल तूलन कुल्लु ज़ालिक कान सय्यिअुहू अिन्द रब्बिक मक्रूहन (17 : 37–38),

अर्थात् ," *और धरती में अकड़ता हुआ न चल ,क्योंकि न तो तू धरती को फाड़ सकता है और न ऊँचाई में पहाड़ों की बराबरी कर सकता है। इन चीज़ों की बुराई तेरे रब की निगाह में अप्रिय है।"*

وَلَا تُصَعِّرْ خَدَّكَ لِلنَّاسِ وَلَا تَمْشِ فِى ٱلْأَرْضِ مَرَحًا ۖ إِنَّ ٱللَّهَ لَا يُحِبُّ كُلَّ مُخْتَالٍ فَخُورٍ ﴿١٨﴾ وَٱقْصِدْ فِى مَشْيِكَ وَٱغْضُضْ مِن صَوْتِكَ

वला तुसअिअ्र् ख़द्दक लिन्नासि व ला तम्शि फ़ल्अर्ज़ि मरहन इन्नल् लाह ला युहिब्बु कुल्ल मुख़्तालिन फ़ख़ूरिन वक़्सिद् फ़ी मश्यिक वग़्जुज़् मिन् सौतिक (31 : 18–19) ,

अर्थात् ," *और लोगों से अभिमानपूर्वक मुँह न फेर ,न ही धरती में अकड़ता हुआ चल। क्योंकि अल्लाह किसी अंहकारी , आत्मश्लाघी को पसन्द नहीं करता। और अपनी चाल में माध्यमिकता दिखा और अपनी*

आवाज़ को नीचा रख।"

كَذَٰلِكَ يَطْبَعُ ٱللَّهُ عَلَىٰ كُلِّ قَلْبِ مُتَكَبِّرٍ جَبَّارٍ ﴿٣٥﴾

कज़ालिक यत्बअुल्लाहु अला कुल्लि क़ल्बि मुतकब्बिरिन जब्बारिन
अर्थात् ,*" इसी प्रकार अल्लाह प्रत्येक अहंकारी एवं सरकश के दिल पर मोहर लगा देता है।" (40 : 35)*

إِنَّهُۥ لَا يُحِبُّ ٱلْمُسْتَكْبِرِينَ

इन्नहू ला युहिब्बुल् मुस्तक्बिरीन *(16 : 23) ,*
अर्थात् ,*" निस्संदेह अल्लाह अभिमान करने वालों से प्रेम नहीं करता।"*

وَٱسْتَعِينُوا۟ بِٱلصَّبْرِ وَٱلصَّلَوٰةِ ۚ وَإِنَّهَا لَكَبِيرَةٌ إِلَّا عَلَى ٱلْخَٰشِعِينَ

वस्तअीनू बिस्सब्रि वस्सलाति व इन्नहा लकबीरतुन इल्ला अलल्ख़ाशिअीन *(2 : 45) ,*
अर्थात् ,*" और सब्र और दुआ के साथ अल्लाह की मदद माँगो। और यह बड़ा कठिन काम है , किन्तु उन के लिये नहीं जो विनम्रता प्रकट करते हैं।"*

जहाँ एक ओर पाँच वक्त की नमाज़ ने मुसलमानों में अमलन समानता पैदा कर दी ,वहीं एक साथ मिलकर अपने पालनहार–स्रष्टा के आग हाथ बाँधे खड़े होने ,एक साथ झुकने और एक साथ सजदा करने से उन के अन्दर विनम्रता और विनयशीलता का पावन भाव भी उत्पन्न हो गया जो कालांतर में उनकी दूसरी प्रकृति बन गया। उधर दूसरी ओर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके पवित्र आचरण ने भी उन्हें प्रभावित किये बिना नहीं छोड़ा। मुसलमान देखते थे कि उनका पैग़म्बर भौतिक और आध्यात्मिक प्रतिष्ठा के उच्चतम पद पर आसीन होन के बावजूद एक अत्यन्त सरल और विनयशील जीवन व्यतीत करता है। हज़रत पैग़म्बरश्री
और आप के व्यवहारिक नमूना का परिणाम यह हुआ कि विनम्रता और विनयशीलता का सद्गुण मुसलमानों की नस नस में रच बस गया। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लउन के बीच उन ही की नाईं एक साधारण मनुष्य की तरह रहते थे। कुर्आन शरीफ का हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके बारे में यह एलान है

قُلْ إِنَّمَآ أَنَا۠ بَشَرٌ مِّثْلُكُمْ

कुल इन्नमा अना बशरुम्–मिस्लुकुम (18 : 110) ,

अर्थात् ," *कह दे : मैं भी तुम्हारी तरह एक इन्सान ही हूँ।*"

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लका व्यवहारिक जीवन इस आयत की जीवन्त व्याख्या था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लजब गोष्ठी या जनसभा में पधारते तो किसी उच्च आसन पर या आगे हो कर नहीं बैठते थे। कोई अजनबी गोष्ठी में आता तो उसे पूछना पड़ता ,तुम में से मुहम्मदसल्ल.कौन हैं ? हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लजब चलते तो अपने साथियों के साथ मिलकर चलते। एक बार जन्गल में चले गए और खाना तैयार करने का वक्त आया ,तो सब ने एक एक काम अपने ज़िम्मा ले लिया ,और आप ने ईंधन जमा करना अपने ज़िम्मा लिया। आप अपने सेवकों पर ,किसी काम के न करने या खराब करने पर ,सख़्ती न करते थे और न उन्हें कोसते थे। एक यहूदी का कुछ क़र्ज़ा आप के ज़िम्मा था ,उस ने भरी सभा में आकर आप को कोसना शुरू किया कि तुम हाशिम लोग किसी का क़र्ज़ा लेकर नहीं लौटाते। बजाये इस के कि आप सख़्ती से पेश आते ,आप ने उसका सारा कर्ज़ा तथा कुछ और भी उसे अदा किया।

निस्स्वार्थता

निस्स्वार्थता — यह एक और नैतिक सद्‌गुण है। आप ने इसे भी पूर्णरूपेण अपने अनुयायिओं में पैदा कर दिया। ताकि वे जीवन के संघर्ष में कामयाब हों। जो काम करो अल्लाह की प्रसन्नता हेतु करो ,किसी निजी स्वार्थ या प्रयोजन के अन्तर्गत न करो। यही वह उत्कृष्ट भाव था जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपनी शिक्षा और आपने व्यवहारिक नमूना द्वारा अपने अनुयायिओं में पैदा कर दिया।

وَمَا لِأَحَدٍ عِندَهُۥ مِن نِّعْمَةٍ تُجْزَىٰٓ ﴿١٩﴾ إِلَّا ٱبْتِغَآءَ وَجْهِ رَبِّهِ ٱلْأَعْلَىٰ ﴿٢٠﴾

वमा लिअहदिन अिन्दहू मिन् निअमतिन् तुज्ज़ा इल्लब्तिग़ाअ वज्हि रब्बिहिल् आला (92 : 19–20) ,

अर्थात् ," *और किसी के पास कोई ऐसी नेमत नहीं जिस पर उसे*

प्रतिफल मिले, सिवाय अपने पालनहार–स्रष्टा की प्रसन्नता चाहने के।"

قُلْ إِنَّ صَلَاتِي وَنُسُكِي وَمَحْيَايَ وَمَمَاتِي لِلَّهِ رَبِّ الْعَالَمِينَ ﴿١٦٢﴾

कुल् इन्न सलाती व नुसुकी व मह्याय व ममाती लिल्–लाहि रब्बिल् आलमीन (6 : 162),

अर्थात्, *" कह : मेरी नमाज़ और मेरी कुर्बानी और मेरा जीना और मेरा मरना सब अल्लाह के लिये है, जो समस्त लोकलोकांतरों का (एकमात्र) पालनहार–स्रष्टा है।"*

وَاسْمَعُوا وَأَطِيعُوا وَأَنفِقُوا خَيْرًا لِّأَنفُسِكُمْ
وَمَن يُوقَ شُحَّ نَفْسِهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ ﴿١٦﴾

वस्मऊ व अतीऊ व अन्फ़िक़ू ख़ैरन लिअन्फ़ुसिकुम व मंयूक़ शुह्ह नफ़्सिही फ़ऊलाइक हुमुल्–मुफ़्लिहून *(64 : 16),*

अर्थात्, *" और सुनो और आज्ञापालन करो और व्यय करो — यही तुम्हारे लिये उत्तम है। और जो कोई अपने निजी स्वार्थ से बच गया — समझो वही कामयाब होने वाले हैं।"*

وَيُؤْثِرُونَ عَلَىٰ أَنفُسِهِمْ وَلَوْ كَانَ
بِهِمْ خَصَاصَةٌ وَمَن يُوقَ شُحَّ نَفْسِهِ فَأُولَٰئِكَ هُمُ الْمُفْلِحُونَ

व युअसिरून अला अन्फ़ुसिहिम् व लो कान बिहिम् ख़सासतुन वमंयूक़ शुह्ह नफ़्सिही फ़ऊलाइक हुमुल्–मुफ़्लिहून

अर्थात्, *" वे अपनी अपेक्षा दूसरों को महत्त्व देते हैं, चाहे उन्हें तन्गी ही हो। और जो कोई अपने निजी स्वार्थ से बच गया — समझो वही कामयाब होने वाले हैं।" (59 : 9)*

وَمِنَ النَّاسِ مَن يَشْرِي نَفْسَهُ ابْتِغَاءَ مَرْضَاتِ اللَّهِ وَاللَّهُ رَءُوفٌ بِالْعِبَادِ

व मिन्न–नासि मंय्यश्री नफ़्सहुब्तिग़ाअ मर्ज़ातिल्लाहि वल्लाहु रऊफ़ुम्–बिल्अिबादि (2 : 207),

अर्थात्, *" और लोगों में वह भी है जो अल्लाह की प्रसन्नता पाने के लिये स्वयं को बेच देता है। और अल्लाह अपने बन्दों पर अत्यन्त*

कृपाशील है।"

वचनबद्धता

अपने वचन ,अपनी प्रतिज्ञा को पूरा करना ,यह एक और महा नैतिक सद्गुण था जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने अनुयायियों में पैदा किया :

وَٱلَّذِينَ هُمْ لِأَمَـٰنَـٰتِهِمْ وَعَهْدِهِمْ رَٰعُونَ

वल्लज़ीन हुम् लिअमानातिहिम् व अह्दिहिम् राऊन

अर्थात् ,*" और वे जो अपनी अमानतों और अपने वचनों की रक्षा करते हैं।" (23 : 8 , 70 : 32)*

وَأَوْفُوا۟ بِٱلْعَهْدِ ۖ إِنَّ ٱلْعَهْدَ كَانَ مَسْـُٔولًا ﴿٣٤﴾

व अव्फ़ू बिल्अहदि इन्नल्अह्द कान मस्ऊलन् *(17 : 34)* ,

अर्थात् ,*" और प्रतिज्ञा पूरी करो ,क्योंकि प्रत्येक प्रतिज्ञा के बारे में पूछा जाये गा।"*

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓا۟ أَوْفُوا۟ بِٱلْعُقُودِ ۚ

याअय्युहल्लज़ीन आमनू अव्फ़ू बिल्उक़ूद (5 : 1) ,

अर्थात् ," *हे ईमान वालो ! अपनी प्रतिज्ञाओं को पूरा करो।"*

وَأَوْفُوا۟ بِعَهْدِ ٱللَّهِ إِذَا عَـٰهَدتُّمْ وَلَا تَنقُضُوا۟ ٱلْأَيْمَـٰنَ بَعْدَ تَوْكِيدِهَا وَقَدْ جَعَلْتُمُ ٱللَّهَ عَلَيْكُمْ كَفِيلًا ۚ

व अव्फ़ू बिअह्दिल्लाहि इज़ा आहद्तुम् व ला तन्कुज़ुल् अय्मान बअद तौकीदिहा व क़द् जअल्तुमुल्लाह अलैकुम् कफ़ीला

अर्थात् ,*" और अल्लाह की प्रतिज्ञा को पूरा करो ,जब तुम प्रतिज्ञा कर लो ,और सौगंदों को उनके पक्का करने के पश्चात् भंग मत करो , क्योंकि तुम अल्लाह को अपना ज़ामिन ठहरा चुके हो।" (16 : 91)*

राष्ट्रों और कौमों को विशेष रूप से सावधान किया गया है कि वे अपनी ताकत या अपनी बहुसंख्या के नशे में अपनी प्रतिज्ञाओं को भंग न करें :

وَلَا تَكُونُوا۟ كَٱلَّتِى نَقَضَتْ غَزْلَهَا مِنۢ بَعْدِ قُوَّةٍ أَنكَـٰثًا تَتَّخِذُونَ

أَيْمَـٰنَكُمْ دَخَلًا بَيْنَكُمْ أَن تَكُونَ أُمَّةٌ هِىَ أَرْبَىٰ مِنْ أُمَّةٍ

व ला तकूनू कल्लती नक़ज़त् ग़ज़्लहा मिम् बअदि कूवतिन इन्कासन तत्तख़िज़ून अयमानकुम् दख़लम् बैनकुम् अन् तकून उम्मतुन हिय अर्बा मिन उम्मतिन *(16 : 92) ,*

अर्थात् ," *और उस औरत की तरह मत हो जाओ जो अपना सूत परिश्रम से कात कर फिर उसे टुकड़े टुकड़े कर देती है। तुम अपनी कसमों को आपस में छलकपट का साधन बना लेते हो, इस लिये कि एक समुदाय दूसरे समुदाय से बढ़ कर हो।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल और आपके सहाबारज. की वचबद्धता

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लऔर आपके अनुयायी इन आदेशों के ऐसे पाबन्द थे कि कठिन से कठिन परीक्षाओं में भी वे अपने वचनों और अपनी प्रज्ञिाओं पर डटे रहे। एक भी घटना ऐसी नहीं कि जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने या आप के *सहाबा*रज.ने अपना वचन तौड़ा हो। हुदैबिया की शांति सन्धि के समय एक कठिन परीक्षा आन पड़ी। शांति–सन्धि लिखी जाचुकी थी ,उस में एक शर्त यह थी कि अगर कोई व्यक्ति मुसलमान होकर मक्का से भाग कर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी शरण में आना चाहे तो आप उसे शरण नहीं दे सकते। ठीक उसी समय अबू जन्दलरज.,जो इस्लाम ग्रहण कर चुके थे, मक्का से भाग कर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके पास हुदैबिया पहुंचे ,और अपनी पीठ पर पड़े कोड़ों के निशान दिखाये। *सहाबा* की आँखों में आँसू भर आये ,लेकिन हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फ़रमाया : *हम वचनबद्ध हैं , आपकी सहायता नहीं कर सकते।* फल यह कि अबू जन्दल को पुनः उन्ही ज़ालिमों के पास वापस जाना पड़ा।

हज़रत उमररज.के ज़माना में अबू उबैदारज.शाम देश में मुस्लिम सेना के सेनापति थे। रोमियों के दबाव के निमित उन्हें हिमस् का ग़ैर–मुस्लिम इलाका ख़ाली करना पड़ा। वे जानते थे कि अब यह इलाक़ा दुश्मन के कबज़ा में जा रहा है। आधुनिक युग की सुसभ्य सेनाएं ऐसे इलाके हो तबाह कर देना अपना प्रथम कर्तव्य समझती हैं ,ताकि यह दुश्मन की शक्ति का साधन न बन जाये। लेकिन मुसलमान सेनापति ने ,जो हज़रत

पैग़म्बरश्रीसल्लका ***सुहाबी*** (=*सहवर्ती अनुयायी*) था ,हिमस् के सरदारों को बुलाया और कहा :

"हम ने तुम से कर इस लिये वसूल किया था कि हम तुम्हारी रक्षा तथा सुख–सुविधाओं की व्यवस्था करें गे। पर चूंकि हम इस इलाके को खाली कर रहे हैं , और तुम्हारी रक्षा नहीं कर सकते , अत: जितना कर तुम से वसूल किया था वह हम वापस लौटा रहे हैं।"

वचनबद्धता की ऐसी अनूठी मिसाल संपूर्ण विश्व–इतिहास में ढूँडे से भी नहीं मिल सकती।

संयम तथा यौन–सदाचार

काम–वासना मनुष्य को बहुत जल्द अपना शिकार बना लेती है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लका जीवन *नबूवत* से पहले भी संयम और इंद्रिय निग्रह का एक आदर्श नमूना था । इस पर मियूर जैसे इस्लाम–विरोधी इतिहासकार की गवाही हम इसी पुस्तक में अन्यत्र दरज कर चुके हैं। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी शिक्षा में संयम और यौन–सदाचार को विशेष स्थान प्राप्त है। व्यभिचार को *शिर्क* (=*अनेकेश्वरवाद*) और कतल के संग तीसरा महा पाप क़रार दिया गया है :

وَٱلَّذِينَ لَا يَدۡعُونَ مَعَ ٱللَّهِ إِلَـٰهًا ءَاخَرَ وَلَا يَقۡتُلُونَ ٱلنَّفۡسَ ٱلَّتِي حَرَّمَ ٱللَّهُ
إِلَّا بِٱلۡحَقِّ وَلَا يَزۡنُونَ

वल्लज़ीन ला यद्ऊन मअल्लाहि इलाहन आख़र व ला यक़्तुलूनन्–नफ़्सल् लती हर्रमल्लाहु इल्ला बिल्हक़्क़ व ला यज़्नून *(25 : 68) ,*

अर्थात् ," *(**रहमान** के बन्दे वो हैं) जो अल्लाह के साथ किसी दूसरे* (तथाकथित) *ईश्वर को नहीं पुकारते ,और न किसी जीव — जिस (का वध) अल्लाह ने वर्जित ठहराया है — का वध करते करते हैं , सिवाय इसके कि न्याय चाहे ,और न व्यभिचार करते हैं।"*

मुसलमानों को यह शिक्षा दी गई कि वे व्यभिचार के निकट भी न जायें ,अर्थात् ऐसे काम न करें जिन से व्यभिचार जैसे पापकर्म की प्रेरणा मिलती हो :

وَلَا تَقْرَبُوا۟ ٱلزِّنَىٰٓ ۖ إِنَّهُۥ كَانَ فَٰحِشَةً وَسَآءَ سَبِيلًا ﴿٣٢﴾

व ला तक़्रबुज़ू ज़िना इन्नहू कान फ़ाहिशतन् वसाअ सबीला
अर्थात् ," *और व्यभिचार के निकट मत जाओ ,क्योंकि यह खुली अश्लीलता और बुरा रास्ता है।" (17 : 32)*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने मुसलमानों को वो सब उपाय भी बता दिये जिन से इन्सान इस आचार–नाशक बुराई से बच सकता है। पहला उपाय यह बताया कि मर्द और औरतें जब आमने सामने हों तो दोनों अपनी अपनी निगाहें नीची रखें।

قُل لِّلْمُؤْمِنِينَ يَغُضُّوا۟ مِنْ أَبْصَٰرِهِمْ وَيَحْفَظُوا۟ فُرُوجَهُمْ ۚ ذَٰلِكَ أَزْكَىٰ لَهُمْ ۗ إِنَّ ٱللَّهَ خَبِيرٌۢ بِمَا يَصْنَعُونَ ﴿٣٠﴾ وَقُل لِّلْمُؤْمِنَٰتِ يَغْضُضْنَ مِنْ أَبْصَٰرِهِنَّ وَيَحْفَظْنَ فُرُوجَهُنَّ

कुल् लिल्मुअमिनीन यग़ुज़्ज़ू मिन अब्सारिहिम व यह्फ़ज़ू फ़ुरूजहुम ज़ालिक अज़्का लहुम् इन्नल्लाह ख़बीरुम् बिमा यस्नऊन व कुल् लिल्मुअमिनाति यग़ज़ुज़्न मिन् अब्सारिहिन्न व यह्फ़ज़्न फ़ुरूजहुन्न *(24 : 30–31) ,*
अर्थात् ," *ईमान वाले मर्दों से कह दे : अपनी नज़रें नीची रखा करें और अपने गुप्तांगों की रक्षा करें ,यही उनके लिये अधिक पवित्र है। अल्लाह उस से पूर्णतया अवगत है जो वे करते हैं। और ईमान वाली औरतों से (भी) कह दे : अपनी नज़रें नीची रखा करें और अपने गुप्तांगों की रक्षा करें।"*

दूसरा उपाय यह है कि औरतें अपने श्रृंगार और अपने सौन्दर्य का खुले आम प्रदर्शन करती न फिरें :

وَلَا يُبْدِينَ زِينَتَهُنَّ إِلَّا مَا ظَهَرَ مِنْهَا ۖ وَلْيَضْرِبْنَ بِخُمُرِهِنَّ عَلَىٰ جُيُوبِهِنَّ ۖ

व ला युब्दीन ज़ीनतहुन्न इल्ला मा ज़हर मिन्हा वल्–यज़्रिब्न बिख़ुमुरिहिन्न अला जुयूबिहिन्न *(24 : 31) ,*
अर्थात् ," *और औरतें (जब मर्दों के सामने जायें तो) अपना श्रृंगार*

प्रदर्शित न करें सिवाय उसके जो (स्वभावतः) खुला रहता है। और उन्हें चाहिये कि वो अपनी ओढ़नियाँ अपने सीनों पर डाल लें।"

स्त्रियों का अपनी सुन्दरता के प्रदर्शन हेतु सीना और बाजू नग्न रखना ,जैसा आज यूरोप में हो रहा है ,अरब में भी प्रचलित था। इस से उन्हें रोका गया। *सौन्दर्य के जो स्थान स्वभावतः खुले रहते हैं वे चहरा और दोनों हाथ हैं*। इस पद की यह व्याख्या स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने की है। आप ने एक नवयुवती को देखा जिस ने बारीक कपड़े पहन रखे थे ,जिन के भीतर से उस का शरीर साफ झलक रहा था। आप ने उसे संबोधित कर फ़रमाया :

" औरत जब जवान हो जाये तो उचित नहीं कि उस के शरीर का कोई अंग खुला रहे सिवाय इस के और इस के।" और आप ने अपने चहरे और हाथों की ओर इशारा किया।"

(*अबू दाऊद* 31 : 30)

तीसरा उपाय यह बताया कि लोग सामान्यतः विवाहित अवस्था में रहें ,यहाँ तक कि दास और दासियाँ भी विवाहित अवस्था में ही रहें :

وَأَنكِحُوا۟ ٱلْأَيَـٰمَىٰ مِنكُمْ وَٱلصَّـٰلِحِينَ مِنْ عِبَادِكُمْ وَإِمَآئِكُمْ

व अन्किहुल्–अयामा मिन्कुम् वस्सालिहीन मिन् अिबादिकुम् व इमाअिकुम् *(24 : 32) ,*

अर्थात् ," *और जो तुम में से अविवाहित हैं उनके विवाह कर दो ,और अपने दासों और दासियों के भी जो (विवाह के) योग्य हों।"*

और जिन को विवाह न मिल सके वे अपनी काम–वासना को काबू में रखें। इस संबंध में आप ने और उपाय बताये :

وَلْيَسْتَعْفِفِ ٱلَّذِينَ لَا يَجِدُونَ نِكَاحًا حَتَّىٰ يُغْنِيَهُمُ ٱللَّهُ مِن فَضْلِهِۦ

वल्–यस्तअफ़िफ़िल् लज़ीन ला यजिदून नकाहन हत्ता युग्–नियहुमुल् लाहु मिन् फ़ज़्–लिही (24 : 33) ,

अर्थात् ," *और जो विवाह के साधन नहीं पाते वे ब्रह्मचर्य धारण करें , यहाँ तक कि अल्लाह अपने अनुग्रह द्वारा उन्हें सम्पन्न कर दे।"*

इस आयत की व्याख्या करते हुए हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फ़रमाया :

" जो व्यक्ति तुम में से विवाह कर सकता है वह विवाह करे क्योंकि विवाह नज़रों को नीचा रखता है और शील की रक्षा करता है। जो विवाह न कर सके वह रोज़ा रखे ,यह उसके लिये बचाव का साधन है।" (*बुख़ारी* 30 : 10)

सत्यनिष्ठा और निष्कपटता

निष्कपटता और सत्यनिष्ठा — यह एक और नैतिक सद्गुण है जो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने अनुयायिओं में उत्पन्न किया। इस संबंध में सब से पहले उन्हें यह शिक्षा दी गई कि वे अल्लाह की ***इबादत*** (=*उपासना*) में निश्छलता प्रदर्शित करें।

وَمَآ أُمِرُوٓاْ إِلَّا لِيَعۡبُدُواْ ٱللَّهَ مُخۡلِصِينَ لَهُ ٱلدِّينَ حُنَفَآءَ

व मा उमिरू इल्ला लियअबुदुल्–लाह मुख़्लिसीन लहुद्दीन हुनफ़ाअ *(98 : 5)* ,

अर्थात् ," *और उन्हें यही हुक्म दिया गया कि वे अल्लाह की उपासना आज्ञाकारिता के निष्कपट भाव से करें — पूर्ण एकाग्र हो कर।"*

فَٱعۡبُدِ ٱللَّهَ مُخۡلِصٗا لَّهُ ٱلدِّينَ ﴿٢﴾ أَلَا لِلَّهِ ٱلدِّينُ ٱلۡخَالِصُۚ

फ़अबुदिल्लाह मुख़्लिसल्–लहुद्दीन अला लिल्लाहिद्दीनुल्–ख़ालिसु

अर्थात् ," *सो अल्लाह की उपासना करो — उस के प्रति निष्कपट आज्ञारिता का प्रदर्शन करते हुए ,सुनो विशुद्ध आज्ञाकरिता केवल अल्लाह के लिये ही है।" (39 : 2–3)*

نفاق ***"निफ़ाक़"*** यानि *कपटाचार* को अत्यन्त अप्रिय अवगुण बताया गया है :

إِنَّ ٱلۡمُنَٰفِقِينَ فِي ٱلدَّرۡكِ ٱلۡأَسۡفَلِ مِنَ ٱلنَّارِ وَلَن تَجِدَ لَهُمۡ نَصِيرًا ﴿١٤٥﴾

इन्नल् मुनाफ़िक़ीन फ़िद्दर्किल्–अस्फ़लि मिनन्नारि व लन् तजिद लहुम् नसीरन *(4 : 145)* ,

अर्थात् ," *निस्संदेह कपटाचारी लोग नरकाग्नि के सब से निचले भाग में होंगे ,और तू उनका कोई सहायक नहीं पायेगा।"*

هُمْ لِلْكُفْرِ يَوْمَئِذٍ أَقْرَبُ مِنْهُمْ لِلْإِيمَـٰنِ
يَقُولُونَ بِأَفْوَاهِهِم مَّا لَيْسَ فِى قُلُوبِهِمْ

हुम लिल्कुफ़्-रि यौमअिज़िन अक़्रबु मिन्हुम् लिल्ईमानि यक़ूलून बिअफ़्वाहिहिम् मा लैस फ़ी कुलूबिहिम् *(3 : 167) ,*
अर्थात् ," *वे उस दिन ईमान की अपेक्षा कुफ़्र के अधिक निकट थे ,वे अपने मुँहों से वो बातें कहते थे जो उनके दिलों में नहीं थीं।"*

कृतज्ञता और शुक्रगुज़ारी

वे सब सद्‌गुण जिन से मनुष्य नैतिक प्रतिष्ठा का पात्र बनता है एक एक कर मुसलमानों को सिखलाये गए। इन्ही सद्‌गुणों में कृतज्ञता और शुक्रगुज़ारी का सद्‌गुण भी शामिल है।

وَإِذْ تَأَذَّنَ رَبُّكُمْ لَئِن شَكَرْتُمْ لَأَزِيدَنَّكُمْ وَلَئِن كَفَرْتُمْ إِنَّ عَذَابِى لَشَدِيدٌ

व इज़् तअज़्ज़न रब्बुकुम् लअिन् शकर्तुम् लअज़ीदन्नकुम् व लअिन् कफ़र्तुम् अन्न अज़ाबी लशदीदुन *(14 : 7) ,*
अर्थात् ," *और जब तुम्हारे रब ने घोषणा कर दी : यदि तुम कृतज्ञता प्रकट करो गे तो मैं तुम्हें और ज़्यादा दूँगा , और यदि तुम अकृतज्ञता प्रकट करो गे तो मेरी यातना भी कठोर है।"*

كُلُوا۟ مِن طَيِّبَـٰتِ مَا رَزَقْنَـٰكُمْ وَٱشْكُرُوا۟
لِلَّهِ إِن كُنتُمْ إِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١٧٢﴾

कुलू मिन् तैयिबाति मा रज़क्नाकुम् वश्कुरू लिल्-लाहि इन् कुन्तुम् इय्याहु तअबुदून *(2 : 172) ,*
अर्थात् ," *उन पवित्र वस्तुओं से खाओ जो हम ने तुम्हें भोजनार्थ प्रदान की हैं , और अल्लाह का शुक्र करो यदि तुम उसी की उपासना करते हो।"*

إِن تَكْفُرُوا۟ فَإِنَّ ٱللَّهَ غَنِىٌّ عَنكُمْ وَلَا يَرْضَىٰ لِعِبَادِهِ ٱلْكُفْرَ

وَإِن تَشْكُرُوا۟ يَرْضَهُ لَكُمْ

इन् तक्फ़ुरू फ़इन्नल्–लाह ग़नीयुन अन्कुम् व ला यर्ज़ा लिअिबादिहिल् कुफ़्र व इन् तश्कुरू यर्ज़हु लकुम् *(39 : 7),*
अर्थात् ," *यदि तुम नाशुक्री करो गे तो निश्चय ही अल्लाह तुम से निःस्पृह है ,और वह अपने बन्दों की नाशुक्रगुज़ारी पसन्द नहीं करता, और यदि तुम शुक्र करो तो वह उसे तुम्हारे लिये पसन्द करता है।"*

इस के साथ साथ यह शिक्षा भी दी गई कि परमात्मा के धन्यवाद की भांति इन्सानों का धन्यवाद भी ज़रूरी है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने फ़रमाया :

" जो व्यक्ति इन्सानों का धन्यवाद नहीं करता वह अल्लाह का धन्यवाद भी नहीं करता।"

इन्सानों का धन्यवाद यही है कि उपकार करने वाले के साथ उपकार ही करे :

هَلْ جَزَآءُ ٱلْإِحْسَٰنِ إِلَّا ٱلْإِحْسَٰنُ ﴿٦٠﴾

हल् जज़ाअुल्– इह्सानि इल्लल्–इह्सानु *(55 : 60) ,*
अर्थात् ," *क्या उपकार का बदला सिवाय उपकार के कुछ और है ?"*

छिद्रान्वेषण , उपहास तथा तिरस्कार

जो सद्गुण सुखद सामाजिक संबंधों के लिये अनिवार्य थे उन की भी शिक्षा दी गई। और उस अशिष्ट और अभद्र व्यवहार से रोका गया जो प्रसम सामाजिक जीवन के प्रतिकूल था :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا يَسْخَرْ قَوْمٌ مِّن قَوْمٍ عَسَىٰٓ أَن يَكُونُوا۟ خَيْرًا مِّنْهُمْ وَلَا نِسَآءٌ مِّن نِّسَآءٍ عَسَىٰٓ أَن يَكُنَّ خَيْرًا مِّنْهُنَّ وَلَا تَلْمِزُوٓا۟ أَنفُسَكُمْ وَلَا تَنَابَزُوا۟ بِٱلْأَلْقَٰبِ بِئْسَ ٱلِٱسْمُ ٱلْفُسُوقُ بَعْدَ ٱلْإِيمَٰنِ وَمَن لَّمْ يَتُبْ فَأُو۟لَٰٓئِكَ هُمُ ٱلظَّٰلِمُونَ ﴿١١﴾

याअय्युहल्लज़ीन आमनू लायस्ख़र् क़ौमुम् मिन् क़ौमिन् असा

अंय् यकूनू ख़ैरम् मिन्हुम् व ला निसाउम् मिन् निसाअिन् असा अंय् यकुन्न ख़ैरम् मिन्हुन्न वला तल्मिज़ू अन्फ़सकुम् व ला तनाबज़ू बिल्अल्क़ाबि बिअसल्–इस्मुल् फ़ुसूक़ु बअदल् ईमानि व मन् लम् यतुब् फ़ऊलाअिक हुमुज़्ज़ालिमून *(49 : 11) ,*

अर्थात् ," *हे ईमान वालो ! कोई क़ौम दूसरी क़ौम की हँसी न उड़ाये ,कदाचित वही उन से उत्तम हों ,और न औरतें दूसरी औरतों पर हँसें ,कदाचित वही उन से उत्तम हों। और अपने लोगों पर दोष न लगाओ , और न एक दूसरे के नाम धरो। ईमान के बाद बुरा नाम बहुत ही बुरी बात है ,जो व्यक्ति इन बातों से बाज़ नहीं आता तो यही ज़ालिम हैं।"*

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ ٱجْتَنِبُوا۟ كَثِيرًا مِّنَ ٱلظَّنِّ إِنَّ بَعْضَ ٱلظَّنِّ إِثْمٌ ۖ وَلَا تَجَسَّسُوا۟ وَلَا يَغْتَب بَّعْضُكُم بَعْضًا ۚ أَيُحِبُّ أَحَدُكُمْ أَن يَأْكُلَ لَحْمَ أَخِيهِ مَيْتًا فَكَرِهْتُمُوهُ ۚ

याअय्युहल्लज़ीन आमनुज्–तनिबू कसीरम् मिनज़्ज़न्नि इन्न बअज़ज़् ज़न्नि इस्मुन व ला तजस्ससू वला यग़्तब् बअज़ुकुम् बअज़न् अ युहिब्बु अहदुकुम अंय्याकुल लह्म अख़ीहि मैतन् फ़करिह्तुमूहु *(49 : 12) ,*

अर्थात् ," *हे ईमान वालो ! अधिक संदेह से बचो ,क्यों कि बाज़ मामलों में संदेह पाप है। और न एक दूसरे के भेद टटोलो , और न एक दूसरे को पीठ पीछे बुरा कहो। क्या तुम में से कोई यह पसन्द करता है कि अपने मरे हुए भाई का माँस खाये ? तुम इस से घृणा करते हो।"*

सहाबारज़. की उच्च नैतिकता

कुर्आन शरीफ़ में जिन सद्गुणों का बार बार ज़िक्र आता है , वह असल में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के परम पावन चरित्र का ही चित्रण है। इस तथ्य को इस आयत में प्रतिपादित किया गया है :

وَإِنَّكَ لَعَلَىٰ خُلُقٍ عَظِيمٍ ۝٤

" अन्नक लअला ख़ुलुक़िन अज़ीम " (68 : 4) ,

अर्थात् , *" और निश्चय ही तू अत्युच्च शिष्टाचार का स्वामी है।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लअपने समस्त अनुयायिओं को इसी पावन शिष्टाचार के रंग में रंगना चाहते थे ,आप को इस कठिन क्षेत्र में जो अद्वितीय सफलता प्राप्त हुई उस का सहज अनुमान इस्लाम के प्रथम चार ***ख़लीफ़ों*** (बादशाहों) की उच्च नैतिकता से लगाया जा सकता है ,जो एक अति विशाल राज्य के स्वामी होते हुए भी एक अति सरल और सादा ज़िन्दगी बसर करते थे। छोटे से छोटे आदमी के साथ भी समानता से पेश आते थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके साथियों के शिष्टाचार का जो चित्र क़ुर्आन शरीफ़ में अनेकशः खींचा गया है ,उस को जानने के लिये हम यहाँ सिर्फ एक अनुच्छेद उदाहरण स्वरूप प्रस्तुत करते हैं :

وَعِبَادُ ٱلرَّحْمَٰنِ ٱلَّذِينَ يَمْشُونَ عَلَى ٱلْأَرْضِ هَوْنًا وَإِذَا خَاطَبَهُمُ
ٱلْجَٰهِلُونَ قَالُوا۟ سَلَٰمًا ﴿٦٣﴾ وَٱلَّذِينَ يَبِيتُونَ لِرَبِّهِمْ سُجَّدًا وَقِيَٰمًا ﴿٦٤﴾
وَٱلَّذِينَ إِذَآ أَنفَقُوا۟ لَمْ يُسْرِفُوا۟ وَلَمْ يَقْتُرُوا۟ وَكَانَ بَيْنَ ذَٰلِكَ قَوَامًا ﴿٦٧﴾
وَٱلَّذِينَ لَا يَدْعُونَ مَعَ ٱللَّهِ إِلَٰهًا ءَاخَرَ وَلَا يَقْتُلُونَ ٱلنَّفْسَ ٱلَّتِى حَرَّمَ ٱللَّهُ
إِلَّا بِٱلْحَقِّ وَلَا يَزْنُونَ ________ وَٱلَّذِينَ لَا
يَشْهَدُونَ ٱلزُّورَ وَإِذَا مَرُّوا۟ بِٱللَّغْوِ مَرُّوا۟ كِرَامًا ﴿٧٢﴾ وَٱلَّذِينَ إِذَا ذُكِّرُوا۟
بِـَٔايَٰتِ رَبِّهِمْ لَمْ يَخِرُّوا۟ عَلَيْهَا صُمًّا وَعُمْيَانًا ﴿٧٣﴾ وَٱلَّذِينَ يَقُولُونَ رَبَّنَا
هَبْ لَنَا مِنْ أَزْوَٰجِنَا وَذُرِّيَّٰتِنَا قُرَّةَ أَعْيُنٍ وَٱجْعَلْنَا لِلْمُتَّقِينَ إِمَامًا ﴿٧٤﴾
أُو۟لَٰٓئِكَ يُجْزَوْنَ ٱلْغُرْفَةَ بِمَا صَبَرُوا۟ وَيُلَقَّوْنَ فِيهَا تَحِيَّةً وَسَلَٰمًا ﴿٧٥﴾

व अिबादुर्रहमानिल् लज़ीन यम्शून अलल्अर्ज़ि हव्नंव्–व इज़ा ख़ातबहुमुल्–जाहिलून क़ालू सलामा वल्लज़ीन यबीतून लिरब्बिहिम् सुज्जदंव्–व क़ियामा ..... वल्लज़ीन इज़ा अन्फ़क़ू लम् युस्रिफ़ू व लम् यक़्तुरू व कान बैन ज़ालिक क़वामन वल्लज़ीन ला यद्ऊन मअल्लाहि इलाहन आख़र व ला यक़्तुलूनन्नफ़्सल्–लती

हर्रमल्लाहु इल्ला बिल्हक्कि व ला यज़्नून .....वल्लज़ीन यश्हदूनज़्-ज़ूर व इज़ा मर्रू बिल्लग़्वि मर्रू किरामा वल्लज़ीन इज़ा ज़ुक्किरू बिआयाति रब्बिहम् लम् यख़िर्रू अलैहा सुम्मंव व उम्याना वल्लज़ीन यक़ूलून रब्बना हब् लना मिन् अज़्वाजिना व ज़ुर्रीयातिना *क़ुर्रत आयुनिंव् वज़्अल्ना लिल्मुत्तक़ीन इमामा* ***ऊलाअिक युज्ज़व्नल्-ग़ुर्फ़त बिमा सबरू व युलक़्क़व्न फ़ीहा तहिय्यतंव् व सलामा*** *(25 : 63–75)*

अर्थात् , " **रहमान** *के बन्दे वे हैं जो धरती पर नम्रतापूर्वक चलते हैं , और जब अज्ञानी–जन उन्हें संबोधित करते हैं तो वे कहते हैं : (बाबा !) सलाम। और जो रातें (प्रभु स्मरण में) बिताते हैं — अपने रब के सम्मुख सजदा करते हुए तथा खड़े हो कर। .... और जब वे व्यय करते हैं तो न अपव्यय करते हैं और न कन्जूसी करते हैं ,बल्कि (उन का व्यय) इन दोनों के बीच–बीच संतुलित माध्यमिकता पर है। और जो अल्लाह के साथ किसी दूसरे (तथाकथित) ईश्वर को नहीं पुकारते , और किसी व्यक्ति का ,जिसे अल्लाह ने अवध्य ठहराया ,वध नहीं करते सिवाय इसके कि न्याय चाहे। और न व्यभिचार करते हैं .... और वे जो झूठी गवाही नहीं देते ,और जब व्यर्थ के पास से गुज़रते हैं तो संपूर्ण शिष्टाचार से गुज़रते हैं। और जब उन्हें उनके रब के आदेशों द्वारा उपदेश दिया जाता है तो उस के प्रति बहरे और अँधे हो कर नहीं गिरते। और वे जो कहते हैं : हमारे पालनहार–स्रष्टा ! हमें अपनी पत्नियों और अपनी सन्तान द्वारा आँखों की ठण्डक प्रदान कर , और हमें धर्मपरायण–जनों का नायक बना। इन्हें बदले में उच्च स्थान दिये जायें गे। कारण , इन्हों ने धैर्य से काम लिया ,और वहाँ उन्हें अभिनंदन और शांति प्राप्त होगी। "*

अध्याय 11

धन और दौलत

संपूर्ण शिक्षा

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने जिस धर्म की नींव रखी वह मानव–जीवन के समस्त पहलुओं को समाविष्ट किए हुए है। इस में राजनीति, शिष्टाचार, अर्थव्यवस्था और सामाजिकता की समस्याओं पर वैसा ही पर्याप्त प्रकाश डाला गया है, जैसा परमात्मा की सत्ता एवं सद्गुणों तथा उपासना संबंधी नियमों और समस्याओं पर। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल एक ऐसे देश के निवासी थे जहाँ शिक्षा और ज्ञान का कोई चलन न था। स्वयं आप भी लिखने पढ़ने से पूर्णतया अपरिचित थे। किन्तु मानव–जीवन की कोई ऐसी महत्त्वपूर्ण समस्या नहीं जिस पर आप ने प्रकाश न डाला हो। हाँ ! सब से पहले आप ने परमात्मा की सत्ता का प्रबल एहसास दिलों में पैदा किया। उसके सद्गुणों पर प्रकाश डाला। मनुष्य को उस का सही स्थान बताया। जातिवाद, भाषावाद और राष्ट्रवाद जैसे भेदभावों को मिटा कर मानवसमाज की एकता की सुखद नींव डाली। और फिर जीवन की उन समस्याओं को लिया जिन पर मानव जाति का कल्याण निर्भर था। इन समस्याओं में अर्थव्यवस्था की समस्या सब से महत्त्वपूर्ण है। जिस सुन्दरता से आप ने इस समस्या के विभिन्न पहलुओं पर रोशनी डाली, उसका दूसरा उदाहरण और कहीं नहीं मिल सकता। धन कमाना, धन–संपत्ति की मिलकियत, धन का वितरण, महनत और धन का संबंध — हज़रत

पैग़म्बरश्री[सल्ल] की मंगलमय शिक्षा में इन सब विषयों पर सविस्तार बहस मलती है।

धन और संमपित्त
प्रभु का वरदान है

सब से पहले यह बात सिखलाई गई कि धन कोई घृणित वस्तु नहीं कि जिस का तिरस्कार या परित्याग किया जाये ,न इस की जाइज़ प्राप्ति को अवैध ठहराया गया। मनुष्य की सुख सुविधा के जितने भी साधन दुनिया में पाये जाते हैं वे सब परमात्मा के वरदान ,उस की नेमतें हैं ,जिन की इन्सान को कदर करनी चाहिये :

۞ يَـٰبَنِىٓ ءَادَمَ خُذُواْ زِينَتَكُمْ عِندَ كُلِّ مَسْجِدٍ وَكُلُواْ
وَٱشْرَبُواْ وَلَا تُسْرِفُوٓاْ ۚ إِنَّهُۥ لَا يُحِبُّ ٱلْمُسْرِفِينَ ﴿٣١﴾ قُلْ
مَنْ حَرَّمَ زِينَةَ ٱللَّهِ ٱلَّتِىٓ أَخْرَجَ لِعِبَادِهِۦ وَٱلطَّيِّبَـٰتِ مِنَ ٱلرِّزْقِ ۚ قُلْ
هِىَ لِلَّذِينَ ءَامَنُواْ فِى ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا خَالِصَةً يَوْمَ ٱلْقِيَـٰمَةِ ۗ كَذَٰلِكَ
نُفَصِّلُ ٱلْءَايَـٰتِ لِقَوْمٍ يَعْلَمُونَ ﴿٣٢﴾ قُلْ إِنَّمَا حَرَّمَ رَبِّىَ ٱلْفَوَٰحِشَ
مَا ظَهَرَ مِنْهَا وَمَا بَطَنَ وَٱلْإِثْمَ وَٱلْبَغْىَ بِغَيْرِ ٱلْحَقِّ وَأَن تُشْرِكُواْ بِٱللَّهِ
مَا لَمْ يُنَزِّلْ بِهِۦ سُلْطَـٰنًا

या बनी आदम खुज़ू ज़ीनतकुम् अिन्द कुल्लि मस्जिदिंव् व कुलू वश्‌रबू व ला तस्रिफू इन्नहू ला युहिब्बुल्–मुस्रिफ़ीन कुल मन् हर्रम ज़ीनतल्–लाहिल् लती अख़्रज लिअिबादिही वत्तय्यिबाति मिनर्रिज़्कि कुल् हिय लिल्लज़ीन आमनू फ़िल्–हयातिद्दुन्या ख़ालिसतंय्–यौमल्–क़ियामति कज़ालिक नुफ़स्सिलुल्–आयाति लिकौमिन यअलमून कुल् इन्नमा हर्रम रब्बियल्फ़वाहिश मा ज़हर मिन्हा व मा बतन वल्इस्म वल्बग्‌य बिग़ैरिल्हक़्क़ि व अन् तुश्‌रिकू बिल्लाहि मालम् युनज़्ज़िल् बिही सुल्तानन्

(7 : 31–33)

*अर्थात् ," हे आदम की सन्तान ! परमात्मा के आगे झुकते समय भी अपनी "**ज़ीनत**" (=वस्त्र , सज्जा) धारण कर लिया करो ,और खाओ*

*और पियो लेकिन हद से न बढ़ो। क्योंकि अल्लाह हद से बढ़ने वालों को पसन्द नहीं करता। कह : किस ने अल्लाह की "**ज़ीनत**" को — जो उस ने अपने बन्दों के लिये पैदा की है ,और खाने पीने के पवित्र पदार्थों को हराम किया है ? कह दे : ये चीज़ें इस सांसारिक जीवन में भी ईमान लाने वालों के लिये हैं ,क़यामत के दिन पूर्णतया उन्हीं के लिये विशेष होंगी। इसी तरह हम अपनी बातों को उन लोगों के लिये खोल कर बयान करते हैं जो ज्ञान रखते हैं। कह दे : मेरे रब ने केवल अश्लील कर्मों को वर्जित ठहराया है — चाहे खुले हुए हों या छिपे हुए ,और पाप को और अन्यायपूर्वक विद्रोह को ,और यह कि तुम अल्लाह के प्रति उसके साझेदार ठहराओ जिस के लिये उसने कोई प्रमाण नहीं उतारा।"*

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ كُلُوا۟ مِن طَيِّبَـٰتِ مَا رَزَقْنَـٰكُمْ وَٱشْكُرُوا۟ لِلَّهِ إِن
كُنتُمْ إِيَّاهُ تَعْبُدُونَ ﴿١٧٢﴾

याअय्युहल्लज़ीन आमनू कुलू मिन् तय्यिबाति मा रज़क्नाकुम् वश्कुरू लिल्लाहि इन् कुन्तुम् इय्याहु तअबुदून *(2 : 172) ,* अर्थात् ,*" हे ईमान वालो ! उन पवित्र पदार्थों से खाओ जो हम ने तुम्हें भोजनार्थ प्रदान किए हैं ,और अल्लाह का शुक्र अदा करो यदि तुम उस की उपासना करते हो।'*

۞ وَهُوَ ٱلَّذِىٓ أَنشَأَ جَنَّـٰتٍ مَّعْرُوشَـٰتٍ وَغَيْرَ مَعْرُوشَـٰتٍ وَٱلنَّخْلَ
وَٱلزَّرْعَ مُخْتَلِفًا أُكُلُهُۥ وَٱلزَّيْتُونَ وَٱلرُّمَّانَ مُتَشَـٰبِهًا وَغَيْرَ
مُتَشَـٰبِهٍ ۚ كُلُوا۟ مِن ثَمَرِهِۦٓ إِذَآ أَثْمَرَ وَءَاتُوا۟ حَقَّهُۥ يَوْمَ حَصَادِهِۦ ۖ
وَلَا تُسْرِفُوٓا۟ ۚ إِنَّهُۥ لَا يُحِبُّ ٱلْمُسْرِفِينَ ﴿١٤١﴾ وَمِنَ ٱلْأَنْعَـٰمِ حَمُولَةً
وَفَرْشًا ۚ كُلُوا۟ مِمَّا رَزَقَكُمُ ٱللَّهُ

व हुवल्लज़ी अन्शअ जन्नातिन मअरूशातिंव् व ग़ैर मअरूशातिंव् वन्नख़्ल वज़्ज़र्अ मुख़्तलिफ़न उकुलुहू वज़्ज़य्तून वर्रुमान मुतशाबिहंव् व ग़ैर मुत्तशाबिहिन कुलू मिन् समरिही इज़ा अस्मर व आतू

हक़्क़हू यौम हसादिही व ला तुस्रिफ़ू इन्नहू ला युहिब्बुल् मुस्रिफ़ीन व मिनल्अन्आमि हमूलतंव् व फ़र्शन कुलू मिम्मा रज़क़कुमुल् लाहु *(6 : 141–142) ,*

अर्थात् *," और वही (अल्लाह) है जिसने बाग़ पैदा किये , टट्टर पर चढ़ाये हुए और न चढ़ाये हुए ,और खजूरें ,और खेती जिसके फल नानाप्रकार के हैं ,और ज़ैतून ,और अनार ,एक दूसरे से मिलत जुलते और न मिलते जुलते। इसके फल से खाओ जब वह फल लाये। और फसल काटने के दिन उसका हक़ अदा करो। और फ़ज़ूलखर्ची न करो। क्योंकि वह फ़ज़ूलखर्ची करने वालों को पसन्द नहीं करता। और चौपायों में कुछ सवारी के लिये और कुछ माँस के लिये हैं। उस में से खाओ जो अल्लाह ने तुम को भोजनार्थ प्रदान किया है।"*

وَهُوَ ٱلَّذِى سَخَّرَ ٱلْبَحْرَ لِتَأْكُلُوا۟ مِنْهُ لَحْمًا طَرِيًّا وَتَسْتَخْرِجُوا۟ مِنْهُ حِلْيَةً تَلْبَسُونَهَا وَتَرَى ٱلْفُلْكَ مَوَاخِرَ فِيهِ وَلِتَبْتَغُوا۟ مِن فَضْلِهِۦ وَلَعَلَّكُمْ تَشْكُرُونَ ﴿١٤﴾

व हुवल् लज़ी सख़्ख़रल् बह्र लिताकुलू मिन्हु लह्मन तरीयंव् व तस्तख़्रिजू मिन्हु हिल्यतन तल्बसूनहा व तरल्फुल्क मवाख़िर फ़ीहि व लितब्तगू मिन् फ़ज़्लिही व लअल्लकुम् तश्कुरून

अर्थात् *,"और वही (अल्लाह) है जिसने समुद्र को तुम्हारी सेवा में लगाया है ,ताकि तुम उस से ताज़ा माँस खाओ ,और उस से आभूषणों की सामग्री निकालो ,जिन्हें तुम पहनते हो। और तू जलयानों को देखता है कि उसे चीरते हुए चले जाते हैं। ताकि तुम उस का अनुग्रह तलाशो और ताकि तुम शुक्र करो।" (16 : 14)*

हज़रत पैगम्बरश्रीसल्ल॰ने यह शिक्षा भी दी कि इस सांसारिक जीवन की सुख–सामग्री के लिये भी परमात्मा से प्रार्थना करो :

رَبَّنَآ ءَاتِنَا فِى ٱلدُّنْيَا حَسَنَةً وَفِى ٱلْءَاخِرَةِ حَسَنَةً وَقِنَا عَذَابَ ٱلنَّارِ

रब्बना आतिना फ़िद्दुनिया हसनतंव् व फ़िल्आख़िरति हसनह

अर्थात् *," हमारे रब ! हमें इस सांसारिक जीवन में अच्छी चीज़ें प्रदान*

कर और परलोक में भी अच्छी चीज़ें प्रदान कर।" (2 : 201)
यह भी बताया गया कि इस दुनिया में जीवन बिताने के लिये माल का होना ज़रूरी है :

وَلَا تُؤْتُوا السُّفَهَاءَ أَمْوَالَكُمُ الَّتِي جَعَلَ اللَّهُ لَكُمْ
قِيَامًا وَارْزُقُوهُمْ فِيهَا وَاكْسُوهُمْ

व ला तुअतुस्सुफ़हाअ अम्वालकुमुल्लती जअलल्-लाहु लकुम् क़ियामंव् वर्ज़ुक़ूहुम फ़ीहा वक्सूहुम् (4 : 5) ,
अर्थात् ," *और अपने माल को ,जिसे अल्लाह ने तुम्हारे जीवन का सहारा बनाया है ,कम अक़्लों के हवाले न करो , हाँ ! उन्हें इसके लाभ से खाने पीने को और पहनने को दो।"*

धन कमाने के साधन

बताया कि धन और संपत्ति इन्सान की इस ज़िन्दगी का सहारा है ,अतः इस का अपव्यय गुनाह है। जिन लोगों को अल्लाह ने इतनी बुद्धि नहीं दी कि वे अपने माल की रक्षा कर सकें ,उनके माल को उनके हवाले करने से रोका गया ,और यह आदेश दिया कि ऐसी सूरत में माल को किसी संरक्षक के सुपुर्द कर देना चाहिये ,जो मूल धन को सुरक्षित रख उसके लाभ से उन्हें गुज़ारा के लिय दे। इसी लिये यह शिक्षा दी कि माल कमाओ। मर्द भी कमायें और औरतें भी कमायें :

لِّلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا اكْتَسَبُوا وَلِلنِّسَاءِ نَصِيبٌ مِّمَّا اكْتَسَبْنَ

लिर्रिजालि नसीबुम् मिम्मक्तसबू व लिन्निसाअि नसीबुम् मिम्मक्तसब्न *(4 : 32) ,*
अर्थात् ," *पुरुषों के लिये उस का हित–लाभ है जो वे कमायें और औरतें के लिये उसका हित–लाभ है जो वे कमायें।"*
धन प्राप्ति का पहला साधन اِكْتِسَاب ***"इक्तिसाब"*** यानि *स्वयं धन कमाना* है। और धन प्राप्ति का दूसरा साधन ***'दाय या विरासत'*** है , जिस में मर्द और औरत दोनों को भागीदार ठहराया गया :

لِّلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيبٌ مِّمَّا
تَرَكَ ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ

लिर्रिजालि नसीबुम् मिम्मा तरकल्–वालिदानि वल्अक्रबून व लिन्निसाअि नसीबुम् मिम्मा तरकल् वालिदानि वल्अक्रबून *(4 : 7)*

अर्थात् ,*"मर्दों के लिये उस में का एक भाग है जो उनके माता–पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ें ,और औरतों के लिये भी उस में का एक भाग है जो उनके माता–पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ें।"*

धन प्राप्ति का तीसरा साधन هبه ***"हिब्बा"*** (=*उपहार*) है। मर्द भी उपहार ले और दे सकते हैं। औरतें भी उपहार ले और दे सकती हैं :

فَإِن طِبْنَ لَكُمْ عَن شَىْءٍ مِّنْهُ نَفْسًا فَكُلُوهُ هَنِيٓـًٔا مَّرِيٓـًٔا ﴿٤﴾

फ़इन् तिब्न लकुम् अन् शैअिन मिन्हु नफ्सन फ़कुलूहु हनीअंम् मरीअन *(4 : 4) ,*

अर्थात् ,*" और यदि औरतें अपनी ख़ुशी से अपने माल का कोई भाग* ***'हिब्बा"*** *के तौर पर तुम्हें दें तो उसे सानन्द रुचिपूर्वक खाओ।"*

किसी नाजाइज़ तरीक़े से माल कमाने की मनाही है :

وَلَا تَأْكُلُوٓا۟ أَمْوَٰلَكُم بَيْنَكُم بِٱلْبَٰطِلِ وَتُدْلُوا۟ بِهَآ إِلَى
ٱلْحُكَّامِ لِتَأْكُلُوا۟ فَرِيقًا مِّنْ أَمْوَٰلِ ٱلنَّاسِ

व ला ताकुलू अम्वालकुम् बैनकुम् बिल्–बातिलि व तुद्लू बिहा इलल्–हुक्कामि लिताकुलू फ़रीक़म् मिन् अम्वालिन्नासि

अर्थात् ,*" अपने मालों को आपस में अवैध ढंग से न खाओ , और न इसके द्वारा हाकिमों तक पहुंचो ताकि लोगों के माल का एक हिस्सा अवैध तौर पर खाओ।" (2 : 188)*

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا تَأْكُلُوٓا۟ أَمْوَٰلَكُم بَيْنَكُم بِٱلْبَٰطِلِ
إِلَّآ أَن تَكُونَ تِجَٰرَةً عَن تَرَاضٍ مِّنكُمْ

या अय्युहल्लज़ीन आमनू ला ताकुलू अम्वालकुम् बैनकुम् बिल्बातिलि

इल्ला अन् तकून तिजारतन् अन् तराज़िम् मिनकुम्

अर्थात् ," *हे ईमान वालो ! अपने मालों को आपस में अवैध तरीके से न खाओ ,सिवाय इस के कि तुम्हारी आपसी रज़ामन्दी से व्यापार हो।"* *(4 : 29)*

धन प्राप्ति के समय प्रभुस्मरण

धन प्राप्ति को जाइज़ सीमाओं तक सीमित रखने के लिये हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने इस पर एक और पाबन्दी लगा दी। आप ने फ़रमाया कि मनुष्य धन कमाने के लिये व्यापार ,खेती बाड़ी ,महनत मज़दूरी या कोई और पेशा इख्तियार कर सकता है — हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके साथी ये सब काम करते थे — लेकिन उसे चाहिये कि इन सब कामों में व्यस्त रहते हुए भी परमात्मा को याद रखे। कहीं ऐसा न हो कि इन कामों में आसक्त हो कर जीवन के उच्च लक्ष्य को ही भूल जाये।

رِجَالٌ لَّا تُلْهِيهِمْ تِجَٰرَةٌ وَلَا بَيْعٌ عَن ذِكْرِ ٱللَّهِ وَإِقَامِ
ٱلصَّلَوٰةِ وَإِيتَآءِ ٱلزَّكَوٰةِ

रिजालुल् ला तुल्हीहिम् तिजारतुंव् व ला बैअुन अन् ज़िक्रिल्लाहि व इक़ामिस्सलाति वईताअिज़्ज़काति *(24 : 37) ,*

अर्थात् ," *ऐसे लोग जिन्हें व्यापार और क्रय–विक्रय अल्लाह के स्मरण से ,और नमाज़ कायम करने से और ज़कात देने से गाफ़िल नहीं करता।"*

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوٓاْ إِذَا نُودِىَ لِلصَّلَوٰةِ مِن يَوْمِ ٱلْجُمُعَةِ فَٱسْعَوْاْ إِلَىٰ ذِكْرِ
ٱللَّهِ وَذَرُواْ ٱلْبَيْعَ ذَٰلِكُمْ خَيْرٌ لَّكُمْ إِن كُنتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٩﴾ فَإِذَا قُضِيَتِ
ٱلصَّلَوٰةُ فَٱنتَشِرُواْ فِى ٱلْأَرْضِ وَٱبْتَغُواْ مِن فَضْلِ ٱللَّهِ وَٱذْكُرُواْ ٱللَّهَ كَثِيرًا
لَّعَلَّكُمْ تُفْلِحُونَ ﴿١٠﴾

या अय्युहल्लज़ीन आमनू इज़ा नूदिय लिस्सलाति मिन् यौमिल् जुमुअति फ़स्अव इला ज़िक्रिल्लाहि व ज़रुल्बैअ ज़ालिकुम् खैरुल् लकुम् इन् कुन्तुम् तअलमून फ़इज़ा कुज़ियतिस्सलतु फ़न्तशिरू फ़िल्अर्ज़ि वब्तगू मिन् फ़ज़िलल्–लाहि वज़्कुरुल्लाह कसीरल्

लअल्लकुम् तुफ़्लिहून *(62 : 9–10) ,*

अर्थात् , *" हे लोगो जो ईमान लाये हो ,जब तुम्हें जुमा के दिन नमाज़ के लिये पुकारा जाये ,तो अल्लाह की याद के लिये जल्दी करो ,और कारोबार छोड़ दो। यह तुम्हारे लिये उत्तम है यदि तुम जानो। और जब नमाज़ समाप्त हो जाये तो धरती में फैल जाओ ,और अल्लाह का अनुग्रह तलाशो, और अल्लाह को बहुत याद करो ,ताकि तुम कामयाब हो जाओ।"*

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُواْ لَا تُلْهِكُمْ أَمْوَٰلُكُمْ وَلَآ أَوْلَـٰدُكُمْ عَن ذِكْرِ ٱللَّهِ ۚ وَمَن
يَفْعَلْ ذَٰلِكَ فَأُوْلَـٰٓئِكَ هُمُ ٱلْخَـٰسِرُونَ ﴿٩﴾

या अय्युहल्लज़ीन आमनू ला तल्हिकुम् अम्वालुकुम् व ला अव्लादुकुम् अन् ज़िक्रिल्लाहि व मन् यफ़्अल् ज़ालिक फ़ऊलाअिक हुमुल्ख़ासिरून *(63 : 9) ,*

अर्थात् , *" हे ईमान वालो ! कहीं तुम्हारा धन और तुम्हारी सन्तान तुम्हें अल्लाह की याद से गाफिल न कर दें। और जो कोई ऐसा करेगा तो वही हानि उठाने वाले हैं।"*

قُلْ إِن كَانَ ءَابَآؤُكُمْ وَأَبْنَآؤُكُمْ وَإِخْوَٰنُكُمْ وَأَزْوَٰجُكُمْ وَعَشِيرَتُكُمْ
وَأَمْوَٰلٌ ٱقْتَرَفْتُمُوهَا وَتِجَـٰرَةٌ تَخْشَوْنَ كَسَادَهَا وَمَسَـٰكِنُ تَرْضَوْنَهَآ
أَحَبَّ إِلَيْكُم مِّنَ ٱللَّهِ وَرَسُولِهِۦ وَجِهَادٍ فِى سَبِيلِهِۦ فَتَرَبَّصُواْ حَتَّىٰ يَأْتِىَ
ٱللَّهُ بِأَمْرِهِۦ ۗ وَٱللَّهُ لَا يَهْدِى ٱلْقَوْمَ ٱلْفَـٰسِقِينَ ﴿٢٤﴾

कुल् इन् कान आबाअुकुम् व अब्नाअुकुम् व इख़्वानुकुम् व अज़्वाजुकुम् व अशीरतुकुम् व अम्वालु निक़्तरफ़्तुमूहा व तिजारतुन् तख़्शवून कसादहा वमसाकिनु तर्ज़वूनहा अहब्ब इलैकुम् मिनल्–लाहि व रसूलिही व जिहादिन फ़ी सबीलिही फ़तरब्बसू हत्ता यातियल्लाहु बिअम्रिही वल्लाहु ला यह्दिल्क़ौमल् फ़ासिक़ीन *(9 : 24) ,*

अर्थात् , *" कह दे : यदि तुम्हारे बाप और तुम्हारे बेटे और तुम्हारे भाई और तुम्हारी पत्नियां या तुम्हारे पति ,और तुम्हारे सगे–संबंधी ,और माल जो तुम कमाते हो ,और व्यापार जिस के मन्दा पड़ जाने का तुम*

को भय है ,और मकान जिन को तुम पसन्द करते हो — तुम्हारे निकट अल्लाह और उसके रसूल और उस के मार्ग में जिहाद से अधिक प्रिय हैं ,तो प्रतीक्षा करो यहाँ तक कि अल्लाह अपनी सज़ा लाये और अल्लाह अवज्ञाकारियों को मार्ग नहीं दिखाता।"

प्रकृति में असमानता

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ने यह भी समझा दिया कि किसी के पास माल का ज़्यादा होना ,किसी के पास कम होना प्रकृति का सामान्य नियम है। प्रकृति के अन्य क्षेत्रों में भी कहीं पूर्ण समानता नज़र नहीं आती।

وَفِى ٱلْأَرْضِ قِطَعٌ مُّتَجَـٰوِرَٰتٌ وَجَنَّـٰتٌ مِّنْ أَعْنَـٰبٍ وَزَرْعٌ وَنَخِيلٌ
صِنْوَانٌ وَغَيْرُ صِنْوَانٍ يُسْقَىٰ بِمَآءٍ وَٰحِدٍ وَنُفَضِّلُ بَعْضَهَا عَلَىٰ بَعْضٍ فِى
ٱلْأُكُلِ ۚ إِنَّ فِى ذَٰلِكَ لَـَٔايَـٰتٍ لِّقَوْمٍ يَعْقِلُونَ ﴿٤﴾

व फ़िल्-अर्ज़ि क़ितअुम् मुतजाविरातुंव् व जन्नातुम् मिन् आनाबिंव् व ज़र्अुन् व नख़ीलुन् सिन्वानुंव व ग़ैरु सिन्वानिन् युस्क़ा बिमाअिंव् वाहिदिन् व नुफ़ज़्ज़िलु बअज़हा अला बअज़िन् फ़िल्उकुलि इन्न फ़ी ज़ालिक लआयातिल् लिक़ौमिन् यअक़िलून *(13 : 4)*
अर्थात् ," *और धरती में पास पास भूखण्ड होते हैं ,और अँगूरों के बाग़, और खेती ,और खजूर के वृक्ष एक ही जड़ से कई कई उगे हुए ,और अलग अलग जड़ों से उगे हुए — सब को एक ही पानी से सींचा जाता है ,लेकिन हम इन में से बाज़ को बाज़ पर फल में विशिष्टता प्रदान कर देते हैं। इस में उन लोगों के लिये निशान हैं जो बुद्धि से काम लेते हैं।"*

أَلَمْ تَرَ أَنَّ ٱللَّهَ أَنزَلَ مِنَ ٱلسَّمَآءِ مَآءً فَأَخْرَجْنَا بِهِۦ ثَمَرَٰتٍ مُّخْتَلِفًا أَلْوَٰنُهَا ۚ
وَمِنَ ٱلْجِبَالِ جُدَدٌۢ بِيضٌ وَحُمْرٌ مُّخْتَلِفٌ أَلْوَٰنُهَا وَغَرَابِيبُ سُودٌ ﴿٢٧﴾
وَمِنَ ٱلنَّاسِ وَٱلدَّوَآبِّ وَٱلْأَنْعَـٰمِ مُخْتَلِفٌ أَلْوَٰنُهُۥ كَذَٰلِكَ ۗ

अलम्तर अन्नल्लाह अन्ज़ल मिनस्समाअि माअन फ़अख़्रज्ना बिही समरातिम् मुख़्तलिफ़न् अल्वानुहू व मिनल्-जिबालि जुददुम्

***बीजुंव् व हुमरुंम् मुख़्तलिफ़ुन् अल्वानुहा व ग़राबीबु सूदुन् व मिनन्–नासि वद्दवाब्बि वल्अन्आमि मुख़्तलिफ़ुन् अल्वानुहू कज़ालिक** (35 : 27–28) ,*

अर्थात् ," *क्या तू नहीं देखता कि अल्लाह बादलों से पानी बरसाता है ,फिर हम उसके साथ फल उपजाते हैं ,जो विविध प्रकार के होते हैं? और पहाड़ों में लाल और श्वेत धारियाँ जिन की छटा रंगबिरंगी है ,और (कुछ) अत्यन्त काली। और (इसी प्रकार) इन्सानों और जीव–जन्तुओं और पशुओं में भी रंगारंग की विविधताएं हैं।"*

मानवीय विषमताएं और विभेद

सृष्टि के विभिन्न वर्गों और जातियों में अनेकों विवधताएं और विषमताएं नज़र आती हैं। एक जैसे नज़र आने वाले घास के दो तिनके भी एकसमान नहीं। दो इन्सान एकसमान नहीं ,उनके दिमागों में अन्तर है ,उनकी क्षमताओं में अन्तर है ,उनके वातवर्ण में अन्तर है ,उनकी परिस्थितियों में अन्तर है जिन के अधीन वे कार्य करते हैं। अतः जो कुछ वे अपनी कोशिश और महनत से प्राप्त करते हैं उन उपलब्धियों में भी प्रत्यक्ष अन्तर है। ये विविधताएं ,ये विषमताएं मिटाई नहीं जा सकतीं। इस लिये बताया कि इनको जीवन का एक अनिवार्य अंग मान लिया जाये।

نَحْنُ قَسَمْنَا بَيْنَهُم مَّعِيشَتَهُمْ فِى ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا
وَرَفَعْنَا بَعْضَهُمْ فَوْقَ بَعْضٍ دَرَجَٰتٍ لِّيَتَّخِذَ بَعْضُهُم بَعْضًا سُخْرِيًّا
وَرَحْمَتُ رَبِّكَ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُونَ ﴿٣٢﴾

नह्नु क़सम्ना बैनहुम् मअीशतहुम् फ़िल्हयातिद्दुनिया व रफ़अना बअज़हुम् फ़ौक़ बअज़िन् दरजातिल् लियत्तख़िज़ बअज़ुहुम् बअज़न सुख़्–रीयंव् व रह्मतु रब्बिक ख़ैरुम् मिम्मा यज्मअून (43 : 32),

अर्थात् ," *हम ने उनके बीच ,उनके सांसारिक जीवन में ,उन की रोज़ी–रोटी बाँट रखी है। और हम ने एक के दूसरे पर दर्जे बुलंद किये हैं ,ताकि एक दूसरे से काम लेता रहे। और तेरे रब की दयालुता उस से उत्तम है जो वे एकत्र करते हैं।"*

وَٱللَّهُ فَضَّلَ بَعْضَكُمْ عَلَىٰ بَعْضٍ فِى ٱلرِّزْقِ ۚ فَمَا ٱلَّذِينَ فُضِّلُوا۟ بِرَآدِّى
رِزْقِهِمْ عَلَىٰ مَا مَلَكَتْ أَيْمَـٰنُهُمْ فَهُمْ فِيهِ سَوَآءٌ ۚ أَفَبِنِعْمَةِ ٱللَّهِ يَجْحَدُونَ

वल्लाहु फ़ज़्ज़ल बअज़कुम् अला बअज़िन फ़िर्रिज़्क़ फ़मल् लज़ीन फ़ुज़्ज़िलू बिराद्-दी रिज़्क़िहिम् अला मा मलकत् अयमानुहुम फ़हुम् फ़ीहि सवाउन अफ़बिनिअमतिल्लाहि यज्हदून *(16 : 71)*
अर्थात् ,*" और अल्लाह ने तुम में से बाज़ को बाज़ पर रोज़ी-रोटी के मामले में प्रतिष्ठा दी है ,तो जिन्हें प्रतिष्ठा दी गई है वे अपनी जीविका उन्हें नहीं दे देते जो उनके अधीन हैं ,कि कहीं वे परस्पर बराबर न हो जायें। तो क्या वे अल्लाह के वरदान का इनकार करते हैं ? "*

धन-संपत्ति मानवीय प्रतिष्ठा
या मान सम्मान का आधार नहीं

अमीर व गरीब ,दोनों को बता दिया गया ,कि ज़्यादा धन मिल जाने से इन्सान प्रतिष्ठित नहीं हो जाता ,और न धन का अभाव इन्सान को अवमानित कर देता है। किसमत का उतार चढ़ाव परमात्मा के निकट कोई महत्त्व नहीं रखता। ईमान वालों को चाहिये कि इन बातों को कोई महत्त्व न दें :

فَأَمَّا ٱلْإِنسَـٰنُ إِذَا مَا ٱبْتَلَىٰهُ رَبُّهُۥ فَأَكْرَمَهُۥ وَنَعَّمَهُۥ فَيَقُولُ رَبِّىٓ أَكْرَمَنِ
﴿١٥﴾ وَأَمَّآ إِذَا مَا ٱبْتَلَىٰهُ فَقَدَرَ عَلَيْهِ رِزْقَهُۥ فَيَقُولُ رَبِّىٓ أَهَـٰنَنِ ﴿١٦﴾ كَلَّا ۖ بَل

फ़अम्मल् इन्सानु इज़ा मब्तलाहु रब्बुहू फ़अक्रमहू व नअ्अमहू फ़यक़ूलु रब्बी अक्रमनि व अम्मा इज़ा मब्तलाहु फ़क़दर अलैहि रिज़्क़हू फ़यक़ूलु रब्बी अहाननि कल्लाबल् *(89 : 15-17)* ,
अर्थात् ,*" मनुष्य की दशा यह है कि जब उस का रब उस को आज़माता है और उस को धनदौलत देता है और उस को सुख का जीवन जीने की सामग्री देता है ,तो वह कहता है : मेर रब ने मुझे सम्मानित किया है। और जब उसे आज़माता है और उस की रोज़ी रोटी उस पर तंग कर देता है ,तो वह कहता है : मेरे रब ने मुझे*

अपमानित कर दिया। कदापि नहीं ! "

وَلَوْلَآ أَن يَكُونَ ٱلنَّاسُ أُمَّةً وَٰحِدَةً لَّجَعَلْنَا لِمَن يَكْفُرُ بِٱلرَّحْمَـٰنِ لِبُيُوتِهِمْ سُقُفًا مِّن فِضَّةٍ وَمَعَارِجَ عَلَيْهَا يَظْهَرُونَ ﴿٣٣﴾ وَلِبُيُوتِهِمْ أَبْوَٰبًا وَسُرُرًا عَلَيْهَا يَتَّكِـُٔونَ ﴿٣٤﴾ وَزُخْرُفًا ۚ وَإِن كُلُّ ذَٰلِكَ لَمَّا مَتَـٰعُ ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا ۚ وَٱلْـَٔاخِرَةُ عِندَ رَبِّكَ لِلْمُتَّقِينَ ﴿٣٥﴾

व लव् ला अंय्यकूनन् नासु उम्मतंव् वाहिदतल् लजअल्ना लिमंय् यक्फ़ुरु बिर्रहमानि लिबुयूतिहिम सुकुफ़म् मिन् फ़िज़्ज़तिंव् व मआरिज अलैहा यज़्हरून व लिबुयूनिहिम् अब्वाबंव् व सुरुरन् अलैहा यत्तकिऊन व ज़ुख्रुफ़न व इन् कुल्लु ज़ालिक लम्मा मताअुल्-हयातिद्-दुन्या वल्आख़िरतु अिन्द रब्बिक लिल्-मुत्तक़ीन

(43 : 33–35) ,

अर्थात् ," *यदि यह न होता कि सब लोग एक ही समुदाय हो जाएं गे ,तो हम उन के लिये जो "**रहमान**" का इनकार करते हैं ,उन के घरों की छत्तें चाँदी की बना देते और सीढ़ियाँ भी जिन पर वे चढ़ते , और उन के घरों के दरवाज़े और आसन जिन पर वे तकिया लगाते हैं चाँदी और सोने के बना देते ,और यह सब इस सांसारिक जीवन का सामान है ,और परलोक (का परमानन्द) तेरे रब के निकट कर्तव्यनिष्ठों के लिये है।"*

إِنَّ أَكْرَمَكُمْ عِندَ ٱللَّهِ أَتْقَىٰكُمْ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ عَلِيمٌ خَبِيرٌ ﴿١٣﴾

इन्न अक्रमकुम् अिन्दल्लाहि अत्क़ाकुम् इन्नल्लाह अलीमुन ख़बीरुन

अर्थात् ," *निस्संदेह अल्लाह की दृष्टि में तुम में से सर्वश्रेष्ठ वही है जो सब से अधिक कर्तव्यपरायण हो।" (49 : 13)*

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] निश्चय ही सब से ज़्यादा प्रतिष्ठित थे ,क्योंकि आप आध्यात्मिक क्षेत्र में पथप्रदर्शक और भौतिक क्षेत्र में बादशाह थे। लेकिन आप की अपनी हालत यह थी कि आप के घर में न धन ही था और न संपत्ति। यहाँ तक कि देहांत के समय एक भी कोड़ी घर में नहीं छोड़ी। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने मुसलमानों के भीतर यही सुखद मनोवृत्ति पैदा कर

दी कि धन या संपत्ति प्रतिष्ठा या इज़्ज़त का प्रतीक नहीं। आप ने धन व संपत्ति को उस का सही अधिकार दिया ,यही कि इस को सांसारिक जीवन का सहारा बताया। इन्सान को इस धरती पर जीवन यापण के लिये इस की ज़रूत है। किन्तु मात्र धन जमा करने से इन्सान बड़ा या इज़्ज़तदार नहीं हो जाता। धन एक जीवन–सामग्री है जीवन–लक्ष्य नहीं। जीवन का वास्तविक उद्देश्य इस से बहुत बुलंद है। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल०]ने खोल कर बता दिया कि इस महा लक्ष्य की प्राप्ति में धन को बाधक नहीं बनना चाहिये।

وَرَحْمَتُ رَبِّكَ خَيْرٌ مِّمَّا يَجْمَعُونَ ﴿٣٢﴾

व रहमतु रब्बिक ख़ैरुन मिम्मा यज्मऊन *(43 : 32) ,*
अर्थात् ,*" तेरे रब की दयालुता उस से उत्तम है जो लोग संचित करते हैं।"*

زُيِّنَ لِلنَّاسِ حُبُّ ٱلشَّهَوَٰتِ مِنَ ٱلنِّسَآءِ وَٱلْبَنِينَ وَٱلْقَنَـٰطِيرِ ٱلْمُقَنطَرَةِ مِنَ ٱلذَّهَبِ وَٱلْفِضَّةِ وَٱلْخَيْلِ ٱلْمُسَوَّمَةِ وَٱلْأَنْعَـٰمِ وَٱلْحَرْثِ ۗ ذَٰلِكَ مَتَـٰعُ ٱلْحَيَوٰةِ ٱلدُّنْيَا ۖ وَٱللَّهُ عِندَهُۥ حُسْنُ ٱلْمَـَٔابِ ﴿١٤﴾ ۞ قُلْ أَؤُنَبِّئُكُم بِخَيْرٍ مِّن ذَٰلِكُمْ ۚ لِلَّذِينَ ٱتَّقَوْا۟ عِندَ رَبِّهِمْ جَنَّـٰتٌ تَجْرِى مِن تَحْتِهَا ٱلْأَنْهَـٰرُ خَـٰلِدِينَ فِيهَا وَأَزْوَٰجٌ مُّطَهَّرَةٌ وَرِضْوَٰنٌ مِّنَ ٱللَّهِ ۗ وَٱللَّهُ بَصِيرٌۢ بِٱلْعِبَادِ ﴿١٥﴾

ज़ुय्यिन लिन्नासि हुब्बुश् शहवाति मिनन् निसाअि वल्बनीन वल्क़नातीरिल् मुक़न्तरति मिनज़्ज़हबि वल्फ़िज़्ज़ति वल्ख़ैलिल् मुसव्वमति वल्अन्आमि वल्हर्सि ज़ालिक मताअुल् हयातिद् दुन्या वल्लाहु अिन्दहू हुस्नुल्मआबि कुल् अअुनब्बिअुकुम् बिख़ैरिम् मिन् ज़ालिकुम् लिल्लज़ीनत्–तक़व् अिन्द रब्बिहिम जन्नातुन तज्री मिन तह्तिहल्अन्हारु ख़ालिदीन फ़ीहा व अज़्वाजुंम् मुतह्हरतुंव् व रिज़्वानुंम् मिनल् लाहि वल्लाहु बसीरुम् बिल्अिबादि
अर्थात् ,*" लोगों को मनपसन्द वस्तुओं का प्रेम — स्त्रियां और बेटे और ढेरों ढेर सोना और चाँदी और पले हुए घोड़े और मवेशी और खेती —*

भला प्रतीत होता है। यह इस सांसारिक जीवन की सामग्री है। और अल्लाह — उसी के पास अच्छा ठिकाना है। कह दे : क्या मैं तुम्हें इस से अच्छी बात बताऊँ ? उन लोगों के लिये जो बुराई से बचते हैं उन के रब के यहाँ बाग़ हैं ,जिन के नीचे नहरें बहती हैं ,वे उन्ही में रहें गे ,और पवित्र साथी ,और अल्लाह की प्रसन्नता। अल्लाह अपने बन्दों को ख़ूब देखने वाला है।" (3 : 14–15)

ٱلصَّـٰبِرِينَ وَٱلصَّـٰدِقِينَ وَٱلْقَـٰنِتِينَ وَٱلْمُنفِقِينَ وَٱلْمُسْتَغْفِرِينَ بِٱلْأَسْحَارِ

अस्साबिरीन वस्सादिक़ीन वल्क़ानितीन वल्मुन्फ़िक़ीन वल्मुस्तग़्फ़िरीन बिल्अस्हारि (3 : 17) ,

अर्थात् ,*" सब्र करने वाले ,और सच बोलने वाले ,सच कर दखाने वाले, और आज्ञाओं का पालन करने वाले ,और दान करने वाले ,और सुबह की घड़ियों में प्रभु से संरक्षण की याचना करने वाले।"*

مَّن كَانَ يُرِيدُ ٱلْعَاجِلَةَ عَجَّلْنَا لَهُۥ فِيهَا مَا نَشَآءُ لِمَن نُّرِيدُ ثُمَّ جَعَلْنَا لَهُۥ
جَهَنَّمَ يَصْلَىٰهَا مَذْمُومًا مَّدْحُورًا ﴿١٨﴾ وَمَنْ أَرَادَ ٱلْـَٔاخِرَةَ وَسَعَىٰ لَهَا سَعْيَهَا
وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَأُو۟لَـٰٓئِكَ كَانَ سَعْيُهُم مَّشْكُورًا ﴿١٩﴾ كُلًّا نُّمِدُّ هَـٰٓؤُلَآءِ
وَهَـٰٓؤُلَآءِ مِنْ عَطَآءِ رَبِّكَ ۚ وَمَا كَانَ عَطَآءُ رَبِّكَ مَحْظُورًا ﴿٢٠﴾ ٱنظُرْ كَيْفَ
فَضَّلْنَا بَعْضَهُمْ عَلَىٰ بَعْضٍ ۚ وَلَلْـَٔاخِرَةُ أَكْبَرُ دَرَجَـٰتٍ وَأَكْبَرُ تَفْضِيلًا

मन् कान युरीदुल्आजिलत अज्जल्न लहू फ़ीहा मा नशाअु लिमन् नुरीदु सुम्म जअल्ना लहू जहन्नम यस्लाहा मज़्मूमम् मद्हूरा व मन् अरादल् आख़िरत व सआ लहा सअयहा व हुव मुअमिनुन फ़ऊलाअिक कान सअयुहुम् मश्कूरा कुल्लन् नुमिद्दु हाअुलाअि व हाअुलाअि मिन् अताअि रब्बिक व मा कान अताअु रब्बिक महज़ूरन उन्ज़ुर् कैफ़ फ़ज़्ज़लना बअज़हुम् अला बअज़िन व लल्आख़िरतु अक्बरु दरजातिंव् व अक्बरु तफ़्ज़ीला

अर्थात् ,*" जो कोई शीघ्र प्राप्त होने वाला लाभ चाहता है हम उसे इसी संसार में जो चाहते हैं ,जिस के लिये इरादा करें शीघ्र दे देते हैं .....*

और जो परलोक (के सर्वोच्च जीवन) को चाहता है ,और उस के लिये वह कोशिश करता है — यथोचित कोशिश ,और वह ईमान वाला भी है — तो यही वे लोग हैं जिन के प्रयास की कदर की जाती है। हम सब की सहायता करते हैं — इन की भी और उन की भी। यह सब तेरे रब की देन है। और तेरे रब की देन सीमित नहीं। देख ! हम किस तरह बाज़ को बाज़ पर प्रतिष्ठा प्रदान करते हैं ? निस्संदेह परलोक (का सर्वोच्च जीवन) दर्जों में बढ़कर और प्रतिष्ठा में सर्वोत्तम है।"

(17 : 18–21)

धन जमा करने के दुष्परिणाम

फिर यह भी बता दिया कि माल–दौलत जमा करने के बाज़ दुष्परिणाम भी हैं। इस का पहला नुकसान तो यह है कि जो व्यक्ति अँधाधुँद धन संचय के पीछे पड़ जाता है वह जीवन के उच्च लक्ष्य से ग़ाफिल हो जाता है :

أَلْهَىٰكُمُ ٱلتَّكَاثُرُ ﴿١﴾ حَتَّىٰ زُرْتُمُ ٱلْمَقَابِرَ ﴿٢﴾

अल्हाकुमुत् तकासुरु हत्ता ज़ुर्तुमुल्मक़ाबिर *(102 : 1–2) ,*

अर्थात् ," *धन वर्धन की ललक तुम्हें ग़ाफ़िल बना देती है ,यहां तक कि तुम क़बरों में जा पहुंचते हो।"*

दूसरी बात यह बताई कि ऐसे व्यक्ति को कभी मन की शांति प्राप्त नहीं होती ,क्योंकि मन की शांति सिर्फ प्रभु स्मरण द्वारा ही प्राप्त होती है:

ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ وَتَطْمَئِنُّ قُلُوبُهُم بِذِكْرِ ٱللَّهِ ۗ أَلَا بِذِكْرِ ٱللَّهِ تَطْمَئِنُّ ٱلْقُلُوبُ ﴿٢٨﴾

अल्लज़ीन आमनू व तत्मअिन्नु कुलूबुहुम् बिज़िक्–रिल् लाहि अला बिज़िक्–रिल्लाहि तत्मअिन्नुल् कुलूबु (13 : 28) ,

अर्थात् ," *जो ईमान लाते हैं उन के दिलों में अल्लाह की याद से संतोष पैदा होता है। याद रखो ! अल्लाह के स्मरण से ही दिलों में संतोष पैदा हो सकता है।"*

जब धन का लोभ मन में बढ़ता चला जाता है ,और उस पर कोई रोक नहीं होती ,तो इन्सान के हृदय में एक अग्नि भड़क उठती है :

وَيْلٌ لِّكُلِّ هُمَزَةٍ لُّمَزَةٍ ﴿١﴾ ٱلَّذِى جَمَعَ مَالًا وَعَدَّدَهُۥ ﴿٢﴾ يَحْسَبُ أَنَّ مَالَهُۥٓ

وَيْلٌ لِّكُلِّ هُمَزَةٍ لُّمَزَةٍ ﴿١﴾ الَّذِي جَمَعَ مَالًا وَعَدَّدَهُ ﴿٢﴾ يَحْسَبُ أَنَّ مَالَهُ
أَخْلَدَهُ ﴿٣﴾ كَلَّا ۖ لَيُنبَذَنَّ فِي الْحُطَمَةِ ﴿٤﴾ وَمَا أَدْرَاكَ مَا الْحُطَمَةُ ﴿٥﴾
نَارُ اللَّهِ الْمُوقَدَةُ ﴿٦﴾ الَّتِي تَطَّلِعُ عَلَى الْأَفْئِدَةِ ﴿٧﴾ إِنَّهَا عَلَيْهِم مُّؤْصَدَةٌ
﴿٨﴾ فِي عَمَدٍ مُّمَدَّدَةٍ ﴿٩﴾

वैलुल् लिकुल्लि हुमज़तिल् लुमज़ति निल्लज़ी जमअ मालंव् व अद्ददहू यह्सबु अन्न मा लहू अख़्लदहू कल्ल लयुम्बज़न्न फ़िल्हुतमति व मा अद्राक मल्हुतमतु नारुल्लाहिल् मूक़दतुल् लती तत्तलिअु अलल्अफ़्अिदति इन्नहा अलैहिम् मुअसदतुन *फ़ी* ***अमदिम् मुमद्ददतिन*** (104 : 1–9) ,

अर्थात् ," *प्रत्येक लांछन लगाने वाले ,बदनाम करने वाले का सर्वनाश हो ! जो माल को जमा करता है और उसे गिनता रहता है — वह समझता है कि उसका माल उसे अमर बना देगा। कदापि नहीं ! वह अवश्य एक कुचल देने वाली विपत्ति में डाला जाये गा। और तुझे क्या मालूम कि वह कुचल देने वाली विपत्ति क्या है ? यह अल्लाह की भड़काई हुई आग है ,जो दिलों पर प्रकट होती है ,फिर वह इन पर लम्बे लम्बे स्तम्भों के बीच बन्द कर दी जाती है।"*

धन के लोभ से नैतिक पतन

यहाँ बताया गया कि धन के लोभ से इन्सान के दिल में एक अदृश्य आग भड़क उठती है ,यही आग परलोक में नरकाग्नि का रूप धारण कर लेती है। यहाँ धन के लोभी को *"लांछन लगाने वाला ,बदनाम करने वाला"* कहा गया है। अन्यत्र बताया है कि धन का लोभ इन्सान के आचार–विचार को भ्रष्ट कर देता है :

وَلَا تُطِعْ كُلَّ حَلَّافٍ مَّهِينٍ ﴿١٠﴾ هَمَّازٍ مَّشَّاءٍ بِنَمِيمٍ ﴿١١﴾ مَّنَّاعٍ لِّلْخَيْرِ
مُعْتَدٍ أَثِيمٍ ﴿١٢﴾ عُتُلٍّ بَعْدَ ذَٰلِكَ زَنِيمٍ ﴿١٣﴾ أَن كَانَ ذَا مَالٍ وَبَنِينَ ﴿١٤﴾

व ला तुतिअ् कुल्ल हल्लाफ़िम् महीनिन् हम्माज़िम् मश्शाअिम्

बिनमीमिन् मन्नाअिल् लिल्ख़ैरि मुअतदिन असीमिन् अुतुल्लिम् बअद ज़ालिक ज़नीमिन् अन् कान ज़ा मालिंव् व बनीन

(68 : 1–14),

अर्थात् ," *और तू किसी कसमें खाने वाले कमीने आदमी की बात न मान ,जो लांछन लगाने वाला , चुगलियाँ खाने वाला ,भलाई से रोकने वाला ,मर्यादाहीन ,पापी ,अत्यन्त झगड़ालु ,इसके अलावा दुष्टता में कुख्यात है —इस लिये कि वह धन वाला और पुत्रों वाला है।"*

इस प्रकार हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने बता दिया कि धन का लोभ इन्सान को न सिर्फ उसके उच्च जीवन–लक्ष्य से ही गाफिल ,और उस के मन की शांति को भंग कर देता है बल्कि इस से उसके अन्दर घोर आचार भ्रष्टता उत्पन्न हो जाती है। जिस के फलस्वरूप वह जनसेवा जैसे पावन भाव एवं ज़िन्दगी के उच्च लक्ष्य से वंचित हो जाता है :

لَّا تُكْرِمُونَ ٱلْيَتِيمَ ﴿١٧﴾ وَلَا تَحَـٰٓضُّونَ عَلَىٰ طَعَامِ ٱلْمِسْكِينِ ﴿١٨﴾

وَتَأْكُلُونَ ٱلتُّرَاثَ أَكْلًا لَّمًّا ﴿١٩﴾ وَتُحِبُّونَ ٱلْمَالَ حُبًّا جَمًّا ﴿٢٠﴾

ला तुक्रिमूनल् यतीम व ला तुहाज़्ज़ून अला तआमिल् मिस्कीनि व ताकुलूनत्तुरास अकलल् लम्मंव् व तुहिब्बूनल् माल हुब्बन जम्मा

अर्थात् ," *कदापि नहीं ! बल्कि तुम अनाथ का आदर नहीं करते ,और न एक दूसरे को दीन–दुःखी की भोजन–व्यवस्था के लिये प्रेरित करते हो ,और पैतृक संपत्ति को समेट कर खा जाते हो ,और तुम धन को अति प्रिय रखते हो।" (89 : 17–20)*

माल जमा करने की सख़्त निन्दा की गई है :

وَٱلَّذِينَ يَكْنِزُونَ ٱلذَّهَبَ وَٱلْفِضَّةَ وَلَا

يُنفِقُونَهَا فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ فَبَشِّرْهُم بِعَذَابٍ أَلِيمٍ ﴿٣٤﴾ يَوْمَ يُحْمَىٰ

عَلَيْهَا فِى نَارِ جَهَنَّمَ فَتُكْوَىٰ بِهَا جِبَاهُهُمْ وَجُنُوبُهُمْ وَظُهُورُهُمْ

هَـٰذَا مَا كَنَزْتُمْ لِأَنفُسِكُمْ فَذُوقُوا۟ مَا كُنتُمْ تَكْنِزُونَ

वल्लज़ीन यक्निज़ूनज़् ज़हब वल्फ़िज़्ज़त व ला युन्फ़िकूनहा फ़ी सबीलिल् लाहि फ़बश्शिर्हुम बिअज़ाबिन अलीमिन यौम युह्मा

अलैहा फ़ी नारि जहन्नम फ़तुक्वा बिहा जिबाहुहुम् व जुनूबुहुम व जुहूरुहुम् हाज़ा मा कनज़्तुम् लिअन्फ़ुसिकुम् फ़ज़ूकू मा कुन्तुम तक्निज़ून *(9 : 34–35) ,*

अर्थात् ," *जो लोग सोना और चाँदी जमा करते जाते हैं और उसे अल्लाह के मार्ग में व्यय नहीं करते ,उन को पीड़ाजनक यातना की पूर्वसूचना दे दे। जिस दिन इस माल को नरकाग्नि में तपाया जाये गा ,फिर इस के साथ उनके माथे और उनके पहलुओं और उनकी पीठों को दागा जाये गा। यह वह है जो तुम ने अपने लिये एकत्र किया था, अतः अब उसका सवाद चखो जो तुम एकत्र करते थे।"*

धन के प्रेम को सीमित रखने के नियम

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल०ने अल्लाह की *वह्य* के अधीन कुछ नियम धन के विषय में प्रस्तुत किये। ताकि इन्सान धन के मोह को मर्यादा में रख सके, और परिणामतः धन चन्द हाथों में ही जमा होने से बच जाये। हर धर्म ने इस बात पर ज़ोर दिया है कि इन्सान दानपुण्य करे ,अर्थात् अपने धन को दूसरों पर व्यय करे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल०ने इसी मौलिक शिक्षा को पुनः प्रतिपादित किया ,किन्तु इसके परिपक्व एवं संपूर्ण रूप में। आप ने केवल इतना कह देने पर ही संतोष नहीं किया कि बाज़ परिस्थितियों में दान अनिवार्य है ,बल्कि आप ने दान को बाकायदा एक नियम का रूप दे दिया। इन्सान जो कुछ कमाता है वह उस का हक़ है ,हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल०न इन्सान को अपनी महनत के अधिकार से वंचित नहीं किया। लेकिन इस के साथ ही यह भी अनिवार्य ठहराया कि इस के माल में उसके दूसरे भाइयों का भी कुछ हक़ है। इन्सान अपनी कमाई से जो कुछ चाहे अपने आप पर या अपने सगेसंबंधियों पर खर्च करे। लेकिन यह सब करने के बाद भी इन्सान कुछ न कुछ बचा ही लेता है। इस बचत को जब वह एक खास सीमा तक पहुंच जाये ,धन करार दे कर इस पर एक कर लगा दिया गया। जिस को एक सुव्यवस्थित प्रणाली के अन्तर्गत केन्द्रीय जनकोश *(=बैत अल्–माल)* में एकत्र कर गरीबों और मोहताजों पर व्यय किया जाता है।

زكوة ज़कात

तात्पर्य यह कि हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की शिक्षानुसार दान के दो प्रकार हैं, एक वैकल्पिक ,दूसरा अनिवार्य। वैकल्पिक दान के अन्तर्गत इन्सान अपनी आमदनी से जितना चाहे और जब चाहे दीनहीनों पर खर्च कर सकता है, लेकिन अनिवार्य दान के अन्तर्गत उस से हर साल एक निश्चित दर दान–राशि ***(=ज़कात)*** के तौर पर वसूल की जाये गी। इस दान–राशि का निर्धारण उस धनराशि पर किया जाता है जो इन्सान के पास एक साल से बचत के रूप में पड़ी हो। मुस्लिम राज्य बचत की इस धनराशि से 2.5% ***ज़कात*** के तौर पर वसूल करता है। जहाँ मुस्लिम राज्य न हो वहाँ ***ज़कात*** को मुस्लिम संस्थाओं द्वारा जमा किया जाता हैं। ***ज़कात*** शब्द का अर्थ है *" पाक या पवित्र करना "*। मतलब यह कि धन जमा करना एक तरह का अपवित्र कर्म है। क्योंकि इस से इन्सान के दिल में एक प्रकार की अपवित्रता पैदा होती है ,और इस अपवित्रता को दूर करने के लिये इस में से हर साल गरीबों के लिये उन का हक़ निकाला जाता है। इस प्रकार इन्सान का धन के प्रति मोह भी मर्यादित हो जाता है। यद्यपि *ज़कात* को अनिवार्य ठहराया गया है ,और इस्लामी हकूमत इस को वसूल करने के लिये दबाव भी डाल सकती है। लेकिन फिर भी इस कर्म की नींव मूलत: नैतिक ही है। यानि इन्सान की मनोवृत्ति में यह परिवर्तन लाना कि माल को मोहवश जमा करना एक प्रकार की अपवित्रता है ,जिस से दिल पर एक प्रकार का अँधकार छा जाता है। इस अपवित्रता को दूर करने का पहला साधन ***ज़कात*** है ,यानि हर साल अपनी जमा शुदा धनराशि में से 2.5% एक जगह जमा कर के गरीबों के उद्धार हेतु खर्च करना।

निस्संदेह यह एक कर है ,लेकिन यह वह कर नहीं कि जिस के पीछे शारीरिक शक्ति कार्यरत हो , इस का मूलाधार सर्वथा नैतिक है। यह एक पूर्ण व्यवस्था है जिस की दूसरी मिसाल विश्व–इतिहास में और कहीं नहीं। यह एक साथ दान भी है और कर भी। यह एक अनिवार्य दान है जिसका अनुष्ठान परम आवश्यक है। और कर के रूप में इस की वसूली प्रशासन पर निर्भर नहीं ,बल्कि करदाता की उस मनोवृत्ति पर निर्भर है कि जब तक वह इस कर को अदा नहीं करता वह एक अपवित्र कर्म का भागी

बना रहता है। दान की दृष्टि से ***ज़कात*** के साथ यह ज़रूरी शर्त है कि दानी को इस बात का अधिकार नहीं कि वह इसे अपनी इच्छानुसार जिस को चाहे दे दे। बल्कि यह इस्लामी प्रशासन या मुस्लिम संस्था का कर्तव्य है कि वह इसे ***"बैत अल-माल"*** (=*मुस्लिम जनकोश*) में जमा करके गरीबों के उत्थान पर व्यय करे। जिन मद्दों पर इस धन को व्यय किया जा सकता है उनका उल्लेख कुर्आन शरीफ़ में मौजूद है। इन में की एक मद्द उन कर्मियों की तनख़्वाह है जो ***ज़कात*** जमा करने आदि पर नियुक्त किये जाते हैं :

❁ إِنَّمَا ٱلصَّدَقَٰتُ لِلْفُقَرَآءِ وَٱلْمَسَٰكِينِ وَٱلْعَٰمِلِينَ عَلَيْهَا وَٱلْمُؤَلَّفَةِ

قُلُوبُهُمْ وَفِى ٱلرِّقَابِ وَٱلْغَٰرِمِينَ وَفِى سَبِيلِ ٱللَّهِ وَٱبْنِ ٱلسَّبِيلِ

इन्नमस् सदक़ातु लिल्फ़ुक़राइ वल्मसाकीनि वल्आमिलीन अलैहा वल्मुअल्लफ़ति क़ुलूबुहुम व फ़िर्रिक़ाबि वल्ग़ारिमीन व फ़ी सबीलिल्-लाहि वब्निस्सबीलि *(9 : 60)* ,

अर्थात् ," *ज़कात केवल निर्धनों और मोहताजों के लिये है ,और उन कर्मियों के लिये जो इस पर नियुक्त हैं ,और उन के लिये जिन के दिल सत्य की ओर प्रवृत्त किये जाते हैं ,और गुलामों को आज़ाद कराने के लिये , और ऋणियों के लिये , और अल्लाह के मार्ग में (यानि जिहाद के लिये) ,और यात्री के लिये।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लका उद्देश्य पूंजीपतियों का विनाश न था

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी शिक्षा का ध्येय पूंजीवाद को तबाह कर देना नहीं था ,बल्कि पूंजीवाद में निहित बुराइयों और अहितों को दूर कर देना था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने कला और उद्योग ,धन और संपत्ति — सब मामलों में मिलिकयत को बरकरार रखा। किसी व्यक्ति को उस की महनत के फल से वंचित नहीं किया। आप ने इन्सान की महनत और बुद्धि की प्रतियोग्यता के मैदान को खुला रखा। बल्कि इस को और ज़्यादा व्यापक बना दिया। बड़े बड़े पूंजीपतियों से उन के धन का एक भाग वसूल कर उसे दूसरे लोगों में बाँट दिया ,और उन्हें इस काबिल बना दिया कि वे भी

थोड़ी थोड़ी पूंजी से काम धन्दा शुरू करके अपनी महनत और बुद्धि से उसे बढ़ाते चले जायें। इस तरह इस्लाम ने पूंजीपतियों की संख्या को बढ़ा दिया ,ताकि प्रतियोग्यता का मैदान और ज़्यादा विस्तृत हो जाये। पूंजीवाद का बुनियादी दोष यह है कि इस में धन कतिपय लोगों के पास जमा होता चला जाता है। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने इस दोष को दूर कर दिया। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने पूंजीवाद को तबाह नहीं किया बल्कि पूंजीपतियों की संख्या बढ़ा कर धन को ज़्यादा से ज़्यादा हाथों तक पहुंचा दिया। धन–वितरण की विकट समस्या के सिलसिले में यह आप का पहला सुधार था। और यह ऐसा अपूर्व आर्थिक सुधार था कि विश्व के संपूर्ण आर्थिक इतिहास में इस का और कहीं वजूद नज़र नहीं आता।

विरासत का इस्लामी नियम

अल्लाह की ***वह्य*** के निदेशानुसार हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने और भी कई आर्थिक सुधारों की नींव रखी। जिन में दाय (*विरासत*) के माल का विभाजन भी एक है। एक आदमी के देहांत के बाद उसका छोड़ा हुआ धन किसी एक व्यक्ति विशेष को न मिल कर सभी निकटवर्ती वारिसों में एक निश्चित अनुपात के तहत विभाजित हो जाता है। दाय संबंधी नियमों में आप ने दो प्रकार के सुधार किए। पहला यह कि औरत को मर्द के साथ विरासत के माल में हिस्सेदार बना दिया। दूसरे आप ने लोकतन्त्र के उसूल पर दाय के माल को सभी निकटवर्ती रिश्तेदारों में विभाजित करने का आदेश दिया। इस प्रकार दाय के कानून ने भी पूंजीवाद के हानिकारक पहलुओं को दूर कर दिया। क्योंकि हर मरने वाले की जगह ,जो अकेले ही एक जायदाद का मालिक था ,दूसरे शब्दों में बड़ा पूंजीपत्ति था ,दाय के विभाजन के बाद एक बड़े पूंजीपति के स्थान पर कई छोटे छोटे पूंजीपति पैदा कर दिये। ये दोनों सुधार कुर्आन शरीफ़ की इस आयत में वर्णित हैं:

لِّلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيبٌ مِّمَّا
تَرَكَ ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ مِمَّا قَلَّ مِنْهُ أَوْ كَثُرَ

लिर्रिजालि नसीबुम् मिम्मा तरकल्वालिदानि वल्अक्रबून व

लिन्निसाअि नसीबुम् मिम्मा तरकल्वालिदानि वल्अक्रबून मिम्मा क़ल्ल मन्हु अव् कसुर (4 : 7)

अर्थात् ," *पुरुषों के लिये उस धन का एक भाग है जो उनके माता–पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ें ,और स्त्रियों के लिये भी उस धन का एक भाग है जो उनके माता–पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ें ,चाहे वह धन थोड़ा हो या बहुत।"*

इस सामान्य नियम का ब्योरा भी दे दिया गया ,और बता दिया गया कि बेटों के साथ बेटियों को भी हिस्सा मिले गा। बाप के साथ माँ को हिस्सा मिले गा। भाई के साथ बहनों को हिस्सा मिले गा। यदि पति वारिस हो सकता है तो पत्नी भी पति की वारिस हो कर उस के माल में से अपना हिस्सा ले सकती है। वारिसों को दो समूहों में विभाजित किया गया है।एक समूह के अन्तर्गत सन्तान ,माता–पिता और पति या पत्नी आते हैं ,और दूसरे समूह में भाई ,बहनें और दूसरे दूर के रिश्तेदार। पहले वाले समूह को मरने वाले के माल में बिना शर्त भागीदार करार दिया गया है। दूसरे वाले समूह को सिर्फ उस वक्त हिस्सा दिया जाता है जब पहले वाले समूह के सारे वारिस या उन में के बाज़ वारिस मौजूद न हों। दोनों समूहों को यों भी विस्तृत कर दिया कि बेटे न हों तो उन की जगह पोते लें ,माँ बाप न हों तो उन की जगह दादा दादी लें ,भाई बहन न हों तो उनकी जगह चाचे आदि लें।

ऋणी और ऋणदाता

आर्थिक क्षेत्र में एक और सुधार ऋण के लेनदेन से संबंधित है। वचन और प्रतिज्ञाओं को पूरा करना इस्लाम के मौलिक सिद्धांतों में है। अतएव ऋण लेने वाले को हुक्म दिया कि वह ऋण को यथासंभव वचन के अनुसार अपने निर्धारित समय पर वापस कर दे।

" तुम में के उत्तम लोग वही हैं जो ऋण को ठीक समय पर अदा करते हैं।" *(बुख़ारी 43 : 7)*

" जो कोई इस नीयत से ऋण लेता है कि उस को वक्त पर वापस लौटा दे गा ,अल्लाह उस के लिये ऋण के भुगतान के साधन पैदा कर देता है। और जो कोई इस नीयत से ऋण लेता

है कि इसे ज़ाया कर दे ,अल्लाह उसे विनष्ट कर देता है।"
(बुख़ारी 43 : 2)

" एक समृद्धशाली व्यक्ति का ऋण के भुगतान को टालना अन्याय है।" *(बुख़ारी 43 : 12)*

" जिस के पास ऋण चुकाने के साधन मौजूद हैं ,वह यदि ऋण चुकाने में टालमटोल करे तो उस को दण्ड देना चाहिये।"
(बुख़ारी 43 : 13)

यदि ऋणी की हालत तन्गी की हो तो ऋणदाता को हुक्म है कि वह उसे मोहलत दे ,और यदि वह ऋण चुकाने के योग्य न हो तो ऋण माफ कर दे।

وَإِن كَانَ ذُو عُسْرَةٍ فَنَظِرَةٌ إِلَىٰ مَيْسَرَةٍ وَأَن تَصَدَّقُوا خَيْرٌ لَّكُمْ إِن كُنتُمْ تَعْلَمُونَ ﴿٢٨٠﴾

व इन् कान ज़ूअुस्रतिन फ़नज़िरतुन इला मैसरतिन व अन् तसद्दकू ख़ैरुल् लकुम् इन् कुन्तुम् तअलमून (2 : 28) ,
अर्थात् ," *और यदि ऋणी तन्गी में हो तो हालत सुधरने तक छूट दे दी जाये। और यदि तुम इसे दान के तौर छोड़ ही दो ,तो यह तुम्हारे लिये उत्तम है यदि तुम जानो।"*

जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰को सत्ता मिली तो आप ने ऋणी के लिये और भी आसानियाँ पैदा कर दीं। फ़रमाया :

" जो व्यक्ति धन और संपत्ति पीछे छोड़े तो वह उस के वारिसों के लिये है ,और जो कोई अपने पीछे ऋण का बोझ छोड़े तो यह हमारी ज़िम्मेदारी है।" *(बुख़ारी 2 : 28)*

ब्याज की मनाही

मतलब यह कि जब वारिस लोग ऋण अदा करने योग्य न हों तो प्रशासन का कर्तव्य है कि इस ऋण को अदा करे। लेकिन इस से भी बढ़ कर यह उपचार प्रस्तुत किया कि ब्याज का सारा लेनदेन अवैध घोषित कर दिया। कुर्आन शरीफ के जिस स्थल पर ब्याज के निषेध की चर्चा है ,वहाँ ब्याज के विषय से पहले दान आदि का सविस्तार वर्णन है। क्योंकि दान इन्सानी

हमदर्दी और संवेदना की आधारभूत शिला है ,जबकि ब्याज मानवीय संवेदना का नाश कर देने वाली चीज़ है। ब्याज का धन्दा करने वाले सूदखोरों का ज़िक्र इन शब्दों से शुरू होता है :

ٱلَّذِينَ يَأْكُلُونَ ٱلرِّبَوٰاْ لَا يَقُومُونَ إِلَّا كَمَا يَقُومُ ٱلَّذِى يَتَخَبَّطُهُ ٱلشَّيْطَٰنُ مِنَ ٱلْمَسِّ

अल्लज़ीन याकुलूनर्रिबा ला यक़ूमून इल्ला कमा यक़ूमुल्लज़ी यतख़ब्बतुहुश्शैतानु मिनल्मस्सि *(2 : 275) ,*

अर्थात् , *" जो लोग ब्याज खाते हैं वे खड़े नहीं हों गे किन्तु उस व्यक्ति के समान जिस को शैतान ने छू कर पागल बना दिया हो।"*

पूंजी और महनत की उस प्रतियोगिता में जो सदा से दुनिया में चली आई है ,पूंजीपति ने हमेशा अपने धन के बल पर अनेक मज़दूरों को अपना दास बनाया है। इस मामले में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी संवेदना एवं हमदर्दी महनत करने वाले मज़दूर के साथ थी।

وَأَحَلَّ ٱللَّهُ ٱلْبَيْعَ وَحَرَّمَ ٱلرِّبَوٰاْ

व अहल्लल्लाहुल् बैअ व हर्रमर्रिबा *(2 : 275) ,*

अर्थात् , *" अल्लाह ने व्यापार को वैध और ब्याज को अवैध ठहराया है।"*

इस अन्तर की वजह यह है कि व्यापार महनत चहता है ,और व्यापारी का नैतिक स्तर भी काफी बुलंद होता है। इस के विपरीत सूदखोरी से बेकार इन्सान भी धनवान् बन जाता है ,और कालांतर में उस का आचार–विचार सब भ्रष्ट हो जाता है।

धर्मार्थ एवं खैराती
कामों के लिये वसीयत

पूंजीवाद के हानिकारक प्रभावों को दूर करने के लिये हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने जो उपचार प्रस्तुत किये उन में एक ***" धर्मार्थ एवं खैराती कामों के लिये वसीयत"*** भी है। अर्थात् हर वह व्यक्ति जो अपने पीछे बहुत माल छोड़े ,उस के लिये अनिवार्य है कि वह उस में का एक भाग धर्मार्थ एवं खैराती कामों के लिये वसीयत कर दे :

كُتِبَ عَلَيْكُمْ إِذَا حَضَرَ أَحَدَكُمُ ٱلْمَوْتُ إِن تَرَكَ خَيْرًا ٱلْوَصِيَّةُ لِلْوَٰلِدَيْنِ

وَالْأَقْرَبِينَ بِالْمَعْرُوفِ حَقًّا عَلَى الْمُتَّقِينَ ﴿١٨٠﴾

कुतिब अलैकुम इज़ा हज़र अहदकुमुल् मौतु इन् तरक ख़ैरनिल् वसिय्यतु लिल्वालिदैनि वल्अक़्रबीन बिल्मअरूफ़ि हक़्क़न् अलल् मुत्तक़ीन *(2 : 180) ,*

अर्थात् *," वसीयत को तुम्हारे लिये अनिवार्य ठहराया गया है ,जब तुम में से किसी की मौत सामने हो ,यदि वह माँ बाप और निकटवर्ती रिश्तेदारों के लिये बहुत सारा माल छोड़ रहा हो ,(तो चाहिये) कि उचित ढंग से वसीयत कर दे — यह कर्म कर्तव्यनिष्ठों के लिये अनिवार्य है।"*

हदीसों (=*हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के कथनों*) में भी *वसीयत* पर काफ़ी बल मिलता है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फ़रमाया :

" एक मुसलमान के लिये ,जिस के पास वसीयत योग्य माल हो ,यह जाइज़ नहीं कि वह दो रातें ,एक पर एक ,ऐसी हालत में सोए कि उस की वसीयत उसके पास लिखी हुई न हो।"

(***बुख़ारी*** 88 : 1)

यह वसीयत जिसे यहाँ ज़रूरी ठहराया गया ख़ैराती या धर्मार्थ कार्यों के लिये थी। इसी लिये इसे जायदाद के एक तिहाई तक सीमित किया गया है ,ताकि वारिस लोग बल्किुल ख़ाली हाथ न रह जायें। यह तथ्य ईरान विजयता सअद इबन वक़ासरज़॰की इस घटना से ज़ाहिर है। घटना हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके जीवन काल के अन्तिम वर्ष की है :

" अपने विदाई हज्ज के साल हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लमक्का में मेरा कुशलमंगल पूछने आये , जब मैं सख़्त बीमार हो गया था। तो मैं ने निवेदन किया : मेरी बीमारी बहुत सख़्त हो गई है। मेरे पास बहुत सारी जायदाद है। और मेरी (वारिस) एक ही बेटी है। तो क्या मैं अपने माल का दो तिहाई दानार्थ वसीयत कर दूँ ? आप ने फ़रमाया : नहीं । मैं ने पुनः निवेदन किया : क्या आधा माल दे दूँ ? फ़रमाया : एक तिहाई की वसीयत कर दो। एक तिहाई बहुत है। क्योंकि यदि तू वारिसों को खाता पीता छोड़े तो यह उस से उत्तम है कि तू उन्हें ऐसी हालत में छोड़े कि

वे दूसरों से माँगते फिरें। और तू जो भी वस्तु अल्लाह की प्रसन्नता हेतु व्यय करे ,उसका तेरे लिये प्रतिफल है। यहाँ तक कि उस का भी एक पुण्यफल है जो तू स्वयं अपनी पत्नी के मुँह में डालता है।'' (*बुख़ारी* 23 : 37)

اَللّٰهُ لَآ اِلٰهَ اِلَّا هُوَۚ اَلْحَىُّ الْقَيُّوْمُۚ

لَا تَاْخُذُهٗ سِنَةٌ وَّلَا نَوْمٌؕ لَهٗ مَا فِى السَّمٰوٰتِ

وَمَا فِى الْاَرْضِؕ مَنْ ذَا الَّذِىْ يَشْفَعُ عِنْدَهٗۤ

اِلَّا بِاِذْنِهٖؕ يَعْلَمُ مَا بَيْنَ اَيْدِيْهِمْ وَمَا خَلْفَهُمْۚ

وَلَا يُحِيْطُوْنَ بِشَىْءٍ مِّنْ عِلْمِهٖۤ اِلَّا بِمَا شَآءَۚ

وَسِعَ كُرْسِيُّهُ السَّمٰوٰتِ وَالْاَرْضَۚ

وَلَا يَـُٔوْدُهٗ حِفْظُهُمَاۚ

وَهُوَ الْعَلِىُّ الْعَظِيْمُ ۝٢٥٥

अध्याय 12

काम और महनत

प्रत्येक व्यक्ति काम करे

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के जनसेवा संबंधी सुधारों में एक और महा सुधार यह था कि आप ने लोगों को काम करने की प्रेरणा दी ,श्रम और महनत को इज़्ज़त और सम्मान का आधार ठहराया। आप की शिक्षा में शुरू दिन से ही इस बात पर ज़ोर है कि जो व्यक्ति काम नहीं करता वह फल भी नहीं खाता ,और यह कि काम करने वाले को उस के काम का पूरा पूरा बदला दिया जाये गा :

وَأَن لَّيْسَ لِلْإِنسَٰنِ إِلَّا مَا سَعَىٰ ﴿٣٩﴾ وَأَنَّ سَعْيَهُۥ سَوْفَ يُرَىٰ ﴿٤٠﴾ ثُمَّ يُجْزَىٰهُ ٱلْجَزَآءَ ٱلْأَوْفَىٰ ﴿٤١﴾

व अन् लैस लिल्इनसानि इल्ला मा सआ व अन्न सअयहू सव्फ़ युरा सुम्म युज्ज़ाहुल्जज़ाअल्–अव्फ़ा *(53 : 39–41) ,*
अर्थात् ," *और इन्सान को कुछ नहीं मिले गा किन्तु वही जिस के लिये वह प्रयास करे , और उस की कोशिश का परिणाम ज़ाहिर हो कर रहे गा ,फिर उसे पूरा पूरा बदला दिया जाये गा।"*

فَمَن يَعْمَلْ مِنَ ٱلصَّٰلِحَٰتِ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَلَا كُفْرَانَ لِسَعْيِهِۦ وَإِنَّا لَهُۥ كَٰتِبُونَ ﴿٩٤﴾

फ़मंय् यअमल् मिनस्सालिहाति व हुव मुअमिनुन् फ़ला कुफ़रान लिसअयिही व इन्ना लहू कातिबून (21 : 94) ,

अर्थात् ," जो कोई अच्छे कर्म करता है और वह ईमानदार भी है ,तो उस की कोशिश की नाकदरी न होगी ,और हम उस के लिये लिख लेते हैं।"

कर्मफल कोशिश के अनुरूप मिलता है

जैसा काम होगा वैसा ही उस का फल होगा :

إِنَّ سَعْيَكُمْ لَشَتَّىٰ ﴿٤﴾ فَأَمَّا مَنْ أَعْطَىٰ وَاتَّقَىٰ ﴿٥﴾ وَصَدَّقَ بِالْحُسْنَىٰ ﴿٦﴾
فَسَنُيَسِّرُهُ لِلْيُسْرَىٰ ﴿٧﴾ وَأَمَّا مَنْ بَخِلَ وَاسْتَغْنَىٰ ﴿٨﴾ وَكَذَّبَ بِالْحُسْنَىٰ
﴿٩﴾ فَسَنُيَسِّرُهُ لِلْعُسْرَىٰ ﴿١٠﴾

इन्ना सअयकुम् लशत्ता फ़अम्मा मन् आता वत्तक़ा व सद्दक़ बिल् हुस्ना फ़सनुयस्सिरुहू लिल्युस्रा व अम्मा मम् बख़िल वस्तग़ना व कज़्ज़ब बिल्हुस्ना फ़सनुयस्सिरुहू लिल्उस्रा *(92 : 4–10) ,* अर्थात् ," *निस्संदेह तुम्हारा प्रयास अलग अलग है ,तो जो कोई दूसरों को देता है और कर्तव्य निभाता है ,और अच्छी बात को मान लेता है — हम उस को सुगमता की ओर चलाएं गे। और जो कोई कंजूसी करता है और स्वयं को स्वावलंबी समझता है ,और अच्छी बात को झुठलाता है — हम उसे दुर्गति की ओर चलाएं गे।"*

وُجُوهٌ يَوْمَئِذٍ نَّاعِمَةٌ ﴿٨﴾ لِّسَعْيِهَا رَاضِيَةٌ ﴿٩﴾

वुजूहुन यौमअिज़िन नाअिमतुन लिसअयिहा राज़ियतुन

अर्थात् ," *कुछ चहरे उस दिन खिले खिले हों गे ,अपने परिश्रम पर संतुष्ट।" (88 : 8–9)*

إِنَّ هَٰذَا كَانَ لَكُمْ جَزَاءً وَكَانَ سَعْيُكُم مَّشْكُورًا ﴿٢٢﴾

इन्ना हाज़ा कान लकुम् जज़ाअंव् व कान सअयुकुम् मश्कूरा

अर्थात् ," *यह तुम्हारे कर्मों का प्रतिफल है , और तुम्हारे प्रयास की कदर होगी।" (76 : 22)*

وَلِكُلٍّ دَرَجَٰتٌ مِّمَّا عَمِلُوا۟ ۚ وَمَا رَبُّكَ بِغَٰفِلٍ عَمَّا يَعْمَلُونَ ﴿١٣٢﴾

वलिकुल्लिन दरजातुम् मिम्मा अमिलू वमा रब्बुक बिग़ाफ़िलिन अम्मा यअमलून *(6 : 132) ,*

अर्थात् *," और सब के लिये दर्जे हैं ,ठीक उस के अनुसार जो वे करत हैं ,और अल्लाह उस से बेखबर नहीं जो वे करते हैं।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने केवल अपने अनुयायिओं ही को यह शिक्षा नहीं दी कि यदि तुम अपना कल्याण चाहते हो तो इस की प्राप्ति के लिये कोशिश करो ,आप अपने विरोधियों से भी यही कहते थे :

قُلْ يَٰقَوْمِ ٱعْمَلُوا۟ عَلَىٰ مَكَانَتِكُمْ إِنِّى عَامِلٌ ۖ

कुल याक़ौमिअमलू अला मकानतिकुम् इन्नी आमिलुन

अर्थात् *," हे मेरे जाति–जनो ! तुम अपनी शिक्ति के अनुसार काम करो मैं भी काम कर रहा हूँ।" (6 : 135)*

वह ***ईमान*** *(=आस्था)* जिस के साथ कर्म न हो बेकार है :

يَوْمَ يَأْتِى بَعْضُ ءَايَٰتِ رَبِّكَ لَا يَنفَعُ نَفْسًا

إِيمَٰنُهَا لَمْ تَكُنْ ءَامَنَتْ مِن قَبْلُ أَوْ كَسَبَتْ فِىٓ إِيمَٰنِهَا خَيْرًا ۗ

यौम यातीं बअज़ु आयाति रब्बिक ला यन्फ़अु नफ़्सन ईमानुहा लम् तकुन् आमनत् मिन् क़ब्लु अव् कसबत् फ़ी ईमानिहा ख़ैरा

(6 : 158) ,

अर्थात् *," जिस दिन तेरे रब के कुछ निशान प्रकट हों गे ,किसी व्यक्ति को उस का (तत्कालीन)* ईमान *लाभ नहीं दे गा जो पहले* ईमान *न लाया हो ,या जिस ने अपने* ईमान *में कोई नेकी नहीं कमाई हो।"*

कोई काम , कोई पेशा तुच्छ नहीं

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लस्वयं एक अनथक काम करने वाले इन्सान थे। आधी रात ,प्रायः दो तिहाई रात प्रभु–उपासना में गुज़ार देते थे ,और इधर दिन में भी हर समय व्यस्त रहते थे। आप ने कभी किसी काम को अपने लिये तुच्छ नहीं समझा। आप बकरियों का दूध स्वयं दुह लेते ,अपने कपड़े

को स्वयं पैवन्द (थिगली) लगा लेते ,अपनी जूती की मरमत कर लेते, अपने हाथ से झाड़ू दे लेते ,अपने ऊँट को स्वयं बाँध लेते और स्वयं उस की देख भाल करते ,पत्नी के घरेलू कामकाज में मदद देते , बाज़ार से सौदा ले आते। जब मस्जिद बनाई गई तो आप ने इस के निर्माण में मज़दूरों की तरह काम किया। जब मदीना को दुश्मन के हमला से बचाने के लिये खाई खोदना पड़ी ,तो आप भी मुस्लिम सेना के अन्य सिपाहियों की तरह इस काम के व्यस्त थे। आप एक साथ पैग़म्बर भी थे ,बादशाह भी थे और अपनी सेना के सेनापति भी थे। लेकिन काम करते वक्त आम आदमी की तरह हर प्रकार का तुच्छ से तुच्छ काम भी कर लेते। इस प्रकार आप ने अपने व्यवहारिक नमूना से यह बता दिया कि कोई भी काम इन्सान के लिये अपमानजनक नहीं ,बल्कि काम कैसा भी हो इस से इन्सान की इज़्ज़त ही बढ़ती है। जिस समाज की हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने स्थिपना की उस में सड़क पर काम करने वाले मज़दूर ,लकड़ी काटने वाले लकड़हारे और एक पानी भरने वाले भिश्ती — सब को एक जैसा स्थान प्राप्त था। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने फ़रमाया :

"कोई व्यक्ति उस से उत्तम रोटी नहीं खाता जो वह अपने हाथ से काम करके खाता है।" (***बुख़ारी*** 34 : 15)

"परमात्मा ने जितने भी पैग़म्बर नियुक्त किये सब ने बकरियाँ चराईं।"

और जब आप से पुछा गया कि क्या आप ने भी बकरियां चराईं ? , तो फ़रमाया :

"हाँ ! मैं भी चन्द पैसों पर मक्का वालों की बकरियाँ चराया करता था।" (***बुख़ारी*** 37 : 2)

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने इस बात को कभी पसन्द न किया कि कोई व्यक्ति दूसरों से खैरात लेने के लिये अपना हाथ फैलाये। आप ने इस बात को अति उत्तम करार दिया कि इन्सान महनत मज़दूरी का कोई काम कर ले :

"यदि तुम में से एक व्यक्ति एक रस्सी ले और (जन्गल से) लकड़ी का एक गट्ठा अपनी पीठ पर उठा लाये ,और फिर उसे बेच दे ,जिस से अल्लाह उसकी इज़्ज़त बचा ले। तो यह कर्म

उस से कहीं उत्तम है कि वह लोगों से भीख मागँता फिरे ,और वे उसे दें या न दें।" (***बुख़ारी*** 24 : 50)

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके प्रतिष्ठित *सहाबा* मामूली कुली के काम तक को घृणित नहीं समझते थे। अबू मसऊदरज़. कहते हैं :

" जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लहमें अल्लाह के मार्ग में कुछ देने को कहते ,तो हम में से एक व्यक्ति बाज़ार में जाता और बोझ उठा कर एक जगह से दुसरी जगह पहुंचाता ,जिस की मज़दूरी मेंउसे कुछ अन्न मिल जाता –– और उन में के बाज़ व्यक्ति आज लखपति हैं।" (***बुख़ारी*** 24 : 10)

कसाई , सुनार ,लौहार ,दरज़ी , बुनकर , बढ़ई — सब को मुस्लिम समाज में वही प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त था जो अन्य गणमान्य व्यक्तियों को प्राप्त था।

नौकर और मालिक

काम करने वाले मज़दूर अथवा मुलाज़िम और काम कराने वाले मालिक के संबंध एक बाकायदा अनुबंध के अधीन थे। जिस में दोनों पक्ष अन्य मामलों में एकसमान थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने इन सब मामलों में एक सामान्य नियम प्रस्तुत किया :

"मुसलमानों के लिये अनिवार्य है कि वे उन शर्तों का पालन करें जो वे एक दूसरे से तय करें।" (***बुखारी*** 37 : 14)

मालिक और नौकर —ये अनुबंध के दो पक्ष थे। शर्तो को पूरा करना जितना नौकर के लिये ज़रूरी था उतना ही मालिक के लिये भी ज़रूरी था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फ़रमाया :

" अल्लाह कहता है : तीन व्यक्ति हैं ,जिन से मैं क़यामत के दिन एक प्रतिपक्षी की भांति पूछताछ करूँगा। एक वह व्यक्ति जो मेरे नाम से एक वादा करे फिर उसे पूरा न करे। दूसरा वह जो एक आज़ाद इन्सान को बेच दे और उसकी कीमत खा जाये। तीसरा वह जो नौकर को मुलाज़िम रखे और उस से परिश्रम का काम ले ,जिसका लेना तय हुआ हो ,फिर उसकी मज़दूरी उसे अदा न करे।" (***बुखारी*** 34 : 106)

एक लम्बी *हदीस* में यह शब्द भी मिलते हैं :

"... ***किसी प्रकार के सेवा कार्य को हीनता का कारण न समझा जाता था ,यहाँ तक कि नौकर उसी दस्तरख्वान पर बैठ कर खाना खाता था जिस पर उसका मालिक बैठा होता।***"

(***बुखारी*** 49 : 18)

यदि किसी कारणवश मज़दूर अपनी मज़दूरी नहीं ले पाया ,या उस की मज़दूरी का कोई भाग अदा नहीं हो पाया ,तो उस रकम को किसी कारोबार में लगा देना अच्छा समझा जाता था ,जिस से मज़दूर को उसकी मज़दूरी लाभ–राशि सहित मिल जाती। एक लम्बी हदीस में आता है :

"***तीसरे आदमी ने कहा : मैं ने मज़दूर काम पर लगाये और मैं ने उन सब की मज़दूरी उन को दे दी ,सिवाय एक व्यक्ति के जो मज़दूरी छोड़ कर चला गया। तो मैं ने उस की देय राशि को एक लाभदायक व्यापार में लगा दिया ,यहाँ तक कि उस से बहुत सारा माल प्राप्त हो गया।***" (***बुखारी*** 37 : 12)

आगे आता है कि जब एक लम्बी अवधि के बाद वह मज़दूर वापस आया और उस ने अपनी मज़दूरी माँगी ,तो मैं ने वह सारा माल उस के हवाले कर दिया।

सरकारी मुलाज़िम

आम सरकारी मुलाज़िम ,और सरकार के उच्च पदाधिकारी जैसे तहसीलदार, अन्य अफ़सर और जज आदि ,इन की हैसियत वही थी जो एक सामान्य मुलाज़िम की होनी चाहिये। उन्हें उस काम का वेतन मिलता था जो उन के सुपुर्द था। इस के अतिरिक्त वे आम लोगों से कोई उपहार न ले सकते थे। जो लोग कुर्आन शरीफ़ की शिक्षा देते थे उन्हें भी उस काम के लिये वेतन दिया जाता था।

"***जिन चीज़ों पर तुम वेतन लेते हो ,अल्लाह की किताब पर इन सब से बढ़ कर वेतन लेने का अधिकार है।***"

(***बुखारी*** 37 : 16)

एक बार हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.ने हज़रत उमररज़. को तहसीलदार के तौर पर नियुक्त किया ,और जब उन्हें इस कार्य के लिये वेतन दिया गया तो उन्हों ने कहा : मुझे इस की ज़रूरत नहीं।

हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल.ने फ़रमाया :

"वेतन ले लो और फिर चाहो तो उसे दान कर दो।"

(***बुख़ारी*** 94 : 17)

इस तरह यह नियम ठहराया गया कि हर एक मुलाज़िम ,चाहे उस की हैसियत कुछ भी हो ,वेतन का अधिकारी है ,और जब उसे उसके काम का वेतन दिया जाये तो ले लेना चाहिये।

व्यापार

व्यापार एक सम्मानजनक पेशा था ,अतः हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल.ने अपने अनुयायिओं को व्यापार की विशेष प्रेरणा दी :

"सच्चा ईमानदार व्यापारी (क़यामत के दिन) निबियों ,सत्यनिष्ठों और शहीदों के साथ होगा।" (***तिर्मज़ी*** 13 : 4)

हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल.ने यह शिक्षा भी दी कि एक दूसरे से लेनदेन करते समय उद्धारता का प्रदर्शन किया जाये।

"अल्लाह उस पर दया करे जो जब ख़रीदता है ,बेचता है या अपना हक़ माँगता है ,तो उद्धारता प्रकट करता है।"

(***बुख़ारी*** 34 : 16)

हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल.ने फ़रमाया :

"-- उस व्यक्ति को ,जो अपना हक़ लेने में समृद्धशाली को मोहलत देता था और अभावग्रस्त को ऋणमुक्त कर देता था, केवल उस के इस कर्म की वजह से क्षमा कर दिया गया।"

(***बुख़ारी*** 34 : 17)

ईमानदारी को व्यापार का आधारभूत नियम करार दिया गया :

"यदि सौदा करने वाले दोनों पक्ष सच बोलें और (वस्तु के दोष को) ज़ाहिर कर दें तो उन के व्यापार में बरकत दे दी जाये गी ,और यदि वे (दोष को) छिपाएं और झूठ बोलें तो उनके व्यापार में बेबरकती होगी।" (***बुख़ारी*** 34 : 19)

कारोबार में कसमें खाने से रोका गया :

" कसमें खाने से चीज़ बिक तो जाती है लेकिन उस के अन्दर से बरकत दूर कर दी जाती है।" (*बुख़ारी* 34 : 26)

अन्न के कारोबार में सटाबाज़ी से रोका गिया :

" जो व्यक्ति अन्न खरीदे वह उसे तब तक न बेचे जब तक उस का कबज़ा न ले ले।" (*बुखारी* 34 : 54)

व्यापार का मूल उद्देश्य जनता को लाभ पहुंचाना है इस लिये जमाखोरी से माना किया गया था :

" जो कोई अन्न को गोदामों में रोके रखता है ताकि अभाव पैदा हो और अन्न महंगा हो जाये वह पापी है।" (*मुस्लिम* 23 : 21)

कृषि

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने खेती बाड़ी और वृक्षरोपण की ओर विशेष ध्यान दिलाया :

" कोई मुसलामन जो वृक्ष लगाये या धरती में खेती बाड़ी करे, फिर उस से पक्षी या इन्सान या कोई अन्य जानवर खाये ,तो यह उसकी ओर से एक दान होगा।" (*बुख़ारी* 41 : 1)

" जो व्यक्ति ऐसी भूमि में खेती करता है जो किसी की मिल्कियत नहीं ,तो वह उस भूमि का सब से अधिक अधिकारी है।" (*बुख़ारी* 41 : 15)

जिन लोगों के पास बड़े बड़े भूखण्ड थे ,जिन पर वे स्वयं कृशि नहीं कर पाते थे ,उन्हें यह प्रेरणा दी गई कि वे अपनी भूमि दूसरों को निःशुल्क खेती के लिये दे दें :

" यदि तुम में से कोई व्यक्ति (खेती के योग्य ज़मीन) अपने भाई को उपहार के रूप में दे दे ,यह उस से उत्तम है कि वह किसी निश्चित दर पर उसे ठेके पर दे।" (*मिश्कात 12 :13*)

" लेकिन इस बात की (भी) अनुमति थी कि मालिक किसी को

ज़मीन बटाई पर ,या निश्चित दर पर ठेके पर दे दे।"

(*बुख़ारी* 41 : 8 , 12 ,19)

ज़मीन की मिल्कियत को तसलीम किया गया और उसे बेचने या खरीदने या दूसरों को ठेका पर देने का हक भी तसलीम किया गया। इस के साथ ही यह भी बता दिया गया कि कोई जाति या राष्ट्र अपने समस्त साधनों को कृषि तक ही सीमित न कर दे ,ऐसा करने से वह अपमान और पतन का भागी हो जाये गा। प्रशासन का कर्तव्य है कि वह उन्नति और विकास के अन्य साधनों की ओर भी पूरा पूरा ध्यान दे। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने किसी घर में हल और कृषि के अन्य यन्त्र देखे तो फ़रमाया :

" जब ये चीज़ें किसी कौम या जाति के घरों में दाख़िल हो जातीं हैं तो अपने साथ अपमान और पतन भी लातीं हैं।"

(*बुख़ारी* 41 : 2)

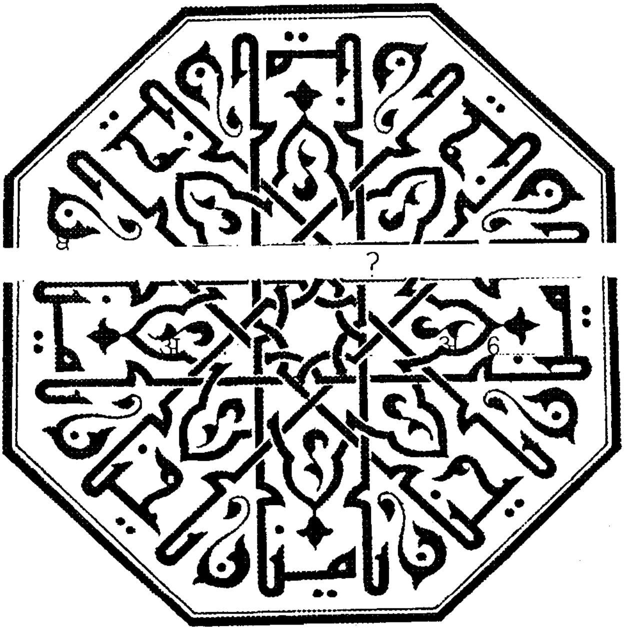

अध्याय 13

घरेलू जीवन

औरत की स्थिति में क्रांति

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की शिक्षा में आर्थिक समस्या से ज़्यादा घरेलू समस्या को महत्त्व दिया गया है। इन्सानी समाज की सुख–शांति का आधार उस के घरानों की सामूहिक खुशहाली पर है। घर को इन्सानी सभ्यता की आधारभूत शिला कहा जा सकता है। इसी लिय हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने घरेलू जीवन को स्वर्ग बनाने के लिये हर प्रकार के निदेश दिये। आप ने घर और समाज में मर्द और औरत के वास्तविक स्थान ,उन के पारस्परिक संबंधों और कर्तव्यों पर पर्याप्त प्रकाश डाला। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लसे पहले स्त्री को सामान्यतः एक गुलाम का दर्जा दिया जाता था। कुछ एक बातों को छोड़ अन्य सभी मामलों में औरत के व्यक्तित्व को साफ नकारा जाता था। औरत धन और संपत्ति में भागीदार न बन सकती थी ,न उसकी मालिक हो सकती थी ,उलटा उसी को जायदाद का एक भाग समझा जाता था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने इस सामाजिक कुव्यवस्था में सुधार किया। आप ने मर्दों की तरह औरत को भी दाय में हिस्सेदार ठहराया ,आप ने फ़रमाया कि औरत भी मर्दों की तरह धन–संपत्ति की मालिक बन सकती है। यह एक बहुत बड़ा क्रांतिकारी एवं सुधारात्मक कदम था।

स्त्री और पुरुष परस्पर जीवन–साथी हैं

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की प्रारंभिक *"वह्य"* में ही स्त्री और पुरुष का उल्लेख कुछ ऐसे रूप में आया है , जिस से साफ ज्ञात होता है कि इस्लाम में दोनों का स्थान एक जैसा है :

وَٱلَّيۡلِ إِذَا يَغۡشَىٰ ﴿١﴾ وَٱلنَّهَارِ إِذَا تَجَلَّىٰ ﴿٢﴾ وَمَا خَلَقَ ٱلذَّكَرَ
وَٱلۡأُنثَىٰٓ ﴿٣﴾ إِنَّ سَعۡيَكُمۡ لَشَتَّىٰ ﴿٤﴾

वल्–लैलि इज़ा यग़्शा वन्नहारि इज़ा तजल्ला वमा ख़लक़ज़् ज़कर वल्उन्सा इन्न सअ्यकुम् लशत्ता *(92 : 1–4) ,*
अर्थात् ," *रात जब परदा डालती है , और दिन जब रोशन होता है , और नर और मादा की रचना — (ये) इस बात पर गवाह हैं कि तुम्हारे प्रयास अलग अलग हैं।"*

وَأَنَّهُۥ هُوَ أَمَاتَ وَأَحۡيَا ﴿٤٤﴾ وَأَنَّهُۥ خَلَقَ ٱلزَّوۡجَيۡنِ ٱلذَّكَرَ وَٱلۡأُنثَىٰ ﴿٤٥﴾
مِن نُّطۡفَةٍ إِذَا تُمۡنَىٰ ﴿٤٦﴾

व अन्नहू हुव अमात व अह्या व अन्नहू ख़लक़ज़् ज़ौजैनिज़् ज़कर वल्उन्सा मिन् नुत्फ़तिन् इज़ा तुम्ना *(53 : 44–46) ,*
अर्थात् ," *और यह कि वही परमात्मा मृत्यु देता है और जीवित करता है। और यह कि वही जोड़े पैदा करता है ,नर और मादा — छोटे से जनन–जीवाणु से ,जब वह प्रजनन के अनुकूल बनाया जाता है।"*

परमात्मा ने मर्द और औरत ,दोनों को परमावस्था, तक पहुंचाया :

أَيَحۡسَبُ ٱلۡإِنسَٰنُ أَن يُتۡرَكَ سُدًى ﴿٣٦﴾ أَلَمۡ يَكُ نُطۡفَةً مِّن مَّنِيٍّ يُمۡنَىٰ ﴿٣٧﴾
ثُمَّ كَانَ عَلَقَةً فَخَلَقَ فَسَوَّىٰ ﴿٣٨﴾ فَجَعَلَ مِنۡهُ ٱلزَّوۡجَيۡنِ ٱلذَّكَرَ وَٱلۡأُنثَىٰٓ

अ यह्सबुल् इन्सानु अंय् युत्रक सुदन अलम् यकु नुत्फ़तम् मिंम–मनीयन् युम्ना सुम्मा कान अलक़तन् फ़ख़लक़ फ़सव्वा फ़जअल मिनहुज़्ज़ौजैनिज़्ज़कर वल्उन्सा *(75 : 36–39) ,*
" क्या मनुष्य समझता है कि उसे व्यर्थ ही छोड़ दिया जाये गा ? क्या

वह वीर्य का एक जीवाणु न था जो टपकाया जाता है। फिर वह एक निराकार लोथड़ा था ,फिर उस ने उसे आकार दिया ,और अंग अंग सुगठित किया। फिर उस से दो साथी मर्द और औरत पैदा किये।"

सन्तान —जिसे प्रभु का सब से बड़ा वरदान कहा गया है ,इस में औरत का ज़िक्र मर्द से पहले आया है :

يَهَبُ لِمَن يَشَآءُ إِنَـٰثًا وَيَهَبُ لِمَن يَشَآءُ ٱلذُّكُورَ ﴿٤٩﴾ أَوْ يُزَوِّجُهُمْ ذُكْرَانًا وَإِنَـٰثًا

यहबु लिमंय् यशाउ इनासंव् व यहबु लिमंय् यशाउज़् ज़ुकूर अव् युज़व्विजुहुम ज़ुक्रानंव् व इनासन (42 : 49–50) ,

अर्थात् ," *वह जिसे चाहता है लड़कियां देता है और जिसे चाहता है लड़के देता है या लड़के लड़कियां मिला कर देता है।"*

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ ٱتَّقُوا۟ رَبَّكُمُ ٱلَّذِى خَلَقَكُم مِّن نَّفْسٍ وَٰحِدَةٍ وَخَلَقَ مِنْهَا زَوْجَهَا وَبَثَّ مِنْهُمَا رِجَالًا كَثِيرًا وَنِسَآءً

याअय्युहन्नासुत्तक़ू रब्बकुमुल्लज़ी ख़लक़कुम् मिन् नफ़सिंव् वाहिदतंव् व ख़लक़ मिन्हा ज़ौजहा वबस्स मिन्हुमा रिजालन कसीरंव् व निसाअन (4 : 1)

अर्थात् ," *हे संसार वासियो ! अपने पालनहार–स्रष्टा के प्रति कर्तव्यनिष्ठ रहो ,जिस ने तुम सब को एक ही जीव से पैदा किया ,और उसी (प्रथम) जीव से उसका जोड़ा पैदा किया ,और इन दोनों से अनेकों स्त्री–पुरुष फैलाय।'*

आध्यात्मिक क्षेत्र में भी स्त्री और पुरुष समान हैं

इन्सान होने की दृष्टि से स्त्री और पुरुष एकसमान हैं — इस तथ्य के ज्ञापण के साथ साथ यह घोषणा भी की गई कि प्रभु ने अपने आध्यात्मिक वरदानों का द्वार भी दोनों ही के लिये एकसमान खोल रखा है :

وَمَنْ عَمِلَ صَـٰلِحًا مِّن ذَكَرٍ أَوْ أُنثَىٰ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَأُو۟لَـٰٓئِكَ يَدْخُلُونَ ٱلْجَنَّةَ

व मन अमिल सालिहन मिन ज़करिन अव उन्सा व हुव मुअमिनुन फ़ऊलाअिक यद्ख़ुलूनल्जन्नत (40 : 40) ,
अर्थात् ,*"जो कोई अच्छे कर्म करता है — मर्द हो या औरत ,और वह ईमान वाला है ,तो यही जन्नत में दाखिल होंगे।"*

مَنْ عَمِلَ صَـٰلِحًا مِّن ذَكَرٍ أَوْ أُنثَىٰ وَهُوَ مُؤْمِنٌ فَلَنُحْيِيَنَّهُۥ حَيَوٰةً طَيِّبَةً

وَلَنَجْزِيَنَّهُمْ أَجْرَهُم بِأَحْسَنِ مَا كَانُوا۟ يَعْمَلُونَ ﴿٩٧﴾

मन अमिल सालिहन मिन ज़करिन अव उन्सा व हुव मुअमिनुन फ़लनुह्यियन्नहू हयातन तय्यिबतन व लनजज़ियन्नहुम अज्रहुम बिअह्सनि व मा कानू यअमलून (16 : 97) ,
अर्थात् ,*"जो कोई अच्छे कर्म करता है — मर्द हो या औरत , और वह ईमान वाला है ,तो हम उसे एक पवित्र जीवन प्रदान करेंगे। और हम उन्हें उनके उत्तम कर्मों के अनुरूप प्रतिफल दें गे ,जो वे करते थे।"*

औरतों पर परमात्मा की ***"वह्य"*** **(Revelation)** का अवतरण :

وَأَوْحَيْنَآ إِلَىٰٓ أُمِّ مُوسَىٰٓ أَنْ أَرْضِعِيهِ ۖ فَإِذَا خِفْتِ عَلَيْهِ فَأَلْقِيهِ فِى ٱلْيَمِّ وَلَا

تَخَافِى وَلَا تَحْزَنِىٓ ۖ

व अव्हय्ना इला उम्मि मूसा अन् अर्ज़िअीहि फ़इज़ा ख़िफ़्ति अलैहि फ़ल्क़ीहि फ़िल्यम्मि वला तख़ाफ़ी व ला तह्ज़नी
अर्थात् ,*" और हम ने मूसा की माता की ओर 'वह्य' भेजी कि उसे दूध पिला। और जब उसके विषय में तुझे भय हो तो उसे नदी में डाल दे और डर मत और न चिन्तित हो।"* (28 : 7)

जिस प्रकार अल्लाह ने मर्दों को अपने दिव्य वरदानों के लिये चुना उसी प्रकार औरतों को भी चुना :

وَإِذْ قَالَتِ ٱلْمَلَـٰٓئِكَةُ يَـٰمَرْيَمُ إِنَّ ٱللَّهَ ٱصْطَفَىٰكِ وَطَهَّرَكِ

व इज़ क़ालतिल् मलाअिकतु या मर्यमु इन्नल्लाहस्तफ़ाकि व तह्हरकि (3 : 42) ,
अर्थात् ,*" और जब फ़रिश्तों ने कहा : हे मरयम ! अल्लाह ने तुझे चुन लिया है और तुझे पवित्र किया है।"*

स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी पत्नियों के बारे में आता है कि अल्लाह ने उन्हें पूर्णतया पवित्र किया :

إِنَّمَا يُرِيدُ ٱللَّهُ لِيُذْهِبَ عَنكُمُ ٱلرِّجْسَ أَهْلَ ٱلْبَيْتِ وَيُطَهِّرَكُمْ تَطْهِيرًا

इन्नमा युरीदुल्लाहु लियुज़्हिब अन्कुमुर् रिज्स अहलल्बैति व युतह्हिरकुम् तत्हीरा (33 : 33) ,

अर्थात् ," *(हे पैग़म्बर की घर वालियो !) अल्लाह का यही इरादा है कि वह तुम से अपवित्रता दूर रखे और तुम्हें पूर्णतया पवित्र बनाये।"*

सामान्य शब्दों में भी मर्दों और औरतों की आध्यात्मिक उपलब्धियों का एक जैसा ज़िक्र आया है :

إِنَّ ٱلْمُسْلِمِينَ وَٱلْمُسْلِمَـٰتِ وَٱلْمُؤْمِنِينَ وَٱلْمُؤْمِنَـٰتِ وَٱلْقَـٰنِتِينَ وَٱلْقَـٰنِتَـٰتِ

وَٱلصَّـٰدِقِينَ وَٱلصَّـٰدِقَـٰتِ وَٱلصَّـٰبِرِينَ وَٱلصَّـٰبِرَٰتِ وَٱلْخَـٰشِعِينَ

وَٱلْخَـٰشِعَـٰتِ وَٱلْمُتَصَدِّقِينَ وَٱلْمُتَصَدِّقَـٰتِ وَٱلصَّـٰٓئِمِينَ وَٱلصَّـٰٓئِمَـٰتِ

وَٱلْحَـٰفِظِينَ فُرُوجَهُمْ وَٱلْحَـٰفِظَـٰتِ وَٱلذَّٰكِرِينَ ٱللَّهَ كَثِيرًا وَٱلذَّٰكِرَٰتِ

أَعَدَّ ٱللَّهُ لَهُم مَّغْفِرَةً وَأَجْرًا عَظِيمًا ﴿٣٥﴾

अन्नल् मुस्लिमीन वल् मुस्लिमाति वल् मुअमिनीन वल् मुअमिनाति वल् क़ानितीन वल् क़ानिताति वस्–सादिक़ीन वस्–सादिक़ाति वस्–साबिरीन वस्–साबिराति वल् ख़ाशिअीन वल् ख़ाशिआति वल् मुतसद्दिक़ीन वल् मुतसद्दिक़ाति वस् साअिमीन वस् साअिमाति वल् हाफ़िज़ीन फ़रूजहुम वल् हाफ़िज़ाति वज् ज़ाकिरीनल्लाह कसीरंव् वज् ज़ाकिराति अअद्दल् लाहु लहुम मग़फ़िरतंव् व अजरन अज़ीमा (33 : 35) ,

अर्थात् ," *अल्लाह के आज्ञाकारी मर्द और अल्लाह की आज्ञाकारी औरतें ,और ईमान लाने वाले मर्द और ईमान लाने वाली औरतें ,अल्लाह के प्रति आत्मसमर्पण करने वाले मर्द और अल्लाह के प्रति आत्मसमर्पण करने वाली औरतें ,और सत्यपरायण मर्द और सत्यपरायण औरतें , धैर्यवान मर्द और धैर्यवती औरतें ,और विनम्र मर्द और विनम्र औरतें ,*

दानशील मर्द और दानशील औरतें ,और रोज़ा रखने वाले मर्द और रोज़ा रखने वाली औरतें ,अपने शील की रक्षा करने वाले मर्द और अपने शील की रक्षा करने वाली औरतें ,और अल्लाह का अधिक स्मरण करने वाले मर्द और अल्लाह का अधिक स्मरण करने वाली औरतें —— अल्लाह ने इन के लिये संरक्षण और महा प्रतिफल तैयार किया है।"

औरत और मर्द के व्यक्तित्व में समानता

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की शिक्षा ने स्त्री और पुरुष को केवल आध्यात्मिक क्षेत्र में ही समानता नहीं दी ,बल्कि आप ने औरत के व्यक्तित्व को भी मर्द के व्यक्तित्व के समान ठहराया। यह एक ऐसा सैद्धांतिक सुधार था जिस ने आधी मानवजाति को गुलामी की सदियों पुरानी ज़ंजीरों से आज़ाद कर दिया। जिस प्रकार मर्द अपनी महनत से धन कमा सकते हैं उसी तरह औरतें भी अपनी महनत से धन कमा सकती हैं :

لِّلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا ٱكْتَسَبُوا۟ ۖ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيبٌ مِّمَّا ٱكْتَسَبْنَ ۚ

लिर्रिजालि नसीबुम् मिम्मक्तसबू व लिन्निसाअि नसीबुम् मिम्मक्तसब्न (4 : 32) ,

अर्थात् ," *पुरुषों के लिये उसका हितलाभ है जो वे कमायें , और स्त्रियों के लिये उस का हितलाभ है जो वे कमायें।"*

اكتساب "***इक्तिसाब***" यानि व्यक्तिगत कमाई का मार्ग खोल कर हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने औरतों को हर तरह के काम काज और कारोबार की ,जो वे चाहें और जो वे कर सकें ,अनुमति दे दी। यों तो शादी के बाद मर्द औरत के गुज़ारे का ज़िम्मेदार हो जाता है। लेकिन यदि ज़रूरत पड़े तो औरत भी कोई अनुकूल काम–धन्दा कर अपना पेट पाल सकती है। اكتساب "***इक्तिसाब***" की स्वतन्त्रता के साथ ही औरत को मर्द की भांति दाय में भी वारिस ठहराया गया है। अरब में औरत किसी विरासत की हक़दार न थी। अरब की धरती पर यह एक नवीन सन्देश था जो अरब परम्परा के सर्वथा विरुद्ध था। पर देखते ही देखते यह मंगलमय सन्देश अरब देश के एक छोर से दूसरे छोर तक व्यवहार में आ गया।

لِّلرِّجَالِ نَصِيبٌ مِّمَّا تَرَكَ ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ وَلِلنِّسَآءِ نَصِيبٌ مِّمَّا
تَرَكَ ٱلْوَٰلِدَانِ وَٱلْأَقْرَبُونَ

लिर्रिजालि नसीबुम् मिम्मा तरकल् वालिदानि वल् अक्रबून व लिन्निसाअि नसीबुम् मिम्मा तरकल् वालिदानि वल् अक्रबून

अर्थात् , *"पुरुषों को उस (धन–संपत्ति) में से हिस्सा मिले गा जो (उनके) माता–पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ें ,और स्त्रियों को भी उस (धन–संपत्ति) में से हिस्सा मिले गा जो (उनके) माता–पिता और निकटवर्ती रिश्तेदार छोड़ें।"* (4 : 7)

इस मौलिक सिद्धांत के आधार पर विरासत का जो कानून बना उस में पत्नी पति की वारिस ठहरी। बेटी को बेटों के साथ दाय में भागीदार बनाया गया। औरत को यह अधिकार दिया गया कि वह अपनी संपत्ति को जिस तरह चाहे काम में लाये ,चाहे तो बीच दे ,या उपहार के तौर किसी दूसरे को दे दे।

فَإِن طِبْنَ لَكُمْ عَن شَىْءٍ مِّنْهُ نَفْسًا فَكُلُوهُ هَنِيٓـًٔا مَّرِيٓـًٔا

फ़इन् तिब्न लकुम् अन् शौअिन मिन्हु नफ़्सन फ़कुलूहु हनीअंम् मरीआ *(4 : 4),*

अर्थात् ," *यदि वे (स्त्रियाँ) अपनी मर्ज़ी से उस में का (यानि अपनी संपत्ति में का) कुछ हिस्सा तुम्हें दे दें तो उसका सानन्द एवं रुचिपूर्वक सेवन करो।"*

" हे मुसलमान स्त्रियो ! कोई पड़ोसी अपने पड़ोसी के लिये उपहार को तुच्छ न समझे ,भले ही वो बकरी के पाये ही हों।" (*बुख़ारी* 51 : 1)

हर मुसलमान औरत विवाह के समय अनिवार्यतः संपत्ति की स्वामिनी बन जाती है। क्योंकि निकाह की एक ज़रूरी शर्त यह भी है कि औरत को مہر ***"महर"*** के रूप में कुछ संपत्ति दी जाये। यह मानो औरत के व्यक्तित्व को स्थापित करने का अमली कदम था।

مَّا وَرَآءَ ذَٰلِكُمْ أَن تَبْتَغُوا۟ بِأَمْوَٰلِكُم مُّحْصِنِينَ غَيْرَ مُسَٰفِحِينَ ۚ فَمَا ٱسْتَمْتَعْتُم بِهِۦ مِنْهُنَّ فَـَٔاتُوهُنَّ أُجُورَهُنَّ فَرِيضَةً ۚ

मा वराअ ज़ालिकुम अन् तब्तग़ू अम्वालिकुम् मुह्सिनीन ग़ैर मुसाफ़िहीन फ़मस्तम्तअतुम बिही मिन्हुन्न फ़ातूहुन्न उजूरहुन्न फ़रीज़तन *(4 : 24)* ,

अर्थात् ,*"इस के अतिरिक्त सब स्त्रियां तुम्हारे लिये वैध हैं ,बशर्तेकि तुम उन को अपने धन के साथ लाना चाहो — बाकायदा विवाह करके अमर्यादित कामतृप्ति करते हुए नहीं। अतः उन में से जिन स्त्रियों के साथ तुम (विवाह के सुख का) लाभ उठाना चाहो तो उन्हें उनके निर्धारित "महर" अदा कर दो।"*

इस संबंध में एक गैरमुस्लिम औरत को भी मुसलमान औरत के बराबर स्थान दिया गया ,और उसके व्यक्तित्व को भी उसी तरह तसलीम किया गया :

وَٱلْمُحْصَنَٰتُ مِنَ ٱلْمُؤْمِنَٰتِ وَٱلْمُحْصَنَٰتُ مِنَ ٱلَّذِينَ أُوتُوا۟ ٱلْكِتَٰبَ مِن قَبْلِكُمْ إِذَآ ءَاتَيْتُمُوهُنَّ أُجُورَهُنَّ مُحْصِنِينَ غَيْرَ مُسَٰفِحِينَ وَلَا مُتَّخِذِىٓ أَخْدَانٍ ۗ

वल् मुह्सनातु मिनल् मुअमिनाति वल् मुह्सनातु मिनल् लज़ीन ऊतुल् किताब मिन् क़ब्लिकुम इज़ा आतैतुमूहुन्न उजूरहुन्न मुह्सिनीन ग़ैर मुसाफ़िहीन वला मुत्तख़िज़ी अख़्दानिन (5 : 5)

अर्थात् ,*"और शीलवती ईमान वाली औरतें तथा उन में की शीलवती स्त्रियां जिन को तुम से पहले दिव्य ग्रन्थ दिया गया ,बशर्तेकि तुम उनको उनके "महर" अदा कर दो ,बाकायदा विवाह करके ,न कि अमर्यादित कामतृप्ति करते हुए ,और न ही छिपा याराना रखते हुए।"*

महर की राशि कितनी हो ,इस की कोई हद मुकर्रर नहीं की गई। सोने का ढेर भी दिया जासकता है :

وَءَاتَيْتُمْ إِحْدَىٰهُنَّ قِنطَارًا فَلَا تَأْخُذُوا۟ مِنْهُ شَيْـًٔا

व आतैतुम इह्दाहुन्न क़िन्तारन फ़ला ताख़ुज़ू मिन्हु शैअन

अर्थात् ,*"यदि तुम ने उसे सोने का ढेर भी दिया है तो उस में से (तलाक़ के समय) कुछ वापस न लो।"* (4 : 20)

शादी से पहले भी औरत के व्यक्तित्व को स्वीकारा गया। न केवल इस लिये कि वह भी कोई कामधन्दा करके धन पैदा कर सकती है ,बल्कि इस लिये भी कि अपना जीवन साथी चुनने में उस की अनुमति ज़रूरी थी। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फरमाया :

*"विधवा के **निकाह** (=विवाह) में उस का मशवरा लिया जाए ,और कँवारी के **निकाह** (=विवाह) में उस की अनुमति ली जाए।"*

(***बुख़ारी*** 67 : 42)

जब एक औरत का उस की मर्ज़ी के खिलाफ विवाह कर दिया गया ,तो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने उस निकाह को रद्द कर दिया (***बुख़ारी*** 67 : 42) ,कुर्आन शरीफ में आता है :

يَـٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُوا۟ لَا يَحِلُّ لَكُمْ أَن تَرِثُوا۟ ٱلنِّسَآءَ كَرْهًا

ला यहिल्लु लकुम् अन् तरिसुन्–निसाअ कर्हन *(4 : 19)* ,

अर्थात् ,*" हे ईमान वालो ! यह तुम्हारे लिये जाइज़ नहीं कि तुम औरतों को उन की मर्ज़ी के ख़िलाफ़ बपौती समझ कर ले लो।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने ***निकाह*** को एक पवित्रतम अनुबंध करार दिया। और ज़ाहिर है कि कोई भी संधि या अनुबंध दो पक्षों की रज़ामन्दी के बिना पूर्ण नहीं होता :

وَأَخَذْنَ مِنكُم مِّيثَـٰقًا غَلِيظًا ﴿٢١﴾

व अख़ज़्न मिन्कुम् मीसाक़न ग़लीज़ा *(4 : 21)* ,

अर्थात् ,*" और उन्हों ने (यानि तुम्हारी पत्नियों ने) तुम्हारे साथ एक दृढ़ अनुबंध कर रखा है।"*

विवाह का महत्त्व और इसके नैतिक लाभ

समाज की नींव को मज़बूत करने के लिये ज़रूरी है कि हर मर्द और हर औरत विवाहित अवस्था में रहे :

وَأَنكِحُوا الْأَيَامَىٰ مِنكُمْ

व अन्किहुल् अयामा मिन्कुम (24 : 32) ,

अर्थात् ," *और जो तुम में अविवाहित हैं उन के विवाह कर दो।*"

जब बाज़ लोगों के बारे में हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लको यह सूचना मिली कि वे चाहते हैं कि दिन को रोज़ा रखें और रात के इबादत में खड़े रहें और विवाह न करें ,तो आप ने फ़रमाया :

" मैं रोज़ा रखता भी हूँ और नहीं भी रखता ,और मैं रात को इबादत हेतु खड़ा भी रहता हूँ और सोता भी हूँ। अतः जो मेरे आदर्श के सिवा कोई और पद्धति अपनाये गा उस का मुझ से कोई संबंध नहीं। " (***बुख़ारी*** 67 : 1)

एक और अवसर पर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने फ़रमाया :

" हे नवजवानों के गरोह ! जो व्यक्ति तुम में से यह सामर्थ्य रखता है कि अपनी पत्नी को पाल सके उसे चाहिये कि निकाह करे। यह इस बात का उत्तम उपाय है कि इन्सान की निगाहें नीची रहें ,और उसका शील सुरक्षित रहे। और जिस में यह सामर्थ्य नहीं उसे चाहिये कि रोज़ा रखे इस से उस की कामवासना दबी रहे गी।" (***बुख़ारी*** 67 : 1)

एक और *हदीस* में है कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने फ़रमाया :

" जो व्यक्ति विवाह करता है वह अपना आधा धर्म सुरक्षित कर लेता है।" (***मिश्कात*** 13 : 1)

इस से ज्ञात हुआ कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी दृष्टि में विवाह मनुष्य की नैतिक पूर्ति का साधन भी है ,और इस में रूहानी लाभ भी हैं। पति–पत्नी का प्रेम एक ऐसा प्रेम है ,जो किसी क्षणिक भावावेश का परिणाम नहीं ,बल्कि इस की बुनियाद जीवन भर के स्थाई पवित्र बंधन पर है। इसी से वह पावन प्रेम जन्म लेता है जो माँ–बाप अपने बच्चों से करते हैं। मानो विवाह द्वारा इन्सान के दिल की भूमि में प्रेम का बीज बोया जातौ है ,जिस से मानव–प्रेम का अनकुर फूटता है। जो बढ़ते बढ़ते समस्त मानव जाति से प्रेम का निस्स्वार्थ नाता जोड़ लेता है। इस तरह घर यानि एक पति–पत्नी का प्रेमपूर्वक संबंध इन्सान के भीतर प्रेम और सेवा भाव जैसे

उच्च गुण पैदा करने का साधन बन जाता है। इसी पाठशाला में इन्सान यह सबक़ सीखना शुरू कर देता है कि किस तरह दूसरों की खातिर दुख और तकलीफ़ उठाने से इन्सान के दिल में संतोष की सुखद भावना का उदय होता है।

विवाह द्वारा इन्सान
का आध्यात्मिक विकास

बाज़ लोगों का यह विचार है कि विवाह मनुष्य की आध्यात्मिक उन्नति में एक ज़बरदस्त बाधा है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल०ने इस के विपरीत शिक्षा दी आप ने फ़रमाया कि विवाह वास्तव में इन्सान की आध्यात्मिक उन्नति और इसकी पूर्ति का प्रबल साधन है।

وَمِنْ ءَايَـٰتِهِۦٓ أَنْ خَلَقَ لَكُم مِّنْ أَنفُسِكُمْ أَزْوَٰجًا لِّتَسْكُنُوٓا۟ إِلَيْهَا وَجَعَلَ
بَيْنَكُم مَّوَدَّةً وَرَحْمَةً

व मिन् आयातिही अन् ख़लक़ लकुम् मिन् अन्फ़ुसिकुम् अज़्वाजन लितस्कुनू इलैहा व जअल बैनकुम मवद्दतंव व रह्मतन

अर्थात् ," *और उस के निशानों में से एक यह है कि उस ने तुम्हारे लिये तुम्हारी ही जाति में से जीवन साथी पैदा किये ,ताकि तुम उन से मनोशांति हासिल कर सको, और उस ने तुम्हारे बीच प्रेम और अनुकंपा रख दी।*"(30 : 21)

هُنَّ لِبَاسٌ لَّكُمْ وَأَنتُمْ لِبَاسٌ لَّهُنَّ

हुन्न लिबासुल् लकुम् व अन्तुम लिबासुल् लहुन्न (2 : 187) ,
अर्थात् ," *औरतें तुम्हारे लिये लिबास हैं और तुम उन के लिये लिबास हो।*"

विवाह की सार्वजनिक घोषणा

हम ऊपर बता आये हैं कि इस्लाम में विवाह एक पवित्र अनुबंध है ,क़ुर्आन शरीफ़ ने भी इसे अनुबंध ही कहा है। किन्तु जो अधिकार और कर्तव्य इस अनुबंध के साथ जुड़े हुए हैं ,उन से इस को एक विशेष महत्त्व मल जाता है। यह कर्तव्य और अधिकार दंपति और सन्तान संबंधित हैं। सब से पहले यह ज़रूरी था कि दोनों पक्षों के विवाह संबंधी अनुमोदन की एक

सार्वजनिक सभा में घोषणा कर दी जाये।

*" **निकाह (विवाह) की घोषणा करो और निकाह मस्जिदों में करो (यानि जहाँ लोगों की सभा हो) और इस के लिय दफ (एक वाद्य का नाम) बजाओ ताकि सब लोगों को पता लग जाये।**"* (*मिश्कात* 13 :4)

स्त्री और पुरुष का वह संबंध जो दूसरों से गुप्त रखा जाये ,इस्लाम की दृष्टि में व्यभिचार है। विवाह की घोषणा के अतिरिक्त यह भी ज़रूरी है कि इस बंधन को धार्मिक पवित्रता प्रदान की जाये। इस के लिये अनिवार्य है कि इस के आरंभ में एक خطبة "*ख़ुतबा*" (=*प्रवचन*) हो, जिस में क़ुर्आन शरीफ़ के कुछ हिस्से पढ़े जायें और दोनों पक्षों को उन के अधिकार और कर्तव्य बताये जायें। और यह भी बताया जाये कि इस संबंध द्वारा सुख और शांति का उदय उसी वक़्त होगा जब वर–वधू एक दूसरे के प्रति अपनी ज़िम्मेदारियाँ भली भांति निभाएं गे।

दम्पति के अधिकार
और ज़िम्मेदारियाँ

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने साफ बता दिया कि जिस तरह मर्द के बाज़ अधिकार औरत पर हैं ठीक उसी प्रकार औरत के अधिकार मर्द पर हैं :

وَلَهُنَّ مِثْلُ ٱلَّذِى عَلَيْهِنَّ بِٱلْمَعْرُوفِ

व लहुन्न मिस्लुल् लज़ी अलैहिन्न बिल्मअरूफ़ि (2 : 228) ,
अर्थात् ," *और न्यायत: स्त्रियों के वैसे ही अधिकार हैं जैसे पुरुषों के अधिकार उन पर हैं।*"

औरत को घर में वही स्थान दिया गया जो एक राजा या शासक को प्राप्त होता है। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने फ़रमाया :

*" **तुम में से हर कोई हाकिम है ,और प्रत्येक से उनके बारे में पूछा जाये गा जो उसके अधीन रखे गये। राजा भी एक हाकिम है और मर्द भी अपने घर के लोगों पर हाकिम है और औरत अपने पति के घर और उस की सन्तान पर हाकिम है।**"*

(*बुख़ारी* 67 : 91)

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने एक *सुहाबी* (*=साथी*) को फ़रमाया :

" तेरे शरीर का तुझ पर अधिकार है , और तेरी आत्मा का तुझ पर अधिकार है , और तेरी पत्नी का तुझ पर अधिकार है।"

(***बुख़ारी*** 67 : 90)

पति के लिये ज़रूरी था कि अपनी आय के मुताबिक अपनी पत्नी के खर्चे ,कपड़ेलत्ते और उस के रहनेसहने की व्यवस्था करे।

ٱلرِّجَالُ قَوَّٰمُونَ عَلَى ٱلنِّسَآءِ

अर्रिजालु क़ौवामून अलन् निसाअि *(4 : 34) ,*

अर्थात् ,*"मर्द औरतों के ज़िम्मेदार हैं।"*

لِيُنفِقْ ذُو سَعَةٍ مِّن سَعَتِهِۦ ۖ وَمَن قُدِرَ عَلَيْهِ رِزْقُهُۥ

فَلْيُنفِقْ مِمَّآ ءَاتَىٰهُ ٱللَّهُ

लियुन्फ़िक् ज़ूसअतिम् मिन् सअतिही व मन् क़ुदिर अलैहि रिज़्क़ुहू फ़ल्युन्फ़िक् मिम्मा आताहुल्लाहु (65 : 7) ,

अर्थात् ,*"जिस के पास बहुत माल है वह अपनी सम्पन्नता के अनुसार व्यय करे , और जिस की रोज़ी उस पर तंग है वह उस में से व्यय करे जो अल्लाह ने उसे दिया है।"*

أَسْكِنُوهُنَّ مِنْ حَيْثُ سَكَنتُم مِّن وُجْدِكُمْ

अस्किनूहुन्न मिन् हैसु सकन्तुम् मिन वुज्दिकुम (65 : 6) ,

अर्थात् ,*"उन को मकान दो जहाँ तुम रहते हो अपनी हैसियत के अनुसार।"*

"पत्नी का कर्तव्य यह है कि वह अपने पति के साथ रहे ,पति के माल को बरबादी और नुकसान से बचाये ,और कोई ऐसा काम न करे जिस से घर की शांति भंग होती हो। उसे यह आदेश भी दिया गया कि वह किसी ऐसे व्यक्ति को घर में न आने दे जिस का आना पति को नापसन्द हो ,और ऐसा खर्चा न करे जो पति नहीं चाहता।" (***बुख़ारी*** 67 : 87)

पत्नी के साथ अच्छा व्यवहार

इस बात पर बहुत ज़ोर दिया गया कि औरत के साथ अच्छा और प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए :

وَعَاشِرُوهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ

व आशिरू हुन्न बिल्–मअरूफ़ (4 : 19) ,

अर्थात् " *और इन के साथ अच्छा और प्रेमपूर्वक व्यवहार करो।"*

यहाँतक भी आदेश है कि यदि औरत अप्रिय भी हो तब भी उसके साथ नरम और दयापूर्वक व्यवहार ही करो :

وَلَا تَعْضُلُوهُنَّ لِتَذْهَبُوا بِبَعْضِ مَآ ءَاتَيْتُمُوهُنَّ إِلَّآ أَن يَأْتِينَ
بِفَٰحِشَةٍ مُّبَيِّنَةٍ وَعَاشِرُوهُنَّ بِالْمَعْرُوفِ فَإِن كَرِهْتُمُوهُنَّ فَعَسَىٰٓ
أَن تَكْرَهُوا شَيْـًٔا وَيَجْعَلَ ٱللَّهُ فِيهِ خَيْرًا كَثِيرًا

व ला तअज़ुलूहुन्न लितज़्हबू बिबअज़ि मा आतैतुमूहुन्न इल्ला अन् यातीन बिफ़ाहिशतिंम् मुबैयिनतिन व आशिरूहुन्न बिल्मअरूफ़ि फ़इन् करिह्तुमूहुनन फ़असा अन् तक्रहू शैअंव् व यज्अलल्लाहु फ़ीहि ख़ैरन कसीरा (4 : 19) ,

अर्थात् ,*"और उन को इस लिये न रोक रखो कि उस (धन) का कुछ भाग ले लो ,जो तुम ने उन्हें दिया है। सिवाय इस के कि वे खुली अश्लीलता का अपराध कर बैठें। और उन के साथ अनुकूल मेलजोल रखो। फिर यदि वे तुम्हें अप्रिय हों तो हो सकता है कि तुम जिस चीज़ को ना–पसन्द करो ,उसी में अल्लाह ने (तुम्हारी) बहुत सी भलाई रख दी हो।"*

पत्नी के साथ उत्तम व्यवहार को शिष्टाचार का आधार ठहराया गया :

'तुम में सर्वोत्तम वही है जो अपनी पत्नी के साथ उत्तम व्यवहार करता है।" (***मिश्कात*** 13 : 11)

" औरतों के प्रति अच्छा व्यवहार करने में मेरा उपदेश स्वीकार करो।" (***बुख़ारी*** 67 : 81)

विदाई हज्ज के परम शुभ अवसर पर हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने अनुयायिओं को बहुत सारे उपदेश दिये ,जिन में आप ने फ़रमाया :

" ***हे लोगो ! तुम्हारे कुछ अधिकार तुम्हारी पत्नियों पर हैं और वैसे ही उनके कुछ अधिकार तुम पर हैं। तुम्हारी पत्नियां तुम्हारे हाथों में अल्लाह की अमानतें हैं ,सो उन के साथ अत्यन्त करुणामय व्यवहार करो।*** " (***मुस्लिम*** 15 : 19)

तलाक़

विवाह को शुभ और पावन अनुबंध करार देने के बावजूद इन्सानी आवश्यकताओं के निमित ***तलाक़*** का दरवाज़ा खुला रखा गया। लेकिन यह बता दिया गया कि ***तलाक़*** का प्रयोग केवल अन्तिम उपाय के तौर अपवादात्मक परिस्थितियों में ही करना चाहिये। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने ***तलाक़*** को वैध तो बताया लेकिन उसे पसन्द नहीं किया :

" ***वैध चीज़ों में से अल्लाह के निकट सब से अप्रिय बात तलाक़ है।*** " (***अबूदाऊद*** 13 : 3)

क़ुर्आन शरीफ में भी तलाक़ की अनुमति देते वक्त उस से यथासंभव रुकने की प्रेरणा दी गई है :

فَإِن كَرِهْتُمُوهُنَّ فَعَسَىٰٓ أَن تَكْرَهُوا۟ شَيْـًٔا
وَيَجْعَلَ ٱللَّهُ فِيهِ خَيْرًا كَثِيرًا

फ़इन करिहतुमूहुन्न फ़असा अन् तक्रहू शैअंव् व यज्अलल् लाहु फ़ीहि ख़ैरन कसीरन (4 : 19) ,

अर्थात् ,*"यदि तुम उन को (यानि अपनी पत्नियों को) नापसन्द करो , तो हो सकता है कि तुम एक चीज़ को नापसन्द करो और अल्लाह ने उसी में बहुत भलाई रख दी हो।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपने अनुयायिओं के मनमस्तिष्क में यह बात भलीभांति अंकित कर दी ,कि विवाहित जीवन की कठिनाइयों का

मुकाबला उतना ही ज़रूरी है जितना वैवाहिक सुखों का उपभोग। और जब तक संभव हो तलाक को अन्तिम उपाय के रूप में ही प्रयुक्त करना चाहिये ,यानि जब वैवाहिक कठिनाइयों का कोई और इलाज नज़र न आये। तलाक़ संबंधी विधान का ब्योरा यों है :

وَإِنْ خِفْتُمْ شِقَاقَ بَيْنِهِمَا فَابْعَثُوا حَكَمًا مِّنْ أَهْلِهِۦ
وَحَكَمًا مِّنْ أَهْلِهَآ إِن يُرِيدَآ إِصْلَٰحًا يُوَفِّقِ ٱللَّهُ بَيْنَهُمَآ

व इन् ख़िफ़तुम् शिक़ाक़ बैनिहिमा फ़ब्असू हकमम् मिन् अहलिही व हकमम् मिन् अहलिहा इंय्युरीदा इस्लाहन युवफ़्-फ़िक़िल् लाहु बैनहुमा *(4 : 35)* ,

अर्थात् ,*"यदि तुम को दोनों (पति–पत्नी) के बीच विच्छेद का भय हो, तो एक फ़ैसला करने वाला उस (परुष) के नातेदारों में से और एक फ़ैसला करने वाला उस (स्त्री) के नातेदारों में से नियुक्त करो। यदि वो दोनों सुधार चाहें गे तो अल्लाह उनके बीच सौहार्द उत्पन्न कर दे गा।"*

दूसरी सूरत का उल्लेख आगे चल कर आता है :

وَإِن يَتَفَرَّقَا يُغْنِ ٱللَّهُ كُلًّا مِّن سَعَتِهِۦ ۚ وَكَانَ ٱللَّهُ وَٰسِعًا حَكِيمًا ﴿١٣٠﴾

व इन्य् यतफ़र्रक़ा युग़्निल्लाहु कुल्लन मिन् सअतिही व कानल्लाहु वासिअन हकीमा (4 : 130) ,

अर्थात् ," *और अगर वे दोनों अलग हो जायें तो अल्लाह दोनों को अपनी प्रवर्धनशीलता से आवश्यकतारहित कर दे गा।"*

तलाक़ की अनुमति के साथ ही यह भी बता दिया कि तलाक़ की विधि क्या होगी। अदालतों में ऐसे मुकदमे जाने से जो अश्लील बातें फैलती हैं ,उन को रोकने के लिये फ़रमाया कि एक एक निर्णायक–पंच दोनों पक्षों में से नियुक्त करो। यहाँ شقاق ***"शिक़ाक़"*** (=*दुश्मनी , विच्छेद*) को तलाक़ की वजह करार दिया गया है। पति–पत्नी में साधारण मतभेद होते ही रहते हैं ,जैसे अन्य इन्सानों में होते रहते हैं जो इकट्ठे रहें। किन्तु यह मतभेद तलाक़ की वजह नहीं हो सकते। तलाक की वजह

شقاق *"शिकाक"* बताई है। अर्थात् उस दशा का उत्पन्न हो जाना ,जब पति–पत्नी के मतभेद उस सीमा तक पहुंच जाएं कि वो वैवाहिक जीवन को जारी न रख पाएं। तलाक के मामले में मर्द और औरत दोनों को एक स्तर पर रखा गया है। तलाक़ के सभी कारणों को شقاق *"शिक़ाक़"* (=*दुश्मनी , विच्छेद*) के अन्तर्गत जमा कर दिया है। यानि वह दशा जिस के अन्तर्गत दोनों में से कोई एक अपने जीवन साथी के साथ विवाहित जीवन जारी नहीं रख सकता। कोई दोष पति में हो या पत्नी में ,यह उस वक्त तक तलाक का कारण नहीं बन सकता जब तक दूसरा पक्ष इस अनुबंध से मुक्त होना न चाहे। तलाक का विधान यह भी नहीं कि पति जब चाहे पत्नी को तलाक देकर निकाल दे ,और न चाहे तो आजीवन दुःख देता रहे। बल्कि दोनों को केवल इतना अधिकार है कि एक निर्णायक–पंच मर्द की ओर से और एक निर्णायक–पंच औरत की ओर से हो ,ये दोनों पंच मतभेद दूर कर सुलह–सफ़ाई की कोशिश करें। पंचों को पहला हुक्म यही है कि यदि वे सचे मन से सुलाह–सफाई की कोशिश करें गे ,तो अधिकांश अवसरों पर पुनर्मेल की सूरत पैदा हो जाए गी। परन्तु यदि मेल की सूरत पैदा न हो तो पंचों का यह काम है कि वे तलाक करा दें।

औरत के तलाक लेने का अधिकार हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]की सही ***हदीस*** से साबित है। एक शादीशुदा औरत जमीला आप की सेवा में उपस्थित हुई कि उसे उस के पति साबित इबन क़ैस से तलाक दिलाया जाये। और कहा : हे अल्लाह के पैग़म्बर[सल्ल.] ! मैं साबित इबन क़ैस में कोई नैतिक अथवा धार्मिक दोष नहीं देखती ,लेकिन मैं (स्वभावतः) उस के साथ जीवन नहीं गुज़ार सकती। आप ने फ़रमाया : तो क्या तू तलाक की सूरत में वह फलवाटिका वापस करने को तैयार है जो उस ने तुझ को ***"महर"*** के तौर दी है ? वह बोली : जी हाँ ! तब आप ने साबित इबन क़ैस को आदेश दिया कि वाटिका वापस ले लो और तलाक दे दो (***बुख़ारी*** 68 : 12)। इस सूरत में चूंकि मर्द का कोई दोष नहीं था इस लिये *"महर"* वापस दिलाया गया। ***हदीस*** में वर्णित इस घटना से यह बात सिद्ध होती है कि औरत को भी यह अधिकार प्राप्त है कि वह तलाक माँग सके ,चाहे उस के पति में कोई दोष हो या न हो।

बहुपत्नीत्व

विवाह का साधारण नियम यही है कि एक मर्द और एक औरत का विवाह हो। लेकिन बाज़ विशेष परिस्थितियां ऐसी हैं ,जिन को अपवाद कहा जा सकता है ,उन में मर्द के लिये एक से अधिक विवाह की अनुमति अनिवार्य हो जाती है। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने भी ऐसा ही किया। किन्तु आप ने एक मर्द के लिये पत्नयों की अधिकतम सीमा चार रखी। अलबत्ता इस्लाम में औरत के लिये एक से अधिक पतियों का कोई विधान नहीं। यह बात मानव–प्रकृति के बिल्कुल अनुकूल है। विवाह का उद्देश्य जहाँ एक ओर स्त्री–पुरुष को जीवन साथी बना ,उन की ज़िन्दगी में सुखशांति का संचार कर देना है ,तो दूसरा लक्ष्य ,जो इतना ही महत्त्वपूर्ण है ,मानव जाति की संतति को आगे बढ़ाना है।

فَاطِرُ ٱلسَّمَٰوَٰتِ وَٱلْأَرْضِ ۚ جَعَلَ لَكُم مِّنْ أَنفُسِكُمْ أَزْوَٰجًا وَمِنَ
ٱلْأَنْعَٰمِ أَزْوَٰجًا ۖ يَذْرَؤُكُمْ فِيهِ ۚ

फ़ातिरुस्समावाति वल्अर्ज़ि जअल लकुम् मिन् अन्फ़ुसिकुम् अज़्वाजंव् व मिनल् अन्आमि अज़्वाजन यज़्रउकुम फ़ीहि

अर्थात् ,*" आकाशों और धरती का सृजनहार ! उसी ने तुम्हारे लिये तुम्हीं में से जोड़े पैदा किये ,और पशुओं के भी जोड़े बनाये ,वह इस तरह से तुम्हें फैलाता रहता है।"* (42 : 11)

وَٱللَّهُ جَعَلَ لَكُم مِّنْ أَنفُسِكُمْ أَزْوَٰجًا وَجَعَلَ لَكُم مِّنْ أَزْوَٰجِكُم بَنِينَ

वल्लाहु जअल लकुम् मिन् अन्फ़ुसिकुम् अज़्वाजंव् व जअल लकुम् मिन् अज़्वाजिकुम् बनीन *(16 : 72) ,*

अर्थात् ,*" और अल्लाह ने तुम्हारे लिये तुम्हीं में से पत्नियाँ बनाईं ,और तुम्हारे लिये तुम्हारी पत्नियों से बेटे और बेटियाँ पैदा कीं।"*

अब प्रजनन या संतति के इस क्रम में प्रकृति ने जो विधान बनाया है वह यही है कि एक मर्द अनेक स्त्रियों से सन्तान उत्पन्न कर सकता

है ,किन्तु एक औरत एक समय में केवल एक ही मर्द से सन्तान उत्पन्न कर सकती है। अतः एक औरत का एक से अधिक पुरुषों से वैवाहिक संबंध अप्राकृतिक है। इस के विपरीत एक मर्द का एक से अधिक औरतों से वैवाहिक संबंध सर्वथा प्राकृतिक है अप्राकृतिक नहीं। इस लिये जहाँ एक मर्द के लिये बाज़ विशेष परिस्थितियों में एक से ज़्यादा पत्नियाँ होना प्राकृति के अनुकूल है वहीं एक स्त्री के लिये एक से अधिक पति हाना प्रकृति के प्रतिकूल है। इसी लिये अपवाद परिस्थितियों में भी इस की अनुमति नहीं दी जा सकती। बहुपत्नीत्व की अनुमति क़ुर्आन शरीफ़ ने इन शब्दों में दी है :

وَإِنْ خِفْتُمْ أَلَّا تُقْسِطُوا فِي الْيَتَامَىٰ فَانكِحُوا مَا طَابَ لَكُم
مِّنَ النِّسَاءِ مَثْنَىٰ وَثُلَاثَ وَرُبَاعَ

व इन् ख़िफ़तुम अल्ला तुक्-सितू फ़िल्यतामा फ़न्किहू मताब लकुम् मिनन्निसाअि मस्ना व सुलास व रुबाअ *(4 : 3) ,*
अर्थात् , *"और यदि तुम्हें भय हो कि तुम अनाथों के साथ न्याय नहीं कर पाओ गे , तो ऐसी औरतों से दो ,तीन और चार की हद तक निकाह कर लो — जो तुम्हें पसन्द हों।"*

सब से पहली बात यह कि यहाँ बहुपत्नीत्व को नियम के तौर नहीं बल्कि अपवाद के तौर पर प्रतिपादित किया गया है। यह एक अनुमति है आदेश नहीं। फिर इस अनुमति का यह पद — *"कि यदि तुम अनाथों के साथ न्याय नहीं कर पाओ"* तो एक से अधिक पत्नियाँ रख लो। ज़ाहिर है कि अनाथों के साथ न्याय न कर पाना और एक से अधिक पत्नियों से विवाह करना — इन दोनों के बीच कोई गहरा संबंध है। इस संबंध को क़ुर्आन शरीफ़ ने आगे चलकर स्वयं स्पष्ट कर दिया है :

وَمَا يُتْلَىٰ عَلَيْكُمْ فِي الْكِتَابِ فِي يَتَامَى النِّسَاءِ اللَّاتِي لَا تُؤْتُونَهُنَّ
مَا كُتِبَ لَهُنَّ وَتَرْغَبُونَ أَن تَنكِحُوهُنَّ وَالْمُسْتَضْعَفِينَ مِنَ الْوِلْدَانِ

व मा युत्ला अलैकुम् फ़िल्किताबि फ़ी यतामन्निसाअिल् लती ला तुअतूनहुन्न मा कुतिब लहुन्न व तर्ग़बून अन् तन्किहूहुन्न

वल्मुस्तज्अफ़ीन मिनल् विल्दानि (4 : 127) ,

अर्थात् , " और वह जो तुम को इस किताब में से पढ़ कर सुनाया जाता है , उन औरतों और अनाथ बच्चों के बारे में है , जिन को तुम वह नहीं देते जिस का विधान है — और नहीं चाहते हो कि उन से विवाह कर लो।"

इन दोनों स्थलों को एक साथ पढ़ने से साफ ज्ञात होता है कि जो विधवाएं अनाथ बच्चों की माताएं होती थीं ,एक ओर इन औरतों और इन के अनाथ बच्चों को दाय में कोई हिस्सा न मिलता था ,और दूसरी ओर ऐसी विधवा औरतों से ,उन के बच्चों के कारण ,लोग विवाह करना पसन्द नहीं करते थे। अनाथों और विधवाओं के इन कष्टों को दूर करने के लिये हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने एक और सुधार की नींव रखी। प्रथमतः विधवाओं और अनाथ बच्चों को दाय में भागीदार बनाया ,ताकि इन का व्यक्तित्व दूसरों पर बोझ न रहे। और दूसरी ओर ऐसी औरतों से विवाह की प्रेरणा दी। यहाँ तक कि ऐसी परिस्थितियों में एक से अधिक औरतों से विवाह को भी वैध करार दिया।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी शिक्षा में इस बात पर बहुत अधिक बल दिया गया है कि लोग अविवाहित जीवन की अपेक्षा विवाहित जीवन व्यतीत करें। घर अर्थात् दंपति के साथ को मानवीय सुख शांति का स्रोत करार दिया गया है। यही वह मंगलमय स्थल है जहाँ मनुष्य को न सिर्फ हर प्रकार का संतोष और आनन्द प्राप्त होता है ,बल्कि यहीं से मानवीय उच्च नैतिकता का भी उदय होता है। विवाह से मनुष्य मनुष्य के प्रति प्रेम और सेवाभाव का सबक़ सीखता है। यह भी एक तथ्य है कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लअपने जीवन के आरंभकाल से ही विधवाओं और अनाथों का विशेष ध्यान रखते थे। इस लिये आप ने इस बात पर ज़ोर दिया कि एक विधवा औरत को यदि आधा घर भी मिले तो वह उस दशा से उत्तम है कि उस का कोई घर न हो।

उपर्युक्त आयों का अवतरण उस समय हुआ जब मुसलमान अपने दुश्मनों के साथ निरंतर युद्ध जारी रखने पर विवश थे। क्योंकि दुश्मन इस बात पर तुला हुआ था कि मुसलमानों को तलवार से विनष्ट कर दे। युद्धों के कारण दिन पर दिन मर्दों की संख्या घटती जा रही थी ,क्योंकि वह

रणभूमि में वीरगति को प्राप्त होते जाते थे। उधर अनाथों और विधवाओं की संख्या में भी दिन पर दिन वृद्धि होती चली जाती थी। इस विकट परिस्थिति में अल्लाह की *वह्य* ने हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल.का मार्गदर्शन किया। आप को समझाया गया कि अनाथ बच्चों के अनुकूल पालनपोषण और विधवाओं की यथोचित एंव अधिकाधिक देखभाल के लिये घर उपलब्ध कराना ही एक मात्र उपाय है। और यह उसी सूरत में संभव हो सकता था कि मर्दों को एक से अधिक पत्नियां रखने की अनुमति दी जाती। कदाचित इस में इस बात को भी दृष्टिगत रखा गया था कि मर्दों की संख्या घटने से कहीं कालांतर में मुसलमान अल्पसंख्यक समाज न बन जायें। बहुविवाह से इस आशंका का निवारण हो सकता था।

किन्तु मुसलामनों की संख्या से ज़्यादा हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल.को उनके आचार विचार की चिन्ता थी। परमात्मा ने इन्सान के अन्दर कामवासना की वृत्ति रख दी है ,मनुष्य के इस प्राकृतिक स्वभाव को मिटाया नहीं जा सकता। यदि अतिरिक्त औरतों के लिये यह विधान प्रतिपादित न किया जाता कि विवाहित पुरुष उन से शादी कर लें ,तो परिणाम वही होता जो आज कल के सुसभ्य देशों में नज़र आता है अर्थात् व्यभिचार की अधिकता। अफ़सोस ! कि इन लोगों को अकारण बहुपत्नीत्व से चिड़ हो गई है ,वरना आज अमेरीका और यूरोप के देशों की यह हालत है कि वहाँ औरतों की संख्या मर्दों से लगभग डेढ गुना ज़्यादा है। ये लोग बहुपत्नीत्व की अनुमति तो देते नहीं लेकिन व्यभिचार की बहुतात पर संतुष्ट हैं। ये लोग औरतों को अपनी शील का सौदा करने पर मजबूर करते हैं। लेकिन जो सही और कारगर इलाज है उस की ओर ध्यान नहीं देते। हज़रत पैग़म्बरश्री सल्ल.के ज़िम्मा चूंकि सर्वसंसार का सुधार था ,इस लिये आप ने परामात्मा के निदेशानुसार यह अनुमति दी ,कि एक पुरुष एक से अधिक औरतों से विवाह कर ले ,ताकि कौम अथवा राष्ट्र में व्यभिचार उत्पन्न हो कर उसे बरबाद न कर दे।

कुछ महत्त्वपूर्ण उद्धरण

♦ "Mussalmans were accused of indifference to women.There never was a grosser libel uttered.The law of Islam gave equal rights to women." (***'Mahatama Gandhi's Ideas'***,C.F. Andrews, Lond.,1949,p.324)

अर्थात् ,"मुसलमानों पर आरोप है कि वो नारीजगत् के प्रति उदासीन नीति प्रकट करते हैं। इस से बढ़ कर झूठा और अपमानजनक आरोप और क्या हो सकता है ? क्योंकि इस्लाम ने औरतों को मर्दों के बराबर अधिकार दिये हैं।"

♦ **"Woman is more protected by Islam than by the faith which preaches monogamy.In Al-Qur'an the law about woman is more liberal.It is only in the last twenty years that Christian England has recognised the right of woman to property,while Islam has allowed this right from all times ......It is a slander to say that Islam preaches that women have no souls."** (***'Life and Teachings of Muhammad'***, Annie Besant,1932, p.25-26)

अर्थात् ,"इस्लाम में औरत के अधिकार उन धर्मों की अपेक्षा ज़्यादा सुरक्षित हैं जो एकपत्नीत्व का प्रचार करते हैं। क़ुर्आन शरीफ़ में नारी संबंधी नियम बडे ही उदार हैं। ईसाइयों के इंगलेंड ने केवल गत 25 साल से औरतों को यह हक़ दिया कि वो भी संपति की मालिक हो सकती हैं ,जबकि इस्लाम औरतों को यह अधिकार हमेशा से देता आया है ...... यह कहना सरासर मिथ्यापवाद है कि इस्लाम की शिक्षानुसार औरतों में रूह (soul) नाम की कोई चीज़ नहीं होती।"

♦ **"That his (i.e. Prophet Muhammad's) reforms enhanced the status of woman in general is universally admitted."**

(***'Mohammedanism'***,H.A.R.Gibb, Lond., 1953,p,33)

अर्थात् ,"यह तथ्य कि (हज़रत मुहम्मद^सल्ल^) के सुधारों ने औरत के स्तर और दर्जे को अधिकाधिक प्रतिष्ठित किया अब एक सर्वमान्य वास्तविकता है।"

(अनुवादक)

अध्याय 14

हकूमत या प्रशासन

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल के सन्देश की व्यापकता

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल का सन्देश अनेक प्रकार से एक विश्वव्यापी सन्देश था। सब से पहले तो आप का दावा यह था कि आप दुनिया की सभी जातियों, सभी राष्ट्रों और सभी देशों की ओर भेजे गये हैं। यों भी कह सकते हैं कि यह सहज परिणाम था उस सिद्धांत का जो आप ने परमेश्वर के एकत्व (अ.,'*तौहीद*') के साथ ही प्रतिपादित किया, वह यह कि संपूर्ण मानवसमाज एक ही जाति, एक ही समाज है। कुर्आन शरीफ़ में परमात्मा स्वयं फ़रमाता है :

قُلْ يَـٰٓأَيُّهَا ٱلنَّاسُ إِنِّى رَسُولُ ٱللَّهِ إِلَيْكُمْ جَمِيعًا

कुल् याअय्युहन्नासु इन्नी रसूलुल्लाहि इलैकुम् जमीअन

अर्थात्, *"(हे मुहम्मद !) कह दे : हे संसार वासियो ! मैं तुम सब की ओर अल्लाह का "**रसूल**" यानि पैग़म्बर हूँ।" (7 : 157)*

وَمَآ أَرْسَلْنَـٰكَ إِلَّا كَآفَّةً لِّلنَّاسِ بَشِيرًا وَنَذِيرًا وَلَـٰكِنَّ أَكْثَرَ ٱلنَّاسِ لَا يَعْلَمُونَ ﴿٢٨﴾

व मा अर्सलनाक इल्ला काफ़तन लिन्नासि बशीरंव् व नज़ीरंव् व लाकिन्न अक्सरन्नासि ला यअलमून *(34 : 28)*,

अर्थात् ," *और हम ने तुझे संपूर्ण मानव जाति की ओर शुभसूचना देने वाला तथा सचेतकरने वाला बना कर भेजा है ,लेकिन अधिकतर लोग नहीं जानते।*"

وَمَآ أَرْسَلْنَـٰكَ إِلَّا رَحْمَةً لِّلْعَـٰلَمِينَ ﴿١٠٧﴾

व मा अर्सल्नाक इल्ला रह्मतन् लिल्आलमीन (21 : 107),
अर्थात् ," *और (हे मुहम्मद !) हम ने तुझे समस्त राष्ट्रों के लिये दयालुता बना कर भेजा है।*"

इन दिव्य घोषणाओं का सहज और अनिवार्य परिणाम यह भी था कि अब संपूर्ण मानवसमाज के कल्यान और उत्थान के लिये आप ही एकमात्र पैग़म्बर हैं। आपकी पैग़म्बरी का कार्यकाल क़यामत के दिन तक फैला हुआ है। इसी लिये कुर्आन शरीफ़ में यह परम शुभ घोषणा भी कर दी गई ,कि अब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰के बाद अल्लाह की ओर से और कोई पैग़म्बर या अवतार प्रकट होने वाला नहीं।

ٱلْيَوْمَ أَكْمَلْتُ لَكُمْ دِينَكُمْ وَأَتْمَمْتُ عَلَيْكُمْ
نِعْمَتِى وَرَضِيتُ لَكُمُ ٱلْإِسْلَـٰمَ دِينًا

अल्यौम अक्मल्तु लकुम् दीनकुम् व अत्मम्तु अलैकुम् निअमती व रज़ीतु लकुमुल् इस्लाम दीना *(5 : 3) ,*
अर्थात् ," *आज मैं ने तुम्हारे लिये तुम्हारा धर्म संपूर्ण कर दिया ,और तुम पर अपना अनुग्रह पूर्ण कर दिया ,और तुम्हारे लिये इस्लाम को धर्म के रूप में पसन्द किया।*"

مَّا كَانَ مُحَمَّدٌ أَبَآ أَحَدٍ مِّن رِّجَالِكُمْ وَلَـٰكِن رَّسُولَ ٱللَّهِ وَخَاتَمَ ٱلنَّبِيِّـۧنَ

मा कान मुहम्मदुन अबा अहदिम् मिर्रिजालिकुम वलाकिन रसूलल् लाहि व ख़ातमन्नबीन (33 : 40) ,
अर्थात् ," *मुहम्मद तुम्हारे मर्दों में से किसी का पिता नहीं ,लेकिन वह अल्लाह का रसूल है और नबियों (के क्रम) को समाप्त करने वाला है।*"
हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰के पैग़ाम की दूसरी विशेषता यह थी कि आप ने

इन्सान की समस्त शक्तियों और क्षमताओं के पूर्ण विकास के लिये नियम प्रतिपादित किये। मानवीय जीवन का एक भी पहलु ऐसा नहीं जिसे आप ने पिपासित छोड़ा हो। और न इन्सानी प्रगति की कोई ऐसी शाखा है जिस के विषय में आप ने निदेश न दिये हों। पैग़ाम की व्यापकता ऐसी कि सर्वसंसार को अपनी परिधि में लिए हुए ,समस्त कालों पर परिव्याप्त, उन्नति और विकास की सभी शाखाओं को ध्यान में रखे हुए — यही हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी वह अद्‌भुत विशेषता है जो किसी अन्य पैग़म्बर, अवतार या पथप्रदर्शक में दृष्टिगोचर नहीं होती।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने एक संपूर्ण आदर्श प्रस्तुत किया

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने जीवन के हर क्षेत्र के लिये एक व्यवहारिक आदर्श प्रस्तुत किया। आप ने एक अनाथ बालक के रूप में जन्म लिया ,आप का पालनपोषण आप के चाचाश्री ने किया। जवानी में घोर परिश्रम का जीवन व्यतीत किया ,यहाँतक कि बकरियां भी चराईं। इस के बाद आप व्यापार में जुट गए ,और इसी संबंध में दूसरे देशों का सफ़र किया। आप ने शादी की और सन्तानवान् भी हुए। इस तरह आप ने एक आदर्श पति और एक आदर्श पिता का नमूना प्रस्तुत किया। जवानी में ही आप ने यह आदर्श भी प्रस्तुत किया ,कि एक इन्सान के दिल में सब से पहले अपने पीड़ित भाइयों, गरीबों ,निर्धनों ,असहायों ,अनाथों और विधवाओं के लिये स्थान होना चाहिये। आप ने शिष्टाचार ,सत्यवादिता और शील का सर्वोत्तम नमूना प्रस्तुत किया। जब ***नबी*** के पद पर नियुक्त किये गए तो आप ने हर बुराई और कुप्रथा के समूल उच्चाटन ,और उस के स्थान पर सुकर्मों और सुप्रथाओं की स्थापना का बीड़ा उठाया। आप ने नेकी को उन्नत और स्थापित करने के लिये ऐसे ऐसे सफल उपाय किये ,कि जिस की दूसरी मिसाल संपूर्ण विश्व इतिहास में और कहीं नहीं मिलती। सत्य की स्थापना के लिये आप ने कठोरतम कष्ट उठाये ,किन्तु आप अपने प्रयोजन में अटल रहे। आप को स्वदेश त्याग भी करना पड़ा। मदीना में आप ने विभिन्न जातियों और विभिन्न धर्मावलम्बियों को एकता के सूत्र में पिरो दिया। फिर आपको एक छोटे से गरोह के साथ बहुसंख्यक शत्रु के विरुद्ध युद्ध लड़ना पड़ा। हालांकि इस से पहले आप ने कभी हाथ में तलवार न उठाई थी।

लेकिन आप को सेनापति का कर्तव्य निभाना पड़ा और इस क्षेत्र में भी आप ने एक सफलतम एवं अद्‌भुत नमूना पेश किया। आप एक ओर अपनी सेना को मैदाने जन्ग में दुश्मन के सामने खड़ा करते ,तो दूसरी ओर मस्जिद में भी आप ही उन की नमाज़ के अगुआ और इमाम होते। आप ने नियम भी प्रतिपादित किये ,नियम भी वो जो आज तक जीवित हैं। आप ने न्यायादीश का कार्य भी किया और इस क्षेत्र में भी अपूर्व उपलब्धियां प्राप्त कीं। रातों में आप एकांतवासी तपस्वियों से भी बढ़ कर उपासना और प्रभु–स्मरण करते थे और दूसरी ओर दिन में हर तरह के कामों में कार्यरत रहते थे। यहां तक कि अपनी पत्नियों के घरेलू कामकाज में भी सहायता देते थे। अन्ततः वही असहाय अनाथ जिसे सब लोगों ने छोड़ दिया था, बल्कि विनष्ट कर देने की भरपूर चेष्टा भी की थी ,न सिर्फ इस कौम का बादशाह बना ,बल्कि एक ऐसे राज्य का जन्मदाता भी बना जो आप के देहांत के केवल दस वर्षों के भीतर संसार का विशालतम और अत्यन्त शक्तिशाली राज्य बन गया।

शासक में आध्यात्मिकता का संचार

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰ न सिर्फ एक ऐसे विश्वव्यापी तथा सर्वमुखी धर्म के प्रवर्तक थे ,जो चौदाह सौ वर्ष से नितांत आगे ही आगे बढ़ता चला गया, बल्कि आप एक राज्य के भी जनक थे। इस क्षेत्र में भी आप ने केवल एक राज्य मात्र की नींव नहीं रखी ,बल्कि आप ने प्रशासन संबंधी वो सब नियम भी प्रतिपादित कर दिये जिन के अन्तर्गत एक राज्य सही अर्थ में जनसेवी राज्य बन सकता है। प्रत्येक राज्य के लिये ज़रूरी है कि उसके पास पर्याप्त भौतिक शक्ति भी हो ,जिस से वह अन्याय और अत्याचार को रोक सके और अत्याचारग्रस्तों को उन का हक दिलवा सके। लेकिन आप ने प्रशासन में आध्यात्मिकता को शामिल कर राजनीति के इतिहास में एक नए अध्याय को जोड़ दिया। यह आप की मानवसमाज के प्रति एक और महत्त्वपूर्ण सेवा है। आप के राज्य की नींव प्रजातंत्र पर थी ,किन्तु स्वयं यह प्रजातंत्र प्रभु भय और उसके समक्ष उत्तरदायी होने की भावना पर आधारित था। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰के उस जीवन काले में भी ,जब अभी मुस्लिम राज्य का कोई अस्तित्व ही न था , और आप स्वयं विभिन्न प्रकार की

कठिनाइयों से जूझ रहे थे ,**वह्य** द्वारा मुसलमानों के भावी राज्य का एक चित्रण प्रस्तुत किया गया :

وَٱلَّذِينَ ٱسْتَجَابُوا۟ لِرَبِّهِمْ وَأَقَامُوا۟ ٱلصَّلَوٰةَ وَأَمْرُهُمْ شُورَىٰ بَيْنَهُمْ

وَمِمَّا رَزَقْنَٰهُمْ يُنفِقُونَ ﴿٣٨﴾

वल्लज़ीनस्तजाबू लिरब्बिहिम व अक़ामुस् सलात व अम्रुहुम शूरा बैनहुम व मिम्मा रज़क्नाहुम युन्फ़िक़ून *(42 : 38) ,*
अर्थात् , *"और जो लोग अपने रब की आज्ञाओं का पालन करते हैं ,और नमाज़ को क़ायम करते हैं ,उनका प्रशासन परस्पर विचारविमर्श पर आधारित होता है ,और वे उस में से व्यय करते हैं जो हम ने उन्हें प्रदान किया है।"*

जिस ***सूरत*** (=*अध्याय*) की यह ***आयत*** है उस का नाम ही شُورىٰ *"**शूरा**"* है यानि *"परस्पर विचारविमर्श"*। तात्पर्य यह कि उस प्रारंभिक काल में ही भावी मुस्लिम राज्य का बुनियादी सिद्धांत बता दिया गया था। इस आयत के चार वाक्यों में से तीन का सीधा संबंध मनुष्य की आध्यात्मिकता से है — *"परमात्मा की आज्ञाओं का पालन"*,*"नमाज़ कायम करना"* और *"जनसेवा करना"*। बीच वाले वाक्य का संबंध प्रशासन से है। जिस से साफ ज्ञात होता है कि प्रशासन को यद्यपि *"परस्पर विचारविमर्श"* पर आधारित बताया गया है तथापि इस की वास्तविक बुनियादें आध्यात्मिकता पर ही आधारित होनी चाहिएं। इसी लिये इस आयत के तुरन्त बाद मुसलमानों को बताया गया कि राज्य की प्राप्ति के बाद उनकी नीति क्या होनी चाहिये :

وَٱلَّذِينَ إِذَآ أَصَابَهُمُ ٱلْبَغْىُ هُمْ يَنتَصِرُونَ ﴿٣٩﴾ وَجَزَٰٓؤُا۟
سَيِّئَةٍ سَيِّئَةٌ مِّثْلُهَا ۖ فَمَنْ عَفَا وَأَصْلَحَ فَأَجْرُهُۥ عَلَى ٱللَّهِ ۚ إِنَّهُۥ لَا
يُحِبُّ ٱلظَّٰلِمِينَ ﴿٤٠﴾ وَلَمَنِ ٱنتَصَرَ بَعْدَ ظُلْمِهِۦ فَأُو۟لَٰٓئِكَ مَا عَلَيْهِم
مِّن سَبِيلٍ ﴿٤١﴾ إِنَّمَا ٱلسَّبِيلُ عَلَى ٱلَّذِينَ يَظْلِمُونَ ٱلنَّاسَ وَيَبْغُونَ
فِى ٱلْأَرْضِ بِغَيْرِ ٱلْحَقِّ ۚ أُو۟لَٰٓئِكَ لَهُمْ عَذَابٌ أَلِيمٌ ﴿٤٢﴾ وَلَمَن صَبَرَ وَغَفَرَ
إِنَّ ذَٰلِكَ لَمِنْ عَزْمِ ٱلْأُمُورِ ﴿٤٣﴾

वल्लज़ीन इज़ा असाबहुमुल् बग़्यु हुम यन्तसिरून व जज़ाउ सय्यिअतिन सय्यिअतुम् मिस्लुहा फ़मन् अफ़ा व अस्लह फ़अज्रुहू अलल्लाहि इन्नहू ला युहिब्बुज़् ज़ालिमीन व लमनिन्तसर बअद ज़ुल्मिही फ़ऊलाअिक मा अलैहिम मिन् सबीलिन् इन्नमस् सबीलु अलल् लज़ीन यज़्लिमूनन् नास व यब्ग़ून फ़िल्अर्ज़ि बग़ैरिल्हक़्क़ि ऊलाअिक लहुम् अज़ाबुन् अलीमुन् व लमन् सबर व ग़फ़र इन्न ज़ालिक लिमन अज़्-मिल्उमूरि *(42 : 39–43) ,*

अर्थात् , "और वे , कि जब उन पर ज़्यादती हो ,तो वे अपनी रक्षा करते हैं। और बुराई का बदला उसके अनुरूप सज़ा है ,फिर जो कोई क्षमा कर दे और सुधार करे तो उस का प्रतिफल अल्लाह के ज़िम्मा है। वह ज़ालिमों से प्रेम नहीं करता ,और जो कोई अपने ऊपर अत्याचार के पश्चात् उस का बदला लेता है तो उन पर कोई दोष नहीं। दोष केवल उन पर है जो लोगों पर अत्याचार करते हैं ,और धरती में अकारण ज़्यादती करते हैं। इन के लिये दुखदायिनी यातना है। और जो कोई धैर्य से काम ले और क्षमा कर दे — तो यह बड़े ही दृढ़संकल्प के कामों में से है।"

ये उच्च कोटि के नियम मुसलमानों को अपनी सुरक्षा हेतु दिये गये। इन नियमों का प्रतिपादन उस समय हुआ जब अभी मुसलमानों को उन के धर्म के कारण विभिन्न प्रकार के दुख और कष्ट दिये जाते थे। ऐसे वक्त में उन्हें यह आदेश देना ,कि उस दुश्मन को भी क्षमा कर देना चाहिये जो तुम्हारे विनाश पर तुला हुआ है ,साफ बताता है इस में भावी मुस्लिम प्रशासन की रूपरेखा है। क्योंकि दुश्मन को क्षमा उसी वक्त किया जा सकता है जब वह मुसलमानों द्वारा परास्त हो। और परास्त दुश्मन से बदला लेने का समय आगया हो। इस प्रकार प्रतिशोध की भावना को प्रथम दिन से ही मुसलमानों के मनमस्तिष्क से निकाला जा रहा था ,और उन्हें समझाया जा रहा था कि निस्संदेह दुश्मन तुम पर अत्याचार कर रहा है ,और यह अत्याचार अभी और भी बढ़ें गे ,लेकिन अन्ततः दुश्मन तुम्हारे सामने परास्त हो गा ,उस वक्त तुम प्रतिशोध का विचार भी मन में न लाना दुश्मन को क्षमा कर देना। मानो प्रशासन की भौतिक शक्ति में आध्यात्मिक शक्ति का संचार किया जा रहा था। और मुसलमानों को बताया जा रहा

था कि सत्ता में आ जाने पर भी तुम्हारे अन्दर तुच्छ भौतिक विचार उत्पन्न न होने पायें ,कि किस तरह शत्रु को कुचल दें और दण्डित करें ,बल्कि शत्रु को क्षमा कर देना ही तुम्हारा लक्ष्य हो। अतएव इसी पावन भावना का ऐतिहासिक प्रदर्शन मक्का विजय के परम शुभ अवसर पर हुआ।

शासक सब से पहले
परमात्मा के सामने उत्तरदायी है

प्रशासन की सुचारू स्थापना के लिये अनिवार्य है कि कुछ लोगों को दूसरों पर सत्ताधिकार दिया जाये। किन्तु जिन लोगों को सत्ताधिकार मलना था उन्हें पहले से ही बता दिया गया ,कि वो अपने प्रत्येक कर्म के लिये प्रथमतः मनुष्यों के समक्ष नहीं बल्कि परमात्मा के समक्ष उत्तरदायी हैं। हज़रत दाऊद[अ.स.] की चर्चा कर मुसलमानों को बताया गया :

يَـٰدَاوُۥدُ إِنَّا جَعَلْنَـٰكَ خَلِيفَةً فِى ٱلْأَرْضِ فَٱحْكُم بَيْنَ ٱلنَّاسِ بِٱلْحَقِّ
وَلَا تَتَّبِعِ ٱلْهَوَىٰ فَيُضِلَّكَ عَن سَبِيلِ ٱللَّهِ ۚ إِنَّ ٱلَّذِينَ يَضِلُّونَ عَن سَبِيلِ
ٱللَّهِ لَهُمْ عَذَابٌ شَدِيدٌۢ بِمَا نَسُوا۟ يَوْمَ ٱلْحِسَابِ ﴿٢٦﴾

या दाऊदु इन्ना जअल्नाक ख़लीफ़तन् फ़िल्अर्ज़ि फ़ह्कुम् बैनन्नासि बिल्हक्कि़ व ला तत्तबिअिल् हवा फ़युज़िल्लक अन् सबीलिल् लाहि इन्नल् लज़ीन यज़्ज़िल्लून अन् सबीलिल्लाहि लहुम् अज़ाबुन शदीदुम् बिमा नसू यौमल्हिसाबि *(38 : 26) ,*

अर्थात् ,*" हे दाऊद ! हम ने तुझे धरती में शासक बनाया है , अतः तू लोगों के बीच न्यायोचित फैसला कर ,और अपनी तुच्छ इच्छाओं का अनुसरण न कर ,अन्यथा वे तुझे अल्लाह के मार्ग से भटका दें गी। जो लोग अल्लाह के मार्ग से भटक जाते हैं उनके लिये घोर यातना है , क्योंकि वे हिसाब के दिन को भूल गये।"*

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने अपने अनुयायिओं को यह भी बताया कि प्रशासन का कोई कार्यभार किसी के सुपुर्द हो जाने पर उसका अल्लाह के प्रति उत्तरदायित्व और भी बढ़ जाता है। फ़रमाया :

" अल्लाह जिस आदमी को दूसरों पर शासन का अवसर प्रदान करे ,यदि वह स्वयं को उनके हित और भलाई में समर्पित नहीं

करता ,तो वह स्वर्ग की सुगंध से वंचित रहे गा।"

(***बुख़ारी*** 94 : 8)

जब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने यमन की राजव्यवस्था के लिये दो राजपाल भेजे ,तो उनको अन्तिम नसीहत यह की :

" लोगों के प्रति नर्मी का व्यवहार करना ,उन के साथ कठोरता से पेश न आना ,खुशियाँ बाँटना नफ़रत और विमुखता का कारण न बनना।" (***बुख़ारी*** 64 : 62)

यह इन्ही पावन शिक्षाओं और उपदेशों का सुपरिणाम था जिस का प्रदर्शन हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके उत्ताधिकारियों ने अपने अपने शासन काल में किया। इतिहास साक्षी है कि सत्ता में आते ही उन्हों ने अपना सर्वस्व जनहित को समर्पित कर दिया। امیرالمومنین ***अमीर अल्-मूमिनीन*** अर्थात् मुसलमानों का बादशाह अल्लाह के यहाँ उत्तरदायी हाने से कितना भयभीत था ,इस का अन्दाज़ा हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके दूसरे ***ख़लीफा*** (=*उत्तराधिकारी*) हज़रत उमररज॰के शासन काल की इन दो घटनाओं से लग जाता है।

एक आम सभा में एक साधारण आदमी ने हज़रत उमररज॰को संबोधित कर बार बार यों कहा : हे उमर ! परमात्मा से डर। बाज़ ***सहाबा*** ने उसे इस गुस्ताख़ी पर रोकना चाहा। लेकित हज़रत उमररज॰ने उन्हें रोक दिया , और कहा :

" इसे छोड़ दो ,यदि ये लोग मुझे ऐसी बातें न कहें तो ये किस काम के ?"

एक और अवसर पर हज़रत उमररज॰भेस बदल कर अकालग्रस्तों के कैम्प में गशत लगा रहे थे। वहाँ एक औरत को देखा कि उस के पास खाने को कुछ नहीं और बच्चों का बहला रही है कि सो जाएं। आप तत्काल ***बैत अल्-माल*** की ओर दौड़े ,जो वहाँ से तीन मील दूर था ,और आटे की एक बोरी अपनी पीठ पर उठाई कि उस औरत तक पहुंचाएं। सेवक ने कहा ,महाराज ! यह मुझे उठाने दीजिये। तो हज़रत उमररज॰ ने कहा :

" इस जीवन में तो तुम मेरा बोझ उठा लो गे लेकिन क़यामत के दिन मेरा बोझ कौन उठाये गा ?"

मानवीय अधिकारों में समानता

जिस प्रजातंत्र की शिक्षा हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने दी उस की दूसरी मिसाल संपूर्ण विश्व–इतिहास में और कहीं नहीं। इस तंत्र में राजा और प्रजा को समान अधिकार प्राप्त थे। वे सब एक ही कानून के मातहत थे। इस्लामी प्रजातंत्र में स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लको भी उतने ही अधिकार प्राप्त थे जो जनता के आम इन्सान को हासिल थे। आप की वेशभूषा या रहनसहन में एक भी विशेषता ऐसी न थी जो आप को आम इन्सान से प्रभिन्न कर देती। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लअरब देश के बादशाह थे ,लेकिन आप अपने साथियों के साथ इस तरह घुलमिल कर बैठते थे ,कि बाहर से आने वाले अजनबी को यह पूछना पड़ता कि तुम में से मुहम्मदसल्ल.कौन हैं ? बादशाह हाने के बावजूद आप ने अपने लिये कोई सिंहासन न बनवाया। और न ही अपने लिये कोई विशेष आसन विशिष्ट किया। राज मुकुट तो दूर ,हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लहमेशा सादा थिगली लगा लिबास धारण किये होते। आप के लिये अलग से कोई राजमहल न था जिस में आप रहते। गारे से बने हुए छोटे छोटे कमरे थे ,जिन में दरवाज़ा तक लगा हुआ न था। आप के लिये कोई अंगरक्षक या पहरेदार मुकर्रर न था। लोग बाहर से आते और स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लको आवाज़ देते। आपके मकान में सजावट की कोई सामग्री न थी। पानी की एक ठिलिया और खजूर के पत्तों से बनी एक चटाई ,जस पर लेटने से आप के शरीर पर निशान पड़ जाते ,यही आप के घर का कुल सामान था। कई कई दिन तक आप के घर चूलहा न जलता था। क्योंकि पकाने को कुछ भी उपलब्ध न होता। सिर्फ खजूरों और पानी पर गुज़ारा होता था। जब आप के सैनिक मदीना में ***ख़न्दक़*** *(खाई)* खोद रहे थे तो आप भी उन के साथ एक आम मज़दूर की भांति काम में लगे हुए थे। यदि वे मिट्टी की टोकरियां उठाते ,तो आप भी धूल से अटे उन के भीतर काम में लगे हुए होते थे। आज तक दुनिया ने हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके इस्लामी प्रशासन के सिवा ऐसा प्रजातंत्र कहीं नहीं देखा कि जिस में अमीर और गरीब ,उच्च वर्ग और निम्न वर्ग या शासक और जनता सब के अधिकार एकसमान हों। बादशाह ,जो आध्यात्मिक शिक्षक भी था ,के लिये अलग से कोई विशेष

अधिकार न थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने फ़रमाया है :

" तुम में से हर कोई हाकिम या शासक है ,और हर एक से उसकी प्रजा के बारे में पूछताछ होगी। बादशाह भी एक हाकिम है और उस से उसकी जनता के बारे में सवाल होगा। पति अपने घर में हाकिम है और उस से उसके घरवालों के बारे में सवाल होगा। पत्नी अपने पति के घर में हाकिम है और उस से उन के बारे में सवाल होगा जो उसके घर में हैं। मुलाज़िम भी एक हाकिम है ,जो काम और सामान उसके सुपुर्द है उस से उसके विषय में प्रश्न होगा।" (***बुख़ारी*** 11 : 11)

बादशाह और अन्य पदाधिकारी उसी नियम ,उसी कानून के अधीन थे जो साधारण जनता के लिये प्रयोज्य था। स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके विषय में कुर्आन शरीफ़ कहता है :

إِنْ أَتَّبِعُ إِلَّا مَا يُوحَىٰٓ إِلَيَّ إِنِّيٓ أَخَافُ إِنْ عَصَيْتُ رَبِّى عَذَابَ يَوْمٍ عَظِيمٍ ﴿١٥﴾

इन्अत्तबिअु इल्ला मा यूहा इलैय इन्नी अख़ाफ़ु इन् असैतु रब्बी अज़ाब यौमिन अज़ीमिन *(10 : 15) ,*

अर्थात् ,*"(हे मुहम्मद ! कह दे) : मैं तो केवल उसी सत्य का अनुसरण करता हूँ जो मेरी ओर उतारा जाता है। यदि मैं अपने पालनहार–स्रष्टा की अवज्ञा करूँ तो मैं भी एक भयंकर दिन की यातना से डरता हूँ।"*

हाकिम या पदाधिकारी की आज्ञा का पालन

امير المومنين ***अमीर अल्–मूमिनीन*** यानि मुसलमानों का बादशाह *"इमाम"* भी कहलाता था। जिसका मौलिक अर्थ है *"वह व्यक्ति जिस का अनुसरण किया जाये"*। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके बाद मुसलमानों के सब से पहले बादशाह हज़रत अबू बक्ररज़॰ थे। जब आप को خليفة ***ख़लीफ़ा*** *(=बादशाह)* के पद के लिये चुना गया ,तो जिन लोगों ने आप से بيعت ***बैअत*** *(=वफ़ादारी की शपथ)* की थी , उनको संबोधित कर पहली बात जो हज़रत

अबू बक्ररज़.ने कही वह यह थी :

" ***यदि मैं अच्छा काम करूँ तो मेरी सहायता करना ,और यदि मैं गलती करूँ तो मुझे सुधारना। तुम में का कमज़ोर मेरे निकट बलवान् होगा ,जब तक मैं उसका हक़ न दिला दूँ। और तुम में को बलवान् मेरे निकट कमज़ोर होगा जबतक मैं उस से दूसरों का हक़ वापस न ले लूँ। कानून सब के लिये एक समान होगा ,स्वयं ख़लीफ़ा के लिये भी। मेरी आज्ञाओं का पालन उस समय तक करो ,जब तक मैं अल्लाह और उस के पैग़म्बरश्रीसल्लकी आज्ञानुसार चलूँ। यदि में अल्लाह और रसूल की अवज्ञा करूँ तो मुझे कोई अधिकार नहीं कि तुम से आज्ञापालन की अपेक्षा करूँ।*** "

यह सब हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल की मंगलमय शिक्षा का ही प्रताप था क्योंकि आप ने फ़रमाया था :

" ***सुनना और आज्ञा का पालन करना अनिवार्य है जब तक कि अल्लाह की अवज्ञा का हुक्म न दिया जाये। जब हाकिम की ओर से अल्लाह की अवज्ञा का हुक्म दिया जाये ,तो उसे न सुना जाये और न उसका आज्ञपालन किया जाये।*** "

(*बुख़ारी* 56 : 108)

आवश्यकता पड़ने पर
नए कानून बनाना

कुर्आन शरीफ़ का कानून सब से ऊपर था ,लेकिन ज़रूरत पड़ने पर नये कानून बनाने की अनुमति थी। केवल इस शर्त पर कि नया कानून अल्लाह और रसूल के आदेश के प्रतिकूल न हो। जब हज़रत मआज़रज़.को यमन का राजपाल नियुक्त किया गया ,तो हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल ने उस से पूछा :

"फ़ैसला किस आधार पर करो गे ?"

हज़रत मआज़रज़.ने निवेदन किया : ***"कुर्आन के आदेशानुसार।"***

आप ने पूछा : ***"मान लो कुर्आन में तुझे उस विषय पर कोई प्रकाश न मिले तो ?"***

हज़रत मआज़रज़.ने निवेदन किया : ***"तब मैं अल्लाह के पैग़म्बरश्री की***

سنّت सुन्नत (=व्यवहारिक आदर्श) के ***अनुसार फैसला करूँ गा।''***

आप ने पुनः फरमाया : ***''मान लो वहाँ भी तुझे प्रकाश न मिला तो क्या करोगे?''***

हज़रत मआज़[रज़] ने निवेदन किया : ***''उस सूरत में मैं अपनी बुद्धि और विवेक से काम लूँ गा और उसी के अनुसार फैसला करूँ गा।''***

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने अपने दोनों हाथ उठाये और कहा :

''अल्लाह की स्तुति हो ! जिस ने अपने पैग़म्बर के दूत को जिस तरह चाहा मार्ग दिखाया।'' (*मिशकात* 16 : 3)

इस्लामी कानून में अल्लाह और उसके पैग़म्बर के आदेशों को स्थाई स्थान हासिल है ,क्योंकि यही हर ज़माने में मुसलमानों का मार्गदर्शन कर सकते हैं। अस्थाई ज़रूरतों के निमित अस्थाई कानून बनाये जा सकते हैं। लेकिन इस के साथ यह भी ज़रूरी है कि महत्त्वपूर्ण मामलों में ऐसे कानून आपसी विचार विमर्श से ही बनाये जायें। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने फ़रमाया :

''मेरी أمّة *''उम्मत''* (=मुस्लिम समाज) ***के धर्मपरायण लोगों को इकट्ठा करो और महत्त्वपूर्ण मामलों का फैसला उनके मशवरा से करो ,और अकेले आदमी की राय से फैसला न करो।''***

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] स्वयं भी समस्त महत्त्वपूर्ण मामलों में विचार विमर्श द्वारा ही काम करते थे। मदीना पर कुरैश ने तीन बार आक्रमण किया ,और तीनों बार आप ने अपने ***सहाबा*** को बुला कर मशवरा किया कि सुरक्षा के क्या उपाय किये जायें। उहद युद्ध के अवसर पर आप ने अपनी राय के विरुद्ध ***सहाबा*** के बहुमत–सम्मत फैसले पर अमल किया, और मदीना से बाहर निकल कर दुश्मन का मुकाबला किया। हालांकि आप की अपनी राय यही थी कि मदीना के भीतर रह कर मुकाबला किया जाये। एक अवसर पर आप ने फ़रमाया :

''जो भी कौम या राष्ट्र विचार विमर्श से काम लेता है उसे सही मार्ग मिल ही जाता है।''

एक युद्ध में कुछ लोगों ने एक आदेश की अवज्ञा की जिस से मुसलमानों

को बहुत हानि उठाना पड़ी। तिस पर भी यही दिव्य आदेश मिला ,कि इन लोगों को क्षमा कर दिया जाये ,और पुनः राष्ट्रगत विचार विमर्श में शामिल कर लिया जाये : فَاعْفُ عَنْهُمْ وَاسْتَغْفِرْ لَهُمْ وَشَاوِرْهُمْ فِى الْأَمْرِ

फ़अफ़ु अन्हुम् वस्तग्-फ़िर् लहुम् व शाविर्हुम् फ़िल्अम्रि
(3 : 159) ,

अर्थात् ," *सो इन को क्षमा कर दे ,और इन के लिये प्रभु का संरक्षण माँग ,और महत्त्वपूर्ण मामलों में इन से परामर्श करता रह।"*

कुर्आन शरीफ़ से यह भी ज्ञात होता है कि कई एक अवसरों पर लोगों को विचार निमर्श के लिये इकट्ठा किया जाता था :

إِنَّمَا الْمُؤْمِنُونَ الَّذِينَ ءَامَنُوا بِاللَّهِ وَرَسُولِهِۦ وَإِذَا كَانُوا
مَعَهُۥ عَلَىٰٓ أَمْرٍ جَامِعٍ لَّمْ يَذْهَبُوا حَتَّىٰ يَسْتَـْٔذِنُوهُ

इन्नमल् मुअमिनूनल् लज़ीन आमनू बिल्लाहि व रसूलिही व इज़ा कानू मअहू अला अम्रिन जामिअिन लम् यज़्हबू हत्ता यस्ताज़िनूहु
(24 : 62),

अर्थात् ," *ईमान वाले वही हैं जो अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाते हैं ,और जब किसी महत्त्वपूर्ण मामले पर विचार विमर्श के लिये उस के संग होते हैं तो जाते नहीं जब तक कि उस से अनुमति न ले लें।"*

इसी पावन प्रशिक्षण का शुभ परिणाम हमें इस्लामी इतिहास के प्रारंभिक दौर में नज़र आता है। प्रथमतः हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के बाद आने वाले ख़लीफ़ों ने प्रशासन को सुचारु ढंग से चलाने के लिये विचार विमर्श के लिये बाकायदा समितियाँ बनाई थीं।

प्रजा तंत्र का तीसरा नियम

और दूसरे यह कि प्रारंभिक काल में ही वह बड़े बड़े *इमाम (धर्म आचार्य)* प्रकट हुए जिन्हों ने मुसलमानों की बढ़ती ज़रूरतों के लिय नए कानून रचे। और اجتهاد ***"इज्तिहाद"*** *(=बुद्धि और विवेक)* को नए कानून रचने का प्रमाणिक स्रोत माना गया। किन्तु ये सब कानून कुर्आन और ***हदीस*** के

अधीन थे। और केवल अपने ज़माने के देश और काल के लिये थे। इस तरह प्रजा तंत्र के दो आधारभूत नियम — (1) कानून समाज के सभी छोटे और बड़े अथवा अमीर व गरीब वर्गों पर सामान्य रूप से लागू होगा (2) मुस्लिम समाज के सभी महत्त्वपूर्ण काम विचार विमर्श द्वारा ही तय होंगे — पूरी शक्ति से काम करते हुए नज़र आते हैं। प्रजा तंत्र का तीसरा नियम यह है कि ***खलीफ़ा या बादशाह*** के लिये किसी विशेष कुल या खांदान का सदस्य होना ज़रूरी नहीं। मुसलमानों का जनमत जिसे इस पद के लिये उचित करार दे वही इस पद का अधिकारी होगा। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] ने यहाँ तक फ़रमाया कि यदि मुसलमानों का जनमत एक हबशी गुलाम को इस पद के लिये चुन ले तो उस की आज्ञाओं का पालन समस्त मुसलमानों के लिये उसी तरह ज़रूरी होगा जिस तरह किसी अन्य अमीर या बादशाह का (***बुख़ारी*** 10 : 54)। अतएव जब हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]के देहांत की खबर फैली तो मुसलमान इस मुद्दे पर विचार विमर्श के लिये एकत्र हुए कि आप के बाद मुसलमानों का ***अमीर*** या बादशाह कौन हो। मदीना के *अन्सार* की राय यह थी कि दो *अमीर* हों। लेकिन हज़रत अबू बक्र[रज़]और हज़रत उमर[रज़]ने इस प्रामर्श को अनुचित बताया और कहा कि कौम या राष्ट्र का एक ही ***अमीर*** या अगुआ हो सकता है (***बुख़ारी*** 62 : 6)। सब ने इसी मत को सही मान लिया और साथ ही हज़रत अबू बक्र[रज़]को अपना *खलीफ़ा* चुन लिया ,क्योंकि आप निर्विवाद रूप में हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]के वरिष्ठतम ***सुहाबी*** (*साथी*) और ***खलीफ़ा*** बनने के सर्वाधिक योग्य थे (***बुख़ारी*** 94 : 51)।

अमीर या शासक की पदच्युति

जब मुसलमानों के ***अमीर*** या बादशाह को जनमत द्वारा ही चुना जा सकता है ,तो सीधी सी बात है कि ऐसे व्यक्ति को जनमत द्वारा पदच्युत भी किया जा सकता है। हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]का यह आदेश था :

> " ***तुम्हें आज्ञा का पालन करना होगा ,चाहे हम उसे पसन्द करें या न करें ,चाहे हम समृद्धि की दशा में हों या तंगी की दशा में, और यह कि हम उन लोगों के साथ , जिन्हें सत्ता सौंपी गई है, झगड़ा न करें। (आप ने यह भी फ़रमाया) : सिवाय इस के कि***

तुम खुला कुफ़्र देखो जिस में तुम्हारे पास अल्लाह की ओर से प्रत्यक्ष दलील है। " (***बुख़ारी*** 93 : 2)

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने यह शिक्षा भी दी कि प्रशासन के भय से मनुष्य को सत्य की अभिव्यक्ति से नहीं रुकना चाहिये :

"सब से उच्च कोटि का जिहाद यह है कि एक ज़ालिम बादशाह के सामने सत्य बात कही जाए।" (*मिश्कात* 16 : 1)

अमीर या शासक के अधिकारों में संशोधन

"***बैत अल्-माल***" या जनकोश ***अमीर*** या बादशाह की ज़ाती मिल्कियत न था ,कि वह उसे जिस तरह चाहे ख़र्च करे। उस में से उसे केवल उतना ही लेने का अधिकार था ,जो उस की तनख़्वाह मुकर्रर हो। इस मामले में वह भी अन्य मुलाज़िमों के समान था। चुनांचि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके बाद इस नियम पर आप के पहले उत्तरधिकरी हज़रत अबू बक्ररज़.ने अमल किया (***बुख़ारी*** 34 :15)। जितनी आप की तनख़्वाह मुकर्रर थी उस से एक पैसा भी अधिक ***बैत अल्-माल*** से न लेते थे। अमीर को कोई विशेष अधिकार प्राप्त न थे। न उसके लिय कोई विशेष सुविधाएं विशिष्ट थीं। यदि अदालत में उस के विरुद्ध कोई दावा कर देता तो उसे भी साधारण व्यक्ति की भांति अदालत में हाज़िर होना पड़ता। इस का व्यवहारिक नमूना स्वयं हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने प्रस्तुत किया था। आप ने अपनी मृत्युशैया पर आम घोषणा कराई कि अगर मेरे ज़िम्मा किसी का कुछ बाकी हो तो वह आ कर ले जाये। हज़रत उमररज़.,जो अपने दौर के सब से बड़े बादशाह थे ,को भी एक बार प्रतिवादी के रूप में अदालत में पेश होना पड़ा। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लके दरवाज़े पर बादशाहत के ज़माना में भी कोई द्वारपाल न था। हज़रत उमररज़.ने अपने सभी राजपालों को यह आदेश दे रखा था कि वे अपने दरवाज़ों पर ऐसे लोगों को न बिठायें ,जो जनता के लिए उन तक पहुंचने में बाधक बनें।

प्रशासन संबंधी सिद्धांत

हकूमत या सत्ता को एक ***अमानत*** करार दिया गया ,और लोगों को यह शिक्षा दी गई कि वह प्रशासन का कोई विभाग किसी पदाधिकारी को

सौंपने से पहले यह देख लिया करें कि आया यह व्यक्ति इस ज़िम्मेदारी के योग्य है भी या नहीं।

إِنَّ ٱللَّهَ يَأۡمُرُكُمۡ أَن تُؤَدُّواْ ٱلۡأَمَٰنَٰتِ إِلَىٰٓ أَهۡلِهَا وَإِذَا حَكَمۡتُم بَيۡنَ ٱلنَّاسِ أَن تَحۡكُمُواْ بِٱلۡعَدۡلِۚ

इन्नल्-लाह यामुरुकुम् अन् तुअद्दुल्अमानाति इला अह्लिहा व इज़ा हकम्तुम बैनन्नासि अन तह्कुमू बिल्अद्लि *(4 : 58),*

अर्थात् , *"अल्लाह तुम को हुक्म देता है कि तुम (हकूमत की) अमानतों को उन लोगों के हाथ में दे दो जो उस के पात्र हों , और जब लोगों के बीच फैसला करो तो फैसला इन्साफ़ से करो।"*

न्याय को इस्लामी प्रशासन का बुनियादी पत्थर करार दिया गया। आदेश था कि न्याय करते समय यह मत देखो कि वह तुम्हारा दुश्मन है या मित्र। तुम उस से प्रेम करते हो या घृणा। वह तुम्हारा रिश्तेदार है या कोई अजनबी :

يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُواْ كُونُواْ قَوَّٰمِينَ لِلَّهِ شُهَدَآءَ بِٱلۡقِسۡطِۖ وَلَا يَجۡرِمَنَّكُمۡ شَنَـَٔانُ قَوۡمٍ عَلَىٰٓ أَلَّا تَعۡدِلُواْۚ ٱعۡدِلُواْ هُوَ أَقۡرَبُ لِلتَّقۡوَىٰۖ وَٱتَّقُواْ ٱللَّهَۚ إِنَّ ٱللَّهَ خَبِيرُۢ بِمَا تَعۡمَلُونَ ۝٨

याअय्युहल् लज़ीन आमनू कूनू क़व्वामीन लिल्लाहि शुहदाअ बिल्क़िस्ति वला यजिमन्नकुम् शनानु क़ौमिन अला अल्ला तअदिलू इअदिलू हुव अक़्रबु लित्तक़्वा वत्तकुल्लाह इन्नल्लाह ख़बीरुम् बिमा तअमलून *(5 : 8) ,*

अर्थात् ," *हे ईमान वालो ! अल्लाह के अधिकारों की रक्षा करने वाले ,न्याययुक्त गवाही देने वाले बन जाओ। और किसी कौम की दुश्मनी तुम्हें इस बात पर आमादा न करे कि तुम न्याय से काम न लो। न्याय करो ,यही कर्तव्यनिष्ठा के निकटतम है। और अल्लाह के प्रति कर्तव्य निभाओ। क्योंकि अल्लाह उस से भलीभांति अवगत है जो तुम करते हो।"*

۞يَٰٓأَيُّهَا ٱلَّذِينَ ءَامَنُواْ كُونُواْ قَوَّٰمِينَ بِٱلْقِسْطِ شُهَدَآءَ لِلَّهِ وَلَوْ عَلَىٰٓ
أَنفُسِكُمْ أَوِ ٱلْوَٰلِدَيْنِ وَٱلْأَقْرَبِينَ ۚ إِن يَكُنْ غَنِيًّا أَوْ فَقِيرًا فَٱللَّهُ أَوْلَىٰ بِهِمَا ۖ
فَلَا تَتَّبِعُواْ ٱلْهَوَىٰٓ أَن تَعْدِلُواْ ۚ وَإِن تَلْوُۥٓاْ أَوْ تُعْرِضُواْ فَإِنَّ ٱللَّهَ كَانَ
بِمَا تَعْمَلُونَ خَبِيرًا ﴿١٣٥﴾

याअय्यिुहल् लज़ीन आमनू कूनू क़व्वामीन बिल्–क़िस्ति शुहदाअ लिल्–लाहि व लव अला अन्फ़ुसिकुम् अविल्वालिदैनि वल्अक़्रबीन इंय्यकुन् ग़नीयन अव् फ़क़ीरन फ़ल्–लाहु अव्ला बिहिमा फ़ला तत्तबिअुल् हवा अन् तअदिलू व इन् तल्वू अव् तुअरिज़ू फ़इन्नल्–लाह कान बिमा तअमलून ख़बीरन *(4 : 135) ,*

अर्थात् ," *हे ईमान वालो ! न्याय पर स्थिर रहने वाले ,अल्लाह के लिये सच्ची गवाही देने वाले बन जाओ। यद्यपि मामला स्वयं तुम्हारे ,या माता–पिता या रिश्तेदारों के ही खिलाफ़ हो। (अमीर और गरीब का भी लिहाज़ न करो) अगर कोई अमीर है या गरीब — अल्लाह का तुम्हारी अपेक्षा इन दोनों पर अधिक अधिकार है कि तुम अपनी तुच्छ इच्छाओं का अनुसरण न करो ,ताकि तुम न्याय कर सको। यदि तुम बात को पेचदार बनाओ ,या सत्य से पहलु बचा लो ,तो निस्संदेह जो तुम करते हो उस से अल्लाह अवगत है।"*

इस्लामी राज्य और युद्ध

हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]जब ***हिजरत*** कर मक्का से मदीना पहुंचे तो उसी दिन से आप को हकूमत का कार्यभार संभालना पड़ा। कुछ ही समय बाद कुरैश ने मदीना पर आक्रमण पर आक्रमण शुरू कर दिये। ***हिजरत*** के दूसरे साल पहला हमला हुआ ,तीसरे साल में दूसरा हमला ,पाँचवें साल में तीसरा हमला और ***हिजरत*** के आठवें साल में मक्का विजय के साथ कुरैश की यह जन्ग समाप्त हो गई। वाकात स्वयं दिखा रहे हैं कि युद्ध में हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल]ने कभी पहल न की। आप पहल कर ही नहीं सकते थे ,क्यों कि आप को तथा आप के अनुयायिओं को स्पष्ट आदेश था :

أُذِنَ لِلَّذِينَ يُقَٰتَلُونَ بِأَنَّهُمْ ظُلِمُواْ ۚ

उज़िन लिल्लज़ीन युक़ातलून बिअन्नहुम् ज़ुलिमू *(22 : 39) ,*
अर्थात् , *" युद्ध लड़ने की अनुमति उन लोगों को दी जाती है , जिन के साथ युद्ध लड़ा जा रहा है ,क्योंकि वे उत्पीड़ित हैं।"*

وَقَـٰتِلُوا۟ فِى سَبِيلِ ٱللَّهِ ٱلَّذِينَ يُقَـٰتِلُونَكُمْ وَلَا تَعْتَدُوٓا۟ ۚ إِنَّ ٱللَّهَ لَا يُحِبُّ ٱلْمُعْتَدِينَ ﴿١٩٠﴾

व क़ातिलू फ़ी सबीलिल्लाहिल्–लज़ीन युक़ातिलूनकुम् व ला तअतदू इन्नल्लाह ला युहिब्बुल्–मुअतदीन *(2 : 190) ,*
अर्थात् , *" अल्लाह के मार्ग में उन लोगों से युद्ध लड़ो जो तुम्हारे साथ युद्ध करते हैं ,और इस हद से आगे न बढ़ो ,निस्संदेह अल्लाह सीमा से आगे नकल जाने वालों को पसन्द नहीं करता।"*

जब ये आदेश उतरे ,उस वक्त हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी आयु 54–55 वर्ष थी ,और आप ने उस दिन तक हाथ में तलवार न उठाई थी। लेकिन जब मजबूर होकर अपनी तथा मुसलमानों की रक्षा के लिये आप को तलवार उठाना पड़ी ,तो आप ने एक कुशल सेनापति की तरह अपनी क़ौम के खून का एक कतरा भी बेमौका न बहने दिया ,और न ही अकारण दुश्मन के ख़ून का एक कतरा बहने दिया। आप दुश्मन की गतिविधियों से पूर्णतया अवगत रहते थे। यही वजह है कि निरंतर युद्ध के सात सालों में भी आप ने अपने बहुसंख्यक और शक्तिशाली दुश्मन को कभी यह मौका न दिया कि वह आप को असावधान पाकर कोई गलत लाभ उठाता ,और मुसलमानों के मुट्ठी भर धर्मसमुदाय को विनष्ट कर देता। दो अवसरों पर — एक उहद युद्ध में और एक हुनैन युद्ध में — अधिक संभव था कि दुश्मन अभिभावी हो कर मुसलमानों को कुचल डालता। लेकिन हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने दोनों ही अवसरों पर अपनी जान को खतरे में डाल कर ,और अपने आप को दुश्मन के हमले का निशाना बना कर ,अपनी कौम को बचा लिया। और दोनों ही अवसरों पर दुश्मन को क्षणिक सफलता के बाद पीठ दिखाते हुए भागना पड़ा। यह सब आप की कुशल योजना का परिणाम था। युद्ध की शुरूआत से पहले आप ने अपने आदमियों को युद्ध के लिये तैयार न किया था। बल्कि आप की शिक्षा–दीक्षा का सारा ज़ोर रूहानी सिद्धियों की प्राप्ति पर था। लेकिन ज्यों ही जंग शुरू हुई आप ने वे सब कार्य किये जो

एक कुशल रणनीतिज्ञ कर सकता है। आप ने जनगणना की ,अपनी संपूर्ण क़ौम को युद्धकला सिखलाई ,यहाँ तक कि औरतों से जंग में पानी पिलाने का ,सामान ले जाने का ,ज़ख़्मियों को उठाने का ,उन की मरहम पट्‌टी का काम लिया (***बुख़ारी*** 56 : 66–68)। कभी कभी तो औरतों ने जंग में बाकायदा हिस्सा भी लिया (***बुख़ारी*** 56 : 62 ,63 ,65)।

युद्ध में अनावश्यक रक्तपात और तबाही की मनाही

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल॰को युद्ध मजबूरन लड़ना पड़े ,आपको स्वभावतः युद्ध के प्रति अरुचि थी। इस लिये आप ने युद्ध के रक्तपात और उस के दुष्परिणामों को यथासंभव कम करने की कोशिश की। जो लोग युद्ध में भाग नहीं लेते थे उन के वध से सख़्ती से रोका गया। एक बार आप ने एक औरत को वधित पाया ,तो फ़रमाया : " ***यह तो युद्ध नहीं लड़ रही थी ?*** " और आदेश दिया कि आगे कोई औरत जंग में कतल न होने पाये (***बुख़ारी*** 56 : 147)। जो लोग मज़दूर के रूप में काम पर लगाये गए हों उन के वध से भी रोका गया (***मिशकात*** 17 : 5)। इस प्रकार आप ने रक्तपात को जहाँ तक संभव हो सकता कम किया। सुलह या युद्धविराम के मामले में आप सदा उदारहृदयता से काम लेते थे ,क्योंकि आप को स्पष्ट आदेश था :

وَإِن جَنَحُوا لِلسَّلْمِ فَاجْنَحْ لَهَا وَتَوَكَّلْ عَلَى اللَّهِ

व इन् जनहू लिस्सल्मि फ़ज्नह् लहा व तवक्कल् अलल्लाहि

अर्थात् ,*"यदि दुश्मन सुलह की ओर झुके तो तू भी उसकी ओर झुक जा ,और अल्लाह पर भरोसा रख।"* (8 : 61)

बल्कि अगर दुश्मन केवल छल या धोखा के तौर पर सुलाह कर रहा हो तब भी सुलाह कर लेने का ही विधान था :

وَإِن يُرِيدُوا أَن يَخْدَعُوكَ فَإِنَّ حَسْبَكَ اللَّهُ

व इंय्युरीदू अंय् यख़्दऊक फ़इन्न हस्बकल्लाहु *(8 : 62),*

अर्थात् ,*" और यदि वे तुझे धोखा देने का इरादा रखते हों ,तो अल्लाह तेरे लिये काफी है।"*

प्रत्यक्षतः यह समझ में नहीं आता कि दुश्मन के धोखापूर्वक इरादे का पता चल जाने पर भी शांति–संधि कर लेना किस प्रकार लाभदायक हो सकता है। किन्तु जिस व्यक्ति को अपनी सत्यता पर ,और सत्य की अन्तिम विजय पर पूर्ण विश्वास हो ,उस की यही आस्था होगी कि दुश्मन चाहे पुनः हमला कर दे वह पुनः परास्त होगा।

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने अपनी सेना को ये निदेश दिये :

"जो कष्ट और हानि हमें पहुंची है ,उस का बदला लेने में उन लोगों को नुक़सान न पहुंचे जो इन बातों में हिस्सा नहीं लेते। औरतों को कुछ न कहो कि वे कमज़ोर हैं ,बच्चों को भी हानि न पहुंचे ,न किसी बीमार को हानि पहुंचाओ। जो लोग मुकाबला नहीं करते उन के मकानों को न गिराओ न उनकी रोज़ी–रोटी के साधनों को तबाह करो ,न फलदार वृक्षों को न खजूरों को कुछ नुकसान पहुंचाओ।"

(*स्पिरिट आफ इस्लाम* , पृ. 81 , ***सैयद अमीर अली***)

इस से साफ ज्ञात होता है कि आप इन्सानी रक्तपात को कितना कम कर देना चाहते थे। हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने जो व्यवहार जंग के कैदियों के साथ किया उस से भी यही मालूम होता है कि आप स्वभावतः किसी भी प्राणी को दुःख नहीं देना चाहते थे :

فَإِذَا لَقِيتُمُ ٱلَّذِينَ كَفَرُواْ فَضَرْبَ ٱلرِّقَابِ حَتَّىٰٓ إِذَآ أَثْخَنتُمُوهُمْ فَشُدُّواْ ٱلْوَثَاقَ فَإِمَّا مَنًّۢا بَعْدُ وَإِمَّا فِدَآءً حَتَّىٰ تَضَعَ ٱلْحَرْبُ أَوْزَارَهَا

फ़इज़ा लक़ीतुमुल्–लज़ीन कफ़रू फ़ज़र्बर्रिक़ाबि हत्ता इज़ा अस्ख़न्तुमूहुम फ़शुद्दुल्वसाक़ फ़इम्मा मन्नम् बअदु व इम्मा फ़िदाअन हत्ता तज़अल्हर्बु अव्ज़ारहा (47 : 4) ,

अर्थात् ,*"जब युद्ध में तुम्हारी काफिरों से मुठभेड़ हो तो गरदनों पर प्रहार करो ,यहां तक कि जब तुम उन को वशीभूत कर लो ,तो उन्हें बन्दी बना लो ,तत्पश्चात् उन्हें या तो परोपकार के तौर पर या फिर मुक्ति–मूल्य लेकर आज़ाद कर दो ,यहांतक कि युद्ध अपने हथयार रख दे।"*

हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लने क़ुर्आनविहित इन नियमों को कहां तक अमलाया ,इस का अनुमान आपके व्यवहार से हो जाता है। केवल एक युद्ध अर्थात् बदर युद्ध में जंगी कैदियों को मुक्तिधन लेकर आज़ाद कर दिया गया। हालाँकि अभी युद्ध के सिलसिला का केवल आरंभ ही हुआ था। अन्य सभी युद्धों में जितने भी बन्दी हाथ आये उन सब को परोपकार के तौर पर आज़ाद कर दिया गया ,यहाँ तक कि हुनैन युद्ध के छः हज़ार बन्दी सिर्फ़ परोपकारवश स्वतंत्र कर दिये गये।

तात्पर्य यह कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लकी समस्त जन्गें आरंभ से अन्त तक दयालुता ही दयालुता थीं। इन का उद्देश्य अत्याचारग्रस्तों को अत्याचारियों के हाथ से बचाना था ,और इनका अन्त भी दयामय इस लिये था कि जिस क्षण अत्याचार करने वाले युद्धविराम की याचाना करते जंग तत्काल बन्द कर दी जाती ,क्योंकि इस्लामी युद्ध का उद्देश्य तो केवल पीडित वर्ग को बचाना मात्र था। सो ज्यों ही यह प्रयोजन पूरा हो जाता युद्ध बन्द कर दिया जाता। जंग में भाग न लेने वाली साधारण जनता युद्ध के प्रक़ोप से सवर्था सुरक्षित रहती ,क्योंकि उन्हें हाथ न लगाया जाता। इस्लामी युद्ध दुश्मनों के लिये भी एक दयालुता था। क्योंकि इसका उद्देश्य दुश्मन का सर्वनाश न था ,बल्कि उसका सुधार था। ज़ुल्म और अत्याचार का निवारण भी इसी उपचार का एक अनिवार्य भाग था। सुलह या शांति–संधि के विषय में भी हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लका दृष्टिकोण यही था कि प्रायः उद्धारतापूर्वक शांति–संधि द्वारा एक अत्याचारी दुश्मन को सुधारना ज़्यादा कारगर सिद्ध होता है ,बजाये इसके कि युद्ध द्वारा उसे हमेशा के लिये विनष्ट कर दिया जाये। हृदय परिवर्तन उद्धार सुलाह से प्राप्त होता है ,बल और शक्ति के प्रयोग से नफरत और इन्तिक़ाम की आग और ज़्यादा भड़कती है। आशय यह कि हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्लका पवित्र व्यक्तित्व केवल शांति काल के लिये ही दयालुता न था ,बल्कि युद्ध काल के लिये भी दयालुता ही दयालुता था।

इति

एक भविष्यवाणी

"Though the world ..... has so far paid scant attention to Muhammad as a moral exampler ..... it will sooner or later have to consider seriously whether from the life and teachings of Muhammad any principles are to be learnt which will contribute to the moral development of mankind."

('***Muhammad Prophet and Statesman***',
W.Montgomery Watt, Oxford, 1961, p. 235)

अर्थात् ,"यद्यपि दुनिया ने आज तक हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के नैतिक आदर्श पर बहुत ही कम ध्यान दिया है .... लेकिन उसे कभी न कभी इस बात पर गंभरीता से सौचना ही पड़ेगा कि आया हज़रत पैग़म्बरश्रीसल्ल.के पवित्र जीवन और उनकी शिक्षाओं से ऐसे नियम ग्रहण किये जा सकते हैं जो संपूर्ण मानवसमाज के नैतिक विकास और उत्थान में सहायक बन सकें।"

(Batamaloo, Srinagar, Kashmir, Idd al-Fitr 28- 12- 2000, 7.30PM)

हमारे नए हिन्दी प्रकाशन

इस्लाम और अन्य धर्म अर्थात् धर्म का दार्शिनक स्वरूप (48पृ.)

मूल उर्दू लेखन : हज़रत मौलाना मुहम्मद अली[रअ]

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन

हज़रत मुहम्मद[सल्ल] ——16 पृ.

(ईदे मीलाद यानि हज़रत पैग़म्बरश्री[सल्ल] के जन्म–दिवस की विशेष भेंट)

हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद —वर्तमान युग के जगद्व्यापी पैग़म्बर (48 पृ.)

मूल उर्दू लेखन : हज़रत मौलाना सदरुद्दीन[रअ]

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन

नमाज़ और सफलता के तीन मार्ग(संशोधित एंव पिरिवर्द्धित संस्करण)–96 पृ.

मूल उर्दू लेखन : हज़रत मौलाना मुहम्मद अली[रअ]

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन

शांति सन्देश —— 36 पृ.

मूल उर्दू लेखन : हज़रत मिर्ज़ा गुलाम अहमद साहिब[अर]

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन

हज़रत ईसा[अ.स.] की मृत्यु —36 पृ .

(अल–अज़हर (मिस्र) तथा मुस्लिम जगत् के अन्य श्रेष्ठ विद्वानों के प्रकाशित मत*)*

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन

सूरः अल–फ़ातिहा (सटीक हिन्दी अनुवाद)——32 पृ.

मूल उर्दू लेखन : हज़रत मौलाना हकीम नूरुद्दीन साहिब[अर]

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन

हज़रत पैग़म्बरश्री मुहम्मद (संक्षिप्त जीवनी) ——96 पृ.

मूल उर्दू लेखन : हज़रत मौलाना मुहम्मद अली[रअ]

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन

धर्म और रूढ़िवाद ——16 पृ.

मूल उर्दू लेखन : हज़रत मौलाना सदरुद्दीन[रअ]

हिन्दी अनुवाद : डॉ. ख़ुर्शीद आलम तारीन